
॥ श्रीः ॥

पाणिनीयसिद्धान्तकौमुदी

सा च

महामहोपाध्याय पं० मथुराप्रसाददीक्षितेन विरचिता

तेनैव स्वयं प्रकाशिता

पुस्तकप्राप्तिस्थानम्

मोतीलाल बनारसीदास

चौक, पोस्टबक्स ७५, बनारस

संवत् २००७] [मूल्यम् ३।)

प्रकाशक
म० म० पं० मथुराप्रसाद दीक्षित,
१४९ हजरियाना, झाँसी

मुद्रक
बालकृष्ण शास्त्री,
ज्योतिष प्रकाश प्रेस, बनारस

भूमिका

भाषा की उत्पत्ति के विषय में विवादास्पद विविध मतों की सत्ता चाहे विद्वानों की विवेचना का विषय बना ही रहा हो, पर व्याकरण की उपयोगिता के विषय में उनका मतैक्य पिष्टपेषण-सा प्रतीत होता है। व्याकरण के अध्ययन से भाषा के उस परिमार्जित रूप के प्रयोग करने की शक्ति आ जाती है जिसका अवलोकन कर, सहृदय का हृदय अनिर्वचनीय उल्लास से परिपूर्ण हो जाता है। परन्तु आधुनिक पद्धति से यावज्जीवन शुष्क व्याकरण के अध्ययन करने पर न तो संस्कृत साहित्य की समभिवृद्धि के सम्पादन में ही सुजन समर्थ होता है, और न भाषा के रूप के ही परिष्कृत करने में। 'द्वादशवर्षैस्तु व्याकरणम् अध्येतव्यम्'—इस मत के पोषकों में से विरले ही ऐसे विशिष्ट व्यक्ति उपलब्ध हो सकेंगे जिनकी लेखनी विविध विषयों का समास्वादन करा सकी है।

प्राचीन काल की पाठन परिपाटी के अनुसार संस्कृत व्याकरण के अध्ययन तथा अध्यापन की वैज्ञानिक पद्धति अत्यन्त सुगम थी। अत एव इससे स्वल्प काल ही में व्याकरण विषयक आवश्यक नियमों का परिज्ञान हो जाता था। वर्तमान कालिक प्रणाली के आधार पर यदि उस समय व्याकरण का अध्ययन किया जाता, तो जावा, सुमात्रा, बोर्नियो, श्याम, अनाम, आदि सुदूर पूर्व देशों में संस्कृत भाषा का प्रचार तो दूर रहा, वह भारतवर्ष ही में त्रयोदश शताब्दी तक राजभाषा का पद भी न पा सकती।

महाभाष्यकार ने व्याकरण के अध्ययन की उपयोगिता पर जो अपने विचार व्यक्त किये हैं, वे मननपूर्वक विवेचनीय हैं। वे कहते हैं कि—

'रक्षोहागमलध्वसन्देहाः प्रयोजनम्। रक्षार्थं वेदानामध्येयं व्याकरणम्। लोपागम-वर्णविकारज्ञो हि सम्यग् वेदान् परिपालयिष्यतीति। ऊहः खल्वपि—न सर्वैर्लिङ्गैर्न च सर्वाभिर्विभक्तिभिर्वेदे मन्त्रा निगदिताः। ते चावश्यं यज्ञगतेन पुरुषेण यथायथं विपरिणमयितव्याः। तान्नावैयाकरणः शक्नोति यथायथं विपरिणमयितुम्। तस्मादध्येयं व्याकरणम्। आगमः खल्वपि—'ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च' इति। प्रधानं च षट्स्वङ्गेषु व्याकरणम्। प्रधाने च कृतो यत्नः फलवान् भवति। लघ्वर्थं चाध्येयं व्याकरणम्। ब्राह्मणेनावश्यं शब्दा ज्ञेयाः। न चान्तरेण व्याकरणं लघुनोपायेन शब्दाः शक्या ज्ञातुम्। असन्देहार्थं चाध्येयं व्याकरणम्। याज्ञिकाः पठन्ति—स्थूलपृषतीमाग्निवारुणीमनड्वाहीमालभेतेति। तस्यां सन्देहः—स्थूला चासौ पृषती च स्थूलपृषती, स्थूलानि पृषन्ति यस्याः सेयं स्थूलपृषतीति। तां नावैयाकरणः स्वरतोऽध्यवस्यति। यदि पूर्वपदप्रकृतिस्वरत्वं, ततो बहुव्रीहिः। अथ समासान्तोदात्तत्वं, ततस्तत्पुरुष इति। इत्यादि—

इस उपरि निर्दिष्ट अवतरण के परिशीलन करने के अनन्तर इसमें सन्देह का अवकाश नहीं रह जाता कि व्याकरण का अध्ययन व्याकरण के लिये नहीं करना चाहिये किन्तु वेद की रक्षा के

नोट—आलभेत-दद्यात्। तस्याः सेवया दुग्धदधिघृतादिसंपत्तिमुत्पाद्य स्वयमुपभुञ्जीत मतिथींश्चोपभोजयेत्।

लिये, विज्ञान और साहित्य की रक्षा के लिये, तथा भाषा की रक्षा के लिये। यदि व्याकरण का अध्ययन भाषा के जीवित रहने के प्रश्न को गौण मानकर उसके लिये किया जाता है तो इसपर दो मत नहीं हो सकते कि भाषा के मिटते ही व्याकरण की सत्ता नहीं रह सकती। जीवित भाषा और मृत भाषा में अन्तर ही यह है कि जिसका अध्ययन साहित्य के अध्ययन के अनन्तर उसमें विशेषता के परिज्ञान के लिये किया जाय, वह जीवित भाषा है, और यदि व्यांकरण के अध्ययन के अनन्तर उसके साहित्य का अध्ययन किया जाता है, तो वह मृत भाषा है। श्री भगवान् पतञ्जलि आदि ने वैदिक साहित्य की रक्षा के लिये महाभाष्य आदि की रचना की है। उनका यह उद्देश्य कहीं भी नहीं झलकता कि व्याकरण का अध्ययन व्याकरण के लिये करना चाहिये, किन्तु उनका यह स्पष्ट मत है कि इसका अध्ययन साहित्य की समभिवृद्धि के लिये करना चाहिये, जिससे यह निष्कर्ष निकलता है कि व्याकरण का अध्ययन पूर्ण, सुगम तथा वैज्ञानिक हो।

संस्कृत व्याकरण के उद्गम की प्रामाणिक विवेचना; कठिनता और दुरूहता से इतनी जटिल है कि इसके निदर्शन के लिये भगवती श्रुति के समकक्ष ब्राह्मण ग्रन्थों का समाश्रय लेना पड़ता है, जहाँ पर इसकी सत्ता के कतिपय तत्त्व सूत्ररूप से उपलब्ध हो जाते हैं। उच्चारण, सन्धि, वचन, विभक्ति कुर्वन्त आदि पदों से इसकी पुष्टि हो जाती है कि उस समय व्याकरण का वैज्ञानिक अध्ययन न तो भविष्य के गर्भ में ही अन्तर्हित था और न बालसुलभ दोषों से धूसरित ही था। निरुक्तकार यास्क ने भी नाम, सर्वनाम, आख्यात, उपसर्ग और निपात का उल्लेख कर उपर्युक्त मत की परिपुष्टि-सी की है।

भगवान् पाणिनि के पूर्व गार्ग्य, शाकल्य, शौनक, अपिशली, शाकटायन, आदि अनेक महा-वैयाकरणों का अस्तित्व अष्टाध्यायी के आभ्यन्तर साक्ष्य पर प्रमाणित किया जा सकता है। वस्तुतः उस समय वैयाकरणों के दो सम्प्रदाय प्रचलित थे। एक का मत था कि कतिपय शब्दों का निर्माण धातुओं से हुआ है, और अवशिष्ट शब्दों का अस्तित्व मूल धातुओं के समान ही अत्यन्त प्राचीन हैं; दूसरा सम्पूर्ण शब्दों का उद्भव धातुओं से मानता था। इस सम्प्रदाय का नाम था श्री माहेश्वर सम्प्रदाय। इसका सिद्धान्त है कि सृष्टि की आदि में—शब्द दारिद्र्यकाल में—आदि मानव जाति ने जिन जिन चेष्टाओं से, जिन जिन भावभङ्गियों से अपने विचार व्यक्त किये थे, वे सब उनके क्रिया कलाप थे; उन्हींसे संकेतित—नाम सर्वनाम की—उत्पत्ति हुई। इस अत्यन्त प्राचीन मत के अनुयायी पाणिनि, शाकटायन आदि का कथन है कि काल और लकार के निदर्शक मूल धातु से सम्पूर्ण शब्दों का (धातु से कृदन्त शब्दों का एवं कृदन्त शब्दों से तद्धित शब्दों का) निर्माण हुआ है।

संस्कृतधातुसहस्रद्वयेन प्रत्ययवशात् सर्वे शब्दा निर्मीयन्ते।

'सरस्वती'

श्री माहेश्वर सम्प्रदाय के अनुयायियों में महर्षि पाणिनि का स्थान इस समय अप्रतिम है। अगाध भक्ति भावना से भी आराधना करने के अनन्तर चतुर्दश विद्यामयी माहेश्वर सूत्रचतुर्दशी का अधिगम उतना ही दुरूह है जितना कि ज्योतिःस्वरूप भगवान् महेश्वर का साक्षात्कार। इन दोनों की उपलब्धि से पाणिनि का हृदय कितना उल्लसित हो उठा होगा—इसकी कल्पना भी पाणिनि भगवान् के अतिरिक्त और कोई कर सकेगा—इसमें सन्देह है। सूत्रों की बहुमूल्यता पर मुग्ध होकर ये व्याकरण शास्त्र के (अष्टाध्यायी के) निर्माण में तब तक न सफल हो सके, जब तक इन्होंने नन्दिकेश्वर से इन सूत्रों का रहस्य न समझ लिया।

शलातुर (आधुनिक कंटक) ग्रामनिवासी पातालविजय के प्रणेता दाक्षीपुत्र, इस प्रकाण्ड वैयाकरण का समय निरूपण भी विवाद से खाली नहीं है। ऐतिहासिक गवेषणा के आधार पर इनकी विद्यमानता षष्ठ अथवा पञ्चम शताब्दी ईशवीय पूर्व में मानी जा सकती है। वार्तिककार वररुचि कात्यायन के सहपाठी बताकर, चतुर्थ शताब्दी ई० पू० में इनकी अवस्थिति मानना उतना ही निरुपादेय है, जितना कि 'यवनानी' पद की निरुक्ति के आधार पर तृतीय शताब्दी ई० पू० में। इन्होंने 'अष्टाध्यायी' नामक चतुःसहस्र सूत्रमय उस ग्रन्थ रत्न की रचना की जिसकी आभा से दिग्दिगन्त उज्ज्वलित हो उठा। इसकी प्रामाणिकता और वैज्ञानिकता की प्रशंसा प्रत्येक विद्वान् ने मुक्तकण्ठ से की। साधारणजनता ने इनमें देवत्व की कल्पना कर इनकी पाषाणमयी मूर्ति की प्रतिष्ठा की जिसका दर्शन कर चीनी यात्री ह्वेनसांग ने भी अपने को कृतकृत्य समझा। सुदूर पूर्वदेशों में भी इनके मत का अत्यधिक समादर हुआ।

इस ग्रन्थरत्न का खूब परिशीलन हुआ। सौ वर्ष के अनन्तर चतुर्थ शताब्दी ई० पू० में समुत्पन्न नन्द शासनकाल के अप्रतिम विद्वान् श्री वररुचि कात्यायन इसकी वैज्ञानिकता के परम प्रशंसक थे। इसमें दो हजार वार्तिकों का एक परिशिष्ट जोड़कर उन्होंने इसकी पूर्णता प्रदर्शित कर दी। उनके इस प्रशंसनीय खण्डनात्मक नहीं किन्तु रचनात्मक कार्य से व्याकरण जगत् मुग्ध हो गया। इन वार्तिकों का निर्माण इसके महत्त्व के अपाकरण के लिये नहीं हुआ है किन्तु इसकी शोभा संवर्धन के लिये—मणि से काञ्चन के संयोग सा है।

एक स्थल पर 'देवानां प्रियः' का प्रयोग देखकर कतिपय ऐतिहासिकों को यह भ्रम हो गया है कि ये सम्राट् अशोक के अनन्तर उत्पन्न हुए थे; परन्तु अनेक प्रमाणों के आधार पर दृढ़ता पूर्वक इसका प्रत्याख्यान किया गया है। इसका विस्तृत विवेचन हमने 'पाणिनि और उनके अनुयायी' शीर्षक लेख में किया है।

तदनन्तर एक बृहत् समीक्षकों के समुदाय का उल्लेख मिलता है। इसने अष्टाध्यायी की आलोचना और प्रत्यालोचना स्वनिर्मित कारिकाओं द्वारा की है। इनमें से प्रमुख हैं—व्याधि, गोनर्दीय, गोणिकापुत्र, वाजप्यायन पौष्करसादि आदि।

तदनन्तर पुष्यमित्र कालिक (१८५–१७८ ई० पू०) योगसूत्र, चरक और महाभाष्य के प्रणेता भगवान् पतञ्जलि ने अनुपाततः आधे से अधिक अनावश्यक, सूत्रों में चरितार्थ वार्तिकों का प्रत्याख्यान कर तथा अवशिष्ट की उपादेयता मानकर, व्याकरण जगत् में जिस नीति का प्रचलन किया है, वह सर्वमान्य है। इस ग्रन्थत्रयी का (अष्टाध्यायी, वार्तिक तथा महाभाष्य का) वैयाकरणों में उतना सम्मान है जितना कि वेदान्तियों में प्रस्थानत्रयी का। इस महाभाष्य के गूढ़ार्थ विवेचन के लिये अनेक विद्वानों ने विभिन्न शैली से व्याख्याओं की रचना की जिनमें से प्रमुख ये हैं—

व्याख्या	रचयिता
१ शब्दबृहती	अज्ञातनामा
२ महाभाष्यप्रदीप	कैयट
३ महाभाष्यप्रकाश	नारायणशेष
४ सूक्तिरत्नाकर	नारायणशेष

५ सूक्ति रत्नाकर	नृसिंह
६ महाभाष्यादर्श	लक्ष्मण
७ महाभाष्य सिद्धान्तरत्नप्रकाश	शिवरामेन्द्र सरस्वती
८ महाभाष्य गूढ़ार्थदीपिनी	सदाशिव
९ महाभाष्य त्रिपदीव्याख्यान	भर्तृहरि
१० महाभाष्यदीपिका	भर्तृहरि

इन महाभाष्य के टीकाकारों में भर्तृहरि का स्थान एक विशिष्ट महत्त्व रखता है, क्योंकि इसका अनुसरण करते हुए कैयट ने महाभाष्यप्रदीप की रचना की, महाभाष्य के अव्यक्त गूढ़ार्थ के व्यक्तीकरण के लिये इस सर्व सम्मत ग्रन्थरत्न का निर्माण किया जिसके परिशीलन के लिये महावैयाकरण विविध ग्रन्थों के निर्माता नागोजी भट्ट ने भाष्यप्रदीपोद्योत नामक अभिनव व्याख्यान से इसे समलंकृत कर व्याकरण जिज्ञासुओं का विशेष उपकार किया है।

यद्यपि यह पद्धति व्याकरण विज्ञान के विकाश में अधिक उपयुक्त सिद्ध हुई, तथापि सर्व साधारण के हित साधन में तो यह दुरूह ही प्रतिष्ठित हुई। अतः ६५० ईशवीय में वामन और जयादित्य ने पाणिनीय व्याकरण की जटिलता के निवारण के लिये, इसकी गुत्थियों के सुलझाने के लिये काशिका नाम्नी नूतन वृत्ति का निर्माण कर एक प्रशंसनीय प्रयास किया है, इस संबन्ध में महाकवि भट्टि के नाम का स्मरण न करना एक जघन्यतम अपराध होगा। इस महावैयाकरण ने पाणिनीय सूत्रों के उदाहरण के प्रदर्शन के लिये जिस 'रामयशोगाथा' का गान किया है, उससे किस सहृदय का मानस-कमल विकसित न होगा। तदनन्तर एकादश ईशवीय शताब्दी में वर्तमान भोजदेव ने शब्दानुशासन की, तथा चतुर्दश ईशवीय शताब्दी में वर्तमान मायणपुत्र माधव ने धातुवृत्ति की निर्मिति कर एक सराहनीय कार्य किया है।

परन्तु काशिकावृत्ति का विस्तार छात्रों के लिये दुरधिगम्य था, अतः श्री रामचन्द्राचार्य ने प्रक्रियाकौमुदी की रचना कर एक सुगम पद्धति चलाई जिसकी व्याख्या निरपेक्ष नीति से अनेक विद्वानों ने की। इनमें-से प्रमुख ये हैं—

व्याख्या—	व्याख्याकार
१ अमृतसृति	वारणवनेश शास्त्री
२ तत्त्वचन्द्र	जयन्त
३ प्रकाश	शेषकृष्ण
४ प्रक्रियाञ्जन	विश्वनाथ दीक्षित
५ प्रसाद	विट्ठल
६ सत्प्रक्रिया व्याकृति	विश्वकर्मा शास्त्री,

इसी समय प्रक्रियाकौमुदी में अपूर्णता का आभास पाकर शब्दकौस्तुभ-निर्माता प्रकाण्ड वैयाकरण भट्टोजी दीक्षित सिद्धान्तकौमुदी लेकर उपस्थित हुए। इसकी अनेक व्याख्यायें उपलब्ध होती हैं जिनमें-से प्रमुख ये हैं—

व्याख्या—	व्याख्याकार
१ प्रौढमनोरमा	भट्टोजी दीक्षित
२ तत्त्वबोधिनी	ज्ञानेन्द्र सरस्वती

३ फक्किकाप्रकाश	इन्द्रदत्त उपाध्याय
४ बालबोध	सारस्वत व्यूढमिश्र
५ बालमनोरमा	वासुदेव दीक्षित
६ मानसरञ्जिनी	वल्लभ
७ रत्नाकर	रामकृष्ण
८ रत्नाकर	शिवरामेन्द्र सरस्वती
९ रत्नार्णव	कृष्णमिश्र ।
१० दाधिमथी	शिवदत्त दाधिमथ

इस सिद्धान्तकौमुदी का निर्माण कर भट्टोजी दीक्षित ने भले ही वैयाकरणों का उपकार किया हो, परन्तु फक्किका की जटिलता तथा अति विस्तृतता के कारण उन्होंने सर्वसाधारण के हित में व्याघात ही किया है। उनके इस कार्य से संस्कृत साहित्य का प्रवाह अवरुद्ध-सा ही हो गया। व्याकरण का अध्ययन व्याकरण में विशेषता सम्पादन के लिये, शास्त्रार्थ में प्रखर प्रतिभा प्रदर्शन के लिये, होने लगा। इसे देख कर श्री विरजानन्द सरस्वती के पट्टशिष्य, आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि श्री दयानन्द सरस्वतीजी का भी हृदय इस पद्धति से विचलित हो उठा, क्यों कि इस प्रणाली से न तो वेदों की रक्षा होती थी और न संस्कृत साहित्य का संवर्धन। अतः व्याकरण का अध्ययन अपने लक्ष्य से च्युत हो रहा था।

आज भारतवर्ष स्वतन्त्र हो गया है, स्वतन्त्रता के साथ ही इसका उत्तरदायित्व भी बढ़ गया है। भारतीय प्राचीन संस्कृति तथा सभ्यता के पुनरुद्धार की भावना प्रत्येक पुरुष के हृदय में जाग्रत हो उठी है, जिसकी प्राप्ति के लिये संस्कृत का अध्ययन अत्यन्त आवश्यक है। अल्पकाल में पूर्ण व्याकरण का अध्ययन भी अपेक्षित है, अतः शिक्षक और शिक्षितों में एक ऐसी पुस्तक की मांग है जो उनकी इस आवश्यकता की पूर्ति कर सके।

परमपूज्य पिता जी की (महामहोपाध्याय सर्वतन्त्रस्वतन्त्र पं० मथुराप्रसाद दीक्षित की) यह पाणिनीय-सिद्धान्तकौमुदी इसी दृष्टिकोण को सामने रखकर लिखी गई है। इसके अध्ययन में एक अथवा डेढ़ वर्ष से अधिक न लगेगा, क्यों कि यह भट्टोजी दीक्षित विरचित वैयाकरण सिद्धान्तकौमुदी के तृतीयांश से कुछ अधिक हैं। इसमें सबसे अधिक विशेषता की बात यह है कि इसमें कोई भी आवश्यक अंश और पाणिनि महर्षिजी का कोई भी सूत्र छूटने नहीं पाया है। और इसके साथ ही साथ सूत्रों से अर्थ के अवभासित होने पर, वृत्तियों का उल्लेख नहीं किया गया है, परंतु जहां सूत्र से सूत्रार्थ प्रतीति नहीं होती है वहां सूत्रार्थबोधिका मात्र वृत्ति दी गयी है। प्रत्युदाहरण निकाल दिये गए हैं, और शुष्कपाण्डित्य के प्रदर्शन के लिये प्रणीत, फक्किकाओं का परिहार कर दिया गया है। ग्रन्थरचयिता ने स्वयं ही इसका उल्लेख अपने उपक्रम में यों किया है:—

फक्किकागाढजटिलां वृत्तिविस्तरदुर्ग्रहाम्।
प्रत्युदाहरणैर्दीर्घां कौमुदीं संक्षिपाम्यहम्।

इसके निर्मापण प्रकाशन में सर्वथा बघाटनरेश महाराजा साहब दुर्गासिंह जी का श्रेय है, क्योंकि उन्होंने ही भारतविजयनाटक की भविष्य कल्पना को मूर्तिमती देखकर सानुनय प्रार्थनाकर

छात्रों को स्वल्पकाल में ही संस्कृत एवं व्याकरण बोध के लिये इसे निर्माण कराकर प्रकाशित कराया। तथा कुराली नगर के निवासी सोलन राज्य के राजज्योतिषी, 'मार्तण्ड' पञ्चाङ्ग के प्रणेता पण्डित-प्रवर श्री मुकुन्दवल्लभ जी शास्त्री ने भी इसके प्रकाशन में पिताजी को प्रोत्साहन दिया है, अतः वे इस ग्रन्थ के सभी अध्येताओं के प्रशंसा भाजन और धन्यवाद के पात्र हैं। अन्त में उन सभी महानुभावों का, जिन्होंने इसके निर्माण में परामर्श तथा सहयोग देकर प्रोत्साहित किया है वे सब धन्यवाद के पात्र हैं उनमें पिताजी के अभिन्न-हृदयमित्र महामहोपाध्याय पं० परमेश्वनन्दजी हैं तथा कालीप्रसादमिश्रजी भूतपूर्व प्रिन्सिपल संस्कृत विभाग हिन्दू विश्वविद्यालय काशी। तथा प्रधानाध्यापक पं० महादेवशास्त्रीजी (हि० वि० वि० काशी) पं० कमलाकान्तमिश्रजी प्रिन्सिपल गोयनका महाविद्यालय काशी एवं जगदीशजी भट्ट (पञ्जाब विश्वविद्यालय संस्कृत विभाग प्रिन्सिफल जालंधर) ये सब पिताजी के विशेष धन्यवाद पात्र हैं, तथा अन्य जिन महानुभावों ने परामर्श दिया है, उन सबका नामोल्लेख किये बिना ही ग्रन्थरचयिता ने अपनी शुभ भावनायें उनके प्रति व्यक्त कर दी हैं। तथा उत्तरप्रदेश के पाठशाला-निरीक्षक व्याकरणाचार्य श्री पं० त्रिभुवनप्रसाद जी उपाध्याय एम. ए. के सहयोग की जितनी प्रशंसा की जाय, वह सब थोड़ी है। आपने अनेक स्थलों का पर्यवेक्षण कर अपनी अमूल्य सम्मति से विशेष उपकृत किया है।

अन्त में सर्वशक्ति समन्वित भगवान् विश्वनाथ रूपधारी महेश्वर के पदारविन्दों में सादर अभिवादन पूर्वक इसे समर्पित कर सहृदय विद्वानों से इसे अपनाने के लिये सानुरोध प्रार्थना कर यही कहने की धृष्टता करेंगे कि

गच्छतः स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः।
हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति साधवः।

सरस्वती सदन
विजयदशमी २००७ } सदाशिव दीक्षित

पाणिनीय-सिद्धान्त-कौमुदी

या प्राभातिकसूर्यताम्ररुधिरारुण्यप्रभाणां सखी,
भास्वत्पद्ममणिप्रवालरसनाचण्डातशोभासुहृत् ।
पृथ्वीसूनुजपार्द्रविद्रुममहापद्मप्रभाभासुरा,
सा विष्णोः फलपुञ्जवद्विजयते लोकेषु पादप्रभा ॥१॥
फक्किकागाढजटिलां वृत्तिविस्तारदुर्ग्रहाम् ।
प्रत्युदाहरणैर्दीर्घां कौमुदीं संक्षिपास्यहम् ॥२॥
नत्वा गुरुं महेशञ्च प्रक्रियाबोधदायिनीम् ।
सतां मतां पाणिनीयां कुर्वे सिद्धान्तकौमुदीम् ॥३॥

अइउण् ।१। ऋऌक् ।२। एओङ् ।३। ऐऔच् ।४। हयवरट् ।५। लण् ।६। ञमङणनम् ।७। झभञ् ।८। घढधष् ।९। जबगडदश् १०। खफछठथचटतव् ।११। कपय् ।१२। शषसर् ।१३। हल् ।१४। उपदेशेऽजनुनासिक इत् ।१।३।२। हलन्त्यम् ।१।३।३। हलिति सूत्रेऽन्त्यमित् । आदिरन्त्येन सहेता ।१।२।७१। अन्त्येन इता सह आदिस्तन्नाम्ना प्रत्याहारसंज्ञः स्यात् । हलन्त्यम्[1] ।१।३।३। उपदेशेऽन्त्यमित्स्यात् । तस्य लोपः ।१।३।९। ऊकालोऽज्झ्रस्वदीर्घप्लुतः । १।२।१७। उच्चैरुदात्तः ।१।२।२९ । नीचैरनुदात्तः ।१।२।३० । समाहारः[2] स्वरितः ।१।३१। तस्यादित उदात्तमर्द्धह्रस्वम् ।१।२३२ ततश्च ह्रस्वदीर्घप्लुता अकारादयः उदात्तानुदात्तस्वरितभेदान्नवधा। मुखनासिकावचनोऽनुनासिकः ।१।१।८। तदित्थम्। अ इ उ ऋ एषां प्रत्येकमष्टादश भेदाः। ऌकारस्य द्वादश, तस्य दीर्घाभावात्। एचामपि द्वादश । तेषां ह्रस्वाभावात्। तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम् ।१।१।९। अकुहविसर्जनीयानां

१—अन्योन्याश्रयदोषपरिहाराय हलन्त्यम् इह तन्त्रावृत्त्यैकशेषान्यतममस्तु। ततश्च हलन्त्यम्। हल् सूत्रेऽन्त्यमित्स्यादितीत्संज्ञायाम्। आदिरन्त्येन सहेता' इति प्रत्याहारः।

२—अकारः ह्रस्व उदात्तः१ ह्रस्वोऽनुदात्तः२ ह्रस्वः स्वरितश्च३ दीर्घ उदात्तः४ दीर्घोऽनुदात्तः५ दीर्घः स्वरितश्च ६ प्लुत उदात्तः७ प्लुतोनुऽदात्तः८ प्लुतः स्वरितश्च९ एवम् इकारोकारावपि।

कण्ठः । इचुयशानां तालु । ऋटुरषाणां मूर्धा । लृतुलसानां दन्ताः । उपूपध्मानीयानामोष्ठौ । ञमङणनानां नासिका च । एदैतोः कण्ठतालु । ओदौतोः कण्ठोष्ठम् । जिह्वामूलीयस्य जिह्वामूलम् । नासिकाऽनुस्वारस्य । इति स्थानानि । प्रयत्नो द्विधा । आभ्यन्तरो बाह्यश्च । आद्यः स्पृष्टेषत्स्पृष्टविवृतभेदात् त्रिधा । तत्र स्पृष्टं प्रयत्नं स्पर्शानाम् । ईषत्स्पृष्टमन्तःस्थानाम् । विवृतमूष्मणां स्वराणां च इति । बाह्योऽपि संवारविवाराल्पप्राणमहाप्राणभेदाच्चतुर्धा[१] । तत्र हशः संवारः, खरो विवारः । प्रथमतृतीयपञ्चमा यणश्चाल्पप्राणाः । द्वितीयचतुर्थौ शलश्च महाप्राणाः । कादयो मावसानाः स्पर्शाः । यरलवा अन्तःस्थाः । शषसहा उष्माणः । अचः[२] स्वराः । ≍क ≍ख इति कखाभ्यां ≍प ≍फ इति पफाभ्यां प्रागर्धविसर्गसदृशौ जिह्वामूलीयोपध्मानीयौ । अं अः इत्यचः परावनुस्वारविसर्गौ । **ऋलृवर्णयोर्मिथः सावर्ण्यं वाच्यम्** । * । **अणुदित्सवर्णस्य चाप्रत्ययः** ।१।१।६९। इदं सवर्णस्य ग्राहकं स्यात् । अत्रैवाण् परेण णकारेण इति दीर्घाणामप्यज्ग्रहणेन ग्रहणम् । **नाज्झलौ** ।१।१।१०। अनुनासिकाननुनासिकभेदेन यवला द्विधा । **तपरस्तत्कालस्य** ।१।७० । तेन अत् इत् इत्यादयः षण्णां[२] संज्ञा । **वृद्धिरादैच्** ।१।१।१। **अदेङ् गुणः** ।१।२।२। **अदर्शनं लोपः** । १।१।६०। **भूवादयो धातवः** ।१।३।१। **प्राग् रीश्वरान्निपाताः** ।१।४।५६ । इत्यधिकृत्य । **चादयोऽसत्त्वे** ।१।४।५७ । **प्रादयः** ।१।४।५८ । **उपसर्गाः क्रियायोगे** ।१।४।५९ । **गतिश्च** ।१।४।६० । प्रादयः क्रियायोगे उपसर्गसंज्ञा गतिसंज्ञाश्च स्युः । प्र परा अप सम् अनु अव निस् निर् दुस् दुर् वि आङ् नि अधि अपि अति सु उत् अभि प्रति परि उप एते प्रादयः । **नवेति विभाषा** ।१।१।४४ । **स्वं रूपं शब्दस्याशब्दसंज्ञा** १।१।६८ । **येन विधिस्तदन्तस्य** ।१।१।७२ । विशेषणं तदन्तस्य संज्ञा स्यात् स्वस्य च रूपस्य । समासप्रत्ययविधौ

१—यद्यप्ययं विवारः संवारः श्वासो नादो घोषोऽघोषोऽल्पप्राणो महाप्राण उदात्तोऽनुदात्तः स्वरितश्चेत्येकादशधा; तथापि उत्थानम्, वाग्घरिः बभूव, चलानेत्यादौ चतुर्भिरेवेष्टसिद्धिः, अधिकानां सप्तानामुपादानं स्वरूपमात्रप्रदर्शनपरम्, प्रक्रियायां तेषामुपयोगाभावात् । २–अचः स्वराः इत्यस्याप्युपयोगश्चिन्त्यः ।

ह्रस्वाकारस्योच्चारणे किंचिन्मुखसंवरणकारित्वेन संवृताख्यश्चतुर्थोऽप्याभ्यन्तरः प्रयत्नो मन्यते । तन्न युक्तम्, इकारोकारयोरुच्चारणेऽपि तथैवानुभवात्, पदसाधुत्वे तस्यानुपयोगात् । एवं च 'अ अ' इति सूत्रमपि पदसाधुत्वे निष्प्रयोजनमेव ।

३ श्रीमुनिना अदेङ् गुणः इतिवद् वृद्धिरादैजित्यत्रापि उद्देश्यानन्तरं विधेयो वक्तव्य इति नियमाद् आदैच् पदानन्तरं वृद्धिशब्दश्च वक्तुमुचितः, परं वृद्धिशब्दो मङ्गलार्थ इति तथोक्तः ।

प्रतिषेधः। उगिद्वर्णग्रहणवर्जम्। विरामोऽवसानम् ।१।४।११०। परः सन्निकर्षः संहिता १।४।१०९। सुप्तिङन्तं पदम् ।१।४।१४। हलोऽनन्तराः संयोगः १।१।७। ह्रस्वं लघु १।४।१०। संयोगे गुरु १।४।११। दीर्घं च १।४।१२।

इति संज्ञाप्रकरणम्।

इको गुणवृद्धी १।१।३। अचश्च १।२।२८। आद्यन्तौ टकितौ १।१।४६। मिदचोऽन्त्यात्परः १।१।४७। षष्ठी स्थानेयोगा ।१।१।४९। स्थानेऽन्तरतमः ।१।१।५०। स्थानं च प्रसङ्गः। तस्मिन्निति निर्दिष्टे पूर्वस्य १।१।६६। तस्मादित्युत्तरस्य ।१।१।६७। तस्मिन्निति सप्तम्यन्तानुकरणम्। सप्तम्यन्ते निर्दिष्टे सति पूर्वस्य कार्यं बोध्यम्। पञ्चम्यन्ते निर्दिष्टे सति परस्य कार्यं ज्ञेयम्। अलोऽन्त्यस्य ।१।१।५२। ङिच्च ।१।१।५३। आदेः परस्य १।१।५४। अनेकाल्शित्सर्वस्य ।१।१।५५। स्वरितेनाधिकारः[१] ।१।१।५६। परनित्यान्तरङ्गापवादानामुत्तरोत्तरं बलीयस्त्वम्। असिद्धं बहिरङ्गमन्तरङ्गे। अकृतव्यूहाः पाणिनीयाः। निमित्तं विनाशोन्मुखं दृष्ट्वा तत्प्रयुक्तं कार्यं न कुर्वन्तीत्यर्थः। इति परिभाषाप्रकरणम्।

इको यणचि ६।१।७७। अचो रहाभ्यां द्वे। ८।४।४६। यरो वा द्वित्वम्। हर्यनुभवः, नह्यस्ति। अनचि च ।४।४७। वा द्वे स्तः। स्थानिवदादेशोऽनल्विधौ ।१।१।५६। आदेशः स्थानिवत्स्यात्। एकवर्णाश्रितो विधिः अल्विधिः। तत्र न स्थानिवत्। अचः परस्मिन्पूर्वविधौ ।१।१।५७। परनिमित्तोऽजादेशः स्थानिवत्, स्थानिभूतादचः पूर्वस्य विधौ कर्तव्ये। इति स्थानिवद्भावे प्राप्ते। न पदान्तद्विर्वचनवरेयलोपस्वरसवर्णानुस्वारदीर्घजश्चर्विधिषु ।१।१।५८। इति स्थानिवद्भावनिषेधः। ततो द्वित्वम्। झलां जश् झशि ।८।४।५३। अदर्शनं लोपः ।१।१।६०। संयोगान्तस्य लोपः ।८।२।२३। इति यलोपे प्राप्ते। यणः प्रतिषेधो वाच्यः। * [२]यणो मयो द्वे वाच्ये

* उभयत्र यकारविकल्पात् चत्वारि रूपाणि। सुद्ध्युपास्यः। [३]मध्वरिः। धात्रंशः। लाकृतिः।

१—आनुनासिक्यवत् स्वरितोच्चारणमपि प्रतिज्ञागम्यमित्यापाततः स्वरितेनाधिकार इति सूत्रं मन्दप्रयोजनमेव। २ सममुपगतानां यकारादीनामुच्चारणस्याननुभवात् काव्येषु तथाविधप्रयोगादर्शनाच्च इदं वार्तिकं त्यक्तुं शक्यम्। काव्येषु लौकिकसंस्कृतोच्चारणेषु च पुत्रादिनी त्वमसि पापे, पुत्रपुत्रादिनी त्वमसीत्यादावेकतकारस्यैव प्रयोगदर्शनात् नादिन्याक्रोशे पुत्रस्य, तत्परे चेति द्वयमपि मन्दप्रयोजनम्। पुत्रादिनी सर्पिणीत्यत्र तकारद्वयश्रवणं शपथप्रत्ययमेव पूर्वत्रैव तत्राप्युच्चारणाननुभवात्। लेखे तु तथाविधानां प्रयोगाणां भङ्ग्यतिरिक्तकाव्येष्वदर्शनादिति।

नादिन्याक्रोशे पुत्रस्य ।८।४।४८। पुत्रादिनी त्वमसि पापे । तत्परे च ।
पुत्रपुत्रादिनी त्वमसि पापे । वा हतजग्धयोः । पुत्त्रहती पुत्रहती, पुत्त्रजग्धी पुत्रजग्धी ।
त्रिप्रभृतिषु शाकटायनस्य ८।४।५० । इन्न्द्रः इन्द्रः । राष्ट्रम्, राष्ट्रम् । **सर्वत्र शाकल्यस्य** ८।४।५१ । अर्कः, ब्रह्मा । **दीर्घादाचार्याणाम्** ८।४।५५ । दात्रम् , पात्रम् ।
हलो यमां यमि लोपः ८।४।६४ । आदित्यो देवता अस्येति आदित्यम् हविः । **एचोऽयवायावः** ६।१।७८ हरये, विष्णवे, नायकः, पावकः । यस्मिन् विधिस्तदादावल्ग्रहणे ।
वान्तो यि प्रत्यये ६।१।६८ । यकारादौ प्रत्यये परे ओदौतोरवावौ स्तः । गव्यम् , नाव्यम्
गोर्यूतौ छन्दस्युपसंख्यानम्* । अध्वपरिमाणे च* । गव्यूतिः । **धातोस्तन्निमित्तस्यैव** ६।१।८० । लव्यम्, लाव्यम् । **क्षय्यजय्यौ शक्यार्थे** ६।१।८१ । क्षय्यम्, जय्यम् ।
क्रय्यस्तदर्थे ६।१।८२ । तस्मै प्रकृत्यर्थाय इदं तदर्थम् । क्रेतारः क्रीणीयुरिति बुद्ध्या आपणे प्रसारितं क्रय्यम् । क्रेयमन्यत् । क्रयणार्हमित्यर्थः । **लोपः शाकल्यस्य** ८।३।१६ ।
अवर्णपूर्वयोर्यवयोर्वा लोपोऽशि परे । **पूर्वत्रासिद्धम्** ८।२।१ । अधिकारोऽयम् । इति लोपस्यासिद्धत्वान्न सन्धिकार्यम् । हर एहि, हरयेहि । विष्ण इह, विष्णविह । श्रिया उद्यतः, श्रियायुद्यतः, गुरा उत्कः, गुरावुत्कः । **एकः पूर्वपरयोः** ६।१।८४ इत्यधिकृत्य । **आद् गुणः** ६।१।८७ । उपेन्द्रः, रमेशः, गङ्गोदकम् । **उरण् रपरः** १।१।५१ । ऋयोगे अर् इति, लृयोगे अल् इति गुणः । अचो रहाभ्यां द्वे इति धकारस्य द्वित्वे । **झरो झरि सवर्णे** ८।४।६५ । इति धलोपः । लोप[१]द्वित्वाभ्याम् एकधम्, द्विधम्, त्रिधम्, कृष्णर्द्धिः । यण

---

*इदं वार्तिकमपि सुत्यजमेव, पुत्रशब्दस्य क्तान्ते चेद् द्वित्वं हतजग्धयोरेव, इति नियमार्थत्वे प्रत्युदाहार्यस्य पूर्ववत्प्रयोगादर्शनात् १—अनचि चेति द्वित्वविकल्पे सिद्धे त्रिप्रभृतिषु शाकटायनस्य । सर्वत्र शाकल्यस्य । दीर्घादाचार्याणाम् । इयं त्रिसूत्री पूजार्हेति फलप्रदर्शनेऽपि छात्राणामायासमात्रप्रयोजनमेवेति प्रतीमः । द्वित्वाभावे लोपे एकधम् । द्वित्वाभावे लोपाभावे च द्विधम् । द्वित्वलोपयोर्वा द्विधम् । द्वित्वे लोपाभावे च त्रिधम् । २—अपिशब्दात् अनचिचेति लकारस्य द्वित्वम् । ३—अवेहीति । पुरस्तादपवादा अनन्तरान् विधीन् बाधन्ते नोत्तरान्, इति न्यायादियं वृद्धिः एङि पररूपमित्यस्यैव बाधिका, न तु ओमाङोश्चेत्यस्यापि । वस्तुतस्तु उपैति उपैधते, इत्यादौ ओमाङोश्चेत्यस्याप्राप्तौ वृद्धेश्चारितार्थ्यात्, अव एहीत्यत्र परत्वात् ओमाङोश्चेत्यनेन पररूपम् । अनयोरपवाद्यापवादकभाव एव नास्तीति दिक् । यत्तु अर्थवद्ग्रहणे इति परिभाषाया ज्ञापकत्वे राजेः पृथक् भ्राजिग्रहणं दीक्षितेनोक्तम्, तन्न युक्तम्, वृश्चेति सूत्रे राजिसाहचर्यात् टुभ्राजृदीप्ताविति फणादिरेव गृह्यते । यस्तु एजृ भ्राजृ दीप्ताविति तस्य कुत्वमेव । एवं च विभ्राक् विभ्राट् इति रूपभेदेन भ्राजिग्रहणस्य चारितार्थ्यात् स्ववचनविरोधश्चिन्त्यः । परिभाषायाः प्रामाण्यं मृग्यम् ।

इति पञ्चमी मय इति षष्ठीति पक्षे ककारस्यापि द्वित्वे तवल्कार इत्यत्र रूपचतुष्टयम् । **वृद्धिरेचि** ६।१।८८ । कृष्णैकत्वम्, गङ्गौघः, देवैश्वर्यम्, कृष्णौत्कण्ठ्यम् । **एत्येधत्यूठ्सु** ।१।८६ ।६ उपैति, उपैधते, प्रष्ठौहः । अक्षादूहिन्यामुपसंख्यानम् *। अक्षौहिणी। स्वादीरेरिणोः * स्वैरः, स्वैरी 'प्रातिपदिकग्रहणे लिङ्गविशिष्टस्यापि ग्रहणात्' स्वैरिणी । प्रादूहोढोढ्येषैष्येषु ।*। प्रौहः, प्रौढः । अर्थवद्ग्रहणे नानर्थकस्य ग्रहणम्[१] । प्रोढवान् । प्रौढिः, प्रैषः, प्रैष्यः । ऋते च तृतीयासमासे । * । सुखेन ऋतः, सुखार्तः । प्रवत्सतरकम्बलवसनार्णदशानामृणे । * । प्रार्णम्, वत्सतरार्णम्, ऋणार्णम्, दशार्णः । **उपसर्गादृति धातौ** ।६।१।९१ । उपार्च्छति । प्रार्च्छति । **अन्तादिवच्च** ।६।१। ८५ । एकादेशः पूर्वस्यान्तवत्, चकारात्परस्यादिवत् । पदान्तत्वात् । **खरवसानयोर्विसर्जनीयः** ।८।३।१५ । इति विसर्गे प्राप्ते । उभयथर्क्षु कर्तरि चर्षिदेवतयोरिति निर्देशान्न विसर्गः । उपसर्गेणैव धातोराक्षेपे सिद्धे धाताविति योगविभागेन पुनर्वृद्धिर्विधीयते । तेन ऋत्यक इति पाक्षिकः प्रकृतिभावोऽत्र न भवति । **वा सुप्यापिशलेः**। ६।१।९५। प्रार्षभीयति, प्रर्षभीयति । प्राल्कारीयति प्रल्कारीयति । **एङि पररूपम्** ।६।१।९४। प्रेजते, उपोषति । इह वा सुपीत्यनुवर्त्य वाक्यभेदेन व्याख्येयम्, तेन । एङादौ सुब्धातौ वा । उपेडकीयति, उपैडकीयति प्रोत्रीयति प्रौत्रीयति । एवे चानियोगे+। क्वेव भोक्ष्यसे। **अचोऽन्त्यादिटि** ।१।१।६४ । शकन्ध्वादिषु पररूपं वाच्यम् ! * । तच्च टेः । शकन्धुः, कर्कन्धुः, सीमन्तः, मनीषा, हलीषा, पतञ्जलिः । आकृतिगणोऽयम् । ओत्वोष्ठयोः समासे वा*। स्थूलोतुः, स्थूलौतुः । बिम्बोष्ठः, बिम्बौष्ठः । **ओमाङोश्च** ६।१।९५ । शिवायोंनमः । शिवेहि । **अव्यक्तानुकरणस्यात इतौ** ।६।१।९८ पटत् इति, पटिति । एकाचो न * । श्रदिति **नाम्रेडितस्यान्त्यस्य तु वा** । ६।१।९९। **तस्य परमाम्रेडितम्** ८।१।२। पटत्पटेति । पक्षे । **झलां जशोऽन्ते** ८।२।३९ । पटत्पटदिति । **अकः सवर्णे दीर्घः** ६।१।१०१। दैत्यारिः, श्रीशः, विष्णूदयः । ऋति[२] सवर्णे ऋ वा । *। होतॄकारः। लृति सवर्णे लृ वा । * । होतॄकारः । लृकारस्य दीर्घाभावात्, पक्षे सावर्ण्यात् ॠकारः। होतृकारः । **एङः पदान्तादति** ६।१।१०९ । हरेऽव, विष्णोऽव । **सर्वत्र विभाषा गोः** ६।१।१२२ । इति प्रकृतिभावः । गो अग्रम्, गोऽग्रम् । **अवङ् स्फोटायनस्य** ६।१।१२३। गवाग्रम् । **इन्द्रे च** ।६।१।२७। गवेन्द्रः । व्यवस्थितविभाषया गवाक्षः ।। अथ प्रकृतिभावः ।। **प्लुतप्रगृह्या अचि नित्यम्** ।६।१।१२५। एहि कृष्ण३ अत्र गौश्चरति । हरी एतौ ।

१ ऋति ऋ वेत्यनेन ॠकारे कृते होतॄकार इत्यत्र द्विरेफात्मकस्य ॠकारस्यादर्शनादुच्चारणे वैलक्षण्याभावाच्च प्रयासैकमात्रमिदं वार्तिकम् । एवं लृति लृवेत्येतदपि बोध्यम् । नृसिंहशरीरवत् विलक्षणयोरनयोः स्वीकारेऽपि तत्स्वरूपयोरदर्शनाच्छपथप्रत्येयमेवेति दिक् । २सिन्नित्यसमासयोः शाकल्यप्रतिषेधो वाच्यः । अत्र नित्यग्रहणमविवक्षितमिति तद्वार्तिकद्वयेन व्याख्यातम् ।

इकोऽसवर्णे शाकल्यस्य ह्रस्वश्च ।६।१।१२६। चक्रि अत्र, चक्र्यत्र। न समासे[६] *। वाप्यश्वः। सिति[२] च*। पार्श्वम्। **ऋत्यकः** ।६।१।१२७। ब्रह्म ऋषिः, ब्रह्मर्षिः। न समासे इतीह न सम्बध्यते। सप्त ऋषीणाम्, सप्तर्षीणाम्। **वाक्यस्य टेः प्लुत उदात्तः** ।८।२।८०। अधिकारोऽयम्। **प्रत्यभिवादेऽशूद्रे** ।८।२।८३। भो आयुष्मानेधि देवदत्त३। स्त्रियां न।* भो आयुष्मती भव गार्गि। नाम गोत्रं वा यत्र प्रत्यभिवादवाक्यान्ते प्रयुज्यते तत्रैव प्लुत इष्यते। नेह आयुष्मानेधि। भो राजन्यविशां वेति वाच्यम्*। आयुष्मानेधि भोः इत्यादि ३। **दूराद्धूते च** ।८।२।८४। सक्तून् पिब देवदत्त ३। **हैहेप्रयोगे हैहयोः** ।८।२।८५। हे ३ राम। हे ३अच्युत। **गुरोरनृतोऽनन्त्यस्याप्येकैकस्य प्राचाम्** ।८।२।८८। दे ३ वदत्त, देवद३त्त, देवदत्त ३। प्राचामिति योगविभागात्सर्वः प्लुतो विकल्प्यः। **अप्लुतवदुपस्थिते** ।८।२।१२८। उपस्थितोऽनार्ष इति शब्दः। सुश्लोक३इति, सुश्लोकेति। वत्करणात्, अग्नी इति। **ई३चाक्रवर्मणस्य** ।६।१।१३०। चिनुहि ३ इति। चिनुहीति। चिनुहि ३ इदम् चिनुहीदम्। **ईदूदेद्द्विवचनं प्रगृह्यम्** १।१।११। हरी एतौ। विष्णू अमू। पचेते इमौ। **अदसो मात्** १।१।१२। अमी ईशाः। अमू आसाते। **शे** ।१।१।१३। अस्मे इन्द्राबृहस्पती। **निपात एकाजनाङ्** ।१।१।१४। इ इन्द्रः, उ उमेशः। आ एवं नु मन्यसे। आ एवं किल तत्। ईषदर्थे क्रियायोगे मर्यादाभिविधौ च यः। एतमातं ङितं विद्याद् वाक्यस्मरणयोरङित्। ईषदुष्णम् ओष्णम्। **ओत्** ।१।१।१५। अहो ईशाः। **संबुद्धौ शाकल्यस्येतावनार्षे** १।१।१६। विष्णो इति, वि[१]ष्णविति। **उञः** १।१।१७। उ इति, विति। **ऊँ** ।१।१।१८। ऊँ इति। **मय उञो वो वा** ।८।३।३३। किमु उक्तम्। किम्वुक्तम्। **ईदूतौ च सप्तम्यर्थे** १।१।१९। सोमो गौरी अधिश्रितः। मामकी तनू इति। **अणोऽप्रगृह्यस्यानुनासिकः** ८।४।५७। दधिं। दधि। इत्यच्संधिः।

स्तोः श्चुना श्चुः ।८।४।४०। हरिश्शेते, रामश्चिनोति। सच्चित्, शार्ङ्गिञ्जय।

१–अत्र शाकल्यमते प्रगृह्यत्वाद् अवादेशाभावात्, विष्ण इति दीक्षितोक्तमुदाहरणं चिन्त्यम्, शाकल्यान्तरकल्पने तु अनेके शाकल्या व्याकरणकर्तार इतीतिहासविरुद्धमिति दिक्। २–दधिँ तादृशां प्रयोगाणामदर्शनाद् इदं सूत्रं स्वरूपमात्राधायकमिति। ३–हे मपरेवेत्यारभ्य नश्चेति पर्यन्तं पञ्चसूत्री चिन्त्या, तदुदाहार्याणां प्रयोगाणां काव्यादिष्वदर्शनात्, एवमेव यवलपरे यवला वेति, चयो द्वितीयाः शरीति वार्तिकम् अपि मन्दप्रयोजनमेव, किँ ह्यः, प्राङ्ख्षष्ठः, ईदृशप्रयोगाणामदर्शनात्।

१–एकसकारे सस्य द्वित्वे द्विसकारवतोरुक्तत्वान्नास्ति विशेषः। २–इदमनुपयुक्तं दीक्षितस्य पाण्डित्यप्रदर्शनपरं छात्राणामायासकरं च।

शात् ८।४।४४ । विश्नः, प्रश्नः । ष्टुना ष्टुः ।८।४।४१ । रामष्षष्ठः, रामष्टीकते, पेष्टा, तट्टीका, चक्रिण्ढौकसे । न पदान्ताट्टोरनाम् ।८।४।४२ । षट् सन्तः, षट् ते । अनाम्नवति-नगरीणामिति वाच्यम् ।*। षण्णाम्, षण्णवतिः, षण्णगर्यः । तोः षि ।८।४।४३ । सन् षष्ठः । झलां जशोऽन्ते ८।२।३९ । वागीशः, चिद्रूपम् । यरोऽनुनासिकेऽनुनासिको वा ८।४।४५ । एतन्मुरारिः, एतद्मुरारिः । प्रत्यये भाषायां नित्यम् * । तन्मात्रम्, चिन्मयम् । तोर्लि ८।४।६० । तल्लयः । नकारस्यानुनासिको लकारः । विद्वाँल्लिखति । उदः स्थास्तम्भोः पूर्वस्य ८।४।६१ । अत्र विवारस्य महाप्राणस्य सस्य तादृश एव थकारः । तस्य झरो झरीति पाक्षिको लोपः । उद् थानम् इति स्थिते । खरि च ८।४।५५ । झलां चरः स्युः । उत्थानम् । उत्तम्भनम् । लोपाभावे थकारस्यासिद्धत्वात् तस्य न चर्त्वम् । झयो होऽन्यतरस्याम् ८।४।६२ । संवारस्य महाप्राणस्य हस्य तादृशो वर्गचतुर्थ एवादेशः । वाग्घरिः, वाग्हरिः, । शश्छोऽटि ८।४।६३ । तच्छिवः, तच्शिवः । छत्वममीति वाच्यम् * तच्छ्लोकेन । मोऽनुस्वारः ।८।३।२३ हलि पदान्ते । हरिं वन्दे । नश्चापदान्तस्य झलि ८।३।२४ । यशांसि, आक्रंस्यते । अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः ८।४।५८ । अङ्कितः, अञ्चितः, कुण्ठितः, शान्तः, गुम्फितः । वा पदान्तस्य ८।४।५९ । त्वङ्करोषि, त्वं करोषि । सँय्यन्ता, संयन्ता । सँव्वत्सरः, । संवत्सरः । यँल्लोकम्, यं लोकम् । अत्रानुनासिका यवलाः । मो राजि समः क्वौ ८।३।२५ । सम्राट् । हे मपरे वा ।८।३।२६ किम् ह्मलयति, । किं ह्मलयति । यवलपरे यवला वेति वक्तव्यम् * । यथासंख्यमनुदेशः समानाम् १।३।१० । किय्ँ ह्यः, किं ह्यः । किँव् ह्वलयति, किं ह्वलयति । किँल् ह्लादयति किं ह्लादयति । न परे नः ८।३।२७ किन्न्ह्नुते, किं ह्नुते । ङ्णोः कुक् टुक् शरि ८।३।२८ । यथासंख्येन कुक्टुकौ । तयोरसिद्धत्वान्न जश्त्वम् । चयो द्वितीयाः शरि पौष्करसादेरिति वाच्यम् * प्राङ्ख् षष्ठः, प्राङ्क् षष्ठः, प्राङ् षष्ठः । सुगण्ठ् षष्ठः । सुगण्ट् षष्ठः, सुगण् षष्ठः । डः सि धुट् ८।३।२९ । षट् त्सन्तः, षट् सन्तः । नश्च ८।३।३० । सन्त्सः सन्सः, शि तुक् ८।३।३१ । शश्छोऽटीति छत्वविकल्पः । पक्षे झरो झरीति चलोपः सञ्छम्भुः । सञ्च्छम्भुः सञ्च्शम्भुः, । सञ्शम्भुः । ङमो ह्रस्वादचि ङमुण् नित्यम् ८।३।३२ । प्रत्यङ्ङात्मा, सुगण्णीशः, सन्नच्युतः । समः सुटि ८।३।५ । मस्य रुः स्यात् । अत्रानुनासिकः पूर्वस्य तु वा ८।३।२ । रोः पूर्वस्यानुनासिकः स्यात् । अनुनासिकात्परोऽनुस्वारः ८।३।४ । खरवसानयोर्विसर्जनीयः इति विसर्गे, वा शरीति विकल्पे प्राप्ते । संपुंकानां सो

वक्तव्यः॥ । संस्कर्ता संस्स्कर्ता । समो वा लोपमेके इति भाष्यम् । लोपस्यापि रुप्रकरणस्थत्वाद् अनुस्वारानुनासिकौ स्तः । एवमेकसकारं रूपद्वयम्, पूर्वोक्ते द्विसकारके अनचिचेति द्वित्वे त्रिसकारम् । अनुस्वारविसर्गजिह्वामूलीयोपध्मानीयानामकारोपरि शर्षु च पाठस्योपसंख्यानम् ।॥ इत्यनुस्वारस्य अच्त्वात् । एवं त्रीणि सानुनासिकानि, त्रीणि सानुस्वाराणि । शरः खयः॥ इत्यनुनासिकवतां कद्वित्वे षट् । अनुस्वारवतामनुस्वारस्य शर्त्वात्तस्यानचिचेति द्वित्वे शरः खय इति कद्वित्वे द्वादश । एषामष्टादशानाम् अचो रहाभ्यामिति तकारस्य द्वित्वे पुनः यणो मय इति द्वित्वे, एकतं, द्वितं, त्रितमिति चतुः पञ्चाशत् । अणोऽप्रगृह्यस्येति अनुनासिके अष्टोत्तरशतम् । **पुमः खय्यम्परे** ८।३।६ । पुँस्कोकिलः, पुंस्कोकिलः, पुंस्पुत्रः; पुँस्पुत्रः । ॥ख्याञादेशे न । पुंख्यानम् । **नश्छव्यप्रशान्** ८।३।७ । **विसर्जनीयस्य सः** ८।३।३४ । खरि । शार्ङ्गिँश्छिन्धि शार्ङ्गिंश्छिन्धि, चक्रिँस्त्रायस्व, चक्रिंस्त्रायस्व । **नॄन् पे** ८।३।१० । इति रुः । **कुप्वोः ≍क≍पौ च** ८।३।३७ । चाद्विसर्गः । नॄँ≍पाहि, नॄं≍पाहि, नॄँःपाहि नॄंःपाहि , नॄन् पाहि । **कानाम्रेडिते** ८।३।१५ । **कस्कादिषु च** ८।३।४ । एभ्विण उत्तरस्य विसर्गस्य षः स्यादन्यत्र तु सः । इति सः । कांस्कान्, कस्कः, कौतस्कुतः । सर्पिष्कुण्डिका । धनुष्कपाल आकृतिगणोऽयम् **संहितायाम्** ६।१।७२ । इत्यधिकृत्य **छे च** ६।१।७३ । ह्रस्वस्य छे परे तुक् । स्वच्छाया, शिवच्छाया । श्चुत्वस्यासिद्धत्वाच्चोः कुरिति कुत्वं न । **आङ्माङोश्च** ६।१।७४ । आच्छादयति, माच्छिदत् । **दीर्घात्** ।६।१।७५ । चेच्छिद्यते । **पदान्ताद्वा** । ६।१।७६ । लक्ष्मीच्छाया, लक्ष्मीछाया ।

इति हल्सन्धिः ।

विसर्जनीयस्य सः । विष्णुस्त्राता । **शर्परे विसर्जनीयः** ८।३।३५ कः त्सरुः । घनाघनः क्षोभणः । **वा शरि** ८।३।३६ । हरिश्शेते, हरिः शेते । खर्परे शरि वा विसर्गलोपो वक्तव्यः ॥ । राम स्थाता, रामःस्थाता, रामस्स्थाता । हरि स्फुरति हरिः स्फुरति हरिस्स्फुरति । **सोऽपदादौ** ८।३।३८ । पाशकल्पककाम्येष्विति वाच्यम् ॥। पयस्पाशम् यशस्कल्पम्, यशस्कम् यशस्काम्यति । अनव्ययस्येति वाच्यम् । ॥ । प्रातःकल्पम् । काम्ये रोरेवेति वाच्यम् । गीः' काम्यति । **इणः षः** ।८।३।३९ । पूर्वविषये एव । सर्पिष्पाशमित्यादि । **नमस्पुरसोर्गत्योः** ।८।३।४० । नमस्करोति, पुरस्करोति । **इदुदुपधस्य चाप्रत्ययस्य** ।८।३।४१ । निष्प्रत्यूहम्, आविष्कृतम्, दुष्कृतम् । एकादेशशास्त्रनिमित्तकस्य न षत्वम् । कस्कादिषु भ्रातुष्पुत्रशब्दस्य पाठात् । तेनेह न । मातुः कृपा । मुहुसः प्रतिषेधः ॥। मुहुः कामा । **तिरसोऽन्यतरस्याम्** ।८।३।४२ । तिरस्कर्ता, तिरःकर्ता । **द्विस्त्रिश्चतुरिति कृत्वोर्थे** ।८।३।४३ । द्विष्करोति, द्विःकरोति । त्रिष्करोति, त्रिःकरोति, चतुष्करोति, चतुःकरोति । **इसुसोः सामर्थ्ये** ।८।३।४४ सर्पिष्करोति, सर्पिःकरोति । धनुष्करोति । धनुःकरोति । **नित्यं समासेऽनुत्तरपदस्थस्य** ।८।३।४५ । सर्पिष्कुण्डिका, धनुष्कपालम् । कस्कादिषु च

सर्पिष्कुण्डिकाशब्दो ऽसमासे व्यपेक्षाविरहेऽपि षत्वार्थः, व्यपेक्षायां नित्यार्थश्च। **अतः कृकमिकंसकुम्भपात्रकुशाकर्णीष्वनव्ययस्य** ।८।३।४६। अयस्कारः, अयस्कामः, अयस्कंसः, अयस्कुम्भः, अयस्पात्रम्, अयस्कुशा, अयस्कर्णी। **अधःशिरसी पदे** ।८।३।४७। समास एव, अनुत्तरपदस्थस्यैव। अधस्पदम्, शिरस्पदम्,। कस्कादिषु च। भास्करः। इति विसर्गसन्धिः–शिवस् अर्च्य इति स्थिते। **ससजुषो रुः** ।८।२।६६। **अतो रोरप्लुतादप्लुते** ।६।१।११३। सूत्रारम्भसामर्थ्यादुत्वं प्रति रुत्वस्यासिद्धत्वं न भवति, शिव उ अर्च्य इति स्थिते। **प्रथमयोः पूर्वसवर्णः** ।६।१।१०२। इति पूर्वसवर्णदीर्घे प्राप्ते। **नादिचि** ।६।१।१०४। इति निषेधः, आद् गुणः, एङः पदान्तादति। शिवोऽर्च्यः। **हशि च** ६।१।११४। शिवो वन्द्यः। **भो भगो अघो अपूर्वस्य योऽशि** ८।३।१७। **लोपः शाकल्यस्य**। देवा इह। देवायिह। भोस् भगोस् अघोस् इति निपाताः। तेषां रोर्यत्वे कृते। **व्योर्लघुप्रयत्नतरः शाकटायनस्य** ।८।३।१८। पदान्तयोर्वयोर्वा लघूच्चारणौ यवौ स्तोऽशि परे। भो यच्युत। पक्षे। **ओतो गार्ग्यस्य**।८।३।२०। यवयोर्लोपः स्यात्। भो अच्युत। **उञि च पदे** ।८।३।२१। नित्यं लोपः स्यात्। स उ एकाग्निः। **हलि सर्वेषाम्** ।८।३।२२। भो देवाः, भगो नमस्ते, अघो याहि, देवा नम्याः। **रो ऽसुपि** ।८।२।६९। अह्नोऽसुपि रेफादेशः। अहरहः, अहर्गणः। रूपरात्रिरथन्तरेषु रुत्वं वाच्यम्*। अहोरूपम् अहोरात्रः, अहोरथन्तरम्। अहरादीनां पत्यादिषु वा रेफः*। अहर्पतिः, गीर्पतिः, धूर्पतिः पक्षे। विसर्गोपध्मानीयौ। **रो रि** ।८।३।१४। लोपः स्यात्। **ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः** ।६।३।१११। पुना रमते, हरी रम्यः, शम्भू राजते। रोरीत्यस्यासिद्धत्वादुत्वमेव। मनोरथः। **एतत्तदोः सुलोपो ऽकोरनञ्समासे हलि** ६।१।१३२। एष विष्णुः स शम्भुः। **सो ऽचि लोपे चेत् पादपूरणम्** ।६।१।१३४। सेमामविड्ढि प्रभृतिं य ईशिषे। ऋक्पाद एवेति वामनः। अविशेषात् श्लोकपादोऽपीत्यपरे। सैष दाशरथी रामः, सैष राजा युधिष्ठिरः। इत्यादि। इति स्वादिसन्धिः।

अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम् ।१।२।४५। **कृत्तद्धितसमासाश्च** ।१।२।४६। एते प्रातिपदिकसंज्ञाः स्युः। **प्रत्ययः**।३।१।१। **परश्च** ।३।१।२। अधिक्रियेते। **ङ्याप्प्रातिपदिकात्** ।४।१।१।अयमपि तथा॥ **स्वौजसमौट्छष्टाभ्याम्भिस्ङेभ्याम्भ्यस्ङसिभ्याम्भ्यस्ङसोसाम्ङ्योस्सुप्** ४।१।२। सु औ जस् इत्यादीनां सप्तानां त्रिकाणां प्रथमादयः सप्तम्यन्ताः प्राचां संज्ञास्ताभिरिहापि व्यवहारः। **सुपः** ।१।४।१०३। सुपस्त्रीणि त्रीणि वचनान्येकश एकवचनद्विवचनबहुवचनसंज्ञाः स्युः। **विभक्तिश्च** ।१।४।१०४। सुप्तिङौ विभक्तिसंज्ञौ स्तः। **द्व्येकयोर्द्विवचनैकवचने** ।१।४।२२। रुत्वविसर्गौ रामः। **सरूपाणामेकशेष एकविभक्तौ**।१।२।६४। प्रथमयोः पूर्वसवर्णः इति प्राप्ते नादिचि। वृद्धिरेचि रामौ

बहुषु बहुवचनम् १।४।२२। राम जस् इति स्थिते । **चुटू** १।३।७। प्रत्ययाद्यौ इतौ स्तः । **न विभक्तौ तुस्माः** १।३।४। इति सस्य नेत्वम्। **अतो गुणे** ६।१।९७। पररूपमेकादेशः स्यादिति प्राप्ते । परत्वात्पूर्वसवर्णदीर्घः । रामाः । **एकवचनं संबुद्धिः** ।२।३।४९। **एङ्ह्रस्वात्संबुद्धेः** ।६।१।६९। एङन्ताद्ध्रस्वान्ताच्चाङ्गात् हल्लुप्यते, संबुद्धेश्चेत् । हेराम, हेरामौ, हेरामाः । **अमि पूर्वः** ।६।१।१०७। रामम् । रामौ । **लशक्वतद्धिते** ।१।३।८। प्रत्ययाद्या एते इतः स्युः । **तस्माच्छसो नः पुंसि** ६।१।१०३। **अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि** ।८।४।२। रषाभ्यां परस्य नस्य णः स्यात्समानपदे । **पदान्तस्य** ८।४।३७। नस्य णत्वं न स्यात् । रामान् । **यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गम्** ।१।४।१३। **अङ्गस्य** ।६।४।१। इत्यधिकृत्य । **टाङसिङसामिनात्स्याः** ।७।१।१२। अतोऽङ्गादित्यर्थः । रामेण । **सुपि च** ।७।३। यञादौ सुप्यतोऽङ्गस्य दीर्घः स्यात् । रामाभ्याम् । **अतो भिस ऐस्** । ७।१।१०९। रामैः । **ङेर्यः** ।७।१।१३। रामाय । रामाभ्याम् । **बहुवचने झल्येत्** ।७।३।१०३। रामेभ्यः । **वाऽवसाने** ८।४।५६ झलां चरो वा स्युः । रामात्, रामाद् । रामाभ्याम् । रामेभ्यः । रामस्य । **ओसि च** ७।३।१०४। रामयोः । **ह्रस्वनद्यापो नुट्** ।७।१।५४। आमो नुट् स्यात् । **नामि** ६।४।३। दीर्घः स्यात् । रामाणाम् । रामे । रामयोः । **अपदान्तस्य मूर्धन्यः** ८।३।५५। **इण्कोः** ८।३।५७। इत्यधिकृत्य । **आदेशप्रत्यययोः** ।८।३।५९। इण्कवर्गाभ्यां परस्यापदान्तस्यानयोः सस्य मूर्धन्यादेशः स्यात् । रामेषु । **सर्वादीनि सर्वनामानि** ।१।१।२७। **जसः शी** ।७।१।१७। अतः सर्वादेः परस्य शी स्यात् । सर्वे । **सर्वनाम्नः स्मै** ।७।१।१४। सर्वस्मै । **ङसिङ्योः स्मात्स्मिनौ** ।७।१।१५। सर्वस्मात् । **आमि सर्वनाम्नः सुट्** ।७।१।५२। एत्वषत्वे । सर्वेषाम् । सर्वस्मिन् । शेषं रामवत् । एवं विश्वादयोऽप्यदन्ताः । सर्वादयः पञ्चत्रिंशत् । सर्व, विश्व, उभ, उभय, डतर, डतम, अन्य, अन्यतर, इतर, त्वत्, त्व, नेम, सम, सिम, पूर्वपरावरदक्षिणोत्तरापराधराणि व्यवस्थायामसंज्ञायाम्, स्वमज्ञातिधनाख्यायाम्, अन्तरं बहिर्योगोपसंव्यानयोः, त्यद्, तद्, यद्, एतद्, इदम्, अदस्, एक, द्वि, युष्मद्, अस्मद्, भवत्, किम् । इति । उभशब्दो नित्यं द्विवचनान्तः, तस्येह पाठो ह्यकजर्थः । उभयशब्दस्य द्विवचनं नास्तीति कैयटः । अस्तीति हरदत्तः । समः सर्वपर्यायः । तुल्यपर्यायस्तु नेह गृह्यते यथासंख्यमनुदेशः समानामिति ज्ञापकात् । **पूर्वपरावरदक्षिणोत्तरापराधराणि व्यवस्थायामसंज्ञायाम्** ।१।१।३४। जसि वा सर्वनामसंज्ञानि स्युः । पूर्वे, पूर्वाः । स्वाभिधेयापेक्षावधिनियमो व्यवस्था । **स्वमज्ञातिधनाख्यायाम्** ।१।१।३५। स्वे, स्वाः । **अन्तरं बहिर्योगोपसंव्यानयोः** ।१।१।३६। अन्तरे, अन्तरा वा गृहाः, बाह्या इत्यर्थः । अन्तरे, अन्तरा वा शाटकाः । परिधानीया इत्यर्थः । **पूर्वादिभ्यो नवभ्यो वा** ।७।१।१६। एभ्यो ङसिङ्योः स्मात्स्मिनौ वा स्तः । पूर्वस्मात्, पूर्वात्, पूर्वस्मिन्, पूर्वे । एवं परादीनामपि । शेषं सर्ववत् । **न बहुव्रीहौ** ।१।१।२९। बहुव्रीहौ

चिकीर्षिते सर्वनामसंज्ञा न स्यात्। त्वकं पिता यस्य सः, त्वत्कपितृकः, एवं मत्कपितृकः। भाष्यकारस्तु त्वकत्पितृकः, मकत्पितृक इति रूपे इष्टापत्तिं कृत्वैतत्सूत्रं प्रत्याचख्यौ। **तृतीयासमासे** ।१।१।३०। मासपूर्वाय। **द्वन्द्वे च** ।१।१।३१। वर्णाश्रमेतराणाम्। **विभाषा जसि** ।१।१।३। वर्णाश्रमेतरे, वर्णाश्रमेतराः। **प्रथमचरमतयाल्पार्द्धकतिपयनेमाश्च** ।१।१।३३। प्रथमे, प्रथमाः। शेषं रामवत्। तयप्रत्ययस्ततस्तदन्ता ग्राह्याः। द्वितये, द्वितयाः। शेषं रामवत्। नेमे, नेमाः। शेषं सर्ववत्। **जराया जरसन्यतरस्याम्** ।७।२।१०१। अजादौ विभक्तौ। निर्जरः, निर्जरसौ, निर्जरौ। निर्जरसः, निर्जराः; इत्यादि। **पद्दन्नोमास्हृन्निशसन्यूषन्दोषन्यकञ्छकन्नुदन्नासञ्छस्प्रभृतिषु** ।६।१।६३। पाद, दन्त, नासिका, मास, हृदय, निशा, असृज, यूष, दोष, यकृत्, शकृत्, उदक, आस्य, एषां पदादय आदेशाः स्युः शसादौ वा। पादः पादौ पादाः। पादम्। पादौ पदः पादान्। पदा, पादेन, इत्यादि। पक्षे रामवत्। **सुडनपुंसकस्य** ।१।१।४३। स्वादि पञ्च वचनानि सर्वनामस्थानसंज्ञानि स्युः, न तु नपुंसकस्य। **स्वादिष्वसर्वनामस्थाने** ।१।४।१७। पूर्वं पदसंज्ञं स्यात्। **यचि भम्** ।१।४।१८। **आ कडारादेका संज्ञा** ।१।४।१। इत आरभ्य कडाराः कर्मधारय इति पर्यन्तमेकस्य एकैव संज्ञा ज्ञेया। या परा ऽनवकाशा च। इति भसंज्ञा। दतः, दता। भ्यामि पदत्वाद् जश्त्वम्। दद्भ्यामित्यादि। मासः मासान्। भ्यामि रुत्वे यत्वे च यलोपः। माभ्याम्, मासाभ्यामित्यादि। **अल्लोपोऽनः** ।६।४।१३४। भसंज्ञकस्य अन्नन्तस्याकारस्य लोपः स्यात्। **रषाभ्यां नो णः समानपदे** ।८।४।१। यूष्णः, यूष्णा। भ्यामि। **नलोपः प्रातिपदिकान्तस्य** ।८।२।७। इति नलोपः। **पूर्वत्रासिद्धम्** ८।२।१। अधिकारोऽयम्। तेन सपादसप्ताध्यायीं प्रति त्रिपाद्यसिद्धा त्रिपाद्यामपि पूर्वं प्रति परं शास्त्रमसिद्धम्। इति नलोपस्यासिद्धत्वाद् दीर्घत्वमैस्त्वमेत्वं च न। यूषभ्याम्, यूषभिरित्यादि। **विभाषा ङिश्योः** ।६।४।१३६। अन्नन्तस्याकारस्य लोपो वा स्यात्, ङिश्योः परयोः। यूष्णि, यूषणि। पक्षे रामवत्। द्वयोरह्नोर्भवो द्व्यह्नः। **संख्याविसायपूर्वस्याह्नस्याहन्नन्यतरस्यां ङौ** ।६।३।११०। द्व्यह्नि, द्व्यहनि, द्व्यह्ने। एवम्, व्यह्नि, व्यहनि, व्यह्ने। सायाह्नि, सायाहनि, सायाह्ने। इत्यदन्ताः। विश्वपाः। नादिचि। विश्वपौ, विश्वपाः। **आतो धातोः** ।६।४।१४७। आकारान्तस्य धातोर्भस्याङ्गस्य लोपः स्यात्। अलोऽन्त्यस्य। विश्वपः, विश्वपा। विश्वपाभ्यामित्यादि। एवं शंखध्मादयः। आत इति योगविभागादधातोरप्याकारलोपः क्वचित्। क्त्वः, ह्नः। इत्यादन्ताः। हरिः। प्रथमयोः पूर्वसवर्णः। हरी। **जसि च** ।७।३।१०९। ह्रस्वान्तस्याङ्गस्य गुणः स्याज्जसि परे। हरयः। **ह्रस्वस्य गुणः** ।७।३।१०८। संबुद्धौ एङ् ह्रस्वादिति संबुद्धिलोपः। हे हरे। हरिम्। हरी, हरीन्। **शेषो घ्यसखि** ।१।४।७। ह्रस्वाविदुतौ घिसंज्ञौ स्तः। **आङो नाऽस्त्रियाम्** ।७।३।१२०। घेः परस्येत्यर्थः। आङिति टासंज्ञा प्राचाम्। हरिणा। **घेर्ङिति** ।७।३।१११। घिसंज्ञस्य ङिति सुपि गुणः स्यात्।

हरये । ङसिङसोश्च ।६।१।११०। एङो ङसिङसोरति परे पूर्वरूपमेकादेशः स्यात्। हरेः, हर्योः, हरीणाम् । अच्च घेः ।७।३।११९। ङेरौत्स्यात् । घेरच्च । हरौ, हर्योः, हरिषु । एवं श्रीपत्यग्निरविकव्यादयः । अनङ् सौ ।७।१।९३। सख्युरङ्गस्यानङ् स्यादसंबुद्धौ सौ परे । अलोऽन्त्यात्पूर्व उपधा ।१।१।६५। सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ ।६।४।८। नान्तस्योपधाया दीर्घः स्यादसंबुद्धौ सर्वनामस्थाने परे । इत्युपधादीर्घः । अपृक्त एकाल्प्रत्ययः ।१।२।४१। हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात् सुतिस्यपृक्तं हल् ।६।१।६८। इति सु लोपः । नलोपः प्रातिपदिकान्तस्येति नलोपः । सखा । हे सखे ! सख्युरसंबुद्धौ ।७।१।९२। सर्वनामस्थाने परे णित्कार्यं स्यात् । अचो ञ्णिति ।७।२।११५। ञिति णिति च परे ऽजन्ताङ्गस्य वृद्धिः स्यात् । सखायौ, सखायः, सखायम्, सखायौ । घिसंज्ञाऽभावान्न तत्कार्यम् । सख्या सख्ये । ख्यत्यात्परस्य ।६।१।११२। ङसिङसोरत उत्स्यात् । सख्युः । औत् ।७।३।११८। इदुद्भ्यां परस्य ङेरौत्स्यात् । सख्यौ, शोभनः सखा सुसखा, सुसखायावित्यादि । समुदायस्य सखिरूपत्वाभावादसखीति निषेधाप्रवृत्तेर्घिसंज्ञा । सुसखिना, सुसखये । एवमतिसखा, अतिसखायौ, परमसखा, परमसखायावित्यादि । सखायमतिक्रान्तोऽतिसखिः । लिङ्गविशिष्टपरिभाषाया अनित्यत्वान्न टच् । गोस्त्रियोरिति ह्रस्वत्वे सखिशब्दस्य लाक्षणिकत्वादनङ्णित्वे न भवतः । लक्षणप्रतिपदोक्तयोः प्रतिपदोक्तस्यैव ग्रहणात् । पतिः समास एव ।१।४।८। घिसंज्ञः स्यात् । पत्या, पत्ये, पत्युः, पत्यौ । शेषं हरिवत् । समासे भूपतिना । बहुगणवतुडतिसंख्या ।१।१।२३। डति च ।१।१।२५। डत्यन्ता संख्या षट् संज्ञा स्यात् । प्रत्ययस्य लुक्श्लुलुपः ।१।१।६१। षड्भ्यो लुक् ।७।१।२२। जश्शसोर्लुक् स्यात् । कति । प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम् ।१।१।६२। इति जसिचेति गुणे प्राप्ते । न लुमताऽङ्गस्य ।१।१।६३। अङ्गकार्यं न स्यात् । कति । कतिभिः, कतिभ्यः । कतीनाम् । कतिषु । त्रिशब्दो नित्यं बहुवचनान्तः । त्रयः । त्रीन् । त्रेस्त्रयः ।७।१।५३। त्रयाणाम् । द्विशब्दो नित्यं द्विवचनान्तः । त्यदादीनामः ।७।२।१०२। द्विपर्यन्तानामेवेष्टिः । द्वौ २ द्वाभ्याम् ३ द्वयोः २ । संज्ञायामुपसर्जने च नात्वम्, सर्वाद्यन्तर्गणकार्यत्वात् । द्विर्नाम कश्चित् । औडुलोमिः, औडुलोमी । लोम्नोऽपत्ये बहुष्वकारो वक्तव्यः । उडुलोमाः । औडुलोमिम्, औडुलोमी उडुलोमान् । इतोदन्ताः । वातप्रमीः, दीर्घाज्जसि च ।६।१।१०५। जसि इचि च न पूर्वसवर्णदीर्घः । वातप्रम्यौ, । वातप्रमीम्, वातप्रम्यौ, वातप्रमीन्-वातप्रम्ये । दीर्घत्वान्न नुट् । वातप्रम्याम् । ङौ तु सवर्णदीर्घः । वातप्रमी । वातप्रमीषु । एवं ययी पपीत्यादयः । क्विबन्तवातप्रमीशब्दस्य तु अमि शसि ङौ च विशेषः । वातप्रम्यम्, वातप्रम्यः, वातप्रम्यि । एरनेकाच इति वक्ष्यमाणेन यण् । बहुश्रेयसी । हल्ङ्याबिति सुलोपः । यूस्त्र्याख्यौ नदी ।१।४।३। प्रथमलिङ्गग्रहणं च । पूर्वं स्त्र्याख्यस्योपसर्जनत्वेऽपि नदीत्वं वक्तव्यमित्यर्थः । अम्बार्थनद्योर्ह्रस्वः ।७।३।१०७। संबुद्धौ ह्रस्वः

स्यात्। हे बहुश्रेयसि। बहुश्रेयसीन्। आण् नद्याः ।७।३।११२ ङितामाडागमः स्यात्। आटश्च ।६।१।९०। अचि परे वृद्धिरेकादेशः स्यात्। बहुश्रेयस्यै। बहुश्रेयस्याः। विप्रतिषेधे परं कार्यम् ।१।४।२। यणि प्राप्ते नद्यन्तत्वात् परत्वान्नुट्। बहुश्रेयसीनाम्। ङेराम् नद्याम्नीभ्यः ।६।३।१०६। परत्वादाटा नुड् बाध्यते। बहुश्रेयस्याम्। अङ्यन्तत्वान्न सुलोपः। अतिलक्ष्मीः। शेषं बहुश्रेयसीवत्। कुमारीमिच्छन् आचरन् वा ब्राह्मणः कुमारी। क्यजन्तात् आचारक्विबन्ताद् वा कर्तरि क्विप्। हल्ङ्याब्भ्य इति सुलोपः। अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ ।६।४।७७। अजादौ स्तः, इति प्राप्ते। एरनेकाचोऽसंयोगपूर्वस्य ।६।४।८२। यण् स्यादजादौ प्रत्यये परे। कुमार्यौ कुमार्यः। अमि शसि कुमार्यम्, कुमार्यः। कुमार्यै। कुमारीणाम्, कुमार्याम्। एवं प्रधीः। प्रध्यौ इत्यादि। असंयोगपूर्वस्य धात्ववयवस्यैवात्र ग्रहणादिह स्यादेव। उन्न्यौ उन्न्यः। इह तु न सुश्रियौ यवक्रियौ। गतिकारकेतरपूर्वपदस्य यण् नेष्यते। ❀। शुद्धधियौ, परमधियौ। कथं तर्हि दुर्धियः, वृश्चिकभियः इत्यादि। उच्यते। यत्क्रियायुक्ताः प्रादयस्तं प्रत्येव गत्युपसर्गसंज्ञाः स्युरित्युक्तेः। दुःस्थिता धीर्येषामिति विग्रहे दुरित्यस्य धीशब्दं प्रति गतित्वमेव नास्ति। वृश्चिकभिय इत्यत्र तु बुद्धिकृतमपादानत्वं न विवक्षितम्। वृश्चिकसंबन्धिनी भीर्वृश्चिकभीरित्युत्तरपदलोपो वा। न भूसुधियोः ।६।४।८५। यण् न स्यादचि सुपि। सुधियौ, सुधियः। इत्यादि। सखायमिच्छति सखीयति। ततः क्विप्। अल्लोपयलोपौ। अल्लोपस्य स्थानिवत्त्वाद् यणि प्राप्ते। क्वौ लुप्तं न स्थानिवत्। एकदेशविकृतस्यानन्यतया अनङ्णित्वे भवतः। सखा, सखायौ, सखायः। हेसखाः। असि पूर्वरूपात्परत्वाद् यणि प्राप्ते ततोऽपि परत्वात्सख्युरसंबुद्धाविति प्रवर्तते। सखायम्। शसि यण्, सख्यः। सह खेन वर्तते इति सखः, तमिच्छतीति सखीः। सखिरूपाभावादनङ्णित्वे न भवतः। एवम्। सुखीः सुतीः। एरनेकाच इति यण्। सख्यौ सुख्यौ सुत्यौ। ख्यत्यादिति ख्यत्यग्रहणादुकारः। सख्युः सुख्युः सुत्युः। एवमेव, लूनीः क्षामीः, प्रस्तोमीः। नत्वमत्वयोरसिद्धत्वात् ख्यत्यादित्युत्वम्। लून्युः। क्षाम्युः, प्रस्तीम्युः। शुष्कीयतेः क्विप्। शुष्कीः। इयङ्। शुष्कियौ, शुष्कियः। इत्यादि। इतीदन्ताः। शम्भुर्हरिवत्। एवं विष्णुवायुभान्वादयः। तृज्वत्क्रोष्टुः ।७।१।९५। असंबुद्धौ सर्वनामस्थाने परे। ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः ।७।३।११०। गुणः स्यात्। इति प्राप्ते। ऋदुशनस्पुरुदंसोऽनेहसां च ।७।१।९४। एषामनङ् स्यादसंबुद्धौ सौ परे। क्रोष्टा। अप्तृन्तृच्स्वसृनप्तृनेष्टृत्वष्टृक्षत्तृहोतृपोतृप्रशास्तॄणाम् ।६।४।११। अबादीनामुपधाया दीर्घः स्यादसंबुद्धौ सर्वनामस्थाने परे। क्रोष्टारौ, क्रोष्टारः। क्रोष्टारम्, क्रोष्टारौ, क्रोष्टून्। विभाषा तृतीयादिष्वचि ।७।१।९७। अजादिषु तृतीयादिषु क्रोष्टुर्वा तृज्वत्। क्रोष्ट्रा क्रोष्टुना, इत्यादि। ऋत उत् ।६।१।१११। ङसिङसोरृति उकार एकादेशः स्यात्। रपरत्वम्। रात्सस्य ।८।२।२४। रेफात्सस्यैव लोपो नान्यस्य। क्रोष्टुः। आमि परत्वात्तृज्वद्भावे प्राप्ते। नुमचिरतृज्वद्भावेभ्यो नुट् पूर्वविप्रतिषेधेन। ❀। क्रोष्टूनाम्, क्रोष्टरि। पक्षे

हलादौ च शम्भुवत् । इत्युदन्ताः । हूहूः, हूह्वौ हूह्वः । अतिचमूशब्दे तु नदीकार्यं विशेषः । हे अतिचमु । अतिचम्वै अतिचम्वाः २ अतिचमूनाम् , अतिचम्वाम् । खलपूः । ओः सुपि ।६।४।८३। धात्ववयवसंयोगपूर्वो न भवति य उवर्णस्तदन्तो यो धातुस्तदन्तस्यानेकाचोऽङ्गस्य यण् स्यादजादौ सुपि । खलप्वौ खलप्वः । एवं सुल्वादयः । स्वभूः । न भूसुधियोः । स्वभुवौ, स्वभुवः । गतिकारकेतरपूर्वपदस्य यण् नेष्यते । परमलुवौ परमलुवः । वर्षाभ्वश्च ।६।४।८४। वर्षाभ्वौ, वर्षाभ्वः । दृन्भूः । दृन्करपुनःपूर्वस्य भुवो यण् वक्तव्यः । * । दृन्भ्वौ, दृन्भ्वः । इत्यादि । खलपूवत् । एवं करभूपुनर्भूशब्दावपि । दृन्भूकारभूशब्दौ स्वयंभूवत् । इत्यूदन्ताः । धाता, धातारौ, धातारः । ऋवर्णान्नस्य णत्वं वाच्यम् । * । धातॄणाम् । एवं नप्त्रादयः । पिता, पितरौ, पितरः । पितरम्, पितरौ । शेषं धातृवत् । एवं जामात्रादयः । ना नरौ नरः । नृ च ।६।४।६। नृशब्दस्य नामि वा दीर्घः । नृणाम्, नॄणाम् । इति ऋदन्ताः । कृ तृ अनयोरनुकरणे प्रकृतिवदनुकरणमिति वैकल्पिकातिदेशादित्वे रपरत्वम् । कीः किरौ किरः । तीः तिरौ तिरः । इत्यादि गीर्वत् । पक्षे कॄः क्रौ क्रः । इत्यादि । इति ॠदन्ताः । गम्लृ शक्लृ अनयोरनुकरणेऽनङ् । गमा, शका । गुणविषये लपरत्वम्, गमलौ गमलः । ङसिङसोस्तु ऋत उदित्युत्वे लपरत्वे संयोगान्तलोपे गमुल् , शकुल् , इत्यादि । इति लृदन्ताः । सेः, सयौ, सयः, ङसिङसोश्चेति पूर्वरूपे । सेः, इत्यादि । इत्येदन्ताः । गोतो णित् ।७।१।९०। सर्वनामस्थाने वृद्धिः, गौः गावौ गावः । औतोऽम्शसोः ।६।१।९३। आ ओत इति च्छेदः । शसा साहचर्यात्सुबेव अम् गृह्यते । गाम्, गावौ गाः । गोः इत्यादि । ओतोणिदिति वाच्यम् । * । सुद्यौः सुद्यावौ सुद्यावः । इत्यादि । विहितविशेषणं च । * । ओकारान्ताद्विहित सर्वनामस्थानं णिद्वदिति व्याख्यानान्नेह । हेभानो भानवः । उः स्मृतो येन सः । स्मृतोः स्मृतावौ स्मृतावः । स्मृताम् । इत्यादि । इत्योदन्ताः । रायो हलि ।७।२।८५। आकारान्तादेशः स्याद्धलि विभक्तौ । अचि आयादेशः । राः रायौ रायः । राभ्यामित्यादि । इत्यैदन्ताः । ग्लौः, ग्लावौ, ग्लावः, इत्यौदन्ताः । इत्यजन्ताः पुँल्लिङ्गाः ।

रमा । औङ आपः ।७।३।१८। शी स्यात् । औङित्यौकारविभक्तेः संज्ञा । रमे, रमाः । संबुद्धौ च ।७।४।१०६। आप एकारः स्यात् संबुद्धौ । एङ् ह्रस्वादिति संबुद्धिलोपः । हे रमे, हे रमे, हे रमाः । णत्वान्नत्वाभावः । रमाः । आङि चापः ।७।३।१५०। आङि ओसि चाप एकारः स्यात् । रमया, रमाभ्याम्, रमाभिः । याडापः ।७।३।११३। ङिद्वचनस्येत्यर्थः । वृद्धिरेचि । रमायै । सवर्णदीर्घः । रमायाः । रमयोः, रमाणाम् । रमायाम्, रमयोः, रमासु । एवं दुर्गादयः । सर्वनाम्नः स्याड्ढ्रस्वश्च ।७।३।११४। याटोऽपवादः । सर्वस्यै, सर्वस्याः २ सर्वयोः २ सर्वासाम्, सर्वस्याम् । एवं विश्वादय आबन्ताः । विभाषा दिक्समासे बहुव्रीहौ ।१।१।२८। उत्तरपूर्वस्यै, उत्तरपूर्वायै । गणसूत्रे अपुरीत्युक्तेर्नेह । अन्तरायै नगर्यै । विभाषा द्वितीयातृतीयाभ्याम् ।७।३।११५। तीयस्य ङित्सूपसंख्यानादिदं सूत्रं त्यक्तुं शक्यम् । द्वितीयस्यै, द्वितीयायै । द्वितीयस्याः २, द्वितीयायाः २ । द्वितीयस्याम्, द्वितीयायाम् । शेषं रमावत् ।

एवं तृतीया। अम्बार्थनद्योर्ह्रस्वः। हे अम्ब ! हे अक्क ! हे अल्ल ! ।। असंयुक्ता ये डलकास्तद्वतां ह्रस्वो न। हे अम्बाडे, हे अम्बाले, हे अम्बिके ! जरा। औङि शीभावाद् आमि नुटः परत्वाज्जरस् जरसी जरसामित्यादि। पक्षे हलादौ च रमावत्। औङ आप इत्यादौ आ आप इति प्रश्लेषात् आकाररूपस्यैवापो ग्रहणेन स्थानिवद्भावेन शीयाडादिकं न। एवं हल्ङ्यादिसूत्रेऽपि ङी ई, आ आबिति प्रश्लेषात् निष्कौशाम्बिः अतिखट्वः इत्यादौ सुलोपो न। पद्न इति नासिकाया नस्। नसः नसा नोभ्यामित्यादि। पक्षे सुटि च रमावत्। निशाया निश्। निशः निशा। **व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः** ।८।२।३६। एषां षः स्याद् झलि पदान्ते च। षस्य जश्त्वेन डः। निड्भ्याम्, निड्भिः। सुपि। डः सि धुडिति पक्षे धुट्। चर्त्वम्। न पदान्तादिति निषेधात् ष्टुत्वं न। निट्त्सु, निट्सु। षढोः कः सि ।८।२।४१। इति तु न, जश्त्वं प्रत्यसिद्धत्वात्। केचित्तु व्रश्चादि सूत्रे धातोरित्यनुवर्तयन्ति। तन्मते जश्त्वेन जकारे निज्भ्याम्, निज्भिः। जश्त्वं श्चुत्वं चर्त्वम्। निच्शु। चोः कुरिति कुत्वं न भवति जश्त्वस्यासिद्धत्वात्। मांसपृतनासानूनां मांस्पृत्स्नवो वाच्याः शसादौ वा ॐ पृतः पृता पृद्भ्याम्। पक्षे सुटि च रमावत्। गोपा विश्वपावत्। मतिः प्रायेण हरिवत्। स्त्रीत्वान्नत्वाभावः। मतीः। अस्त्रियामित्युक्तेः, मत्या। **ङिति ह्रस्वश्च** ।१।४।६। इयङुवङ्स्थानौ स्त्रीशब्दभिन्नौ नित्यस्त्रीलिङ्गावीदूतौ ह्रस्वौ च इउवर्णौ स्त्रियां वा नदीसंज्ञौ स्तो ङिति परे। आण् नद्याः। मत्यै, मतये, मत्याः, मतेः। **इदुद्भ्याम्** ।७।३।११७। नदीसंज्ञकाभ्याम् परस्य ङेराम् स्यात्। पक्षे अच्च घेः। मत्याम्, मतौ। एवं श्रुतिस्मृत्यादयः। **त्रिचतुरोः स्त्रियां तिसृचतसृ** ।७।२।९९। स्त्रीलिङ्गयोरेतयोरेतावादेशौ स्तो विभक्तौ परतः। **अचि र ऋतः** ।७।२।१००। तिसृचतस्रो रेफः स्यादचि। गुणदीर्घोत्वानामपवादः। तिस्रः २ आमि नुमचिरेति नुट्। **न तिसृचतसृ** ।६।४।४। एतयोर्नामि दीर्घो न स्यात्। तिसृणाम्। तिसृषु। स्त्रियामिति त्रिचतुरोर्विशेषणम्। त्रिचतुरोः स्त्रीत्वे एव तिसृचतसौ स्त इत्युक्तेर्नेह। प्रियास्त्रयस्त्रीणि वा यस्याः सा प्रियत्रिः। मतिवत्। अत्र त्रिशब्दस्य पुंसि नपुंसके च वर्तमानत्वान्न तिस्रादेशः। आमि तु प्रियत्रयाणामिति विशेषः। प्रियास्तिस्रो यस्य स इति विग्रहे प्रियतिसा, प्रियतिस्रौ, प्रियतिस्रः, प्रियतिस्रमित्यादि। प्रियास्तिस्रो यस्य तत्कुलं प्रियत्रि। स्वमोर्लुका लुप्तत्वेन प्रत्ययलक्षणाभावान्न तिस्रादेशः। न लुमतेति निषेधस्यानित्यत्वात्, पक्षे प्रियतिसृ। रादेशात्पूर्वविप्रतिषेधेन नुम्। प्रियतिसृणि। तृतीयादिषु वक्ष्यमाणपुंवद्भावविकल्पात्पर्यायेण नुमरभावौ। प्रियतिस्रा, प्रियतिसृणा। इत्यादि, द्वेरत्वे सत्याप् द्वे २ द्वाभ्याम् ३ द्वयोः २। गौरी, गौर्यौ, गौर्यः। नदीकार्यम् हेगौरि। गौर्यै। इत्यादि। एवं वाणीनद्यादयः। प्रातिपदिकग्रहणे लिङ्गविशिष्टस्यापि ग्रहणादनङ् णिद्वद्भावे च प्राप्ते। 'विभक्तौ लिङ्गविशिष्टस्याग्रहणम्'। सखी, सख्यौ, सख्यः। इत्यादि गौरीवत्। अङ्यन्तत्वान्न सुलोपः। लक्ष्मीः। शेषं गौरीवत्। स्त्री, हे स्त्रि। **स्त्रियाः** ।६।४।७९। स्त्रीशब्दस्येयङ् स्यादजादौ प्रत्यये परे। स्त्रियौ, स्त्रियः। **वाऽम्शसोः** ।६।४।८०। पूर्ववत्। स्त्रियम्, स्त्रीम्, स्त्रियौ, स्त्रियः स्त्रीः। स्त्रियै, स्त्रियाः। परत्वान्नुट्। स्त्रीणाम्। स्त्रियाम्, स्त्रियोः, स्त्रीषु। स्त्रियमतिक्रान्तः अतिस्त्रिः, अतिस्त्रियौ। गुणनाभावौत्वनुड्भिः

परत्वात्पुंसि बाधते। क्लीबे नुमा च स्त्रीशब्दस्येयङिस्यत्र वार्यताम् ।१। अतिस्त्रयः । हे अतिस्त्रे, हे अतिस्त्रियौ, हे अतिस्त्रयः। अतिस्त्रियम्, अतिस्त्रिम्, अतिस्त्रियौ, अतिस्त्रियः अतिस्त्रीन्। अतिस्त्रिणा। घेर्ङिति। अतिस्त्रये। अतिस्त्रेः२ अतिस्त्रीणाम्। अच्च घेः। अतिस्त्रौ। ओस्यौकारे च नित्यं स्यादम्शसोस्तु विभाषया। इयादेशो ऽचि नान्यत्र स्त्रियाः पुंस्युपसर्जने ॥ क्लीबे तु नुम्। अतिस्त्रि, अतिस्त्रिणी अतिस्त्रीणि। ङेप्रभृताबजादौ वक्ष्यमाणपुंवद्भावविकल्पः। अतिस्त्रिणे, अतिस्त्रये। अतिस्त्रिणः२ अतिस्त्रेः। इत्यादि। स्त्रियां तु प्रायेण पुंवत्। शसि अतिस्त्रीः अस्त्रियामित्युक्तेः। अतिस्त्रिया। ङिति ह्रस्वश्चेति ह्रस्वान्तत्वप्रयुक्तो विकल्पः। अस्त्रीति तु इयङुवङ्स्थानावित्यस्यैव पर्युदासः, तत्संबद्धस्यैवानुवृत्तेर्दीर्घस्यायं निषेधो न तु ह्रस्वस्य। अतिस्त्रियै, अतिस्त्रये। अतिस्त्रियाः, अतिस्त्रेः। अतिस्त्रीणाम्। अतिस्त्रियाम्, अतिस्त्रौ। श्रीः श्रियौ, श्रियः। **नेयङुवङ्स्थानावस्त्री** ।१।४।४। इयङुवङ्स्थानौ स्त्र्याख्यावीदूतौ नदीसंज्ञौ न स्तो न तु स्त्री। हे श्रीः। श्रियै, श्रिये। श्रियाः २ श्रियः २ **वाऽमि** ।१।४।५। श्रीणाम्, श्रियाम्। श्रियाम्, श्रियि, पदान्तरं विनापि स्त्रियां वर्तमानत्वं नित्यस्त्रीत्वमिति वृत्तिकारादीनां मते प्रधीशब्दस्य लक्ष्मीवद्रूपम्। लिङ्गान्तरानभिधायकं तदिति कैयटमते पुंवद्रूपम्। प्रकृष्टा धीरिति विग्रहे तूभयमते लक्ष्मीवदेव। अमि शसि च प्रध्यम्, प्रध्यः इति विशेषः। एवं वृत्तिकारमते सुधीः श्रीवत्। मतान्तरे पुंवत्। सु धीरिति विग्रहे तूभयमते श्रीवदेव। ग्रामणीः, पुंवदेव। ग्रामनयनस्योत्सर्गतः पुंधर्मतया पदान्तरं विना स्त्रियामप्रवृत्तेः। एवं खलपवनादेरपि पुंधर्मत्वमौत्सर्गिकं बोध्यम्। धेनुर्मतिवद्। **स्त्रियां च** ।७।१।९६। स्त्रीवाची क्रोष्टुशब्दस्तृजन्तवत्स्यात्। **ऋन्नेभ्यो ङीप्** ।४।१।५। एभ्यः स्त्रियां ङीप्स्यात्। क्रोष्ट्री, क्रोष्ट्र्यौ, क्रोष्ट्र्यः। वधूर्गौरीवत्। भ्रूः श्रीवत्। स्वलपूः पुंवत्। पुनर्भूः। दृन्करेति यण्। पुनर्भ्वौ। उवङ्स्थानाभावान्निषेधो न। हे पुनर्भु। पुनर्भ्वम्, पुनर्भ्वः। **एकाजुत्तरपदे णः** ।८।४।१२। अस्मिन्समासे पूर्वपदस्थान्निमित्तात्परस्य प्रातिपदिकान्तनुम्विभक्तिस्थस्य नस्य नित्यं णत्वं स्यात्। परत्वान्नुट्। पुनर्भूणाम्। वर्षाभूः। कैयटमते भेकजातौ नित्यस्त्रीत्वाभावात्, हे वर्षाभूः। मतान्तरे हे वर्षाभु। पुनर्नवायामुभयमते हे वर्षाभु। 'भेक्यां पुनर्नवायां स्त्री वर्षाभूर्दर्दुरे पुमान्।' इति यादवः। वर्षाभ्वौ, वर्षाभ्वः। स्वयंभूः पुंवत्। **न षट् स्वस्रादिभ्यः** ।४।१।१०। षट्संज्ञकेभ्यः स्वस्रादिभ्यश्च ङीप्टापौ न स्तः। 'स्वसा तिस्रश्चतस्रश्च ननान्दा दुहिता तथा। याता मातेति सप्तैते स्वस्रादय उदाहृताः' अप्तृन्निति दीर्घः। स्वसा, स्वसारौ। माता पितृवत्, शसि मातॄः। द्यौर्गोवत्। राः पुंवत्। नौर्ग्लौवत्।

इत्यजन्तस्त्रीलिङ्गाः।

अतोऽम् ।७।१।२४। अतोऽङ्गात्क्लीबात्स्वमोरम्। अमि पूर्वः। ज्ञानम्। हे ज्ञान। **नपुंसकाच्च** ७।१।१९। औङः शी स्यात्। भसंज्ञा। **यस्येति च** ।६।४।१४८। भस्येवर्णावर्णयोर्लोपः स्यादीकारे तद्धिते च परे। औङः श्यां प्रतिषेधो वाच्यः ❀ ज्ञाने। **जश्शसोः शिः** ।७।१।२०। **शि सर्वनामस्थानम्** ।१।२।४२। **नपुंसकस्य झलचः** ।७।१।७२। नुमागमः स्यात्सर्वनामस्थाने परे। ज्ञानानि। पुनस्तद्वत्। शेषं रामवत्। एवं धनवनफलादयः।

अदृड् तरादिभ्यः पञ्चभ्यः ।७।१।२५। एभ्यः क्लीवेभ्यः स्वमोरद्डादेशः स्यात्। **टेः** ।६।४ ।१४३। डिति परे भस्य टेर्लोपः स्यात्। वाऽवसाने। कतरत्, कतरद्। कतरे कतराणि पुनस्तद्वत्। शेषं पुंवत्। कतमत्, अन्यत्, अन्यतरत्, इतरत्। एकतरात्प्रतिषेधो वाच्यः। ❀। एकतरम्। अजरम्। अजरसी, अजरे। जरसि कृते झलन्तत्वान्नुम्। **सान्तमहतः संयोगस्य** ।६।४।१०। अनयोर्नकारस्योपधाया दीर्घः स्यादसंबुद्धौ सर्वनामस्थाने परे। अजरांसि, अजराणि। अमि जरसि कृते सन्निपातपरिभाषया न लुक्। अजरसम्, अजरमित्यादि पूर्ववत्। पद्न्न इति हृदयोदकास्यानां हृद् उदन् आसन्। हृन्दि हृदा हृद्भ्याम्। उदानि उद्ना उदभ्याम्। आसानि आस्ना आसभ्याम्। इत्यादि। **ह्रस्वो नपुंसके प्रातिपदिकस्य** ।१।२।४७। अजन्तस्य ह्रस्वः स्यात्। श्रीपं ज्ञानवत्। **स्वमोर्नपुंसकात्** ।७।१।२३। लुक् स्यात्। वारि। **इकोऽचि विभक्तौ** ।७।१।७३। इगन्ताङ्गस्य क्लीवस्य नुम् स्यादजादौ विभक्तौ। वारिणी। वारीणि। न लुमतेति निषेधस्यानित्यत्वात् पक्षे संबुद्धिनिमित्तो गुणः। हे वारे, हे वारि। घेर्ङितीति गुणे प्राप्ते। वृद्ध्यौत्वतृज्वद्भावगुणेभ्यो नुम् पूर्वविप्रतिषेधेन। ❀। वारिणे। वारिणः। नुमचिरेति नुट्। वारीणाम्। वारिणि। हलादौ हरिवत्। **तृतीयादिषु भाषितपुंस्कं पुंवद् गालवस्य** ।७।१।७४। प्रवृत्तिनिमित्तैक्ये भाषितपुंस्कमिगन्तं क्लीवं पुंवद् वा स्याट्टादावचि। अनादये अनादिने। इत्यादि। पीलुर्वृक्षः फलं पीलु पीलुने न तु पीलवे। वृक्षे निमित्तं पीलुत्वं तज्जन्यत्वं फले पुनः ।१। पुंसि पीलुत्वम्, नपुंसके पीलुजन्यत्वमिति प्रवृत्तिनिमित्तभेदान्न पुंवत्। **अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्णामनङुदात्तः** ।७।१।७५। शसादावचि अल्लोपोऽनः। दध्ना, दध्ने, । विभाषा ङिश्योः। दध्नि दधनि, एवमस्थिसक्थ्यक्षि। सुधि, सुधिनी, सुधीनि हे सुधे हे सुधि, सुधिया, सुधिना। प्रध्या प्रधिना। मधु मधुनी, मधूनि। एवमम्ब्वादयः। सानुशब्दस्य स्नुर्वा। स्नूनि सानूनि। प्रियक्रोष्टु प्रियक्रोष्टुनी प्रियक्रोष्टूनि। प्रियक्रोष्ट्रे प्रियक्रोष्टवे प्रियक्रोष्टुने। आमि नुमचिरेति नुट्। प्रियक्रोष्टूनाम्। सुलु, सुलुनी, सुलूनि, सुल्वा सुलुना। हे धातः, हे धातृ, धात्रा धातृणा। एवं ज्ञातृकर्त्रादयः। **एच इग्घ्रस्वादेशे** ।१।१।४८। प्रद्यु, प्रद्युनी, प्रद्यूनि। प्रद्युना। प्ररि प्ररिणी प्ररीणि। एकदेशविकृतस्यानन्यत्वाद् रायो हलीत्यात्वम्। प्रराभ्याम्। संनिपातपरिभाषया नुट्यात्वं न। प्ररीणाम्। सुनु सुनुनी सुनूनि। सुनुना सुनुने। इत्यजन्ता नपुंसकलिङ्गाः।

हो ढः ।८।२।३१। झलि पदान्ते च। जश्त्वचर्त्वे। लिट्, लिड्। लिड्भ्याम्। लिट्त्सु, लिट्सु। **दादेर्धातोर्घः** ।८।२।३२। पूर्ववत्। **एकाचो बशो भष् झषन्तस्य स्ध्वोः**। ।८।२।३७। सकारे ध्वशब्दे पदान्ते च। झलीति निवृत्तं स्ध्वोर्ग्रहणसामर्थ्यात्। जश्त्व-चर्त्वे। धुक्, धुग्। दुहौ, दुहः। धुग्भ्याम्। षत्वचर्त्वे। धुक्षु। **वा द्रुहमुहष्णुहष्णिहाम्**। ।८।२।३३। घत्वढत्वे वा स्तः, ध्रुक् ध्रुग् ध्रुट् ध्रुड्। द्रुहौ द्रुहः। एवम्। मुक् मुग् मुट् मुड्। मुहौ मुहः। उभयत्र विभाषेयम्। **इग् यणः संप्रसारणम्** ।१।१।४५। वाह ऊठ् ।३।४।१३२। भस्येत्यर्थः। **संप्रसारणाच्च** ।६।१।१०८। संप्रसारणादचि परे पूर्वरूपमेका-

देशः स्यात्। एत्येधत्यूठ्सु। विश्वौहः, विश्वौहा। विश्ववाड्भ्यामित्यादि। **चतुरनडुहोरामुदात्तः** ।७।१।९८। अनयोराम् स्यात्सर्वनामस्थाने। **सावनडुहः** ।७।१।८२। अवर्णात्परस्य नुम् स्यात्सौ। नुम् विधिसामर्थ्याद् दत्वं न। संयोगान्तलोपस्यासिद्धत्वान्नलोपो न। अनड्वान्। **अम् संबुद्धौ** ।७।१।६६। चतुरनडुहोरम् स्यात्संबुद्धौ। हे अनड्वन्। अनड्वाहौ, अनड्वाहः। अनडुहा। **वसुस्रंसुध्वंस्वनडुहां दः** ।८।२।७२। सान्तवस्वन्तस्य स्रंसादेश्च दः स्यात्पदान्ते। अनडुद्भ्यामित्यादि। **सहेः साडः सः** ।८।३।५६। अस्य मूर्धन्यादेशः स्यात्। तुराषाट्, तुराषाड्, तुरासाहौ, तुरासाहः। तुराषाड्भ्यामित्यादि। **दिव औत्** ।७।१।८४। सौ परे। सुद्यौः सुदिवौ सुदिवः। **दिव उत्** ।६।१।१३१। अस्य उत्स्यात्पदान्ते। सुद्युभ्याम्, सुद्युभिः। चत्वारः, चतुरः चतुर्भिः। **षट्चतुर्भ्यश्च** ।७।१।५५। षट्संज्ञकेभ्यश्चतुरश्च परस्यामो नुडागमः स्यात्। णत्वं द्वित्वम्। चतुर्णाम्। **रोः सुपि** ।६।३।१६। सप्तमीबहुवचने रोरेव विसर्जनीयो नान्यरेफस्य। षत्वम्। तस्य द्वित्वे प्राप्ते **शरोऽचि** ।८।४।४८। न द्वे स्तः। चतुर्षु। प्रियचत्वाः। चतुर्भ्य इति बहुत्वनिर्देशाद् गौणत्वे न नुट्। प्रियचतुराम्। प्राधान्ये तु स्यादेव, परमचतुर्णाम्। **मो नो धातोः** ।८।२।६४। नः स्यात्पदान्ते। प्रशान्। नत्वस्यासिद्धत्वान्नलोपो न। प्रशामौ, प्रशामः, प्रशान्भ्याम्। **किमः कः** ।७।२।१०३। किमः कः स्याद्विभक्तौ। कः, कौ, के,। इत्यादि सर्ववत्। **इदमो मः** ।७।२।१०८। सौ परे। त्यदाद्यत्वापवादः। **इदोऽय् पुंसि** ।७।२।११२। सौ परे। अन्यत्स्पष्टम्। अयम्। त्यदाद्यत्वं पररूपत्वं च। **दश्च** ।७।२।१०९। इदमो दस्य मः स्याद् विभक्तौ। इमौ, इमे। त्यदादीनां संबोधनं नास्तीत्युत्सर्गः। **अनाप्यकः** ।७।२।११२। अककारस्य इदम इदोऽन् स्यादापि विभक्तौ। अनेन। **हलि लोपः** ।७।२।११३। **आद्यन्तवदेकस्मिन्** ।१।१।२१। आभ्याम्। **नेदमदसोरकोः** ।७।१।११। भिस ऐस् न स्यात्। एत्वम्। एभिः। हलि लोपः। अस्मै, एभ्यः। इत्यादि सर्वशब्दवत्। ककारयोगे तु अयकम्, इमकौ, इमके। इमकेन, इमकाभ्याम्, इमकैः। इत्यादि। **इदमोऽन्वादेशेऽशनुदात्तस्तृतीयादौ** ।२।४।३२॥ स्पष्टम्। अशूवचनं साकच्कार्थम्। **द्वितीयाटौस्स्वेनः** ।२।४।३४। द्वितीयायां टौसोश्च परत इदमेतदोरेनादेशः स्यादन्वादेशे। किञ्चित्कार्यं विधातुमुपात्तस्य कार्यान्तरं विधातुं पुनरुपादानमन्वादेशः। यथा अनेन व्याकरणमधीतम्, एनं छन्दोऽध्यापय। अनयोः पवित्रं कुलम्, एनयोः प्रभूतं स्वम्। एनम् एनौ एनान्, एनेन, एनयोः। परत्वादुपधादीर्घः, हल्ङ्यादि लोपः। ततो नलोपः। राजा। **न ङिसम्बुद्ध्योः** ।८।२।८। नस्य लोपो न स्यात् ङौ संबुद्धौ च। हे राजन्। ङौ छन्दस्युदाहरणम्। ङावुत्तरपदे प्रतिषेधः। (वा)। चर्मतिलः। राजानौ राजानः। राजानम्, राजानौ। अल्लोपोऽनः। श्चुत्वम्, राज्ञः राज्ञा। **नलोपः सुप्स्वरसंज्ञातुग्विधिषु कृति** ।८।२। एष्वेव नलोपो ऽसिद्धो नान्यत्र। तेन पथिषु राजाश्व इत्यादौ नासिद्धत्वम्। नलोपस्यासिद्धत्वादात्वमेत्वमैस्त्वं न च। राजभ्याम्, राजभिः,

राजभ्यः। राज्ञः राज्ञोः राज्ञाम्, राज्ञि राजनि। प्रतिदीव्यतीति प्रतिदिवा, प्रतिदिवानौ भस्याल्लोपे कृते। हलि च ८ २ ७७। रेफवान्तस्य धातोरुपधाया इको दीर्घः स्याद् हलि। न पदान्तेतिदीर्घविधौ निषेधान्न स्थानिवत्त्वम्। प्रतिदीव्नः, प्रतिदीव्ना। यज्वा, यज्वानौ यज्वानः। **न संयोगाद्वमन्तात्** । ६ । ४ ।१३७। अस्मात्परस्यानोऽकारस्य लोपो न स्यात्। यज्वनः, यज्वना, यज्वभ्यामित्यादि। ब्रह्मणः ब्रह्मणा। **इन्हन्पूषार्यम्णां शौ**। ६ ४ १२। एषां शावेवोपधादीर्घो नान्यत्र। **सौ च**।६ ४ १३। असंबुद्धौ सावपि तथा। वृत्रहा, एकाजुत्तरपदे णः। वृत्रहणौ, वृत्रहणः। **हो हन्तेर्ञ्णिन्नेषु** ७३ ५४। एषु हनो हस्य कुत्वं स्यात्। नकारे परे कुत्वविधिसामर्थ्यादल्लोपो न स्थानिवत्, वृत्रघ्नः, वृत्रघ्ना। एवं शार्ङ्गिन् यशस्विन्नर्यमन्पूषनादयः। यशस्विन्निति विन्प्रत्ययः। अनिनस्मन्ग्रहणान्यर्थवता चानर्थकेन च तदन्तविधिं प्रयोजयन्तीति दीर्घः। यशस्वी, यशस्विनौ यशस्विनः। अर्यम्णि, अर्यमणि। पूष्णि, पूषणि। **मघवा बहुलम्**। ६। ४। १२८। मघवन् शब्दस्य वा तृ इत्यन्तादेशः स्यात्। ऋ इत्। **उगिदचां सर्वनामस्थानेऽधातोः** ७। १ ७०। स्पष्टम्, बहुलग्रहणेन संयोगान्तलोपस्यासिद्धत्वं न भवतीत्युपधादीर्घः। मघवान्, मघवन्तौ, मघवन्तः। हेमघवन् मघवद्भ्यामित्यादि। तृत्वाभावे मघवा, मघवानौ, मघवानः। सुटि राजवत्, **श्वयुवमघोनामतद्धिते** ६। ४। ११३। अन्नन्तानां भसंज्ञकानामेषां तद्धिते परे संप्रसारणं स्यात्, संप्रसारणाच्च। आद्गुणः। मघोनः मघोना, मघवद्भ्यामित्यादि। शुनः। शुना, श्वभ्यामित्यादि, युवन्शब्दे वस्योत्वे कृते। **न संप्रसारणे संप्रसारणम्** ६। १। ३७। यूनः, यूना, । युवभ्यामित्यादि। अर्वा, हेअर्वन्। **अर्वणस्त्रसावनञः**।६। ४। १२७। उगित्वान्नुम्। अर्वन्तौ, अर्वन्तः। अर्वतः अर्वता अर्वद्भ्यामित्यादि। **पथिमथ्यृभुक्षामात्**। ७। १। ८५। सौ परे। आ आदिति प्रश्लेषेण शुद्धैवाकारः। **इतोऽत्सर्वनामस्थाने**।७।१। ।७६। **थो न्थः**। ७। १। ७७। स्पष्टम्। पन्थाः, पन्थानौ पन्थानः। पन्थानम्। पन्थानौ। **भस्य टेर्लोपः**। ७। ८८। भसंज्ञकस्य पथ्यादेष्टेर्लोपः स्यात्। पथः पथा पथिभ्यामित्यादि। एवं मन्थाः ऋभुक्षाः। आत्वं नपुंसके न भवति न लुमतेति निषेधात्, सुपथि वनम्। संबुद्धौ नपुंसकानां नलोपो वा वाच्यः। हेसुपथिन्, हेसुपथि, नलोपस्यासिद्धत्वाद् ह्रस्वस्य गुणो न। द्विवचने भत्वाट्टिलोपः। सुपथी। शौ सर्वनामस्थानत्वात् सुपन्थानि। सुपथा सुपथे, सुपथिभ्यामित्यादि। **ष्णान्ताः षट्** १। १। २४। एते संख्यावाचकाः षट्संज्ञाः स्युः,। **षड्भ्यो लुक्**। पञ्च २ पञ्चभ्यः २ षट्चतुर्भ्यश्चेति नुट्। **नोपधायाः** ६। ४। ७। नान्तस्योपधाया दीर्घः स्यात्, नामि परे। पञ्चानाम्। पञ्चसु। एवं सप्तन् नवन् दशन्। **अष्टन आ विभक्तौ** ७। २ ८४। अस्य आत्वं स्याद् हलादौ विभक्तौ। **अष्टाभ्य औश्**। ७। १। २१। कृताकारादष्टनः परयोर्जश्शसोरौश् स्यात्। अष्टौ, अष्ट, अष्टाभिः, अष्टभिः। अष्टानामित्यादि। अष्टाभ्य इति बहुत्वनिर्देशात् प्राधान्ये एव औश्। आत्वं तु गौणत्वेऽपि। पूर्वस्मादपि विधावल्लोपस्य स्थानिवद्भावान्न ष्टुत्वम्। प्रियाष्टः। प्रियाष्टा। प्रियाष्टाभ्याम्। प्रियष्टभ्यामित्यादि। भष्भावः, जश्त्वचर्त्वे। भुत् भुद् बुधौ बुधः। भुद्भ्याम्, भुत्सु

इत्यादि । ऋत्विग्दधृक्स्रग्दिगुष्णिगञ्चुयुजिक्रुञ्चां च ।३।२।५९। एभ्यः क्विन् स्यात् । अलाक्षणिकमपि किंचित्कार्यं निपातनाल्लभ्यते । युजेः क्विन् । कनावितौ । कृदतिङ् ।३।१।९३। धातोर्विहितस्तिङ्भिन्नः प्रत्ययः कृत्स्यात् । वेरपृक्तस्य ।६।१।६७। लोपः स्यात् । कृत्तद्धितेति प्रातिपदिकत्वात्स्वादयः । युजेरसमासे ।७।१।७१। युजेः सर्वनामस्थाने नुम् स्यादसमासे । सुलोपः । संयोगान्तलोपः । क्विन्प्रत्ययस्य कुः ।८।२।६२। पदान्ते, नस्य कुत्वेन ङः । युङ् । नश्चापदान्तस्येति नुमो ऽनुस्वारः, परसवर्णः । तस्यासिद्धत्वाच्चोः कुरिति कुत्वं न । युञ्जौ युञ्जः । युग्भ्यामित्यादि । चोः कुः ।८।२।३०। झलि पदान्ते च । सुयुक् सुयुग् सुयुजौ सुयुजः । इत्यादि । व्रश्चेति षत्वम् । जश्त्वचर्त्वे । राट् राड् । राजौ राजः । राट्त्सु राट्सु । एवं विभ्राट् । सृजियज्योः पदान्ते षत्वं कुत्वापवादः । देवेट् देवेड् देवेजौ देवेजः । विश्वसृट्, विश्वसृड् विश्वसृजौ विश्वसृजः । इत्यादि । परौ व्रजेः षः पदान्ते ।*। परावुपपदे व्रजेः क्विप् स्याद्दीर्घश्च, पदान्तविषये षत्वं च परिव्राट् परिव्राड् । परिव्राजौ परिव्राजः । विश्वस्य वसुराटोः ।६।३।१२८। दीर्घः स्यात् । विश्वावसुः । राडिति पदान्तोपलक्षणम् । विश्वाराट्, विश्वाराड् विश्वराजौ विश्वराजः । विश्वाराड्भ्यामित्यादि । स्कोः संयोगाद्योरन्ते च ।८।२।२९। पदान्ते झलि च परे संयोगाद्योः सकारककारयोर्लोपः स्यात् । भृट्, भृड् । सस्य श्चुत्वेन शः तस्य जश्त्वे न जः, भृज्जौ, भृज्जः । यजेः क्विन् । क्विन्नन्तत्वात्कुत्वम् । ऋत्विक्, ऋत्विग् । ऋत्विजौ ऋत्विजः । रात्सस्येति नियमान्न संयोगान्तलोपः । ऊर्क् ऊर्ग् ऊर्जौ ऊर्जः । त्यदाद्यत्वं पररूपत्वं च । तदोः सः सावनन्त्ययोः ।७।२।१०६। त्यदादीनामित्यर्थः । स्यः, त्यौ, त्ये । सः, तौ, ते । इत्यादि सर्ववत् । द्विपर्यन्तानामेवेति नेह । त्वम् । एषः एतौ एते । अन्वादेशे तु एनम् एनौ एनान् । एनेन एनयोः २ । ङे प्रथमयोरम् ।७।२।२७। युष्मदस्मद्भ्यां परस्य ङे इत्येतस्य प्रथमाद्वितीययोश्चामादेशः स्यात् । मपर्यन्तस्य ।७।२।९१। इत्यधिक्रियते । युष्मदस्मदोरितीहानुवर्तते । त्वाहौ सौ ।७।२।९४। स्पष्टम् । शेषे लोपः ।७।२।९०। आत्वयत्वनिमित्तेतरविभक्तौ परतो युष्मदस्मदोरन्त्यस्य लोपः स्यात् । अतो गुणे शेषलोपे । त्वम् अहम् । स्त्रियां न टाप् । अतो गुणे कृते मपर्यन्ताच्छेषस्य अद् इत्यस्य लोपे अदन्तत्वाभावात् । युवावौ द्विवचने ।७।२।९२। द्वयोर्वचन द्विवचनम् । द्वित्वविशिष्टार्थवाचिनोर्युष्मदस्मदोर्मपर्यन्तस्य युवावौ स्तो विभक्तौ । प्रथमायाश्च द्विवचने भाषायाम् ।७।२।८८। युष्मदस्मदोराकारो ऽन्तादेशः स्यात् । औङीत्येव सुवचम् । युवाम्, आवाम् । यूयवयौ जसि ।७।२।९३। यूयम्, वयम् । त्वमावेकवचने ।७।२।९०। एकत्वविशिष्टार्थवाचिनोर्युष्मदस्मदोर्मपर्यन्तस्य त्वमौ स्तो विभक्तौ । द्वितीयायाञ्च ।७।२।८७। अनयोराकारः स्यात् । त्वाम् । माम् । युवाम्, आवाम् । शसो न ।७।१।२९। स्पष्टम् । आदेः परस्य । युष्मान्, अस्मान् । योऽचि ।७।२।८९। अनयोर्यकारः स्यादनादेशे ऽजादौ परतः । त्वया, मया । युष्मद

स्मदोरनादेशे ।७।२।८६। अनयोराकारः स्यादनादेशे हलादौ विभक्तौ। युवाभ्याम् आवाभ्याम्। युष्माभिः, अस्माभिः। **तुभ्यमह्यौ ङयि** ।७।२।९५। स्पष्टम्। शेषे लोपः। तुभ्यम् मह्यम्। युवाभ्याम्, आवाभ्याम्। **भ्यसोऽभ्यम्** ।७।१।३०। युष्मभ्यम्, अस्मभ्यम् **एकवचनस्य च** ।७।१।३२। आभ्यां पञ्चम्येकवचनस्य अत् स्यात्। त्वत्, मत्। युवाभ्याम् आवाभ्याम्। **पञ्चम्या अत्** ।७।१।३१। पञ्चम्या भ्यसोऽत् स्यात्। युष्मत्, अस्मत्। **तवममौ ङसि** ।७।२।९६। मपर्यन्तस्यैतौ स्तः। **युष्मदस्मद्भ्यां ङसो ऽश्** ।७।१।२७। स्पष्टम्। तव, मम। युवयोः आवयोः। **साम आकम्** ।७।१।३३। युष्माकम्, अस्माकम्। त्वयि मयि। युवयोः, आवयोः। युष्मासु, अस्मासु। त्वाम् अतिक्रान्त इति विग्रहे युष्मच्छब्दस्य त्वामित्यस्य एकत्वविशिष्टार्थवाचित्वात् त्व इत्यादेशः। एवं मामतिक्रान्त इति विग्रहे म इत्यादेशः, सुजस्ङेङस्सु परतः आदेशाः स्युः सदैव ते। त्वाहौ यूयवयौ तुभ्य-मह्यौ तवममावपि ।१। एते परत्वाद् बाधन्ते युवावौ विषये स्वके। त्वमावपि प्रबा-धन्ते पूर्वविप्रतिषेधतः ।२। अतित्वम् अतित्वाम्। अतियूयम्। अतित्वाम् २ अतित्वान् अतित्वया अतित्वाभ्याम्, अतित्वाभिः। अतितुभ्यम् अतित्वाभ्याम् अतित्वभ्यम्। अतित्वत् अतित्वाभ्याम् अतित्वत्। अतितव अतित्वयोः अतित्वाकम्। अतित्वाय अतित्वयोः अतित्वासु। एवं मामतिक्रान्तः। अत्यहम् अतिमाम् अतिवयम्। अतिमाम् २ अतिमानित्यादिकं बोध्यम्। युवाम् आवाम् वा अतिक्रान्त इति विग्रहे युष्मदस्मदो-र्द्वित्वविशिष्टार्थवाचित्वात् युवावौ स्तः। सुजस्ङेङस्सु पूर्ववत्। अत्यहम् अत्यावाम् अति-वयम्। अत्यावाम् २ अत्यावान्। अत्यावया, अत्यावाभ्याम् अत्यावाभिरित्यादि। युष्मानस्मान् वा अतिक्रान्त इति विग्रहे, युष्मदस्मदोर्बहुत्वविशिष्टार्थवाचित्वात् न युवावौ नापि त्वमौ स्तः। सुजस्ङेङस्सु पूर्ववत्। अतित्वम् अतियुष्माम् अतियूयम्। अतियुष्माम् २ अतियुष्मान्। अतितुभ्यम्, अतितव, अतियुष्मयोः अतियुष्माकम्। इत्यादि। **पदस्य** ।८।१।१६। **पदात्** ।८।१।१७। **अनुदात्तं सर्वमपादादौ** ।८।१।१८ इत्यधिकृत्य। **युष्मदस्मदोः षष्ठीचतुर्थीद्वितीयास्थयोर्वांनावौ** ।८।१।२०। पदात्परयो-रपादादौ स्थितयोरनयोः षष्ठ्यादिविशिष्टयोर्वांनावित्यादेशौ स्तस्तौ चानुदात्तौ। **बहुवचनस्य वस्नसौ** ।८।१।२१। पूर्ववत्। **तेमयावेकवचनस्य** ।८।१।२२। स्पष्टम्। **त्वामौ द्वितीयायाः** ।८।१।२३।

श्रीशस्त्वाऽवतु माऽपीह दत्तात्ते मे ऽपि शर्म सः।
स्वामी ते मे ऽपि स हरिः पातु वामपि नौ विभुः ।१।
सुखं वां नौ ददात्वीशः पतिर्वामपि नौ हरिः।
सोऽव्याद् वो नः शिवं वो नो दद्यात्सेव्योऽत्र वः स नः ।२।

स्थग्रहणाच्छ्रूयमाणविभक्तिकयोरेव। नेह। युष्मत्पुत्रो ब्रवीति। समानवाक्ये निघातयु-ष्मदादेशा वक्तव्याः। ॐ। तेनेह न। ओदनं पच, तव भविष्यति। इह तु स्यादेव। शालीनां ते ओदनं दास्यामि। एते वांनावादय आदेशा अनन्वादेशे वा वक्तव्याः। ॐ। धाता ते भक्तो ऽस्ति, धाता तव भक्तोऽस्ति वा। अन्वादेशे तु नित्यम्। तस्मै ते नम

इत्येव। न चवाहाहैवयुक्ते ।८।१।२४। एषां योगे नैते आदेशाः स्युः। हरिस्त्वां मां च रक्षतु। कथं त्वां मां वा न रक्षेदित्यादि। पश्यार्थैश्चानालोचने ।८।१।२५। अचाक्षुषज्ञानार्थैर्धातुभिर्योगे नैते आदेशाः स्युः। चेतसा त्वां समीक्षते। परंपरासंबन्धे ऽप्ययं निषेधः। भक्तस्तव रूपं ध्यायति। सपूर्वायाः प्रथमाया विभाषा ।८।१।२६। अन्वादेशार्थमिदम्। भक्तस्त्वमप्यहं तेन हरिस्त्वां त्रायते स माम्। त्वामेति वा। साम‍न्त्रितम् ।२।३।४८। संबोधने या प्रथमा तदन्तमामन्त्रितसञ्ज्ञं स्यात्। आमन्त्रितं पूर्वमविद्यमानवत् ।८।१।७२। स्पष्टम्। अग्ने तव। देवास्मान् पाहि। सर्वदा रक्ष देव नः, इत्यत्र देवेत्यस्याविद्यमानवद्भावे ऽपि ततः पूर्वं रक्षेत्येतदाश्रित्यादेशः। नामन्त्रिते समानाधिकरणे सामान्यवचनम् ।८।१।७३। सामान्यवचनं विशेष्यमित्यर्थः। हरे दयालो नः पाहि। विभाषितं विशेषवचने ।८।१।७४। बहुवचन एवेति भाष्यम्। बहुवचनान्तं विशेष्यं समानाधिकरणे आमन्त्रिते विशेषणे परे अविमानवद्वा। इहान्वादेशेऽपि वैकल्पिका आदेशाः। यूयं प्रभवः, देवाः शरण्याः। युष्मान्भजे, वो भजे इति वा। सुपात् सुपाद् सुपादौ सुपादः। पादः पत् ।६।४।१३०।पाच्छब्दान्तं यदङ्गं भं तदवयवस्य पाच्छब्दस्य पदादेशः स्यात्। सुपदः, सुपदा सुपाद्भ्यामित्यादि। अञ्चेः सुप्युपपदे ऋत्विगित्यादिना क्विन्। अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति ।६।४।२४। नस्य लोपः स्यात्। अन्यत्स्पष्टम्। उगिदचामिति नुम्। संयोगान्तलोपः। नुमो मकारस्य क्विन्प्रत्ययस्य कुरिति ङकारः। प्राङ्। अनुस्वारपरसवर्णौ। प्राञ्चौ, प्राञ्चः। अचः ।६।४।१३२। लुप्तनकारस्याञ्चतेर्भस्याकारस्य लोपः स्यात्। चौ ।६।३।१३८। अवशिष्टचकारे ऽञ्चतौ परे पूर्वस्याणो दीर्घः स्यात्। प्राचः, प्राचा, प्राग्भ्यामित्यादि। प्रत्यङ् प्रत्यञ्चौ प्रत्यञ्चः। प्रतीचः, अकृतव्यूहा इति परिभाषया यण् न। प्रतीचा। अमुमञ्चतीति विग्रहे। अदस् अञ्च् इति स्थिते। विष्वग्देवयोश्च टेरद्र्यञ्चतावप्रत्यये ।६।३।९२। विष्वग्देवयोः सर्वनाम्नश्च टेरद्र्यादेशः स्यात् अप्रत्ययान्तेऽञ्चतौ परतः। अदद्रि अञ्च् इति स्थिते। यण्। अदसोऽसेर्दादु दो मः ।८।२।८०। असान्तस्यादसो दात्परस्य उदूतौ स्तो दस्य मश्च। उ इति ह्रस्वदीर्घयोः समाहारद्वन्द्वः। आन्तरतम्याद् ह्रस्वव्यञ्जनयोर्ह्रस्व उकारः, दीर्घस्य च दीर्घ ऊकारः। अमुमुयङ्, अमुमुयञ्चौ, अमुमुयञ्चः। उत्वस्यासिद्धत्वान्न यण्। अमुमुईचः। अमुमुईचा। कश्चित्। अदस इति स्थानषष्ठीमाह। ततश्च दात्परस्य अदसोऽन्त्यस्येत्यर्थे। अन्त्यबाधेऽन्त्यसदेशस्यैवेति परिभाषया परस्यैव मुत्वम्। अदमुयङ्। असेः—सकारस्य स्थाने यस्य सः असिरिति व्याख्यानात्। त्यदाद्यत्वविषय एव मुत्वं नान्यत्रेति पक्षे अदद्र्यङ्। उक्तं च। अदसोऽद्रेः पृथग्मुत्वं केचिदिच्छन्ति लत्ववत्। केचिदन्त्यसदेशस्य नेत्येकेऽसेर्हि दृश्यते। इति। उदङ् उदञ्चौ उदञ्चः। शसादावचि। उद ईत् ।६।४-१३९। उच्छब्दात्परस्य लुप्तनकारस्याञ्चतेर्भस्याकारस्य ईत्स्यात्। उदीचः। उदीचा, उदग्भ्यामित्यादि। समः समि ।६।३।९३। अप्रत्ययान्तेऽञ्चतौ परे। सम्यङ् सम्याञ्चौ, सम्यञ्चः। समीचः समीचा। सहस्य सध्रिः ।६।३।९५। सध्र्यङ्। तिरसस्तिर्यलोपे

।६।३।९४। स्पष्टम्। तिर्यङ्, तिर्यञ्चौ तिर्यञ्चः। तिरश्चः, तिरश्चा। तिर्यग्भ्यामित्यादि। **नाञ्चेः पूजायाम्** ।६।४।३०। पूजार्थस्याञ्चतेरुपधाया नस्य लोपो न स्यात्। अचामित्युक्तेर्लुप्तनकारस्यैवाञ्चतेर्ग्रहणम्। पूजायामलुप्तनकारत्वान्न नुम्। प्राङ्, प्राञ्चौ प्राञ्चः। नलोपाभावादकारलोपो न। प्राञ्चः, प्राङ्भ्याम्। प्राङ्क्षु, प्राङ्षु। एवं पूजार्थे प्रत्यङ्ङादयः। कुञ्चेति नकारोपधः। नकारोपधत्वे नलोपाभावो निपातनात्। क्रुङ् क्रुञ्चौ क्रुञ्चः। क्रुङ्भ्यामित्यादि। चोः कुः। पयोमुक्-पयोमुग्। व्रश्चेति षत्वम्। स्कोरिति सलोपः। जश्त्वचर्त्वे। सुवृट् सुवृड्। सुवृश्चौ, सुवृश्चः। वर्तमाने पृषन्महद्बृहद्जगच्छतृवच्च। स्पष्टम्। उगित्वान्नुम्। सान्तमहत इति दीर्घः। महान्, महान्तौ, महान्तः। महद्भ्यामित्यादि। **अत्वसन्तस्य चाधातोः** ।६।४।१४। अत्वन्तस्य धातुभिन्नासन्तस्य चोपधाया दीर्घः स्यादसंबुद्धौ सौ परे। आदौ दीर्घः। ततो नुम्। धीमान् धीमन्तौ धीमन्तः। धीमद्भ्यामित्यादि। भातेर्डवतुः। भवान् भवन्तौ भवन्तः। शत्रन्तस्य अत्वन्तत्वाभावान्न दीर्घः। भवन्। **उभे अभ्यस्तम्** ।६।१।५। षाष्ठद्वित्वप्रकरणे ये द्वे विहिते ते उभे समुदिते अभ्यस्तसंज्ञे स्तः। **नाभ्यस्ताच्छतुः** ।७।१।७८। नुम् न स्यात्। ददत्, ददद्, ददतौ, ददतः। **जक्षित्यादयः षट्**।६।१।६। जक्षितेः पराः षट् सप्तमो जक्षितिश्च एते अभ्यस्तसंज्ञाः स्युः। जक्षत् जक्षद् जक्षतौ, जक्षतः। जक्षजागृदरिद्राश्च दीधीवेव्यौ च छान्दसौ। चकास्शास्तां सप्तैते जक्षादय उदाहृताः। एवं जाग्रत्, दरिद्रत्, चकासत्, शासदित्यादि। गुप् गुब् गुपौ गुपः इत्यादि। **त्यदादिषु दृशोऽनालोचने कञ्च** ।३।२।६०। त्यदादिषूपपदेष्वज्ञानार्थाद् दृशेः कञ् स्यात्, चात् क्विन्। **आ सर्वनाम्नः** ।६।३।९१। अस्याऽऽत्वं स्यात्, दृग्दृशवतुषु। कुत्वस्यासिद्धत्वाद् वृश्चेति षः तस्य जश्त्वेन डः। तस्य कुत्वेन गः, तस्य चर्त्वेन कः, तादृक् तादृग् तादृशौ तादृशः। व्रश्चेति षत्वम्। जश्त्वचर्त्वे विट् विड्। विशौ विशः। **नशेर्वा** ।८।२।६३। पदान्ते वा कुत्वम्। नक् नग् नट् नड् नशौ नशः। नग्भ्याम् नड्भ्यामित्यादि। **स्पृशोऽनुदके क्विन्** ।३।२।५८। स्पष्टम्। घृतस्पृक् घृतस्पृग्। क्विन्प्रत्ययो यस्मादिति बहुव्रीह्याश्रयणात् क्विप्यपि कुत्वम्, षडगकाः प्राग्वत्। स्पृक् स्पृग्। धृष्णोतीति दधृक्। दधृग् दधृषौ दधृषः। रत्नमुट् रत्नमुड्। रत्नमुषौ रत्नमुषः। षड्भ्यो लुक्। षट् षड् षड्भिः, षड्भ्यः२ षट्चतुर्भ्यश्चेति नुट्। अनामित्युक्तेर्न ष्टुत्वनिषेधः। प्रत्यये भाषायामित्यनुनासिकः। षण्णाम्, षट्त्सु षट्सु। रुत्वं प्रति षत्वस्यासिद्धत्वात्ससजुषोरुरिति रुत्वम्। **र्वोरुपधाया दीर्घ इकः** ।८।२।७६। पदान्ते, पिपठीः, पिपठिषौ पिपठिषः। पिपठीर्भ्यामित्यादि। वा शरि। **नुम्विसर्जनीयशर्व्यवायेऽपि** ।८।३।५८। एतैः प्रत्येकं व्यवधाने ऽपि इण्कुभ्यां परस्य सस्य मूर्धन्यादेशः स्यात्। ष्टुत्वेन पूर्वस्य षः। पिपठीष्षु, पिपठीःषु। प्रत्येकमिति व्याख्यानान्नेह। निंस्व। नुम्ग्रहणं नुम् स्थानिकानुस्वारोपलक्षणार्थं व्याख्यानात्, तेनेह न। सुहिन्सु, पुंसु। रात्सस्येति सलोपे विसर्गः। चिकीः, चिकीर्षौ, चिकीर्षः। षत्वस्यासिद्धत्वाद् रुत्वविसर्गौ। दोः, दोषौ, दोषः। पद्न्निति वा दोषन्। दोष्णः दोषः। दोष्णा, दोषा। विश् प्रवेशने। सन्नन्तात् क्विप्। षत्वस्यासिद्धत्वात्संयोगान्तलोपः।

व्रश्चेति षः। जश्त्वचर्त्वे। विविट् विविड् विविशौ, विविशः। स्कोरिति कलोपः। तट् तड् तक्षौ तक्षः। पिस् गतौ। रुत्वे, र्वोरुपधाया दीर्घ इकः।८।२।७६। सुपीः, सुपिषौ, सुपिसः। सुपीर्भ्याम्, सुपीःषु सुपीष्षु। विद्वान्, विद्वांसौ, विद्वांसः। विद्वांसम् विद्वांसौ। **वसोः संप्रसारणम्**।६।४।१३१। वस्वन्तस्य भस्य संप्रसारणं स्यात्। पूर्वरूपम्। षत्वम्। विदुषः, विदुषा। वसुस्रंस्विति दत्वम्। विद्वद्भ्यामित्यादि। सेदिवान्, सेदिवांसौ, सेदिवांसः। अकृतव्यूहपरिभाषया नेट्। संप्रसारणम्, पूर्वरूपम्, षत्वम्। सेदुषः, सेदुषा, सेदिवद्भ्यामित्यादि। महच्चछन्दसाहचर्यात्सान्तसंयोगः प्रातिपदिकस्यैव। नेह। सुहिन्, सुहिंसौ सुहिंसः। ध्वत्, ध्वद्, ध्वसौ ध्वसः। ध्वद्भ्यामित्यादि। एवं स्रत्। पुंसो ऽसुङ्।७।१।८९। सर्वनामस्थाने परतः। पुमान्, पुमांसौ पुमांसः। पुंसः पुंसा; पुंभ्याम् पुंसु। ऋदुशनेत्यनङ्। उशना उशनसौ उशनसः। अस्य संबुद्धौ वा ऽनङ् नलोपश्च वा वक्तव्यः॥ हे उशनन्, हे उशन, हे उशनः। उशनोभ्यामित्यादि। अनेहा। अनेहसौ, अनेहसः। हे अनेहः। वेधाः वेधसौ, वेधसः। अधातोरित्युक्तेर्न दीर्घः। सुवः, सुवसौ। पिण्डग्रः, पिण्डग्रसौ इत्यादि। **अदस औ सुलोपश्च**।७।२।१०७। स्पष्टम्। तदोः सः साविति दस्य सः। असौ। औत्वप्रतिषेधः साकच्कस्य वा वक्तव्यः, चादुत्वं च॥ असुकः। संनियोगशिष्टत्वादौत्वप्रतिषेधाभावे उत्वमपि न। असकौ। त्यदाद्यत्वं, पररूपत्वम्, पूर्वत्रासिद्धमिति विभक्त्यादिकार्यं प्राक् वृद्धिः पश्चादुत्वमत्वे। अमू, **एत ईद्बहुवचने**।८।२।८१। अदसो दात्परस्यैत ईत्स्याद्दस्य मश्च बह्वर्थोक्तौ। अमी। अमुम्, अमू, अमून्। मुत्वे कृते घिसंज्ञायां नाभावः। **न मु ने**।८।२।३। ना भावे कर्तव्ये कृते च मुभावो नासिद्धः। अमुना, अमूभ्याम् अमीभिः। अमुष्मै अमीभ्यः २। अमुष्मात्। अमुष्य अमुयोः २, अमीषाम्। अमुष्मिन् अमीषु। इतिहलन्ताः पुँल्लिङ्गाः।

न हो धः।८।२।३४। नहो हस्य धः स्यात् झलि पदान्ते च। उपानत्, उपानद् उपानहौ उपानहः। उपानद्भ्याम्, क्विन्नन्तत्वात्कुत्वेन हस्य घः। जश्त्वचर्त्वे। उष्णिक् उष्णिग्, द्यौः दिवौ दिवः। गीः, गिरौ। चतुरश्चतस्रादेशः। चतस्रः, चतसृणाम्। किमः कादेशे टाप् सर्वावत्। का, के, काः। **यः सौ**।७।२।११०। इदमो दस्य यः स्यात् सौ परे। इदमो मः। इयम्, त्यदाद्यत्वं टाप्। दश्चेति मः। इमे इमाः। अनाप्यकः अनया। हलि लोपः। आभ्याम्, आभिः। अस्यै, अस्याः २, अनयोः आसामित्यादि। अन्वादेशे एनाम्, एने, एनाः। एनया एनयोः, ऋत्विगित्यादिना क्विन्। स्रक्। स्रग्। स्रजौ, स्रजः। त्यदाद्यत्वं टाप्। स्या त्ये त्याः। एवं तद् यद् एतद्। अप् शब्दो नित्यं बहुवचनान्तः। आपः अपः। **अपो भि**।७।४।४८। अपस्तकारः स्यात् भादौ प्रत्यये। अद्भिः। अद्भ्यः। दिक् दिग् दिशौ दिशः। त्यदादिष्विति दृशेः क्विन्विधानादन्यत्रापि कुत्वम्। दृक् दृग्। त्विट् त्विड् त्विषौ त्विषः। ससजुषो रुः। सजूः सजूर्भ्याम्। षत्वस्यासिद्धत्वाद् रुत्वम्। आशीः आशिषौ आशिषः। असौ, त्यदाद्यत्वं टाप्। औङः शी। उत्वमत्वे। अमू, अमूः। अमूम्, अमू, अमूः। अमुया, अमूभ्याम् अमूभिः। अमुष्यै, अमूभ्यः २। अमुष्याः २ अमुयोः २ अमूषाम्, अमुष्याम्, अमूषु। इति हलन्ताः स्त्रीलिङ्गाः।..........

स्वमोर्लुक्। दत्वम्। स्वनडुत् (द्) स्वनडुही। चतुरनडुहोरित्याम्। स्वनड्वांहि। शेषं पुंवत्। दिव उत्। विमलद्यु अहः। विमलदिवी, विमलदिवि। वाः, वारी वारि। चत्वारि। नलुमतेति कादेशो न। किम्, के, कानि २, इदम् इमे इमानि अन्वादेशे नपुंसके एनद् वक्तव्यः। ॐ एनत् (द्) एने एनानि २ एनेन, एनयोः। ब्रह्म। ब्रह्मणी, ब्रह्माणि। संबुद्धौ नपुंसकानां नलोपो वा वाच्यः। ॐ। हे ब्रह्मन्, हे ब्रह्म। रो ऽसुपि; अहर्भाति। विभाषा ङिश्योः। अह्नी, अहनी। अहानि। **अहन्** ।८।२।६८। रुः स्यात्पदान्ते। अहोभ्याम्। इह रत्वरुत्वयोरसिद्धत्वान्नलोपे प्राप्ते। अह्नो नलोपप्रतिषेधः। ॐ। तदन्तस्यापि रुत्वरत्वे। दीर्घाणि अहानि यस्मिन् स दीर्घाहाः निदाघः। इह हल्ङ्यादिलोपे प्रत्ययलक्षणेन असुपीति निषेधाद् रुः। तस्यासिद्धत्वान्नान्तलक्षण उपधादीर्घः। संबुद्धौ तु हे दीर्घाहो निदाघ। दीर्घाहानौ, दीर्घाहोभ्याम्। दण्डि, दण्डिनी। इन्हन्निति दीर्घः। दण्डीनि। अस्यतेरौणादिके ऋच् प्रत्यये। असृक्, असृग्। असृजी, असृञ्जि २। पद्न्निति वा असन्। असानि। अस्ना, असृजा। असभ्याम्, असृग्भ्यामित्यादि। ऊर्क्, ऊर्ग्। ऊर्जी ऊर्न्जि। त्यत्, त्यद् त्ये त्यानि। एवं तद् यद् एतदः। अन्वादेशे तु एनत्। तिर्यक् (ग्) तिरश्ची, तिर्यञ्चि। पूजायां तु तिर्यङ् तिर्यञ्ची तिर्यञ्चि २। यकृत्, (द्) यकृती, यकृन्ति२ पद्न्निति वा यकन्। यकानि। यक्ना, यकृता। शकानि शकृन्ति, शकृता शक्ना। ददत् (द्) ददती। **वा नपुंसकस्य** ।७।१।७९। अभ्यस्तात्परो यः शतृप्रत्ययस्तदन्तस्य क्लीबस्य नुम् वा स्यात् सर्वनामस्थाने। ददन्ति, ददति। तुदत्। **आच्छीनद्योर्नुम्** ।७।१।८०। अवर्णादङ्गात्परो यः शतुरवयवस्तदन्तस्याङ्गस्य नुम् वा स्याच्छीनद्योः परतः। तुदन्ती तुदती झलन्तत्वान्नुम्। तुदन्ति। भात्, भान्ती, भाती, भान्ति। पचत्। **शप्श्यनोर्नित्यम्** ।७।१।८१। स्पष्टम्। पचन्ती, पचन्ति। दीव्यत्, दीव्यन्ती, दीव्यन्ति। स्वप् स्वब् स्वपी। प्रतिपदोक्तत्वान्नुमः प्रागप्तृन्निति दीर्घः। स्वाम्पि। अपोभि। स्वद्भ्याम्, स्वद्भिः। धनेरुस्। रुत्वम्। धनुः। धनुषी। सान्तेति दीर्घः। नुम्विसर्जनीयेति षत्वम्। धनूंषि। धनुषा, धनुर्भ्याम् एवं चक्षुर्हविरादयः। पिपठिषतेः क्विप्। र्वोरिति दीर्घः। पिपठीः, पिपठिषी। अल्लोपस्य स्थानिवत्त्वाज्झलन्तलक्षणो नुम् न। स्वविधौ स्थानिवत्त्वाभावादजन्तलक्षणोऽपि नुम् न। पिपठिषि। पिपठीर्भ्यामित्यादि। पयः, पयसी, पयांसि। पयोभ्याम्। सुपुम् सुपुंसी, सुपुमांसि। अदः विभक्तिकार्यम्, उत्वमत्वे। अमू अमूनि। शेषं पुंवत्। इति हलन्ता नपुंसकलिङ्गाः।

स्वरादिनिपातमव्ययम् ।१।१।३७। स्वरादयो निपाताश्चाव्ययसंज्ञाः स्युः। स्वर् अन्तर्, प्रातर्, पुनर्, उच्चैस्, नीचैस्, ऋते, युगपत्, आरात्, पृथक्, ह्यस्, श्वस्, दिवा रात्रौ, सायम्, चिरम्, मनाक्, ईषत्, जोषम्, तूष्णीम्, बहिस्, समया, निकषा, स्वयम्, वृथा, नक्तम्, नञ्, इद्धा, अद्धा, वत्, सना, सनत्, तिरस्, अन्तरा, अन्तरेण, सहसा, विना, नाना, स्वस्ति, स्वधा, अलम्, वषट्, श्रौषट्। वौषट्, अन्यत्, अस्ति, दोषा, मृषा, मिथ्या, मुधा, पुरा, मिथो, मिथस्, प्रायः, मुहुः, अभीक्ष्णम्, साकम्, सार्धम्, नमस्, धिक्, अम्, आम्, मा, माङ्। आकृति-

गणोऽयम् । च, वा, ह, अह, एव, एवम्, नूनम्, शश्वत्, युगपत्, भूयस्, चेत्, कच्चित्, किंचित्, यत्र, हन्त, माङ्, नञ्, यावत्, तावत्, स्वाहा, स्वधा, तथाहि, खलु, किल, अथो, अथ, सुष्ठु, स्म, उपसर्ग-विभक्ति-स्वरप्रतिरूपकाश्च अवदत्तम् अहंयुः अस्तिक्षीरा । अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, अङ्ग, है, हे, भोः, अये, एकपदे । चादिरप्याकृतिगणः । **तद्धितश्चासर्वविभक्तिः** ।१।१।३८। परिगणनं कर्तव्यम् । तसिलादयः प्राक् पाशपः । शस्प्रभृतयः प्राक् समासान्तेभ्यः । अम् आम्, कृत्वोर्थाः, तसिवती, नानाञाविति । तेनेह न । पचतिकल्पम्, पचतिरूपम् । **कृन्मेजन्तः** ।१।१।३९। मान्त एजन्तश्च कृदन्तमव्ययं स्यात् । स्मारम् स्मारम् । जीवसे । पिबध्यै । **क्त्वातोसुन्कसुनः** ।१।१।४०। स्पष्टम् । कृत्वा, उदेतोः, विसृपः । **अव्ययीभावश्च** ।१।१।४१। अधिहरि । **अव्ययादाप्सुपः** ।२।४।८२। अव्ययाद्विहितस्यापः सुपश्च लुक् स्यात् । तत्र शालायाम् । विहितविशेषणान्नेह । अत्युच्चैसौ । सदृशं त्रिषु लिङ्गेषु सर्वासु च विभक्तिषु । वचनेषु च सर्वेषु यन्न व्येति तदव्ययम् ।१। इति लिङ्गकारकसंख्यानामभावपरत्वम् । वष्टि भागुरिरल्लोपमवाप्योरुपसर्गयोः । आपं चैव हलन्तानां यथा वाचा निशा दिशा । अवगाहः, वगाहः । अपिधानम् पिधानम् । इत्यव्ययानि ।.......

स्त्रियाम् ।४।१।३। अधिकारोऽयम् । **अजाद्यतष्टाप्** ।४।१।४। अजादीनामकारान्तस्य च स्त्रीत्वे द्योत्ये टाप् स्यात् । अजाद्युक्तिर्ङीषो ङीपश्च बाधनाय । अजा । एडका । बाला वत्सा । अतः खट्वा । संभस्राजिनशणपिण्डेभ्यः फलात् । ॐ । संफला । भस्त्रफला । ङ्यापोरिति ह्रस्वः । सदच्काण्डप्रान्तशतैकेभ्यः पुष्पात् । ॐ । सत्पुष्पा, प्राक्पुष्पा, प्रत्यक्पुष्पा । शूद्रा चामहत्पूर्वा जातिः । ॐ । पुंयोगे तु शूद्री । मूलान्नञः । ॐ । अमूला । ऋन्नेभ्यो ङीप् । कर्त्री, दण्डिनी । **उगितश्च** ।४।१।६। ङीप्स्यात् । पचन्ती, भवन्ती, दीव्यन्ती । धातोश्चेदुगित्कार्यं तर्ह्यञ्चतेरेवेति नियमात्, उखास्रत् इत्यादौ न । अञ्चतेस्तु स्यादेव । प्राची, प्रतीची । **वनो र च** ।४।१।७। ङीप् रश्चान्तादेशः । वन्निति ङ्वनिप् क्वनिप् वनिपां सामान्यग्रहणम् । शर्वरी । प्रत्ययग्रहणे यस्मात्स विहितस्तदादेस्तदन्तस्य ग्रहणम् । प्रातिपदिकविशेषणात्तदन्तान्तमपि लभ्यते । अतिसुत्वरी । अतिधीवरी । वनो न हश इति वक्तव्यम् ।ॐ। ङीप् रश्च न । ओणृ अपनयने । वनिप् विड्वनोरित्यात्वम् । अवावा । ब्राह्मणी । राजयुध्वा । बहुव्रीहौ वा । ॐ । बहुधीवरी, बहुधीवा, पक्षे डाब् वक्ष्यते । **पादोऽन्यतरस्याम्** । ४ । १ । ८ । द्विपदी, द्विपात् । **टाबृचि** ४ । १ । ९ । द्विपदा, ऋक् । एकपदा । न षट्स्वस्रादिभ्यः । पञ्च चतस्रः । **मनः** । ४ । ११ । मन्नन्तात् ङीप् । सीमा, सीमानौ, **अनो बहुव्रीहेः** । ४ । १ । १२ स्पष्टम् । बहुयज्वा बहुयज्वानौ **डाबुभाभ्यामन्यतरस्याम्** । ४ ।१ । १३ । सीमा । सीमे, सीमानौ । दामा । दामे दामानौ । ऊहुयज्वा । बहुयज्वे, बहुयज्वानौ । **अन उपधालोपिनोऽन्यतरस्याम्** । ४ । १ । २८ । अन्नन्ताद्बहुव्रीहेरुपधालोपिनो वा ङीप् स्यात् पक्षे डाब्निषेधौ । बहुराज्ञी । बहुराज्ञ्यौ, बहुराजे, बहुराजानौ । **प्रत्ययस्थात्कात्पूर्वस्यात इदाप्यसुपः** । ७ ३ । ४४

प्रत्ययस्थात्ककारात्पूर्वस्याकारस्येकारः स्यादापि परे, स आप् सुपः परो न चेत् । सर्विका, कारिका । मामकनरकयोरुपसंख्यानम् । ❀ । मामिका, नरिका । त्यक्त्यपोश्च । ❀ । दाक्षिणात्यिका, इहत्यिका । **न यासयोः** । ७ । ३ । ४५ । यत्तदोरस्येन्न स्यात् । । यका, सका । यकाम् तकाम् । त्यकनश्च निषेधः । ❀ । अधित्यका, उपत्यका । आशिषि वुनश्च न । ❀ । जीवका, भवका । उत्तरपदलोपे न । ❀ । देवदत्तिका, देवका । क्षिपकादीनां च । ❀ । क्षिपका ध्रुवका, कन्यका, चटका । तारका ज्योतिषि । ❀। अन्यत्र तारिका । वर्णका तान्तवे । ❀ । अन्यत्र वर्णिका । वर्तका शकुनौ प्राचाम् ।❀ । उदीचां तु वर्तिका । अष्टका पितृदैवत्ये । ❀ । अष्टिकाऽन्या । सूतकापुत्रिकावृन्दारकाणां वेति वाच्यम् । ❀। इह वा अ इतिच्छेदः । कात्पूर्वस्याकारादेशो वेत्यर्थः । तेन पुत्रिकाशब्दे कोन ईवर्णस्य पक्षेऽकारः । पुत्रका, पुत्रिका । अन्यत्र इत्वबाधनार्थमकारस्यैव पक्षेऽकारः, सूतका सूतिका । **उदीचामातः स्थाने यकपूर्वायाः** । ७ । ३ । ४६ । यकपूर्वस्य आतः स्थानिकस्य कात्पूर्वस्याकारस्येद्वा स्यादापि परे । आर्यका, आर्यिका । चटकका, चटकिका । धात्वन्तयकोस्तु नित्यम् । ❀ । सुनयिका सुपाकिका । **भस्त्रैषाजाज्ञाद्वास्वा नञ्पूर्वाणामपि** । ७ । ३ । ४७ । स्वेत्यन्तं लुप्तषष्ठीकं पदम् । एषामत इद् वा स्यात् । भस्त्राग्रहणमुपसर्जनार्थम् । अन्यस्य तूत्तरसूत्रेण सिद्धम् । स्वशब्दग्रहणं संज्ञोपसर्जनार्थम् । आतः स्थान इत्यनुवृत्तेः । अन्यत्र अकचि नित्यमेवेत्वम् । स्विका परमस्विका । निर्भस्त्रका, निर्भस्त्रिका, एषका, एषिका । कृतषत्वनिर्देशान्नेह विकल्पः एतिके, एतिकाः । अजका, अजिका । ज्ञका, ज्ञिका । द्वके, द्विके । निःस्वका, निःस्विका । **अभाषितपुंस्काच्च** ।७।३।४८। एतस्माद्विहितस्यातः स्थानेऽत इद् वा स्यात् । गङ्गका, गङ्गिका । भाषितपुंस्के तु नित्यम् । बहुखट्विका । **आदाचार्याणाम्** ।७ । ३ । ४९ । स्पष्टम् । गङ्गाका उक्तपुंस्के तु शुभ्रिका । **अनुपसर्जनात्** ।४।१।१४। अधिकारोऽयम् । यूनस्तिरिति यावत् ।

टिड्ढाणञ्द्वयसज्दघ्नञ्मात्रच्तयप्ठक्ठञ्कञ्क्वरपः । ४ ।१।१५ । अनुपसर्जनटिदाद्यदन्तात्प्रातिपदिकात्स्त्रियां ङीप् स्यात् । कुरुचरी । नदट् नदी । सौपर्णेयी, ऐन्द्री, औत्सी, ऊरुद्वयसी, ऊरुदघ्नी, ऊरुमात्री, पञ्चतयी, आक्षिकी, लावणिकी, यादृशी, इत्वरी । ताच्छीलिके णेऽपि । चौरी । नञ्स्नञ्भीकक्ख्युंस्तरुणतलुनानामुपसंख्यानम् । ❀ । स्त्रैणी, पौंस्नी, शाक्तीकी, आढ्यंकरणी, तरुणी, तलुनी । **यञश्च** । ४ । १ । १६ । यञन्तात्स्त्रियां ङीप् स्यात् । अकारलोपे कृते । **हलस्तद्धितस्य** । ६ । ४ । १५० । हल उत्तरस्य तद्धितयकारस्योपधाभूतस्य लोपः स्यादीपि परे । गार्गी । अनपत्याधिकारस्थान्न ङीप् । ❀ । द्वीपे भवा द्वैप्या । **प्राचां ष्फ तद्धितः** । ४ । १ । १७ । यञन्तात्ष्फो वा स्यात् , स्त्रियां स च तद्धितः । **षः प्रत्ययस्य** । १ । ३ । ६ । प्रत्ययस्यादिः ष इत्स्यात् । **आयनेयीनीयियः फढखछघां प्रत्ययादीनाम्** । ७ । १ । २ । स्पष्टम् । तद्धितान्तत्वात्प्रातिपदिकत्वम् । षित्वात् ङीष् । गार्ग्यायणी । **सर्वत्रलोहितादिकतन्तेभ्यः** ।३। लोहितादिभ्यः कतशब्दान्तेभ्यो यञन्तेभ्यो नित्यं ष्फः स्यात् । लौहित्यायनी, कात्यायनी । **कौरव्यमाण्डूकाभ्यां च** ।४।१।१९

ङीप्टापोरपवादः। कौरव्यायणी माण्डूकायनी। आसुरेरुपसंख्यानम्। ॐ। आसुरायणी। वयसि प्रथमे ।४।१।२०। अतः स्त्रियां ङीप्स्यात्। कुमारी। वयस्यचरम इति वाच्यम्। ॐ। वधूटी, चिरण्टी। वधूटचिरण्टशब्दौ यौवनवाचिनौ। द्विगोः ।४।१।२१। त्रिलोकी। अजादित्वात् त्रिफला। अपरिमाणबिस्ताचितकम्बल्येभ्यो न तद्धितलुकि ।४।१।२२। अपरिमाणान्ताद् बिस्ताद्यन्ताच्च द्विगोर्ङीप् न स्यात् तद्धितलुकि सति। पञ्चभिरश्वैः क्रीता, पञ्चाश्वा। द्विबिस्ता, द्व्याचिता, द्विकम्बल्या। काण्डान्तात्क्षेत्रे ।४।१।२३। द्वे काण्डे प्रमाणमस्याः द्विकाण्डा, क्षेत्रभक्तिः। पुरुषात्प्रमाणेऽन्यतरस्याम् ।४।१।२४। द्वौ पुरुषौ प्रमाणमस्याः सा, द्विपुरुषी, द्विपुरुषा वा, परिखा ऊधसोऽनङ् ।५।४।१३१। ऊधाऽन्ताद् बहुव्रीहेरनङादेशः स्यात्, स्त्रियाम्। इत्यनङि कृते, डाब्ङीब्निषेधेषु प्राप्तेषु। बहुव्रीहेरूधसो ङीष् ।४।१।२५। ऊधान्ताद् बहुव्रीहेर्ङीष् स्यात्, स्त्रियाम्। कुण्डोध्नी। संख्याव्ययादेर्ङीप् ।४।१।२६। द्व्यूध्नी, अत्यूध्नी। दामहायनान्ताच्च ।४।१।२७। संख्यादेर्बहुव्रीहेर्दामान्ताद् हायनान्ताच्च ङीप् स्यात्। द्विदाम्नी। द्विहायनी बाला। अव्ययानुवृत्तनेह। उद्दामा। पक्षे डाब्निषेधौ। त्रिचतुर्भ्यां हायनस्य णत्वं वाच्यम्। ॐ। त्रिहायणी, चतुर्हायणी। वयोवाचकस्यैव हायनस्य ङीप्णत्वं चेष्यते। ॐ। नेह। त्रिहायना, चतुर्हायना शाला। नित्यं संज्ञाछन्दसोः ।४।१।२९। सुराज्ञी नाम नगरी। वेदे शतमूर्ध्नी। केवलमामकभागधेयपापापरसमानार्यकृतसुमङ्गलभेषजाच्च ।४।१।३०। केवली, मामकी भागधेयी इत्यादि। संज्ञाच्छन्दसोरन्यत्र। केवला। अन्तर्वत्पतिवतोर्नुक् ।४।१।३२। मतुब्वत्वयोर्निपातेन निष्पन्नाभ्यामाभ्यां स्त्रियां नुक् स्यात्। ऋन्नेभ्यो ङीप्। अन्तर्वत्नी। पतिवत्नी। पत्युर्नो यज्ञसंयोगे ।४।१।३३। वाशिष्ठस्य पत्नी। विभाषा सपूर्वस्य ।४।१।३४। गृहपत्नी, गृहपतिः। अनुपसर्जनस्येत्यनुवृत्तमपि न पत्युर्विशेषणम्, किन्तु तदन्तस्य। तेन बहुव्रीहावपि। दृढपत्नी, दृढपतिः। क्वचित्पत्नीव पत्नीत्युपचारात् व्यस्तेऽपि प्रयोगः। वृषलस्य पत्नी। नित्यं सपत्न्यादिषु ।४।१।३५। समानः पतिरस्याः सा सपत्नी, एकपत्नी, वीरपत्नी। पूतक्रतोरै च ।४।१।३६। इयं त्रिसूत्री पुंयोग एवेष्यते। पूतक्रतोः स्त्री पूतक्रतायी। अन्यत्र पूतक्रतुः। वृषाकप्यग्निकुसितकुसिदानामुदात्तः ।४।१।३७। वृषाकपेः स्त्री वृषाकपायी। अग्नायी, कुसितायी, कुसिदायी। मनोरौ वा ।४।१।३८। ऐकारौकारौ स्तः। ताभ्यां सन्नियोगशिष्टो ङीप् च। मनोः स्त्री मनावी, मनायी, मनुः। वर्णादनुदात्तात्तोपधात्तो नः ।४।१।३९। वर्णवाची योऽनुदात्तान्तस्तोपधस्तदन्तादनुपसर्जनादकारान्तात्प्रातिपदिकाद्वा ङीप् स्यात्, तकारस्य नकारादेशश्च। एनी, एता। रोहिणी, रोहिता। पिशङ्गादुपसंख्यानम् ॐ पिशङ्गी, पिशङ्गा। असितपलितयोर्न ।ॐ।असिता, पलिता। छन्दसि क्नमेके ।ॐ। असिक्नी पलिक्नी। अन्यतो ङीष् ।४।१।४०। तोपधभिन्नाद्वर्णवाचिनोऽनुदात्तान्तात्प्रातिपदिकात् स्त्रियां ङीष् स्यात् कल्माषी, सारङ्गी। षिद्गौरादिभ्यश्च ।४।१।४१। नर्तकी, गौरी, अनडुही, अनड्वाही। आकृतिगणोऽयम्। सूर्यतिष्यागस्त्यमत्स्यानां य उप-

धायाः ।६।४।१४९। एषां यस्य लोपः । मत्स्यस्य ङ्याम् ।✽। सूर्यागस्त्ययोश्छे च ङ्यां च ।✽। तिष्यपुष्ययोर्नक्षत्राणि यलोप इति वाच्यम् ।✽। मत्सी । पितो मातामहीशब्दस्य गौरादिषु पाठादनित्यः पितां ङीष् ।✽। दंष्ट्रा । **जानपद कुण्डगोण स्थल भाजनागकाल-नीलकुशकामुककबराद्, वृत्त्यमत्रावपनाकृत्रिमाश्राणा स्थौल्यवर्णानाच्छादनायोवि-कारमैथुनेच्छाकेशवेशेषु** ।४।१।४२।एभ्यः क्रमाद्वृत्यादिष्वर्थेषु ङीष् स्यात् । जानपदी वृत्तिः अन्यत्र उत्सादित्वात् टिड्ढेति ङीपि, जानपदी आद्युदात्तः । कुण्डी अमत्रम् । कुण्डाऽन्या, जारजे तु जातिलक्षणो ङीष् । गोणी आवपनम् । स्थली अकृत्रिमा भूमिः । भाजी श्राणा । नागी स्थूला । काली, तद्वर्णवती । नीली अनाच्छादनम् । अनाच्छादनेऽपि न सर्वत्र किंतु । नीलादौषधौ ।✽। नीली । प्राणिनि च ।✽। नीली गौः । संज्ञायां वा ।✽। नीली, नीला । कुशी, अयोविकारा, कामुकी मैथुनेच्छावती । कबरी केशानां सन्निवेशविशेषः । **शोणात्प्राचाम्** ।४।१।४३। शोणी, शोणा । **वोतो गुणवचनात्** ।४।१।४४। मृद्वी, मृदुः । खरुसंयोगोपधान्न ।✽।खरुः, पतिंवरा कन्या । पाण्डुः । **बह्वादिभ्यश्च** ।४।१।४५ । बह्वी, बहुः । कृदिकारादक्तिनः ।✽। रात्री, रात्रिः । सर्वतोऽक्तिन्नर्थादित्येके ।✽।शकटी, शकटिः । बह्वादित्वात् ङीष् । पद्धती, पद्धतिः । **पुंयोगादाख्यायाम्** ।४।१।४८। पुंयोगात् स्त्रियां वर्तमानात् पुमाख्यावाचकाद् ङीष् स्यात् । गोपस्य स्त्री गोपी । पालकान्तान्न ।✽। गोपा-लिका, अश्वपालिका । सूर्याद्देवतायां चाप् वाच्यः ।✽। सूर्यस्य स्त्री देवता, सूर्या, सूरी कुन्ती, मानुषीयम् । **इन्द्रवरुणभवशर्वरुद्रमृडहिमारण्ययवयवनमातुलाचार्याणामानुक्** ।४।१।४९। एषामानुगागमः स्यात् ङीष् च । इन्द्रादीनां षण्णां मातुलाचार्ययोश्च पुंयोग एवेष्यते । तत्र ङीषि सिद्धे आनुगागममात्रं विधीयते । इतरेषां चतुर्णां तूभयम् । इन्द्राणी । हिमारण्ययोर्महत्त्वे ।✽। महत् हिमं हिमानी । अरण्यानी । यवाद् दोषे ।✽। दुष्टो यवो यवानी । यवनाल्लिप्याम् ।✽। यवनानी । मातुलोपाध्याययोरानुग् वा ।✽। मातुलानी, मातुली, उपाध्यायानी, उपाध्यायी । या तु स्वयमेवाध्यापिका तत्र वा ङीष् वाच्यः ।✽। उपाध्यायी उपाध्याया । आचार्यादणत्वं च ।✽। आचार्यानी, पुंयोग इत्येव । आचार्या स्वयं व्याख्यात्री । अर्यक्षत्रियाभ्यां वा ।✽। स्वार्थे । अर्याणी अर्या । स्वामिनी वैश्या वेत्यर्थः क्षत्रियाणी, क्षत्रिया, पुंयोगे तु आर्यी, क्षत्रियी । **क्रीतात्करणपूर्वात्** ।४।१।५०। वस्त्रक्रीती । क्वचिन्न । धनक्रीता । **क्तादल्पाख्यायाम्** ।४।१।५१। करणादेः क्तान्तात्स्त्रियां ङीप् स्यादल्पत्वे द्योत्ये । अभ्रलिप्ती द्यौः । **बहुव्रीहेश्चान्तोदात्तात्** ।४।१।५२। स्पष्टम् । ऊरुभिन्नी । जातिपूर्वा-दिति वक्तव्यम् ।✽। तेन बहुनञ्सुकालसुखादिपूर्वान्न । बहुक्रीता । जातान्तान्न ।✽।दन्तजाता । पाणिगृहीती भार्यायाम् ✽पाणिगृहीताऽन्या । **अस्वाङ्गपूर्वपदाद्वा** ।४।१।५३। पूर्ववत् । सुरा-पीती, सुरापीता । **स्वाङ्गाच्चोपसर्जनादसंयोगोपधात्** ।४।१।५४। असंयोगोपधमुपसर्जनं यत्स्वाङ्ग तदन्तादन्तात्प्रातिपदिकाद्वा ङीष् स्यात् । अतिकेशी अतिकेशा । चन्द्रमुखी, चन्द्रमुखा ।स्वाङ्गं त्रिधा । अद्रवं मूर्तिमत्स्वाङ्गं प्राणिस्थमविकारजम् । सुस्वेदा द्रवत्वात्, सुज्ञाना अमूर्तत्वात्, सुमुखा शाला, अप्राणिस्थत्वात् सुशोफा विकारजत्वादेषु न ङीष् । अतत्स्थं तत्र दृष्टं च तत्र प्राणिनि दृष्टम् परमिदानीं प्राणिनि अस्थितं तदपि स्वाङ्गम् ।✽। सुकेशी, सुकेशा

वा रथ्या। "तेन चेत्तत्तथा युतम्।" यथा प्राणिना युतं तथैव अप्राणिना युतं चेत् तदपि स्वाङ्गम्; सुस्तनी, सुस्तना वा प्रतिमा। नासिकोदरौष्ठजङ्घादन्तकर्णशृङ्गाच्च ।४।१।५५। एभ्यो वा ङीष्। तुङ्गनासिकी तुङ्गनासिका। अङ्गगात्रकण्ठेभ्यो वक्तव्यम् ।*। इति वृत्तिकारः। स्वङ्गी, स्वङ्गा। पुच्छाच्च ।*। सुपुच्छी, सुपुच्छा। कबरमणिविषशरेभ्यो नित्यम् ।*। कबरपुच्छी मयूरी। उपमानात्पक्षाच्च पुच्छाच्च ।*। नित्यमित्येव। उलूकपक्षी शाला, उलूकपुच्छी सेना। न क्रोडादिबह्वचः ।४।१।५६। कल्याणक्रोडा। आकृतिगणोऽयम्। सुनयना। सहनञ्विद्यमानपूर्वाच्च ।४।१।५७। सकेशा, अकेशा, विद्यमाननासिका नखमुखात्संज्ञायाम् ।४।१।५८। शूर्पणखा, गौरमुखा। दिक्पूर्वपदान् ङीप् ।४।१।६०। दिक्पूर्वपदात्स्वाङ्गान्तात्प्रातिपदिकात्परस्य ङीषो ङीबादेशः स्यात्। प्राङ्मुखी। वाहः ।४।१।६१। ङीषेवानुवर्तते न ङीप्। वाह ऊठ्। दित्यौही। सख्यशिश्वीति भाषायाम् ।४।१।६२। सखी अशिश्वी, छन्दस्यपि क्वचित्। आधेनवो धुनयन्तामशिश्वीः। जातेरस्त्रीविषयादयोपधात् ४।१।६३। जातिवाचिनोऽनियतस्त्रीविषयादयोपधात्प्रातिपदिकात् स्त्रियां ङीष् स्यात्। आकृतिग्रहणा जातिः। सर्वासु व्यक्तिषु समानरूपतदाकारव्यङ्ग्येत्यर्थः। तटी। लिङ्गानां च न सर्वभाग् सकृदाख्यातनिर्ग्राह्या। 'असर्वलिङ्गत्वे सत्येकस्यां व्यक्तौ कथनाद् व्यक्त्यन्तरे कथनं विनापि सुग्रहा जातिः' इति लक्षणान्तरम्। वृषली। गोत्रं च चरणैः, सह ।*। अपत्यप्रत्ययान्तः शाखाध्येतृवाची च शब्दो जातिकार्यं लभते। औपगवी कठी बह्वृची योपधप्रतिषेधे हयगवयमुकयमनुष्यमत्स्यानामप्रतिषेधः ।*। हयी, गवयी, मुकयी, हलस्तद्धितस्येति यलोपः। मनुषी। मत्स्यस्य ङ्याम् ।*। मत्सी। पाककर्णपर्णपुष्पफलमूलवालोत्तरपदाच्च ।४।१।६४। पाकाद्युत्तरपदाज्जातिवाचिनः स्त्रीविषयादपि ङीष् स्यात्। ओदनपाकी, शङ्कुकर्णी, शालपर्णी, शङ्खपुष्पी, दासीफली दर्भमूली गोवाली। इतो मनुष्यजातेः ।४।१।६५। दाक्षी। योपधादपि। औदमेयी ऊङुतः ।४।१।६६। उकारान्तादयोपधान्मनुष्यजातिवाचिनः स्त्रियामूङ् स्यात्। कुरूः। अप्राणिजातेश्चारज्ज्वादीनामुपसंख्यानम् ।*। रज्ज्वादिपर्युदासादुवर्णान्तेभ्य एव। अलाबूः, कर्कन्धूः। अनयोर्दीर्घान्तत्वेऽपि नोङ्धात्वोरिति विभक्त्युदात्तत्वप्रतिषेध ऊङः फलम्। प्राणिजातेस्तु कृकवाकुः। रज्ज्वादेस्तु रज्जुः। बाह्वन्तात्संज्ञायाम् ।४।१।६७। भद्रबाहूः। पङ्गोश्च ।४।१।६८। पङ्गूः। श्वशुरस्योकाराकारलोपश्च ।*। चादूङ्। श्वश्रूः। ऊरूत्तरपदादौपम्ये ।४।१।६९। करभोरूः। संहितशफलक्षणवामादेश्च ।४।१।७०। अनौपम्यार्थमिदम्। संहितोरूः शफोरूः, लक्षणोरूः, वामोरूः। सहितसहाभ्यां चेति वक्तव्यम् ।*। सहितोरूः। सहोरूः। संज्ञायाम् ।४।१।७२। कद्रुकमण्डल्वोः संज्ञायां स्त्रियामूङ् स्यात्। कद्रूः, कमण्डलूः। शार्ङ्गरवाद्यञो ङीन् ।४।१।७३। शार्ङ्गरवादेरञो योऽकारस्तदन्ताच्च जातिवाचिनो ङीन् स्यात्। शार्ङ्गरवी, वैदी। जातेरित्यनुवृत्तेः पुंयोगे ङीषेव। नृनरयोर्वृद्धिश्चेति शार्ङ्गरवादिगणकार्यम्। नारी। यङश्चाप् ।४।१।७४। यङ इति ष्यङ्ष्यङोः सामान्यग्रहणम्। अम्बष्ठ्या कारीषगन्ध्या। षाद्यञश्चाप् वाच्यः ।*। पौतिमाष्या। आवट्याच्च ।४।१।७५। यञश्चेति ङीपोऽपवादः। आवटशब्दो गर्गादिः। आवट्या। तद्धिताः

।४।१।७६। आपञ्चमसमाप्तेरधिकारोऽयम् । यूनस्तिः ।४।१।७७। लिङ्गविशिष्टपरिभाषया सिद्धे तद्धिताधिकार उत्तरार्थः । युवतिः । अनुपसर्जनादित्येव नेह, बहुयुवा । युवतीति तु शत्रन्तान् ङीपि बोध्यम् । इति स्त्रीप्रत्ययाः ॥

प्रातिपदिकार्थलिङ्गपरिमाणवचनमात्रे प्रथमा ।२।३।४६। मात्रशब्दस्य प्रत्येकं योगः, प्रातिपदिकार्थमात्रे लिङ्गमात्राद्याधिक्ये परिमाणमात्रे संख्यामात्रे च प्रथमा स्यात् । उच्चैः, नीचैः । कृष्णः, श्रीः, ज्ञानम् । अलिङ्गा नियतलिङ्गाश्च प्रातिपदिकार्थमात्रस्योदाहरणम् । अनियतलिङ्गास्तु लिङ्गमात्राधिक्यस्य । तटः, तटी, तटम् । परिमाणे । द्रोणो व्रीहिः । वचनं संख्या । एकः, द्वौ बहवः । **संबोधने च** ।२।३।४७। हे राम । **कारके** ।१।४।२३। अधिकारोऽयम् । **कर्तुरीप्सिततमं कर्म** ।२।४।४९। कर्तुः क्रियया आप्तुमिष्टतमं कारकं कर्मसंज्ञं स्यात् । **अनभिहिते** ।२।३।१। इत्यधिकृत्य । **कर्मणि द्वितीया** ।२।३।२। हरिं भजति । अनभिहिते एव । नेह हरिः सेव्यते । अत्र कर्मणि प्रत्यये कर्मण उक्तत्वात् । क्वचिन्निपातेनाभिधानम् । यथा विषवृक्षोऽपि संवर्ध्य स्वयं छेत्तुमसांप्रतम् । इति । **तथायुक्तं चानीप्सितम्** ।१।५।५०। ईप्सिततमवत्क्रियया युक्तमनीप्सितमपि कारकं कर्मसंज्ञं स्यात् । ग्रामं गच्छन् तृणं स्पृशति । ओदनं भुञ्जानो विषं भुङ्क्ते **अकथितं च** ।१।४।५१। अपादानादिविशेषैरविवक्षितं कारकं कर्मसंज्ञं स्यात् । परिगणनं कर्तव्यम् । दुह्याच् पचदण्डरुधिप्रच्छि-चिब्रूशासुजिमथमुषाम् । कर्मयुक् स्यादकथितं तथा स्यान्नीहृकृष्वहाम् । एषां कर्मणा यद्युज्यते तदेवाकथितं कर्मेति । गां दोग्धि पयः । बलिं याचते वसुधाम् । अविनीतं विनयं याचते । तण्डुलान् ओदनं पचति । गर्गान् शतं दण्डयति । व्रजमवरुणद्धि गाम् । माणवकं पन्थानं पृच्छति । वृक्षमवचिनोति फलानि । माणवकं धर्मं ब्रूते शास्ति वा । शतं जयति देवदत्तम् । सुधां क्षीरनिधिं मथ्नाति । देवदत्तं शतं मुष्णाति । ग्राममजां नयति हरति कर्षति वहति वा । समानार्थेऽपि । बलिं भिक्षते वसुधाम् । माणवकं धर्मं भाषते अभिधत्ते वक्तीत्यादि । अकर्मकधातुभिर्योगे देशः कालो भावो गन्तव्योऽध्वा च कर्मसंज्ञक इति वाच्यम् । ॐ । कुरून् स्वपिति । मासमास्ते । गोदोहमास्ते । क्रोशमास्ते । **गतिबुद्धिप्रत्यवसानार्थशब्दकर्माकर्मकाणामणिकर्ता स णौ** ।१।४।५२। एषामणौ यः कर्ता स णौ कर्म स्यात् । शत्रूनगमयत्स्वर्गं वेदार्थं स्वानवेदयत् । आशयच्चामृतं देवान् वेदमध्यापयद् विधिम् आसयत् सलिले पृथ्वीं यः स मे श्रीहरिर्गतिः । गत्याद्यतिरिक्ते तृतीयैव । पाचयत्योदनं देवदत्तेन । नीवह्योर्न । ॐ । नाययति वाहयति वा भारं भृत्येन । नियन्तृकर्तृकस्य वहेरनिषेधः । ॐ । वाहयति रथं वाहान् सूतः । आदिखाद्योर्न । ॐ । आदयति खादयति वाऽन्नं बटुना । भक्षेरहिंसार्थस्य न । ॐ । भक्षयत्यन्नं बटुना । जल्पतिप्रभृतीनामुपसंख्यानम् । ॐ । जल्पयति भाषयति वा धर्मं पुत्रं देवदत्तः । दृशेश्च । ॐ । दर्शयति हरिं भक्तान् । सूत्रे ज्ञानसामान्यार्थानामेव ग्रहणं न तु तद्विशेषार्थानामित्यनेन ज्ञाप्यते । तेन स्मरति जिघ्रतीत्यादीनां न । स्मारयति घ्रापयति देवदत्तेन । शब्दायतेर्न । ॐ । शब्दाययति देवदत्तेन । धात्वर्थसंगृहीतकर्मत्वेनाकर्मकत्वात्प्राप्तिः । येषां देशकालादिभिन्नं कर्म न सम्भवति तेऽत्राकर्मकाः न त्वविवक्षितकर्माणोऽपि । तेन मासमासयति देवद-

चमित्यादौ कर्मत्वं भवति। देवदत्तेन पाचयतीत्यादौ न। **हृक्रोरन्यतरस्याम्** ।१।४।५३। स्पष्टम्। हारयति कारयति वा भृत्यं भृत्येन वा कटम्। अभिवादिदृशोरात्मनेपदे वेति वाच्यम्। *। अभिवादयते दर्शयते वा देवं भक्तं भक्तेन वा। **अधिशीङ्स्थासां कर्म** ।१।४।४६। अधिपूर्वाणामेषामाधारः कर्म स्यात्। अधिशेते अधितिष्ठति। अध्यास्ते वा वैकुण्ठं हरिः। **अभिनिविशश्च** ।१।४।४७ स्पष्टम्। अभिनिविशते सन्मार्गम्; व्यवस्थितविभाषाश्रयणात्क्वचिन्न। पापेऽभिनिवेशः। **उपान्वध्याङ्वसः** ।१।४।४८॥ उपवसति अनुवसति अधिवसति आवसति वा वैकुण्ठं हरिः। अभुक्त्यर्थस्य न।❀। वने उपवसति। उभसर्वतसोः कार्या धिगुपर्यादिषु त्रिषु। द्वितीयाऽऽम्रेडितान्तेषु ततोऽन्यत्रापि दृश्यते।❀। उभयतः कृष्णं गोपाः। सर्वतः कृष्णम्। धिक् कृष्णाभक्तम्। उपर्युपरि लोकं हरिः। अध्यधि लोकम्। अभितः परितः समया निकषा हा प्रतियोगेऽपि।❀। अभितः कृष्णम्। परितः कृष्णम्। ग्रामं समया। निकषा लङ्काम्। हा कृष्णाभक्तम्। बुभुक्षितं न प्रतिभाति किञ्चित्। **अन्तराऽन्तरेणयुक्ते** ।।२।३।४।। अन्तरा त्वां मां हरिः। अन्तरेण हरिं न सुखम्। **कर्मप्रवचनीयः** ।।१।४।८३।। इत्यधिकृत्य। **अनुर्लक्षणे** ।।१।४।८४।। लक्षणे द्योत्ये अनुरुक्तसंज्ञः स्यात्। **कर्मप्रवचनीययुक्ते द्वितीया** ।।२।३। जपमनु प्रावर्षत्। हेतुभूतजपोपलक्षितं वर्षणमित्यर्थः। **तृतीयार्थे** ।।१।४।८५।। अस्मिन् द्योत्येऽनुरुक्तसंज्ञः स्यात्। नदीमन्ववसिता सेना। नद्या सह संबद्धेत्यर्थः। **हीने** ।।१।४।८६।। अनुः प्राग्वत्। अनु हरिं सुराः। हरेर्हीना इत्यर्थः। **उपोऽधिके च** ।।१।४।८७।। अधिके हीने च द्योत्ये उपेत्ययं प्राक्संज्ञः स्यात्। अधिके सप्तमी वक्ष्यते हीने उपहरिं सुराः। **लक्षणेत्थंभूताख्यानभागवीप्सासु प्रतिपर्यनवः** ।।१।४।९०।। एष्वर्थेषु विषयभूतेषु प्रत्यादय उक्तसंज्ञाः स्युः। लक्षणे—वृक्षं प्रति पर्यनु वा। भागे लक्ष्मीर्हरिं प्रति पर्यनु वा। हरेर्भाग इत्यर्थः। वीप्सायाम्—वृक्षं वृक्षं प्रतिपर्यनु वा सिञ्चति। अत्रोपसर्गत्वाभावान्न षत्वम्। **अभिरभागे** ।१।४।९१। भागवर्जेषु लक्षणादिष्वर्थेषु अभिरुक्तसंज्ञः स्यात्। हरिमभि वर्तते। भक्तो हरिमभि। देवं देवमभिसिञ्चति। **अधिपरी अनर्थकौ** ।१।४।९३। कुतोऽध्यागच्छति। कुतः पर्यागच्छति। **सुः पूजायाम्** ।।१।४।९४। सुसिक्तम्। सुस्तुतम्। **अतिरतिक्रमणे च** ।।१।४।९५।। अतिदेवान् कृष्णः। **अपिः पदार्थसंभावनान्ववसर्गगर्हासमुच्चयेषु** ।।१।४।९६।। सर्पिषो ऽपि स्यात्। अनुपसर्गत्वान्न षः। सर्पिषो बिन्दुरपि स्यादित्यर्थः। अपि स्तुयाद्विष्णुम्। सम्भावनं शक्त्युत्कर्षमाविष्कर्तुमत्युक्तिः। अन्ववसर्गः कामचारानुज्ञा। अपि स्तुहि। गर्हायाम्—धिक् देवदत्तमपि स्तुयाद् वृषलम्। समुच्चये-अपि सिञ्च अपि स्तुहि। **कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे** ।।२।३।५।। द्वितीया स्यात्। मासं कल्याणी। मासमधीते। मासं गुडधानाः। क्रोशं गिरिः। **स्वतन्त्रः कर्ता** ।।१।४।५४।। क्रियायां स्वातन्त्र्येण विवक्षितोऽर्थः कर्ता स्यात्। **साधकतमं करणम्** ।।१।४।४२।। **कर्तृकरणयोस्तृतीया** ।।२।३।१८।। अनभिहिते एव। रामेण बाणेन हतो वाली। प्रकृत्यादिभ्य उपसंख्यानम्।। ❀ ।। प्रकृत्या चारुः। प्रायेण याज्ञिकः। गोत्रेण

गार्ग्यः । समेन एति । विषमेण एति । द्विद्रोणेन धान्यं क्रीणाति । सुखेन दुःखेन वा याति । **दिवः कर्म च** ॥ १ ४ ३३ ॥ दिवः साधकतमं कारकं कर्मसंज्ञं स्याच्चात्करणसंज्ञम् । अक्षैरक्षान् वा दीव्यति । **अपवर्गे तृतीया** ॥ २ । ३ । ६ । अपवर्गः फलप्राप्तिस्तस्यां द्योत्यायां कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे तृतीया स्यात् । अह्ना क्रोशेन वाऽनुवाकोऽधीतः । **सहयुक्तेऽप्रधाने** ॥ २ । ३ । १९ ॥ पुत्रेण सहागतः पिता । एवं साकं सार्धं समं योगेऽपि । विनाऽपि तद्योगं तृतीया । वृद्धो यूनेत्यादिनिर्देशात् । **येनाङ्गविकारः** ॥ २ । ३ । २० । अक्ष्णा काणः । पादेन खञ्जः । शिरसा खल्वाटः । **इत्थंभूतलक्षणे** ॥ २ । ३ । २१ ॥ कञ्चित्प्रकारं प्राप्तस्य लक्षणे तृतीया स्यात् । जटाभिस्तापसः । **संज्ञोऽन्यतरस्यां कर्मणि** ॥ २ । ३ । २२ ॥ पित्रा पितरं वा सञ्जानीते । **हेतौ** २ । ३ । २३ ॥ दण्डेन हतः । पुण्येन दृष्टः । द्रव्यादिसाधारणं निर्व्यापारसाधारणं च हेतुत्वम् । करणत्वं तु क्रियामात्रविषयं व्यापारनियतं च । फलमपि हेतुः । अध्ययनेन वसति । गम्यमानाऽपि क्रिया कारकविभक्तौ प्रयोजिका । अलं श्रमेण । श्रमेण साध्यं नास्तीत्यर्थः । शतेन शतेन वत्सान् पाययति पयः । शतेन परिच्छिद्येत्यर्थः । अशिष्टव्यवहारे दाणः प्रयोगे चतुर्थ्यर्थे तृतीया । ❀ । दास्या संयच्छते कामुकः । **कर्मणा यमभिप्रैति स संप्रदानम्** । १ । ४ । ३२ । दानस्य कर्मणेत्यर्थः । **चतुर्थी संप्रदाने** । २ । ३ । १३ । विप्राय गां ददाति । अनभिहित इत्येव । दानीयो विप्रः । क्रियया यमभिप्रैति सोऽपि संप्रदानम् । ❀ । पत्ये शेते । यजेः कर्मणः करणसंज्ञा, संप्रदानस्य च कर्मसंज्ञा । ❀ । पशुना रुद्रं यजते । पशुं रुद्राय ददातीत्यर्थः । **रुच्यर्थानां प्रीयमाणः** ।१।४।३३। हरये रोचते भक्तिः । हरिनिष्ठप्रीतेर्भक्तिः कर्त्री । **श्लाघह्नुङ्स्थाशपां ज्ञीप्स्यमानः** । १ । ४ । ३४ । एषां प्रयोगे बोधयितुमिष्टः संप्रदानं स्यात् । गोपी स्मरात्कृष्णाय श्लाघते, ह्नुते, तिष्ठते शपते वा । **धारेरुत्तमर्णः** ।१।४।३५। भक्ताय धारयति मोक्षं हरिः । **स्पृहेरीप्सितः** । १ । ४ । ३६ । पुष्पेभ्यः स्पृहयति । ईप्सितमात्रे इयं संज्ञा, प्रकर्षविवक्षायां तु परत्वात्कर्मसंज्ञा । पुष्पाणि स्पृहयति । **क्रुधद्रुहेर्ष्यासूयार्थानां यं प्रति कोपः** १ । ४ । ४७ हरये क्रुध्यति, द्रुह्यति, ईर्ष्यति, असूयति । क्रोधोऽमर्षः, द्रोहोऽपकारः, ईर्ष्या अक्षमा, असूया गुणेषु दोषाविष्करणम् । **क्रुधद्रुहोरुपसृष्टयोः कर्म** १ । ४ । ३१ क्रूरमभिक्रुध्यति, अभिद्रुह्यति । **राधीक्ष्योर्यस्य विप्रश्नः** १ । ४ । ३९ । यदीयो विविधः प्रश्नः क्रियते तत्र चतुर्थी । कृष्णाय राध्यति, ईक्षते वा । पृष्टो गर्गः शुभाशुभं पर्यालोचयतीत्यर्थः । **प्रत्याङ्भ्यां श्रुवः पूर्वस्य कर्ता** १ । ४ । ४० । आभ्यां परस्य शृणोतेर्योगे पूर्वस्य प्रवर्तनरूपव्यापारस्य कर्ता संप्रदानं स्यात् । विप्राय गां प्रतिशृणोति, आशृणोति वा । विप्रेण मह्यं देहीति प्रवर्तितः प्रतिजानीत इत्यर्थः । **अनुप्रतिगृणश्च** ।१।४।४१। आभ्यां गृणातेः कारकं पूर्वव्यापारस्य कर्तृभूतमुक्त संज्ञं स्यात् । होत्रेऽनुगृणाति । प्रतिगृणाति, होता प्रथमं शंसति, तमध्वर्युः प्रोत्साहयतीत्यर्थः । **परिक्रयणे संप्रदानमन्यतरस्याम्** ।१।४।४२। नियतकालं भृत्या स्वीकरणं परिक्रयणम् । तस्मिन् साधकतमं कारकं संप्रदानसंज्ञं वा स्यात् । शतेन, शताय वा परिक्रीणाति ।

५

तादर्थ्ये चतुर्थी वाच्या। ❀। मुक्तये हरिं भजति। क्लृपि संपद्यमाने च। ❀। भक्तिर्ज्ञानाय कल्पते, संपद्यते, जायते इत्यादि। उत्पातेन ज्ञापिते च। ❀। वाताय कपिला विद्युत्। हितयोगे च। ❀। ब्राह्मणाय हितम्। **क्रियार्थोपपदस्य च कर्मणि स्थानिनः** ।२।३।१४। क्रियार्था क्रिया उपपदं यस्य तस्य स्थानिनोऽप्रयुज्यमानस्य तुमुनः कर्मणि चतुर्थी स्यात्। फलेभ्यो याति। फलान्याहर्तुं यातीत्यर्थः। नमस्कुर्मो नृसिंहाय। नृसिंहमनुकूलयितुमित्यर्थः। एवं स्वयम्भुवे नमस्कृत्येत्यादि। **तुमर्थाच्च भाववचनात्** ।२।३।१५। यागाय याति। यष्टुं यातीत्यर्थः। **नमःस्वस्तिस्वाहास्वधाऽलंवषड्योगाच्च** ।२।३।१६। हरये नमः। उपपदविभक्तेः कारकविभक्तिर्बलीयसी। ❀। नमस्करोति देवान्। प्रजाभ्यः स्वस्ति, अग्नये स्वाहा, पितृभ्यः स्वधा। अलमिति पर्याप्त्यर्थग्रहणम्। तेन। दैत्येभ्यो हरिरलम्। प्रभुः, समर्थः, शक्त इत्यादि। प्रभ्वादियोगे षष्ठ्यपि साधुः। यथा प्रभुर्बुभूर्भुवनत्रयस्येत्यादि। वषट् इन्द्राय। चकारग्रहणात् परामपि (चतुर्थी चाशिषीति) षष्ठीं बाधते। स्वस्ति गोभ्यो भूयात्। **मन्यकर्मण्यनादरे विभाषाऽप्राणिषु** ।२।३।१७। न त्वां तृणं मन्ये, तृणाय वा। श्यना निर्देशात्तनादियोगे न न त्वां तृणं मन्वे। अप्राणिष्वित्यपनीय। नौकाकान्नशुकशृगालवर्ज्येष्विति वाच्यम्। ❀। न त्वां शुने मन्ये, इत्यत्र प्राणित्वेऽपि भवत्येव। न त्वां नावमन्नं वा मन्ये। इत्यत्र अप्राणित्वेऽपि न चतुर्थी। **गत्यर्थकर्मणि द्वितीयाचतुर्थ्यौ चेष्टायामनध्वनि** ।२।३।१२। ग्रामं ग्रामाय वा गच्छति। गन्त्राधिष्ठितेऽध्वन्येवायं निषेधः। यदा तूत्पथात्पन्था एवाक्रमितुमिष्यते तदा चतुर्थी भवत्येव। उत्पथेन पथे गच्छति। **ध्रुवमपायेऽपादानम्** ।१।४।२४। विश्लेषे अवधिभूतं कारकमपादानसंज्ञं स्यात्। **अपादाने पञ्चमी** ।२।३।२८। ग्रामादायाति धावतोऽश्वात्पतति। जुगुप्साविरामप्रमादार्थानामुपसंख्यानम्। ❀। पापाज्जुगुप्सते, विरमति धर्मात्प्रमाद्यति। **भीत्रार्थानां भयहेतुः** ।१।४।२५। चोराद् बिभेति, चोरात् त्रायते। **पराजेरसोढः** ।१।४।२६। अध्ययनात्पराजयते, ग्लायतीत्यर्थः। **वारणार्थानामीप्सितः** ।१।४।२७। प्रवृत्तिविघातो वारणम्। यवेभ्यो गां वारयति। **अन्तर्धौ येनादर्शनमिच्छति** ।१।४।२८। व्यवधाने सति यत्कर्तृकस्यात्मनो दर्शनस्याभावमिच्छति तदपादानं स्यात्। मातुर्निलीयते कृष्णः। **आख्यातोपयोगे** ।१।४।२९। नियमपूर्वकविद्यास्वीकारे वक्ता प्राक्संज्ञः स्यात्। उपाध्यायादधीते। **जनिकर्तुः प्रकृतिः** ।१।४।३०। जायमानस्य हेतुरपादानं स्यात्। ब्रह्मणः प्रजाः प्रजायन्ते। **भुवः प्रभवः** ।१।४।३१। भवनं भूः। भूकर्तुः प्रभवस्तथा। हिमवतो गङ्गा प्रभवति। तत्र प्रकाशत इत्यर्थः। ल्यब्लोपे कर्मण्यधिकरणे च। ❀। प्रासादात्प्रेक्षते, आसनात्प्रेक्षते प्रासादमारुह्य, आसने उपविश्य च प्रेक्षते इत्यर्थः। श्वशुराज्जिह्रेति श्वशुरं वीक्ष्य जिह्रेतीत्यर्थः। गम्यमानाऽपि क्रिया कारकविभक्तीनां निमित्तम्। कस्मात् त्वम्, नद्याः। यतश्चाध्वकालनिर्माणं तत्र पञ्चमी, तद्युक्तादध्वनः प्रथमासप्तम्यौ कालात्सप्तमी च वक्तव्या। ❀। वनाद् ग्रामो योजनं योजने वा। कार्तिक्या आग्रहायणी मासे। **अन्यारादितरर्तेदिक्शब्दाञ्चूत्तरपदाजाहियुक्ते** २।३।२९। अन्य इत्यर्थग्रहणम्,

इतरग्रहणं प्रपञ्चार्थम्। अन्यो भिन्न इतरो वा कृष्णात्। आराद् वनात्, ऋते कृष्णात् पूर्वो ग्रामात्। दिशि दृष्टः शब्दो दिक्शब्दः। तेन, संप्रति देशकालवृत्तिना योगेऽपि भवति। चैत्रात्पूर्वः फाल्गुनः। अवयववाचियोगे तु न। पूर्वं कायस्य। प्राक् प्रत्यग् वा ग्रामात्। आच्-दक्षिणा ग्रामात् आहि-दक्षिणाहि ग्रामात् आङ्प्रयोगात्प्रभृतियोगेऽपि पञ्चमी, भवात्प्रभृति आरभ्य वा सेव्यो हरिः। अपपरिबहिरिति समासविधानाज्ज्ञापकाद् बहिर्योगे पञ्चमी। ग्रामाद् बहिः। **अपपरी वर्जने** १।४।८८। एतौ कर्मप्रवचनीयौ स्तः। **आङ्मर्यादावचने** १।४।८९। वचनमभिविधिः। **पञ्चम्यपाङ्परिभिः** २।३।१०। एतैः कर्मप्रवचनीयैर्योगे पञ्चमी स्यात्, अपहरेः परिहरेः संसारः। लक्षणादौ तु हरिं परि। आ मुक्तेः संसारः। आ सकलाद् ब्रह्म। **प्रतिः प्रतिनिधिप्रतिदानयोः** ।१।४।९२। उक्तसंज्ञः स्यात्। **प्रतिनिधिप्रतिदाने च यस्मात्** ।३।११। पञ्चमी स्यात्। प्रद्युम्नः कृष्णात् प्रति। तिलेभ्यः प्रतियच्छति माषान्। **अकर्तर्यृणे पञ्चमी** २।३।२४। शताद् बद्धः। **विभाषा गुणेऽस्त्रियाम्** ।२।३।२५। जाड्याज्जाड्येन वा बद्धः। विभाषेति योगविभागादगुणे स्त्रियां च क्वचित्। धूमादग्निमान्। नास्ति घटोऽनुपलब्धेः। **पृथग्विनानानाभिस्तृतीयाऽन्यतरस्याम्**।२।३। ३२ एभिर्योगे तृतीया स्यात्, पञ्चमीद्वितीये च। पृथक् रामेण, रामाद् रामं वा। एवं विना नाना। **करणे च स्तोकाल्पकृच्छ्रकतिपयस्यासत्त्ववचनस्य** ।२।३।३३। एभ्योऽद्रव्यवचनेभ्यः करणे तृतीयापञ्चम्यौ स्तः। स्तोकेन स्तोकाद्वा मुक्तः। **दूरान्तिकार्थेभ्यो द्वितीया च**।२।३।३५। चात्पञ्चमीतृतीये। ग्रामस्य दूरं दूरात् दूरेण वा। अन्तिकम् अन्तिकात् अन्तिकेन वा। **षष्ठी शेषे**।२।३।५०। राज्ञः पुरुषः। कर्मादीनां सम्बन्धमात्रविवक्षायां षष्ठ्येव। सतां गतम्। सर्पिषो जानीते, मातुः स्मरति, एधो दकस्योपस्कुरुते। भजे शम्भोश्चरणयोः। फलानां तृप्तः। **षष्ठी हेतुप्रयोगे** ।२।३।२६। हेतुशब्दप्रयोगे हेतौ द्योत्ये च षष्ठी स्यात्। अन्नस्य हेतोर्वसति। **सर्वनाम्नस्तृतीया च** ।२।३।२७। केन हेतुना वसति, कस्य हेतोर्वा। निमित्तपर्यायप्रयोगे सर्वासां प्रायदर्शनम्। ।*। किं निमित्तं वसति, केन निमित्तेन, कस्मै निमित्तायेत्यादि। एवं किं कारणम्, को हेतुः, किं प्रयोजनमित्यादि। प्रायग्रहणादसर्वनाम्नः प्रथमाद्वितीये न स्तः। ।*। ज्ञानेन निमित्तेन हरिः सेव्यः, ज्ञानाय निमित्तायेत्यादि। **षष्ठ्यतसर्थप्रत्ययेन** ।२।३।३०। दिक्शब्देति पञ्चम्या अपवादः। ग्रामस्य दक्षिणतः पुरः पुरस्तात्, उपरि उपरिष्टात्, **एनपा द्वितीया** ।२।३।३१। द्वितीयाषष्ठ्यौ स्तः। दक्षिणेन ग्रामं ग्रामाद् वा, एवमुत्तरेण। **दूरान्तिकार्थैः षष्ठ्यन्यतरस्याम्** ।२।३।३४। पक्षे पञ्चमी। दूरं निकटं ग्रामस्य ग्रामाद् वा। **ज्ञोऽविदर्थस्य करणे** ।२।३।५१। जानातेरज्ञानार्थस्य करणे शेषत्वेन विवक्षिते षष्ठी स्यात्। सर्पिषो ज्ञानम्। **अधीगर्थदयेशां कर्मणि**। २।३।५२। मातुः स्मरणम्, सर्पिषो दयनम्, ईशनं वा। **कृञः प्रतियत्ने** ।२।३।५३। कृञः कर्मणि शेषे षष्ठी स्याद् गुणाधाने। एधो दकस्योपस्करणम्। **रुजार्थानां भाववचनानामज्वरेः** ।२।३।५४।

भावकर्तृकाणां ज्वरवर्जितानां रुजार्थानां कर्मणि शेषे षष्ठी स्यात् । चौरस्य रोगस्य रुजा । अज्वरिसंताप्योरिति वाच्यम् ।*। रोगस्य चौरज्वरः, चौरसंतापो वा । **आशिषि नाथः** । २।३।५५। सर्पिषो नाथनम् । **जासिनिप्रहणनाटक्राथपिषां हिंसायाम्** । २।३।५६। चौरस्योज्जासनम् । निप्रौ संहतौ विपर्यस्तौ व्यस्तौ वा । चौरस्य निप्रहणनम्, प्रणिहननम्, निहननम्, प्रहणनं वा । चौरस्योन्नाटनम्, चौरस्य क्राथनम्, वृषलस्य पेषणम् ।

व्यवहृ[2]पणोः समर्थयोः । २।३।५७। शतस्य व्यवहरणं पणनं वा । **दिवस्तदर्थस्य** ।२।३।५८। द्यूतार्थस्य व्यवहारार्थस्य च दिवः कर्मणि षष्ठी स्यात् । शतस्य दीव्यति । **विभाषोपसर्गे** । २।३।५९। शतस्य शतं वा प्रतिदीव्यति । **प्रेष्यब्रुवोर्हविषो देवतासंप्रदाने** । २।३।६१। अनयोः कर्मणो हविर्विशेषस्य वाचकाच्छब्दात् षष्ठी स्यात् । अग्नये छागस्य हविषो वपाया मेदसः प्रेष्य अनुब्रूहि वा । **कृत्वोऽर्थप्रयोगे कालेऽधिकरणे** । २।३।६४। अत्र शेषे षष्ठी स्यात् । पञ्चकृत्वोऽह्नो भोजनम् । **कर्तृकर्मणोः कृति** ।२।३।६४। कृष्णस्य कृतिः, जगतः कर्ता । गुणकर्मणि वेष्यते ।*। नेताऽश्वस्य स्रुघ्नस्य स्रुघ्नं वा । **उभयप्राप्तौ कर्मणि** । २।३।६६। आश्चर्यो गवां दोहोऽगोपेन । स्त्रीप्रत्यययोरकाकारयोर्नायं नियमः ।*। भेदिका बिभित्सा वा रुद्रस्य जगतः । शेषे विभाषा ।*। स्त्रीप्रत्यय इत्येके । विचित्रा कृतिर्हरेर्हरिणा वा । केचिदविशेषेण विभाषामिच्छन्ति । शब्दानामनुशासनमाचार्येणाचार्यस्य वा । **क्तस्य च वर्तमाने** ।२।३।६७। न लोकेत्यस्यापवादः । राज्ञां मतो, बुद्धः, पूजितो वा । **अधिकरणवाचिनश्च** ।२।३।६८। क्तस्य योगे षष्ठी स्यात् । इदमेषामासितं शयितं गतं भुक्तं वा । **न लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनाम्[3]** ।२।३।६९। लादेशः—कुर्वन् कुर्वाणो वा सृष्टिं हरिः । उः-हरिं दिदृक्षुः, अलंकरिष्णुर्वा । उक–दैत्यान् घातुको हरिः । कमेरनिषेधः ।*। लक्ष्म्याः कामुको हरिः । अव्ययम्–जगत् सृष्ट्वा, सुखं कर्तुम् । निष्ठा- विष्णुना हता दैत्याः, दैत्यान् हतवान् विष्णुः । खलर्थाः--ईषत्करः प्रपञ्चो हरिणा । तृन्निति प्रत्याहारः । शतृशानचाविति तृशब्दादारभ्य आ तृनो नकारात् । शानच् सोमं पवमानः, चानश्--आत्मानं मण्डयमानः । शतृ--वेदमधीयन्, तृन्--कर्ता लोकान् । द्विषः शतुर्वा ।*। मुरस्य मुरं वा द्विषन् । सर्वोऽयं कारकषष्ठ्याः प्रतिषेधः शेषे षष्ठी तु स्यादेव । ब्राह्मणस्य कुर्वन्, नरकस्य जिष्णुः । **अकेनोर्भविष्यदाधमर्ण्ययोः** । २।३।७०। भविष्यत्यकस्य भविष्यदाधमर्ण्यार्थेनश्च योगे षष्ठी न स्यात् । सतः पालकोऽवतरति, व्रजंगामी, शतं दायी । **कृत्यानां कर्तरि वा** । २।३।७१। मया मम वा सेव्यो हरिः **तुल्यार्थैरतुलोपमाभ्यां तृतीयाऽन्यतरस्याम्** ।२।३।७२। तुल्यः, सदृशः, समो वा कृष्णस्य कृष्णेन अतुलोपमाभ्यामित्युक्तेर्नेह । तुला उपमा वा कृष्णस्य नास्ति । **चतुर्थी चाशिष्य[1]ायुष्यमद्रभद्रकुशलसुखार्थहितैः** ।२।३।७३। एतदर्थैर्योगे चतुर्थी वा स्यात्, पक्षे षष्ठी । आशिषि आयुष्यं चिरं जीवितं कृष्णाय कृष्णस्य वा भूयात् । एवं मद्रं भद्रं कुशलं निरामयं सुखं शम् अर्थः प्रयोजनं हितं पथ्यं वा भूयात् । **आधारो[2]ऽधिकरणम्** ।१।४।४५। कर्तृकर्मद्वारा तन्निष्ठक्रियाया

आधारः कारकमधिकरणसंज्ञं स्यात् । सप्तम्यधिकरणे च । २ । ३ ।३६। चकाराद् दूरान्तिकार्थेभ्यः । कटे आस्ते, स्थाल्यां पचति, मोक्षे, इच्छाऽस्ति, सर्वस्मिन्नात्माऽस्ति वनस्य दूरे अन्तिके वा । क्तस्येन्विषयस्य कर्मण्युपसंख्यानम् * अधीती व्याकरणे । साध्वसाधुप्रयोगे च । * । साधुः कृष्णो मातरि, असाधुर्मातुले । निमित्तात्कर्मयोगे । * । निमित्तमिह फलम् । योगः संयोगः समवायात्मकः । चर्मणि द्वीपिनं हन्ति, दन्तयोर्हन्ति कुञ्जरम् । केशेषु चमरीं हन्ति, सीम्नि पुष्कलको हतः । हेतौ तृतीया प्राप्ता तन्निवारणार्थम् । यस्य च भावेन भावलक्षणम् ।२।३।३७। यस्य क्रियया क्रियान्तरं लक्ष्यते ततः सप्तमी स्यात् । गोषु दुह्यमानासु गतः । अर्हाणां कर्तृत्वेऽनर्हाणामकर्तृत्वे तद्वैपरीत्ये च * । सत्सु तरत्सु असन्तस्तिष्ठन्ति, असत्सु तिष्ठत्सु सन्तस्तरन्ति । सत्सु तिष्ठत्सु असन्तस्तरन्ति । असत्सु तरत्सु सन्तस्तिष्ठन्ति । षष्ठी चानादरे ।२।३।३८। चात्सप्तमी । रुदति रुदतो वा प्राव्राजीत् । रुदन्तं पुत्रादिकमनादृत्य संन्यस्तवानित्यर्थः । स्वामीश्वराधिपतिदायादसाक्षिप्रतिभूप्रसूतैश्च ।२।३।३९। गवां गोषु वा स्वामी, गवां गोषु वा प्रसूतः । आयुक्तकुशलाभ्यां चासेवायाम् ।२।३।४०। आभ्यां योगे तौ स्तः । तात्पर्येऽर्थे । आयुक्तः, कुशलो वा हरिपूजने हरिपूजनस्य वा । यतश्च निर्धारणम् ।२।३।४१। जातिगुणक्रियासंज्ञाभिः समुदायादेकदेशस्य पृथक्करणं निर्धारणम्, यत्समुदायान्निर्धारण ततः षष्ठीसप्तम्यौ स्तः । नृणां नृषु वा ब्राह्मणः श्रेष्ठः । गवां गोषु वा कृष्णा बहुक्षीरा । गच्छतां गच्छत्सु वा धावन् शीघ्रः । छात्राणां छात्रेषु वा मैत्रः पटुः । पञ्चमी विभक्ते ।२।३।४२। माथुराः पाटलिपुत्रकेभ्य आढ्यतराः । साधुनिपुणाभ्यामर्चायां सप्तम्यप्रतेः ।२।३।४३। मातरि साधुर्निपुणो वा । अप्रत्यादिभिरिति वक्तव्यम् । * । साधुर्निपुणो वा मातरं प्रति पर्यनु वा । प्रसितोत्सुकाभ्यां तृतीया च ।२।३।४४। प्रसित उत्सुको वा हरिणा हरौ वा । नक्षत्रे च लुपि ।२।३।४५। नक्षत्रे प्रकृत्यर्थे यो लुप्संज्ञया लुप्यमानस्य प्रत्ययस्यार्थस्तत्र वर्तमानात्तृतीयासप्तम्यौ स्तोऽधिकरणे । मूलेनावाहयेद् देवीं श्रवणेन विसर्जयेत्, मूले श्रवणे इति वा । सप्तमीपञ्चम्यौ कारकमध्ये ।२।३।७। शक्तिद्वयमध्ये यो कालाध्वानौ ताभ्यामेते स्तः । अद्य भुक्त्वाऽयं द्व्यहे द्व्यहाद्वा भोक्ता कर्तृशक्त्योर्मध्येऽयं कालः । इहस्थोऽयं क्रोशे क्रोशाद्वा लक्ष्यं विध्येत् । कर्तृकर्मशक्त्योर्मध्येऽयं देशः । अधिकशब्देन योगे सप्तमीपञ्चम्याविष्येते । * । लोके लोकाद्वा अधिको हरिः । अधिरीश्वरे ।१।४।९७। स्वस्वामिसम्बन्धे अधिः कर्मप्रवचनीयसंज्ञः स्यात् । यस्मादधिकं यस्य चेश्वरवचनं तत्र सप्तमी ।२।३।९। उप परार्धे हरेर्गुणाः । ऐश्वर्ये तु स्वस्वामिभ्यां पर्यायेण सप्तमी । अधिभुवि रामः, अधिरामे भूः । सप्तमी रामाधाना । विभाषा कृञि ।१।४।९८। अधिः कृञो योगे प्राक्संज्ञः स्यादीश्वरेऽर्थे । यदत्र मामधिकरिष्यति । इति विभक्त्यर्थाः ।

समर्थः पदविधिः ।२।१।१। पदविधिः अन्वययोग्याश्रितो बोध्यः । नेह भार्या चैत्रस्य, पुरुषो राज्ञः । प्राक् कडारात् समासः ।२।१।२। समास इत्यधिक्रियते । सह सुपा

।२।१।४। सुप्सुपा सह समस्यते । समासत्वात् प्रातिपदिकत्वम् । सुपो धातुप्रातिपदिकयोः ।२।४।७१। लुक् स्यात् । भूतपूर्वे चरडिति निर्देशाद् भूतशब्दस्य पूर्वनिपातः, पूर्वं भूतो भूतपूर्वः । इवेन सह समासो विभक्त्यलोपश्च । ॐ । जीमूतस्येव । अव्ययीभावः ।२।१।५ अधिकारोऽयम् । अव्ययं विभक्तिसमीपसमृद्धिव्यृद्ध्यर्थाभावात्ययासंप्रतिशब्दप्रादुर्भावपश्चाद्यथानुपूर्व्ययौगपद्यसादृश्यसंपत्तिसाकल्यान्तवचनेषु ।२।१।६। अव्ययमिति योगो विभज्यते । अव्ययं समर्थेन सह समस्यते सोऽव्ययीभावः । प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम् ।१।२।४३। उपसर्जनं पूर्वम् ।२।२।३०। स्पष्टम् । एकविभक्ति चापूर्वनिपाते ।१।२।४४। विग्रहे यन्नियतविभक्तिकं तदुपसर्जनसंज्ञं स्यात् न तु तस्य पूर्वनिपातः । गोस्त्रियोरुपसर्जनस्य ।१।२।४८। उपसर्जनं यो गोशब्दः स्त्रीप्रत्ययान्तं च तदन्तस्य प्रातिपदिकस्य ह्रस्वः स्यात् । अव्ययीभावश्चेत्यव्ययत्वम् । नाव्ययीभावादतोऽम्त्वपञ्चम्याः ।२।४।८३। अदन्तादव्ययीभावात्सुपो न लुक् तस्य पञ्चमीं विना अमादेशः स्यात् दिशयोर्मध्येऽपदिशम् । तृतीयासप्तम्योर्बहुलम् ।२।४।८५। अपदिशम्, अपदिशेन, अपदिशम्, अपदिशे । विभक्तौ—हरौ इत्यधिहरि । हरि ङि अधि इत्यलौकिकं विग्रहवाक्यम् । गोपे अधि । अव्ययीभावश्च ।१।४।१८। अयं नपुंसकं स्यात् । ह्रस्वो नपुंसके प्रातिपदिकस्य । अधिगोपम् । समीपे, कृष्णस्य समीपम्—उपकृष्णम् । मद्राणां समृद्धिः सुमद्रम् । यवनानां व्यृद्धिः, दुर्यवनम् । मक्षिकाणामभावो निर्मक्षिकम् । हिमस्यात्ययोऽतिहिमम् । निद्रा संप्रति न युज्यते इत्यतिनिद्रम् । हरिशब्दस्य प्रकाश इतिहरि । विष्णोः पश्चादनुविष्णु । योग्यतावीप्सापदार्थानतिवृत्तिसादृश्यानि यथार्थाः । अनुरूपम् अर्थमर्थं प्रति प्रत्यर्थम् । कर्मप्रवचनीयसंज्ञाविधानसामर्थ्यात्तद्योगे द्वितीयागर्भं वाक्यमपि । शक्तिमनतिक्रम्य यथाशक्ति । हरेः सादृश्यं सहरि । ज्येष्ठस्यानुपूर्व्येणेत्यनुज्येष्ठम् । चक्रेण सह युगपत् इति विग्रहे । अव्ययीभावे चाकाले ।६।३।८१। सहस्य सः स्यात् । सचक्रम् । काले तु सहपूर्वाह्णम् । ससखि । यथार्थत्वेनैव सिद्धे पुनः सादृश्यग्रहणं गुणभूतेऽपि सादृश्ये यथा स्यात् । क्षत्राणां संपत्तिः सक्षत्रम् । ऋद्धेराधिक्यं समृद्धिः । सतृणमत्ति । साग्नि पठति । यथाऽसादृश्ये ।२।१।७। नेह । यथा हरिस्तथा हरः । यावदवधारणे ।२।१।८। यावच्छ्लोकम् । सुप् प्रतिना मात्रार्थे ।२।१।९। शाकस्य लेशः, शाकप्रति । अक्षशलाकासंख्याः परिणा ।२।१।१०। द्यूतव्यवहारे पराजय एवायं समासः । अक्षपरि, शलाकापरि, एकपरि । विभाषा ।२।१।११। अधिकारोऽयम् । अपपरिबहिरञ्चवः पञ्चम्या ।२।१।१२। अपविष्णु अपविष्णोः। परिविष्णु, परिविष्णोः बहिर्वनम् बहिर्वनात् । प्राग्वनम्, प्राग्वनात् । आङ् मर्यादाभिविध्योः ।२।१।१२। आमुक्ति संसारः, आमुक्तेः । आबाल हरिभक्तिः, आबालेभ्यः । लक्षणेनाभिप्रती आभिमुख्ये ।२।१।१४। चिह्नवाचिना सह प्राग्वत् । अभ्यग्नि, अग्निमभि । प्रत्यग्नि, अग्निं प्रति । अनुर्यत्समया ।२।१।१५। यं पदार्थं समया द्योत्यते तेन लक्षणभूतेनानुः समस्यते सोऽव्ययीभावः ।

अनुवनम्, वनस्य समीपमित्यर्थः । यस्य चायामः ।२।१।१६। प्राग्वत् । अनुगङ्गं वाराणसी, गङ्गाया अनु । गङ्गादैर्घ्यसदृशदैर्घ्योपलक्षितेत्यर्थः । तिष्ठद्गुप्रभृतीनि च ।२।१।१७। एतानि निपात्यन्ते । तिष्ठद्गु । आयतीगवम् । पारे मध्ये षष्ठ्या वा ।२।१।१८। एदन्तत्वं निपात्यते । पक्षे षष्ठीतत्पुरुषः । पारेगङ्गाद् आनय । गङ्गापारात्, मध्येगङ्गात्, गङ्गामध्यात्, विभाषाधिकारात् गङ्गायाः पारादिति वाक्यमपि । संख्या वंश्येन ।२।१।१६। द्वौ मुनी वंश्यौ द्विमुनि, व्याकरणस्य त्रिमुनि । एकविंशति भारद्वाजम् । नदीभिश्च ।२।१।२०। समाहारे चायमिष्यते । ❀ । सप्तगङ्गम्, द्वियमुनम् । अन्यपदार्थे च संज्ञायाम् ।२।१।२१। सुबन्तं नदीभिः सह नित्यं समस्यते, संज्ञायाम् । वाक्येन संज्ञाया अनवगमात् नित्यसमासः । उन्मत्तगङ्गम्, लोहितगङ्गम्, देशः । समासान्ताः ।५।४।६८। अधिकारोऽयम् । अव्ययीभावे शरत्प्रभृतिभ्यः ।५।४।१०७। एभ्योऽव्ययीभावे समासान्तष्टच् स्यात् । उपशरदम्, प्रतिविपाशम्, उपजरसम् । प्रतिपरसमनुभ्योऽक्ष्णः । ❀ । यस्येति च । प्रत्यक्षम् । समासान्तविधानसामर्थ्यादव्ययीभावः, निपातनात्परस्यौकारादेशः । परोक्षम्, परोक्षा क्रियेत्यादि तु अर्शआद्यचि । समक्षम्, अन्वक्षम् अनश्च ।५।४।१०८। टच्स्यात् । नस्तद्धिते ।६।४।१०८। टिलोपः स्यात् । उपराजम्, अध्यात्मम् नपुंसकादन्यतरस्याम् ।५।४।१०९। उपचर्मम्, उपचर्म । नदीपौर्णमास्याग्रहायणीभ्यः ।५।४।११२। वा टच्स्यात् । उपनदम्, उपनदि । उपपौर्णमासम्, उपपौर्णमासि । उपाग्रहायणम्, उपाग्रहायणि । झयः ।५।४।११२। उपसमिधम्, उपसमित् । गिरेश्च सेनकस्य ।५।४।११३। उपगिरम्, उपगिरि । इत्यव्ययीभावः ।

तत्पुरुषः ।२।१।२२। अधिकारोऽयम् । द्विगुश्च ।२।१।२३। अयमपि तत्पुरुषः स्यात् । द्वितीयाश्रितातीतपतितगतात्यस्तप्राप्तापन्नैः ।२।१।२४। द्वितीयान्तं श्रितादिभिः सुबन्तैः समस्यते, स तत्पुरुषः । कृष्णं श्रितः कृष्णश्रितः । दुःखातीतः । गम्यादीनामुपसंख्यानम् । ❀ । ग्रामं गमी, ग्रामगमी । अन्नबुभुक्षुः । स्वयं क्तेन ।२।१।२५। स्वयंकृतः । तस्यापत्यं स्वायंकृतिः । खट्वा क्षेपे ।२।१।२६। खट्वाम् आरूढः, खट्वारूढो, जाल्मः । नित्यसमासोऽयम् । नहि वाक्येन निन्दाऽवगम्यते । सामि ।२।१।२७। सामिकृतम् । कालाः ।२।१।२८। क्तेनेत्येव । मासप्रमितः । अत्यन्तसंयोगे च ।२।१।२९। काल इत्येव । मुहूर्तं सुखं मुहूर्तसुखम् । तृतीया तत्कृतार्थेन गुणवचनेन ।२।१।३०। तृतीयान्तं तृतीयान्तार्थकृतगुणवचनेन अर्थशब्देन च समस्यते स तत्पुरुषः शङ्कुलया खण्डः शङ्कुलाखण्डः । धान्येनार्थो धान्यार्थः । पूर्वसदृशसमोनार्थकलहनिपुणमिश्रश्लक्ष्णैः ।२।१।३१। मासपूर्वः; मातृसदृशः, पितृसमः, ऊनार्थे माषोनम्, माषविकलम् । वाक्कलहः, आचारनिपुणः, गुडमिश्रः, आचारश्लक्ष्णः, मिश्रग्रहणे सोपसर्गस्यापि ग्रहणम्, गुडसंमिश्राः । अवरस्योपसंख्यानम् । मासावरः । कर्तृकरणे कृता बहुलम् ।२।१।३२। हरिणा त्रातो

हरित्रातः। नखभिन्नः। कृद्ग्रहणे गतिकारकपूर्वस्यापि ग्रहणम्। *। नखनिर्भिन्नः। **कृत्यैरधिकार्थवचने** ।२।१।३३। स्तुतिनिन्दाफलकमर्थवादवचनम् अधिकार्थवचनम्, तत्र कर्तरि करणे च तृतीया कृत्यैः प्राग्वत्। वातच्छेद्यं तृणम्। काकपेया नदी। **अन्नेन व्यञ्जनम्** ।२।१।३४। दध्ना ओदनः, दध्योदनः। **भक्ष्येण मिश्रीकरणम्** ।२।१।३५। गुडेन धानाः गुडधानाः। **चतुर्थी तदर्थार्थबलिहितसुखरक्षितैः** ।२।१।३६। तदर्थेनात्र प्रकृतिविकृतिभाव एव गृह्यते। यूपाय दारु यूपदारु। अश्वघासादिषु षष्ठीसमासः। अर्थेन नित्यसमासो विशेष्यलिङ्गता चेति वक्तव्यम्। द्विजाय अयम् द्विजार्थः सूपः। द्विजार्था यवागूः। भूतबलिः, गोहितम्, गोसुखम्, गोरक्षितम्,। **पञ्चमी भयेन** ।२।१।३७। चोराद् भयं चोरभयम्। भयभीतभीतिभीभिरिति वाच्यम्। *। वृकभीतः, वृकभीतिः वृकभीः। **अपेतापोढमुक्तपतितापत्रस्तैरल्पशः** ।२।१।३८। अव्ययं पञ्चम्यन्तं समस्यते स तत्पुरुषः। सुखापेतः, कल्पनापोढः, चक्रमुक्तः स्वर्गपतित इत्यादि। **स्तोकान्तिकदूरार्थकृच्छ्राणि क्तेन** ।२।१।३९। स्तोकान्मुक्तः, अल्पान्मुक्तः। अन्तिकादागतः। इत्यादि। पञ्चम्याः स्तोकादिभ्य इत्यलुक्। **षष्ठी** ।२।२।८। राज्ञः पुरुषो राजपुरुषः। **याजकादिभिश्च** ।२।२।९। तृजकाभ्यां कर्तरीत्यस्य प्रतिप्रसवोऽयम्। ब्राह्मणयाजकः। देवपूजकः। गुणात्तरेण तरलोपश्चेति वक्तव्यम्। *। तरबन्तेन। गुणवाचिना सह सुबन्तं समस्यते तरप्प्रत्ययलोपश्च। न निर्धारणे इति, पूरणगुणेति च निषेधस्य प्रतिप्रसवोऽयम्। सर्वेषां श्वेततरः, सर्वश्वेतः, सर्वेषां महत्तरः, सर्वमहान्। कृद्योगा षष्ठी समस्यत इति वाच्यम्। *। इध्मस्य व्रश्चनः, इध्मव्रश्चनः। **न निर्धारणे** ।२।२।१०। नृणां द्विजः श्रेष्ठः। प्रतिपदविधाना षष्ठी न समस्यत इति वाच्यम् सर्पिषो ज्ञानम्। **पूरणगुणसुहितार्थसदव्ययतव्यसमानाधिकरणेन** ।२।२।११। पूरणे सतां षष्ठः। गुणे-काकस्य कार्ष्ण्यम्। ब्राह्मणस्य शुक्लाः (दन्ताः) अनित्योऽयं गुणेन निषेधः। अर्थगौरवम्, बुद्धिमान्द्यम्। सुहितार्थाः तृप्त्यर्थाः। फलानां सुहितः। सत्-द्विजस्य कुर्वन्, कुर्वाणो वा। अव्ययम्-ब्राह्मणस्य कृत्वा। तव्ये-ब्राह्मणस्य कर्तव्यम्। तव्यता तु न निषेधः। स्वकर्तव्यम्। समानाधिकरणे-तक्षकस्य सर्पस्य। विशेषणसमासस्त्विह बहुलग्रहणान्न। **क्तेन च पूजायाम्** ।२।२।१२। राज्ञां मतो बुद्धः पूजितो वा। भूते क्तान्ते तृतीयासमासः स्यादेव। राजपूजितः। **अधिकरणवाचिना च** ।२।२।१३। इदमेषामासितं शयितं गतं भुक्तं वा। **कर्मणि च** ।२।२।१४। उभयप्राप्तौ कर्मणि या षष्ठी सा न समस्यते। आश्चर्यो गवां दोहोऽगोपेन। **तृजकाभ्यां कर्तरि** ।२।२।१५। अपां स्रष्टा, वज्रस्य भर्ता, ओदनस्य पाचकः। शेषषष्ठ्या समासस्तु स्यादेव। त्रिभुवनविधातेत्यादि। **कर्तरि च** ।२।२।१६। कर्तरि षष्ठ्या अकेन न समासः। भवतः शायिका। **नित्यं क्रीडाजीविकयोः** ।२।२।१७। नित्यं षष्ठी समस्यते। उद्दालकपुष्पभञ्जिका। क्रीडाविशेषस्य संज्ञा। जीविकायां दन्तलेखकः। क्रीडायां विकल्पे, जीविकायां तृजकाभ्यामिति निषेधे प्राप्ते वचनम्। **पूर्वापराधरोत्तरमेकदेशिनैकाधिकरणे** ।२।२।१। अवयविना पूर्वादयः समस्यन्ते। एकत्वसंख्याविशिष्टश्चेदवयवी।

पूर्वं कायस्य पूर्वकायः । अपरकायः । सर्वोऽप्येकदेशोऽह्ना समस्यते । × । मध्याह्नः । सायाह्नः । सर्वोऽप्येकदेशः कालेन समस्यते इति केचित् । मध्यरात्रः पश्चिमरात्रः इत्यादि । **अर्धं नपुंसकम्** । २ । २ । २ । प्राग्वत् । अर्धं पिप्पल्या अर्धपिप्पली, द्रव्यैक्य एव । अर्धं पिप्पलीनाम् । **द्वितीयतृतीयचतुर्थतुर्याण्यन्यतरस्याम्** २ । २ । ३ । द्वितीयं भिक्षायाः, द्वितीयभिक्षा । अन्यतरस्यां ग्रहणसामर्थ्यात्पूरणगुणेति निषेधं बाधित्वा पक्षे षष्ठी समासः । **प्राप्तापन्ने च द्वितीयया** ।२।२।४। प्राप्तजीविकः । पक्षे द्वितीयाश्रितेति समासः। जीविकाप्राप्तः । आपन्नजीविकः, जीविकापन्नः । इह सूत्रे द्वितीयया 'अ' इति छित्वा तयोरकारोऽपि विधीयते । तेन जीविकां प्राप्ता स्त्री प्राप्तजीविका । आपन्नजीविका । **कालाः परिमाणिना** ।२।२।५ परिच्छेद्यवाचिना सुबन्तेन सह कालाः समस्यन्ते । मासो जातस्य यस्य स मासजातः, द्व्यहजातः । द्वयोरह्नोः समाहारो द्व्यहः, द्व्यहो जातस्येति विग्रहे । उत्तरपदेन परिमाणिना द्विगोः सिद्धये बहूनां तत्पुरुषस्योपसंख्यानम् ।❀। द्वे अहनी जातस्य यस्य स द्व्यहजातः । अह्नोऽह्न इत्यह्ना देशः । पूर्वत्र तु न संख्यादेः समाहारे इति निषेधः । **सप्तमी शौण्डैः** । २ । १।४० । अक्षेषु शौण्डः अक्षशौण्डः । अधिशब्दोऽत्र पठ्यते, ईश्वराधीनः । **सिद्धशुष्कपक्वबन्धैश्च** २ । १ । ४१ । सांकाश्यसिद्धः, आतपशुष्कः, स्थालीपक्वः, चक्रबन्धः । **ध्वाङ्क्षेण क्षेपे** । २ । १ । ४२ । ध्वाङ्क्षवाचिना समस्यते, तीर्थे ध्वाङ्क्ष इव, तीर्थध्वाङ्क्षः । तीर्थकाकः । **कृत्यैर्ऋणे** ।२।१।४३ । सप्तम्यन्तं कृत्यप्रत्ययान्तेन सह प्राग्वत् आवश्यके । मासे देयम् ऋणम् । पूर्वाह्णे गेयं साम । **संज्ञायाम्** । २ । १। ४४ । अरण्ये तिलकाः, वने कसेरुकाः । **क्तेनाहोरात्रावयवाः** । २ । १ । ४५ । अह्नो रात्रेश्चावयवाः सप्तम्यन्ताः क्तान्तेन सह प्राग्वत् । पूर्वाह्णकृतम्, अपररात्रकृतम् । **तत्र** । २ १ ४६ । क्तान्तेन सह प्राग्वत् । तत्र भुक्तम् । **क्षेपे** । २ । ४७ । अवतप्ते नकुलस्थितं त एतत् । **पात्रेसमितादयश्च** ।२।१।४८ । एते क्षेपे निपात्यन्ते । पात्रे समिताः, भोजनसमय एव संगता न तु कार्ये । गेहेशूरः, गेहेनर्दी। चकारोऽवधारणार्थः, तेनैषां समासान्तरे न प्रवेशः, परमाः पात्रे समिताः । **पूर्वकालैकसर्वजरत्पुराणनवकेवलाः समानाधिकरणेन** ।२।१।४९। पूर्वनिपातनियमार्थम् । पूर्वं स्नातः पश्चादनुलिप्तः स्नातानुलिप्तः । एकनाथः, सर्वयाज्ञिकाः, जरन्नैयायिकाः, पुराणमीमांसकाः, नवपाठकाः, केवलवैयाकरणाः, **दिक्संख्ये संज्ञायाम्** । २ । १ । ५० । पूर्वेषुकामशमी, सप्तर्षयः । नेह पञ्च ब्राह्मणाः । **तद्धितार्थोत्तरपदसमाहारे च** २ । १ । ५१ । एषु दिक्संख्ये प्राग्वद्वा । समासे कृते । दिक्पूर्वपदादसंज्ञायां ञ इति ञः । सर्वनाम्नो वृत्तिमात्रे पुंवद्भावः आदिवृद्धिः । पौर्वशालः । आपरशालः । पूर्वा शाला प्रिया यस्येति त्रिपदे बहुव्रीहौ प्रियाशब्दे उत्तरपदे पूर्वयोस्तत्पुरुषः । तेन शालाशब्दे आकारः समासस्येत्यन्तोदात्तः । पूर्वशालाप्रियः । दिक्षु समाहारो नास्त्यनभिधानात् संख्यायास्तद्धितार्थे-षण्णां मातॄणामपत्यं षाण्मातुरः । पञ्च गावो धनं यस्येति त्रिपदे बहुव्रीहौ अवान्तरतत्पुरुषस्य विकल्पे प्राप्ते । द्वन्द्वतत्पुरुषयोरुत्तरपदे नित्यसमासवचनम् । ❀ । **गोरतद्धितलुकि** । ५। ४ ९२ । गोरन्तात्तत्पुरुषाट्टच् स्यात् समासान्तो न तद्धितलुकि । पञ्चगवधनः । **संख्यापूर्वो द्विगुः** ।२।

। १ । ५२ । तद्धितार्थेत्यत्रोक्तस्त्रिविधः संख्यापूर्वो द्विगुः स्यात् । **द्विगुरेकवचनम्** । २ । ४ । १। स नपुंसकमिति नपुंसकत्वम् । पञ्चानां गवां समाहारः पञ्चगवम् । **कुत्सितानि कुत्सनैः** २ । १ । ५३ । वैयाकरणखसूचिः, मीमांसकदुर्दुरूढः, **पापाणके कुत्सितैः** । २ । १ । ५४। पापनापितः, आणककुलालः । **उपमानानि सामान्यवचनैः** २ । १ । ५५ । घन इव श्यामो घनश्यामः । इह पूर्णपदं तत्सदृशे लाक्षणिकम् । पूर्वनिपातनियमार्थं सूत्रम्। **उपमितं व्याघ्रादिभिः सामान्याप्रयोगे** । २ । १ । ५६ । विशेष्यस्य पूर्वनिपातनियमार्थं सूत्रम् । पुरुषव्याघ्रः, नृसोमः । **विशेषणं विशेष्येण बहुलम्** । २ । १ । ५७ । नीलमुत्पलम् नीलोत्पलम् । बहुलग्रहणात् क्वचिन्नित्यम्, कृष्णसर्पः, क्वचिन्न । रामो जामदग्न्यः । **पूर्वापरप्रथमचरमजघन्यसमानमध्यमध्यमवीराश्च** । २ । १ । ५८ । पूर्ववैयाकरणः अपराध्यापकः । अपरस्यार्धे पश्चभावो वक्तव्यः । * । अपरश्चासावर्धश्च पश्चार्धः । बहुलग्रहणादेकशब्दस्य पूर्वनिपातः, एकवीरः । **श्रेण्यादयः कृतादिभिः** । २ । १ ५९ । श्रेण्यादिषु च्व्यर्थवचनं कर्तव्यम् । * । अश्रेणयः श्रेणयः कृताः इति श्रेणीकृताः । **क्तेन नञ्विशिष्टेनानञ्** । २ । १ । ६० । कृतं च तत् अकृतं च कृताकृतम् । शाकपार्थिवादीनां सिद्धये उत्तरपदलोपस्योपसंख्यानम् । * । शाकप्रियः पार्थिवः शाकपार्थिवः, देवब्राह्मणः । **सन्महत्परमोत्तमोत्कृष्टाः पूज्यमानैः** २ । १ । ६१ । सद्वैद्यः, महावैयाकरणः, **वृन्दारकनागकुञ्जरैः पूज्यमानम्** २ । १ । ६२ । गोवृन्दारकः । **कतरकतमौ जातिपरिप्रश्ने** । २ । १ । ६३ । कतरकठः, कतमकलापः । **किं क्षेपे** । २ । १ । ६४ । कुत्सितो राजा । किंराजा । **पोटायुवतिस्तोककतिपयगृष्टिधेनुवशावेहद्बष्कयणीप्रवक्तृश्रोत्रियाध्यापकधूर्तैर्जातिः** २ । १ । ६५ । तत्पुरुषः **समानाधिकरणः कर्मधारयः** । १ । २ । ४२ । **पुंवत्कर्मधारयजातीयदेशीयेषु** । ६ । ३ । ४२ । भाषितपुंस्कादनूङ् ऊङ् अभावो यस्मिंस्तथाभूतं पूर्वं पुंवत् . कर्मधारये जातीयदेशीययोश्च परतः । पूरणीप्रियादिष्वप्राप्तः पुंवद्भावोऽनेन विधीयते । महाप्रिया, महानवमी, कृष्णाचतुर्दशी । न कोपधाया इति प्रतिषिद्धः पुंवद्भावोऽनेन प्रतिप्रसूयते । पाचकस्त्री, दत्तभार्या, पञ्चमभार्या, स्रौघ्नभार्या, सुकेशभार्या, एवं पाचकजातीया पाचकदेशीया इत्यादि इभपोटा । इभयुवतिः, अग्निस्तोकः, उदश्वित्कतिपयम् । गोगृष्टिः, गोधेनुः । गोवशा, गोवेहत्, गोबष्कयणी । कठप्रवक्ता, कठश्रोत्रियः, कठाध्यापकः, कठधूर्तः । **प्रशंसावचनैश्च** । २ । १ । ६६। जातिः प्राग्वत्, गोमतल्लिका, गोमचर्चिका गोनल्लजः इत्यादि । **युवा खलतिपलितवलिनजरतीभिः** । २ । १ । ६७ । लिङ्गविशिष्टपरिभाषया युवतिशब्दोऽपि गृह्यते । युवाखलतिः, युवखलतिः युवतिः, खलतिः, युवखलतिः, युवजरतिः । **कृत्यतुल्याख्या अजात्या** । २ । १ । ६८ । भोज्योष्णम्, तुल्यश्वेतः, सदृशश्वेतः । अजात्येत्युक्तेर्नेह, भोज्य ओदनः । तत्सामर्थ्याद् विशेषणसमासोऽपि न । **वर्णो वर्णेन** ।२।१।६९। कृष्णसारङ्गः ! **कडाराः कर्मधारये** ।२।२।३८। वा पूर्वं प्रयोज्याः । कडारजैमिनिः जैमिनिकडारः । **कुमारी श्रमणादिभिः** ।२।१।७०। कुमारीश्रमणा कुमार-

श्रमणा। चतुष्पादो गर्भिण्या। जातिवाचिन एव। गोगर्भिणी। मयूरव्यंसकादयश्च ।२।१।७२। एते निपात्यन्ते। मयूरो व्यंसकः मयूरव्यंसकः। उदक् च अवाक् च उच्चावचम्। निश्चितं च प्रचितं च निश्चप्रचम्। नास्ति किंचन यस्य सः अकिंचनः। आख्यातमाख्यातेन क्रियासातत्ये। ❀। अश्नीत पिबतेत्येवं सततं यत्राभिधीयते सा अश्नीतपिबता। पचतभृज्जता, खादतमोदता। एहीडादयोऽन्यपदार्थे। ❀। एहीड इति यस्मिन् कर्मणि तत्; एहीडम्। एहियवम्। उद्धर कोष्ठाद् उत्सृज देहीति यस्यां क्रियायां सा उद्धरोत्सृजा। उद्धमविधमा। असातत्यार्थमिदम्। जहि कर्मणा बहुलमाभीक्ष्ण्ये कर्तारं चाभिदधाति। ❀। समासेन चेत्कर्ताऽभिधीयत इत्यर्थः। जहिजोडः, जहिस्तम्भः। नास्ति कुतो भयं यस्य साऽकुतोभयः। अन्यो राजा राजान्तरम्, चिदेव चिन्मात्रम्। ईषदकृता ।२।२।७। ईषत्पिङ्गलः, ईषद्गुणवचनेनेति वाच्यम्। ❀। ईषद्रक्तम्। नञ् ।२।२।६। नलोपो नञः ।६।३।७३। उत्तरपदे परे। न ब्राह्मणः, अब्राह्मणः तस्मान्नुडचि ।६।३।७४। लुप्तनकारान्नञ उत्तरपदस्याजादेर्नुडागमः स्यात्। अनश्वः। नञो नलोपस्तिङि क्षेपे ।❀। अपचसि त्वं जाल्म। नैकधेत्यादौ नशब्देन सुप्सुपेति समासः। नभ्राण्नपान्नवेदानासत्यानमुचिनकुलनखनपुंसकनक्षत्रनक्रनाकेषु प्रकृत्या ।६।३।७५। पातीति पात्। शत्रन्तः, वेदा इत्यसुन्नन्तः। न असत्याः नासत्याः। न मुञ्चतीति नमुचिः। न कुलमस्य नकुलम्, न खमस्य नखम्। न स्त्री पुमान् नपुंसकम्। स्त्रीपुंसयोः पुंसकभावो निपातनात्, न क्षरतीति नक्षत्रम्। क्षरतेः क्षत्रादेशो निपात्यते न क्रामतीति नक्रः। क्रनडः। न अकमस्मिन्निति नाकः। नगोऽप्राणिष्वन्यतरस्याम् ।६।३।७७। नगाः अगा वा पर्वताः। नित्यमित्यनुवर्त्य। कुगतिप्रादयः ।२।२।१८। एते नित्यं समस्यन्ते। कुत्सितः पुरुषः, कुपुरुषः। गतिश्चेत्यनुवर्तमाने। ऊर्यादिच्विडाचश्च ।१।४।६१। एते क्रियायोगे गतिसंज्ञाः स्युः। ऊरीकृत्य, उररीकृत्य। शुक्लीकृत्य, पटपटाकृत्य। कारिकाशब्दस्योपसंख्यानम्। ❀। कारिकाकृत्य। अनुकरणं चानितिपरम् ।१।४।६२। खाट्कृत्य। आदरानादरयोः सदसती ।१।४।६३। सत्कृत्य, असत्कृत्य। भूषणेऽलम् ।१।४।६४। अलंकृत्य। इय त्रिसूत्री कृञ्विषया। अन्तरपरिग्रहे ।१।४।६५। अन्तर्हत्य। कणेमनसी श्रद्धाप्रतीघाते ।१।४।६६। कणेहत्य पयः पिबति, मनोहत्य। पुरोऽव्ययम् ।१।४।६७। पुरस्कृत्य। अस्तं च ।१।४।६८। अस्तंगत्य। अच्छगत्यर्थवदेषु ।१।४।६९। अव्ययमित्येव। अच्छगत्य, अच्छोद्य। अभिमुखं गत्वा उक्त्वा चेत्यर्थः। अदोऽनुपदेशे ।१।४।७०। अदःकृत्य इदं कृतम्। तिरोऽन्तर्धौ ।१।४।७१ तिरोभूय। विभाषा कृञि ।१।४।७२ तिरस्कृत्य, तिरःकृत्य, तिरःकृत्वा। उपाजेऽन्वाजे ।१।४।७३। उपाजेकृत्य उपाजे कृत्वा अन्वाजेकृत्य अन्वाजे कृत्वा। साक्षात्प्रभृतीनि च ।१।४।७४। कृञि वा गति संज्ञानि स्युः। च्व्यर्थ इति वाच्यम्। ❀। साक्षात्कृत्य, साक्षात्कृत्वा, लवणकृत्य लवणं कृत्वा। मान्तत्वं निपातनात्। अनत्याधान उरसिमनसी ।१।४।७५। उरसिकृत्य, उरसिकृत्वा। मनसिकृत्य, मनसि कृत्वा। अत्याधानमुपश्लेषणम्, तत्र न, उरसि कृत्वा पाणिं शेते।

मध्ये पदे निवचने च ।१।४।७६। मध्येकृत्य, मध्ये कृत्वा । पदेकृत्य पदे कृत्वा, निवचनेकृत्य, निवचने कृत्वा । **नित्यं हस्ते पाणावुपयमने** ।१।४।७७। हस्तेकृत्य, पाणौकृत्य । **प्राध्वं बन्धने** ।१।४।७८। प्राध्वंकृत्य । **जीविकोपनिषदावौपम्ये** ।१।४।७९। जीविकामिव कृत्वा जीविकाकृत्य, उपनिषदमिव कृत्वा उपनिषत्कृत्य । प्रादिग्रहणमगत्यर्थम् । सुपुरुषः । प्रादयो गताद्यर्थे प्रथमया । ❀ । प्रगत आचार्यः प्राचार्यः । प्रतिगतोऽक्षं प्रत्यक्ष इत्यादि । अत्यादयः क्रान्ताद्यर्थे द्वितीयया । ❀ । अतिक्रान्तो मालामतिमालः । अवादयः क्रुष्टाद्यर्थे तृतीयया । ❀ । अवक्रुष्टः कोकिलया अवकोकिलः । पर्यादयो ग्लानाद्यर्थे चतुर्थ्या । परिग्लानोऽध्ययनाय पर्यध्ययनः । निरादयः क्रान्ताद्यर्थे पञ्चम्या । ❀ । निष्क्रान्तः कौशाम्ब्याः निष्कौशाम्बिः । कर्मप्रवचनीयानां प्रतिषेधः । ❀ । वृक्षं प्रति । **तत्रोपपदं सप्तमीस्थम्** ।३।१।९२। सप्तम्यन्ते पदे कर्मणीत्यादौ वाच्यत्वेन स्थितं कुम्भादि तद्वाचकं पदमुपपदसंज्ञं स्यात् । तस्मिंश्च सत्येव वक्ष्यमाणः प्रत्ययः स्यात् । **उपपदमतिङ्** ।२।२।१९। उपपदं सुबन्तं समर्थेन नित्यं समस्यते । कुम्भं करोतीति कुम्भकारः । कुम्भ ङस् कार सु इत्यलौकिकं विग्रहवाक्यम् । **अमैवाव्ययेन** ।२।२।२०। अमैव तुल्यविधानं यदुपपदं तदेवाव्ययेन सह समस्यते । स्वादुङ्कारम् , **तृतीयाप्रभृतीन्यन्यतरस्याम्** ।२।२।२१। उपदंशस्तृतीयायामित्यादीन्युपपदान्यमन्तेनाव्ययेन सह वा समस्यन्ते । मूलकेनोपदंशम्, मूलकोपदंशं वा भुङ्क्ते । **क्त्वा च** ।२।२।२२। उच्चैःकृत्य, उच्चैःकृत्वा । **तत्पुरुषस्याङ्गुलेः संख्याव्ययादेः** ।५।४।८६। तत्पुरुषस्य समासान्तोऽच् स्यात् । द्वे अंगुली प्रमाणमस्य द्व्यङ्गुलं दारु । निर्गतमङ्गुलिभ्यो निरङ्गुलम् । **अहः सर्वैकदेशसंख्यातपुण्याच्च रात्रेः** ।५।४।८७। अच् स्यात्संख्याव्ययादेः । अहर्ग्रहणम् द्वन्द्वार्थम् अहोरात्रः, सर्वरात्रः । पूर्वं रात्रेः पूर्वरात्रः । संख्यातरात्रः, पुण्यरात्रः । द्वयोः रात्र्योः समाहारो द्विरात्रम् । अतिरात्रम् । **राजाहःसखिभ्यष्टच्** ।५।४।९१। परमराजः, अतिराजी, कृष्णसखः । **अह्नष्टखोरेव** ।६।४।१४५। टिलोपः स्यान्नत्वन्यत्र । उत्तमाहः, द्वे अहनी भृतो द्व्यहीनः । तद्धितार्थे द्विगुः । रात्र्यहःसंवत्सराच्चेति खः । लिङ्गविशिष्टपरिभाषया अनित्यत्वान्नेह । मद्राणां राज्ञी मद्रराज्ञी । **अह्नोऽह्न एतेभ्यः** ।५।४।८८। सर्वादिभ्यः परस्य अहन्शब्दस्याह्नादेशः स्यात्समासान्ते परे । **अह्नोऽदन्तात्** ।८।४।७। नस्य णः स्यात् । सर्वाह्णः, पूर्वाह्णः । संख्याताह्नः । अदन्तत्वाभावान्नेह पराह्नः । द्वयोरह्नोर्भवः द्व्यहः । स्त्रियां टाप्, द्व्यह्ना । द्व्यह्नप्रियः अत्यह्नः । क्षुभ्नादिषु च ।८।४।३९। णत्वं न स्यात्, दीर्घाह्नी प्रावृट् । **न संख्यादेः समाहारे** ।५।४।८९। द्वयोरह्नोः समाहारो द्व्यहः, त्र्यहः । **उत्तमैकाभ्यां च** ।५।४।९०। उत्तमशब्दोऽन्त्यार्थः पुण्यशब्दमाह । पुण्याहम्, सुदिनाहम्, एकाहम् । उत्तमग्रहणमुपान्त्यस्यापि संग्रहार्थमित्येके । संख्याताहः । **अग्राख्यायामुरसः** ।५।४।९३। टच् स्यात् । अश्वानामुर इव

अश्वोरसम् । मुख्योऽश्व इत्यर्थः । **अनोश्मायस्सरसां जातिसंज्ञयोः** । ५ । ४ । ९४ । उपानसम्, अमृताश्मः, कालायसम्, मण्डूकसरसम् । इति जातिः । महानसम् , पिण्डाश्मः, लोहितायसम्, जलसरसम्, इति संज्ञा । **ग्रामकौटाभ्यां च तक्ष्णः** । ५ । ४ । ९५ । ग्रामतक्षः, कुट्यां भवः कौटः स्वतन्त्रः स चासौ तक्षा च कौटतक्षः । **अतेः शुनः** ।५।४।९६। अतिश्वो वराहः, अतिश्वी सेना । **उपमानादप्राणिषु** ।५ ।४। ९७। शुनष्टच् स्यात् । आकर्षः श्वा इव, आकर्षश्वः । **उत्तरमृगपूर्वाच्च सक्थ्नः** ।५।४।९८। चादुपमानात् । उत्तरसक्थम्, मृगसक्थम्, पूर्वसक्थम्, फलकसक्थम् । **नावो द्विगोः** ।५।४।९९। टच् स्यात् न तु तद्धितलुकि । द्वाभ्यां नौभ्यामागतो द्विनावरूप्यः । पञ्चनावप्रियः । द्विनावम्, त्रिनावम् । **अर्धाच्च** ।५।४।१०० नावः अर्धम्, अर्धनावम्, क्लीबत्वं लोकात् । **खार्याः प्राचाम्** ।५।४।१०१। द्विगोरर्धाच्च खार्याष्टज्वा स्यात्, द्विखारम्, द्विखारि, अर्धखारम्, अर्धखारि । **द्वित्रिभ्यामञ्जलेः** ।५।४।१०२। द्व्यञ्जलम्, द्व्यञ्जलि । त्र्यञ्जलम् । त्र्यञ्जलि । **ब्रह्मणो जानपदाख्यायाम्** । ५ । ४। १०४ । ब्रह्मान्तात्तत्पुरुषाट्टच् स्यात् , समासेन जानपदत्वमाख्यायते चेत् । सुराष्ट्रब्रह्मः । **कुमहद्भ्यामन्यतरस्याम्** । ५ ।४। १०५। कुब्रह्मः कुब्रह्मा । **आन्महतः समानाधिकरणजातीययोः** ।६।३।४६। महाब्रह्मः, महाब्रह्मा । महादेवः, महाजातीयः । महती जातीया महतीशब्दस्य पुंवत्कर्मधारयात पुंवद्भावे कृते आत्वम् । महाजातीया । महत आत्वे घासकरविशिष्टेपूपसख्यान पुंवद्भावश्च ।*। असामानाधिकरण्यार्थमिदम् । महतो महत्या वा घासो महाघासः, महाकरः, महाविशिष्टः । अष्टनः कपाले हविषि । * । अष्टाकपालः । गवि च युक्ते ।*। अष्टागवं शकटम् । अच् प्रत्यन्ववः इत्यत्र अच् इति योगविभागाद्बहुव्रीहावप्यच् । अष्टानां गवां समाहारोऽष्टागवम् । तद्युक्तत्वाच्छकटमष्टागवमिति वा । **द्व्यष्टनः संख्यायामबहुव्रीह्यशीत्योः** ।६।३।४७। आत्स्यात्, द्वौ च दश द्वादश । द्व्यधिकादशेति वा । द्वाविंशतिः, अष्टादश, अष्टाविंशतिः । प्राक्शतादिति वक्तव्यम् ।*। द्विशतम्, द्विसहस्रम् । **त्रेस्त्रयः** ।६।३।४८। प्राग्वत् त्रयोदश त्रयोविंशतिः । बहुव्रीहौ तु त्रिदश त्रिदशाः । अशीतौ तु त्र्यशीतिः । प्राक्शतादित्येव । त्रिशतम्, त्रिसहस्रम् । **विभाषा चत्वारिंशत्प्रभृतौ सर्वेषाम्** ।६।३।४९। द्विचत्वारिंशत् , द्वाचत्वारिंशत् । अष्टचत्वारिंशत् अष्टाचत्वारिंशत् । त्रिचत्वारिंशत्, त्रयश्चत्वारिंशत् । एवं पञ्चाशत्षष्टिसप्ततिनवतिषु । **एकादिश्चैकस्य चादुक्** ।६।३।७६। एकादिर्नञ् प्रकृत्या स्यादेकस्य चादुगागमश्च । नञः प्रकृतिभावे अदुगागमे च एकान्नविंशतिः, एकान्नत्रिंशतिः । एकोनविंशतिरित्यर्थः । षष उत्वं दतृदशधासूत्तरपदादेः ष्टुत्वं च धासुवेतिवाच्यम् ।*। षोडन्, षोडश, षड्धा, षोढा । **परवल्लिङ्गं द्वन्द्वतत्पुरुषयोः** ।२।४।२६। कुक्कुटमयूर्याविमे, मयूरीकुक्कुटाविमौ । अर्धपिप्पली । द्विगुप्राप्तापन्नालं पूर्वगतिसमासेषु प्रतिषेधो वाच्यः ।*। पञ्चसु कपालेषु संस्कृतः पञ्चकपालः पुरोडाशः । प्राप्तजीविकः । आपन्नजीविकः । अलं कुमार्यै अलं कुमारिः । अत एव ज्ञापकात्समासः । निष्कौशाम्बिः । **पूर्ववदश्ववडवौ** ।२।४।२७। अश्ववडवौ, अश्ववडवान् । **रात्राह्नाहाः पुंसि** ।२।४।२९। एत-

दन्तौ द्वन्द्वतत्पुरुषौ पुंस्येव । अहोरात्रः, पूर्वरात्रः, पूर्वाह्णः, द्व्यहः । "संख्यापूर्वं रात्रं क्लीबम्" द्विरात्रम्, त्रिरात्रम्, गणरात्रम् । अपथं नपुंसकम् ।२।४।३०। तत्पुरुष इत्येव, अन्यत्र अपथो देशः । कृतसमासान्तनिर्देशान्नेह । अपन्थाः । अर्धर्चाः पुंसि च ।२।४।३१। चान्नपुंसकम् । अर्धर्चः, अर्धर्चम् । ध्वजः, ध्वजम् । जात्याख्यायामेकस्मिन्बहुवचनमन्यतरस्याम् ।१।२।५८। ब्राह्मणाः पूज्याः, ब्राह्मणः पूज्यः । अस्मदो द्वयोश्च ।१।२।५९। एकत्वे द्वित्वे च अस्मदो बहुवचनं वा स्यात् । वयं ब्रूमः, पक्षे अहं ब्रवीमि, आवां ब्रूवः । सविशेषणस्य प्रतिषेधः ।*। पटुरहं ब्रवीमि । फल्गुनीप्रोष्ठपदानां च नक्षत्रे ।१।२।६०। द्वित्वे बहुत्वप्रयुक्तं कार्यं वा स्यात् । पूर्वे फल्गुन्यौ, पूर्वाः फल्गुन्यः । पूर्वे प्रोष्ठपदे, पूर्वाः प्रोष्ठपदाः । तिष्यपुनर्वस्वोर्नक्षत्रद्वन्द्वे बहुवचनस्य द्विवचनं नित्यम् ।१।२।६३। तिष्यश्च पुनर्वसू च तिष्यपुनर्वसू । सनपुंसकम् ।२।४।१७। समाहारे द्विगुर्द्वन्द्वश्च नपुंसकं स्यात् । पञ्चगवम्, दन्तोष्ठम् । अकारान्तोत्तरपदो द्विगुः स्त्रियामिष्टः ।*। पञ्चमूली । आबन्तो वा ।*। पञ्चखट्वम् पञ्चखट्वी । अनो नलोपश्च, वा द्विगुः स्त्रियाम् ।*। पञ्चतक्षी, पञ्चतक्षम् । पात्राद्यन्तस्य न ।*। पञ्चपात्रम्, त्रिभुवनम् । चतुर्युगम् । पुण्यसुदिनाभ्यामह्नः क्लीबतेष्टा ।*। पुण्याहम्, सुदिनाहम् । पथः संख्याव्ययादेः ।*। त्रयाणां पन्थास्त्रिपथम्, विरूपः पन्था विपथम् । कृतसमासान्तनिर्देशान्नेह । सुपन्थाः, अतिपन्थाः । सामान्ये नपुंसकम् ।*। मृदु पचति, प्रातः कमनीयम् । तत्पुरुषोऽनञ्कर्मधारयः ।२।४।१९। अधिकारोऽयम् । संज्ञायां कन्थोशीनरेषु ।२।४।२०। कन्थान्तस्तत्पुरुषः क्लीबं स्यात् । सा चेदुशीनरदेशोत्पन्नायाः कन्थायाः संज्ञा स्यात् । सौशमीनां कन्था सौशमिकन्थम् । उपज्ञोपक्रमं तदाद्याचिख्यासायाम् ।२।४।२१। पाणिनेरुपज्ञा, पाणिन्युपज्ञं ग्रन्थः, नन्दोपक्रमं द्रोणः । छाया बाहुल्ये ।२।४।२२। इक्षूणां छाया इक्षुच्छायम् । विभाषासेनेति विकल्पापवादः । सभाराजाऽमनुष्यपूर्वा ।२।४।२३। राजपर्यायपूर्वोऽमनुष्यपूर्वश्च सभान्तस्तत्पुरुषो नपुंसकं स्यात् । इनसभम्, ईश्वरसभम् । पर्यायस्यैवेष्यते ।*। नेह राजसभा, चन्द्रगुप्तसभा । अमनुष्यशब्दो रूढ्या रक्षःपिशाचादीनाह । रक्षःसभम्, पिशाचसभम् । अशाला च ।२।४।२४। संघातार्था या सभा तदन्तस्तत्पुरुषः क्लीबं स्यात् । स्त्रीसभम्, संघात इत्यर्थः । विभाषासेनासुराच्छायाशालानिशानाम् ।२।४।२५। ब्राह्मणसेनम्, ब्राह्मणसेना, यवसुरम् यवसुरा । कुड्यच्छायम्, कुड्यच्छाया, गोशालम् गोशाला, श्वनिशम् श्वनिशा । तत्पुरुषोऽनञ् कर्मधारय इत्युक्तेनेह दृढसेनो राजा । असेना परमसेना । इति तत्पुरुषः समासः ।

शेषो बहुव्रीहिः ।२।२।२३। अधिकारोऽयम् । अनेकमन्यपदार्थे ।२।२।२४। अप्रथमाविभक्त्यर्थे वर्तमानानां समानाधिकरणानां प्रथमान्तानां समासः स्यात् स बहुव्रीहिः । प्राप्तमुदकं यं स प्राप्तोदको ग्रामः, ऊढरथोऽश्वः, उपहृतपशू रुद्रः, उद्धृतौदना स्थाली, पीताम्बरो हरिः, वीरपुरुषको ग्रामः प्रादिभ्यो धातुजस्य वाच्यो वा चोत्तरपदलोपः ।*। प्रपतितपर्णः प्रपर्णः । नञोऽस्त्यर्थानां वाच्यो वा चोत्तरपदलोपः

।ꕥ। अविद्यमानपुत्रः, अपुत्रः। अस्तिक्षीरा गौः। **स्त्रियाः पुंवद्भाषितपुंस्कादनूङ् समानाधिकरणे स्त्रियामपूरणीप्रियादिषु** ।६।३।३४। तुल्ये प्रवृत्तिनिमित्ते उक्तपुंस्कात्पर अनूङ्यस्य तथाभूतस्य स्त्रीवाचकस्य शब्दस्य पुंवाचकस्येव रूपं स्यात्समानाधिकरणे स्त्रीलिङ्गे उत्तरपदे, न तु पूरण्यां प्रियादौ च परतः। चित्रा गावो यस्येति चित्रगुः, रूपवद्भार्यः। चित्रा जरती गौर्यस्येति चित्राजरद्गुः, उपान्त्यस्य पुंवत्। कर्मधारयपूर्वपदेतु द्वयोरपि पुंवत्. जरच्चित्रगुः। कर्मधारयोत्तरपदे चित्राजरद्गवीकः। पूरण्यां तु। **अप्पूरणी प्रमाण्योः** ।५।४।११६। पूरणार्थप्रत्ययान्तं यत्स्त्रीलिङ्गं तदन्तात्प्रमाण्यन्ताच्च बहुव्रीहेरप्स्यात्। कल्याणी पञ्चमी यासां रात्रीणां ताः कल्याणीपञ्चमा रात्रयः। स्त्रीप्रमाणः। पुंवद्भावप्रतिषेधोऽप्प्रत्ययश्च प्रधानपूरण्यामेव ।ꕥ। रात्रिः पूरणी वाच्या चेत्युक्तोदाहरणे मुख्या। अन्यत्र कल्याणी पञ्चमी यस्य। **नद्यृतश्च** ।५।४।१५३। बहुव्रीहेः कप्स्यात्। पुंवद्भावः। **केऽणः** ।७।४।१३। ह्रस्वः स्यात्। इति प्राप्ते, न कपि ।७।४।१४। अणो ह्रस्वो न स्यात्। कल्याणपञ्चमीकः। अत्र तिरोहितावयवभेदस्य पक्षस्यान्यपदार्थतया रात्रिरप्रधानम्। बहुकर्तृकः। अप्रियादिष्वित्युक्तेर्नेह कल्याणीप्रियः। सामान्ये नपुंसकम् ।ꕥ। दृढं भक्तिर्यस्य स दृढभक्तिः। स्त्रीत्वविवक्षायाम्, दृढाभक्तिः। **तसिलादिष्वाकृत्वसुचः** ।६।३।३५। तसिल आरभ्य कृत्वसुच्पर्यन्तेषु परतः स्त्रियां पुंवत्स्यात्। परिगणनं कर्तव्यम्। त्रतमौ ।ꕥ। तरप्तमपौ ।ꕥ। चरट्जातीयरौ ।ꕥ। कल्पदेशीयरौ ।ꕥ। रूपप्पाशपौ ।ꕥ। थाल् ।ꕥ। तिल्थ्यनौ ।ꕥ। बह्वीषु बहुत्र, बहुतः। दर्शनीयतरा दर्शनीयतमा। घरूपेति ह्रस्वः परत्वात्पुंवद्भावं बाधते। पट्वितरा पट्वितमा पटुचरी पटुजातीया, दर्शनीयकल्पा दर्शनीयदेशीया दर्शनीयरूपा दर्शनीयपाशा बहुथा वृकतिः अजथ्या। शसि बह्वल्पार्थस्य पुंवद्भावो वक्तव्यः ।ꕥ। बह्वीभ्यो देहि बहुशः अल्पशः। त्वतलोर्गुणवचनस्य ।ꕥ। शुक्लत्वम्, शुक्लता। भस्याढे तद्धिते ।ꕥ। हस्तिनीनां समूहो हास्तिकम्। अढे इत्युक्तेर्न पुंवत् रुहिण्या अपत्यं रौहिणेयः स्त्रीभ्यो ढगिति ढोऽत्र गृह्यते अग्नायी देवता अस्येत्याग्नेयः। सपत्न्या अपत्यं सापत्नः। स्वामिपर्यायपतिशब्दात् ण्यः पुंवच्च। सापत्यः। ठक्छसोश्च ।ꕥ। भवत्याश्छात्रा भावत्काः। भवदीयाः। सर्वनाम्नो वृत्तिमात्रे पुंवद्भावः ।ꕥ। सर्वमयः, सर्वकाम्यति, सर्वकभार्यः, सर्वप्रिय इत्यादि, कुक्कुट्यादीनामण्डादिषु ।ꕥ। कुक्कुट्या अण्डम् कुक्कुटाण्डम्। मृग्याः पदं मृगपदम्। मृगक्षीरम्, काकशावः। **क्यङ्मानिनोश्च** ।६।३।३६। एनीवाचरति एतायते, श्येनीवाचरति श्येतायते। दर्शनीयां मन्यते इति दर्शनीयमानी। **न कोपधायाः** ।६।३।३७। पाचिकाभार्यः, रसिकाभार्यः। मद्रिकायते, मद्रिकामानिनी। कोपधप्रतिषेधे तद्धितवुग्रहणम् ।ꕥ। नेह पाकभार्यः। **संज्ञापूरण्योश्च** ।६।३।३८। दत्ताभार्यः, दत्तामानिनी। पञ्चमीभार्यः, पञ्चमीपाशा। **वृद्धिनिमित्तस्य च तद्धितस्यारक्तविकारे** ।६।३।९९। वृद्धिशब्देन विहिता या वृद्धिस्तद्धेतुर्यस्तद्धितोऽरक्तविकारार्थस्तदन्ता स्त्री न पुंवत्। स्रौघ्नीभार्यः, माथुरीयते, माथुरीमानिनी, रक्ते तु काषायी कन्था यस्य स काषायकन्थः, विकारे-हैमी मुद्रिका यस्येति हैममुद्रिकः। **स्वाङ्गाच्चेतः** ।६।३।४०। स्त्री न पुंवत्। सुकेशीभार्यः। अमानिनीति वक्तव्यम् ।ꕥ। सुकेशमानिनी। **जातेश्च** ।६।३।४१। न पुंवत्। शूद्राभार्यः, ब्राह्मणीभार्यः। सौत्रस्यैवायं निषेधः। तेन हस्तिनीनां समूहो हास्तिकमित्यादौ

भस्याढे इति पुंवत्। **संख्ययाऽव्ययासन्नादूराधिकसंख्याः संख्येये** ।२।२।२५। दशानां समीपे ये सन्ति ते उपदशाः, नव एकादश वेत्यर्थः। बहुव्रीहौ संख्येये इति डच्। **तिविंशतेर्डिति** ।६।४।१४२। आसन्नविंशाः, विंशतेरासन्ना इत्यर्थः। अदूरत्रिंशाः, द्वौ वा त्रयो वा द्वित्राः, द्विरावृत्ता दश द्विदशाः। **दिङ्नामान्यन्तराले** ।२।२।२६। दक्षिणस्याः पूर्वस्याश्च दिशोऽन्तरालं दक्षिणपूर्वा। **तत्र तेनेदमिति सरूपे** ।२।२।२७। सप्तम्यन्ते ग्रहणविषये सरूपे पदे तृतीयान्ते च प्रहरणविषये इदं युद्धं प्रवृत्तमित्यर्थे, समस्येते कर्मव्यतिहारे द्योत्ये, स बहुव्रीहिः। **अन्येषामपि दृश्यते** ।६।३।१३७। इचि कर्मव्यतिहारे बहुव्रीहौ पूर्वपदान्तस्य दीर्घः। इच् समासान्तो वक्ष्यते। तिष्ठद्गुप्रभृतिष्विच् प्रत्ययस्य पाठादव्ययीभावत्वम्। केशेषु केशेषु गृहीत्वा इदं युद्धं प्रवृत्तं केशाकेशि। दण्डैश्च दण्डैश्च प्रहृत्येदं युद्धं प्रवृत्तं दण्डादण्डि। मुष्टीमुष्टि। **ओर्गुणः** ।६।४।१४६। भस्य गुणः स्यात्तद्धिते। बाहूबाहवि। **तेन सहेति तुल्ययोगे** ।२।२।२८। **वोपसर्जनस्य** ।६।३।८२। बहुव्रीह्यवयवस्य सहस्य सः स्याद्वा। पुत्रेण सह सपुत्रः, सहपुत्रो वा आगतः। तुल्ययोगवचनस्य प्रायिकत्वात्, सकर्मकः, सलोमकः। **प्रकृत्याऽऽशिषि** ।६।३।८३। स्वस्ति राज्ञे सहपुत्राय, सहामात्याय। अगोवत्सहलेष्विति वाच्यम्।*। सगवे, सवत्साय, सहलाय। **बहुव्रीहौ संख्येये डजबहुगणात्** ।५।४।७३। उपदशाः। नेह उपबहवः उपगणाः। संख्यायास्तत्पुरुषस्य वाच्यः।*। निर्गतानि त्रिंशतो निस्त्रिंशानि वर्षाणि चैत्रस्य। निस्त्रिंशः खड्गः। **बहुव्रीहौ सक्थ्यक्ष्णोः स्वाङ्गात्षच्** ।५।४।११३। दीर्घे सक्थिनी यस्य सः, दीर्घसक्थः, जलजाक्षी, अस्वाङ्गे—स्थूलाक्षा वेणुयष्टिः। अक्ष्णोऽदर्शनादित्यच्। **अङ्गुलेर्दारुणि** ।५।४।११४। पञ्च अङ्गुलयो यस्य तत्पञ्चाङ्गुलं दारु। अबहुव्रीहौ द्व्यङ्गुला यष्टिः। **द्वित्रिभ्यां ष मूर्ध्नः** ।५।४।११५। बहुव्रीहौ। द्विमूर्धः, त्रिमूर्धः। नेतुर्नक्षत्रेऽब्वक्तव्यः।*। मृगो नेता यासां ता मृगनेत्रा रात्रयः। पुष्यनेत्राः। **अन्तर्बहिर्भ्यां च लोम्नः** ।५।४।११७। अप्स्याद् बहुव्रीहौ। अन्तर्लोमः, बहिर्लोमः। **अञ् नासिकायाः संज्ञायां नसं चास्थूलात्** ।५।४।११८। स्पष्टम्। **पूर्वपदात्संज्ञायामगः** ।८।४।३। पूर्वपदस्थान्निमित्तात्परस्य नस्य णः स्यात्संज्ञायां नतु गकारव्यवधाने। द्रुरिव नासिका अस्य द्रुणसः, खुरणसः। खुरखराभ्यां वा नस्।*। खुरणाः, खरणाः। पक्षेऽजपीष्यते।*। खुरणसः, खरणसः। **उपसर्गाच्च** ।५।४।११९। प्रादेर्नासिकाशब्दान्ताद्बहुव्रीहेरच्स्यात्, नासिकाया नसादेशश्च। **उपसर्गाद् बहुलम्** ।८।४।२८। उपसर्गस्थान्निमित्तात्परस्य नसो नस्य णः स्याद् बहुलम्। प्रणसः। वेर्ग्रो वक्तव्यः।*। विग्रः। ख्यश्च।*। विख्यः। **सुप्रातसुश्वसुदिवशारिकुक्षिचतुरश्रैणीपदाजपदप्रोष्ठपदाः** ।५।४।१२०। एते बहुव्रीहावच्प्रत्ययान्ता निपात्यन्ते। शोभनं प्रातरस्य सुप्रातः। शोभनं श्वोऽस्य सुश्वः, सुदिवः, शारिकुक्षः, चतस्रोऽश्रयोऽस्य चतुरश्रः, एणीपदः, अजपदः, प्रोष्ठपदः। **नञ्दुःसुभ्यो हलिसक्थ्योरन्यतरस्याम्** ।५।४।१२१। अचस्यात्, अहलः, अहलिः, अस-

क्थः, असक्थिः। शक्त्योरिति पाठे अशक्तः, अशक्तिः। नित्यमसिच् प्रजामेधयोः ।५।४।१२२। नञ्दुःसुभ्य एव। अप्रजाः दुःप्रजाः, सुप्रजाः। अमेधाः दुर्मेधाः, सुमेधाः। धर्मादनिच् केवलात् ।५।४।१२४। कल्याणधर्मा। निवृत्तिधर्मा, इत्यादि। जम्भासुहरिततृणसोमेभ्यः। ५। ४। १२५। एभ्यो जम्भशब्दादनिच् स्यात्। शोभनो जम्भोऽस्य सुजम्भा हरितजम्भा। दक्षिणेर्मा लुब्धयोगे। ५। ४ ।१२६। दक्षिणेर्मा। व्याधेन कृतव्रण इत्यर्थः। इच् कर्मव्यतिहारे। ५।४। १२७। कर्मव्यतिहारे यो बहुव्रीहिस्तस्मादिच्स्यात्समासान्तः। केशाकेशि, मुसलामुसलि। द्विदण्ड्यादिभ्यश्च ।५। ४। १२८। इच् स्यात्। द्विदण्डि प्रहरणम्। द्विमुसलि, उभाहस्ति उभयाहस्ति। प्रसंभ्यां जानुनोर्ज्ञुः ।५।४।१२९। प्रगते जानुनी यस्य स प्रज्ञुः। संज्ञुः। ऊर्ध्वाद् विभाषा ।५।४।१३०। ऊर्ध्वज्ञुः, ऊर्ध्वजानुः। धनुषश्च ।५। ४ ।१३२। बहुव्रीहेरनङादेशः स्यात्, शार्ङ्गधन्वा वासंज्ञायाम् ।५।४। १३३ । शतधन्वा, शतधनुः। जायाया निङ् ।५।४।१३४। लोपोव्योर्वलि, ६।१।६६। युवतिर्जाया यस्य स युवजानिः। गन्धस्येदुत्पूतिसुसुरभिभ्यः ।५।४।१३५। उद्गन्धिः, पूतिगन्धिः, सुगन्धिः,। सुरभिगन्धिः,। गन्धस्येत्वे तदेकान्तग्रहणम् ।*। अविभागेन लक्ष्यमाण इत्यर्थः, सुगन्धि पुष्पं सलिलं च। सुगन्धिर्वायुः। नेह शोभना गन्धा द्रव्याण्यस्य सुगन्ध आपणिकः। अल्पाख्यायाम् ।५। ४। १३६। सूपस्य गन्धो लेशो यस्मिंस्तत्सूपगन्धि भोजनम्। घृतगन्धि। उपमानाच्च ।५। ४। १३७। पद्मगन्धि। पादस्य लोपोऽहस्त्यादिभ्यः।५।४।१३८। उपमानादेव। व्याघ्रस्य पादाविव पादौ अस्य व्याघ्रपात्। नेह हस्तिपादः कुसूलपादः। कुम्भपदीषु च। ।५।४ १३९। कुम्भपद्यादिषु पादस्य लोपो ङीप् च निपात्यते स्त्रियाम्। पादः पत्। कुम्भपदी। संख्यासुपूर्वस्य। ५।४। १४१। पादस्य लोपः स्यात्समासान्तो बहुव्रीहौ। द्विपात्, सुपात्। वयसि दन्तस्य दतृ ।५।४।१४१। संख्यासुपूर्वस्यैव, द्विदन्, चतुर्दन्, षड् दन्ता अस्य षोडन्। सुदन् सुदती। स्त्रियां संज्ञायाम् ।५।४।१४३। अयोदती फालदती। विभाषा श्यावारोकाभ्याम् ।५।४।१४४। श्यावदन्, श्यावदन्तः, अरोकदन् अरोकदन्तः। अग्रान्तशुद्धशुभ्रवृषवराहेभ्यः ।५।४।१४५। कुड्मलाग्रदन्, कुड्मलाग्रदन्तः। ककुदस्यावस्थायां वस्ययालोपः।५।४।१४६। अजातककुत्, पूर्णककुत्, त्रिककुत्पर्वते।५।४।१४७। त्रीणि ककुदान्यस्य त्रिककुत, पर्वतविशेषः। त्रिककुदोऽन्यः। उद्विभ्यां काकुदस्य।५।४।१४८। लोपः स्यात्। उत्काकुत्, विकाकुत्। पूर्णाद्विभाषा ।५।४।१४९। पूर्णकाकुत्, पूर्णकाकुदः। सुहृद्दुर्हृदौ मित्रामित्रयोः ।५।४।१५०। सुहृन्मित्रम् दुर्हृदमित्रः। अन्यत्र सुहृदयः, दुर्हृदयः उरःप्रभृतिभ्यः कप् ।५।४।१५१। व्यूढोरस्कः, प्रियसर्पिष्कः। अर्थान्नञः + नित्यं कप्। अनर्थकम्। इनः स्त्रियाम् ।५।४।१५२। बहुदण्डिका नगरी। बहुवाग्मिका। शेषाद्विभाषा ।५।४।१५४।

अनुक्तसमासान्ताच्छेषाधिकारस्थाद् बहुव्रीहेः कप् वा स्यात्, महायशस्कः, महायशाः। आपोऽन्यतरस्याम् ।७।४।१५। कपि वा ह्रस्वः स्यात् । बहुमालाकः, बहुमालकः । न संज्ञायाम् ।५।४।१५५। कप् न स्यात् । विश्वे देवा अस्य विश्वेदेवः । ईयसश्च ।५।४।१५६। न कप् । बहुश्रेयान् । स्त्रियां ह्रस्वे प्राप्ते । ईयसो बहुव्रीहेर्नेति वाच्यम् ।※। बह्व्यः श्रेयस्योऽस्य बहुश्रेयसी । अन्यत्र अतिश्रेयसिः । वन्दिते भ्रातुः ।५। ४। १५७। कप् न स्यात् । प्रशस्तो भ्राता यस्य स प्रशस्तभ्राता । नाडीतन्त्र्योः स्वाङ्गे ।५।४।१५९। बहुनाडिः कायः, बहुतन्त्रीर्ग्रीवा, बहुतन्त्रीर्धमनी । निष्प्रवाणिश्च ।५।४।१६०। कबभावोऽत्र निपात्यते । प्रपूर्वाद् वयतेर्ल्युट् । प्रवाणी तन्तुवायशलाका । निर्गता प्रवाण्यस्य निष्प्रवाणिः पटः । सप्तमीविशेषणे बहुव्रीहौ ।२।२।३५। पूर्वं प्रयोज्यं । कण्ठेकालः। अत एव ज्ञापकाद् व्यधिकरणपदो बहुव्रीहिः । चित्रगुः । सर्वनामसंख्ययोरुपसंख्यानम् ।※। सर्वश्वेतः, द्विशुक्लः । मिथोऽनयोः समासे संख्यापूर्वं शब्दपरविप्रतिषेधात् ।※। द्व्यन्यः, त्रिनेमः । संख्याया अल्पीयस्याः ।※। द्वित्राः । द्वन्द्वेऽपि—द्वादश । वा प्रियस्य ।※। प्रियगुडः, गुडप्रियः । गड्वादेः परा सप्तमी ।※। गडुकण्ठः । क्वचिन्न ।※। वहेगडुः । निष्ठा ।२।२।३६। निष्ठान्तं बहुव्रीहौ पूर्वं प्रयोज्यम् । कृतकृत्यः । जातिकालसुखादिभ्यः परा निष्ठा वाच्या ।※। सारङ्गजग्धी, मासजाता, सुखजाता । प्रायिकं चेदम् । नेह कृतकटः । पीतोदकः । वाहिताग्न्यादिषु ।२।२।३७। आहिताग्निः, अग्न्याहितः, आकृतिगणोऽयम् । प्रहरणार्थेभ्यः परा निष्ठासप्तम्यौ ।※। अस्युद्यतः, दण्डपाणिः क्वचिन्न । विवृतासिः ॥ इति बहुव्रीहिः ।

चार्थे द्वन्द्वः ।२।२।२९। परस्परं सापेक्षमनेकं सुबन्तं चार्थे वर्तमानं वा समस्यते स द्वन्द्वः । इतरेतरयोगे, समाहारे च चार्थे द्वन्द्वः । धवखदिरौ, संज्ञापरिभाषम् । अनेकोक्तेर्होतृपोतृनेष्टोद्गातारः, द्वयोर्द्वयोर्द्वन्द्वं कृत्वा पुनर्द्वन्द्वे होतापोतानेष्टोद्गातारः । राजदन्तादिषु परम् ।२।२।३१। दन्तानां राजा राजदन्तः । धर्मादिष्वनियमः ।※। अर्थधर्मौ, धर्मार्थौ । जाया च पतिश्च । जायाशब्दस्य जम्भावो दम्भावश्च वा निपात्यते, जम्पती, दम्पती, जायापती । आकृतिगणोऽयम । द्वन्द्वे घि ।२।२।३२। पूर्वं प्रयोज्यम् । हरिश्च हरश्च हरिहरौ । अनेकप्राप्तावेकत्र नियमोऽनियमः शेषे ।※। हरिगुरुहराः, हरिहरगुरवः । अजाद्यदन्तम् ।२।२।३३। ईशकृष्णौ । बहुष्वनियमः । अश्वरथेन्द्राः, इन्द्राश्वरथाः । घ्यन्तादजाद्यदन्तं विप्रतिषेधेन ।※। इन्द्राग्नी । अल्पाच्तरम् ।२।२।३४। शिवकेशवौ । ऋतुनक्षत्राणां समाक्षराणामानुपूर्व्येण ।※। हेमन्तशिशिरवसन्ताः । कृत्तिकारोहिण्यौ । लघ्वक्षरं पूर्वम् ।※। कुशकाशम् ।※। अभ्यर्हितं च ।※। तापसपर्वतौ । वर्णानामानुपूर्व्येण ।※। ब्राह्मणक्षत्रियविट्शूद्राः । भ्रातुर्ज्यायसः ।※। युधिष्ठिरार्जुनौ । समाहारस्य नियमार्थं प्रकरणम् । द्वन्द्वश्च प्राणितूर्यसेनाङ्गानाम् ।२।४।२। एषां द्वन्द्व एकवत्स्यात् । पाणिपादम्, मार्दङ्गिकपाणविकम् । रथिकाश्वारोहम् । अनुवादे चरणानाम् ।२।४।३। स्थेणोर्लुङीति वक्तव्यम् ।※। उदगात्कठकालापम् प्रत्यष्ठात्क-

ठकौथुमम्। अध्वर्युक्रतुरनपुंसकम् ।२।४।४। अर्कोश्वमेधम्। अध्ययनतोऽविप्रकृष्टाख्यानाम् ।२।४।५। अध्ययनेन प्रत्यासन्नाख्यानां द्वन्द्व एकवत् स्यात्। पदकक्रमकम्। जातिरप्राणिनाम् ।२।४।६। धानाशष्कुलि। द्रव्यजातीयानामेव। नेह रूपरसौ। गमनाकुञ्चने। जातिप्राधान्य एवायमेकवद्भावः, द्रव्यविशेषविवक्षायां तु बदरामलकानि। विशिष्टलिङ्गो नदीदेशोऽग्रामाः। २।४।७ उद्ध्यश्च इरावती च, उद्ध्येरावति। गङ्गाशोणम्। कुरुकुरुक्षेत्रम्। क्षुद्रजन्तवः ।२।४।८। यूकालिक्षम्। आनकुलात् क्षुद्रजन्तवः। येषां च विरोधः शाश्वतिकः ।२।४।९। अहिनकुलम् गोव्याघ्रम्, काकोलूकम्। शूद्राणामनिरवसितानाम् ।२।४।१०। तक्षायस्कारम्। निरवसितानां तु चण्डालमृतपाः। गवाश्वप्रभृतीनि च ।२।४।११। गवाश्वम्, दासीदासमित्यादि। विभाषा वृक्षमृगतृणधान्यव्यञ्जनपशुशकुन्यश्ववडवपूर्वापराधरोत्तराणाम् ।२।४।१२। वृक्षादौ विशेषाणामेव ग्रहणम्। प्लक्षन्यग्रोधम्, प्लक्षन्यग्रोधाः। रुरुपृषतम् रुरुपृषताः। कुशकाशम् कुशकाशाः। व्रीहियवाः। दधिघृतम्, दधिघृते। गोमहिषम्, गोमहिषाः। शुकबकम् शुकबकाः। अश्ववडवम् अश्ववडवौ। पूर्वापरम्, पूर्वापरे। अधरोत्तरम् अधरोत्तरे। फलसेनावनस्पतिमृगशकुनिक्षुद्रजन्तुधान्यतृणानां बहुप्रकृतिरेव द्वन्द्व एकवदिति वाच्यम् ।*। बदराणि च आमलकानि च बदरामलकम् नेह बदरामलके रथिकाश्वारोहौ, प्लक्षन्यग्रोधौ। विप्रतिषिद्धं चानधिकरणवाचि ।२।४।१३ विरुद्धार्थानामद्रव्यवाचिनां द्वन्द्व एकवद्वा स्यात्। शीतोष्णम् शीतोष्णे। विरुद्धार्थानां यदि समाहारः स्यात्तर्हि अद्रव्यवाचिनामेवेति नियमार्थमिदम्। तेन द्रव्यवाचिनामितरेतरयोग एव। शीतोष्णे उदके स्तः। न दधिपय आदीनि ।२।४।१४। दधिपयसी इध्माबर्हिषी, ऋक्सामे, वाङ्मनसे। अधिकरणैतावत्त्वे च ।२।४।१५। एकवद्वेति नियमो न स्यात्। दश दन्तोष्ठाः। विभाषा समीपे ।२।४।१६। उपदशं दन्तोष्ठम्, उपदशाः दन्तोष्ठाः। आनङ् ऋतो द्वन्द्वे ।६।३।२५। विद्यायोनिसंबन्धवाचिनामदन्तानां द्वन्द्वे आनङ् स्यात्। उत्तरपदे परे, होतापोतारौ, होतृपोतृनेष्टोद्गातारः। मातापितरौ पितापुत्रौ। पुत्रेऽन्यतरस्यामित्यतो मण्डूकप्लुत्या पुत्रेऽन्यतरस्यामनुवृत्तेः। देवताद्वन्द्वे च ।६।३।२६। मित्रावरुणौ, वायुशब्दप्रयोगे प्रतिषेधः ।*। अग्निवायू, वाय्वग्नी। प्रसिद्धसाहचर्यग्रहणान्नेह। ब्रह्मप्रजापती। ईदग्नेः सोमवरुणयोः ।६।३।२७। अग्नेः स्तुत्स्तोमसोमाः ।८।३।८२। षः स्यात्। अग्निष्टुत् अग्निष्टोमः, अग्नीषोमौ अग्नीवरुणौ। इद्वृद्धौ ।६।३।२८। वृद्धिमत्युत्तरपदे अग्नेरिदादेशः स्याद्देवताद्वन्द्वे। अग्नामरुतौ देवते अस्य आग्निमारुतं कर्म, अग्नावरुणौ देवते अस्य, आग्निवारुणम्, विष्णौ न ।*। आग्नावैष्णवम्। दिवो द्यावा ।६।३।२९। द्यावाभूमी। द्यावाक्षामा। दिवसश्च पृथिव्याम् ।६।३।३०। चाद् द्यावा। दिवस्पृथिव्यौ। छन्दसि-द्यावाचिदस्मै पृथिवी। उषासोषसः ।६।३।३१। देवताद्वन्द्वे एव। उषासासूर्यम्। मातरपितरावुदीचाम् ।६।३।३२। मातरपितरौ। द्वन्द्वाच्चुदषहान्तात्समाहारे ।५।४।१०६। टच् स्यात्। वाक्त्वचम्, त्वक्स्रजम्, शमीदृषदम्, वाक्त्विषम्। छत्रोपानहम्। इति द्वन्द्वः।

सरूपाणाम्० रामौ, रामाः। विरूपाणामपि समानार्थानाम् ।*। वक्रदण्डश्च कुटिलदण्डश्च वक्रदण्डौ, कुटिलदण्डौ। वृद्धो यूना तल्लक्षणश्चेदेव विशेषः ।१।२।६५। स्पष्टम्। गार्ग्यश्च गार्ग्यायणश्च गार्ग्यौ। स्त्रीपुंवच्च ।१।२।६६। यूना सहोक्तौ वृद्धा स्त्री शिष्यते तदर्थश्च पुंवत्। गार्गी च गार्ग्यायणौ च गर्गाः। दाक्षी च दाक्षायणश्च दाक्षी। पुमान् स्त्रिया ।१।२।६७। हंसी च हंसश्च हंसौ। भ्रातृपुत्रौ स्वसृदुहितृभ्याम् ।१।२।६८। भ्राता च स्वसा च भ्रातरौ। पुत्रश्च दुहिता च पुत्रौ। नपुंसकमनपुंसकेनैकवच्चास्यान्यतरस्याम् ।१।२।६९। शुक्लश्च शुक्ला च शुक्लं च। तदिदं शुक्लम्, तानि इमानि शुक्लानि। पिता मात्रा ।१।२।७०। माता च पिता च पितरौ, मातापितरौ वा। श्वशुरः श्वश्र्वा ।१।२७१ श्वशुरौ श्वश्रू श्वशुरौ वा। त्यदादीनि सर्वैर्नित्यम् ।१।२।७२। स च देवदत्तश्च तौ, त्यदादीनां मिथः सहोक्तौ यत्परं तच्छिष्यते ।*। स च यश्च यौ। पूर्वशेषोऽपि दृश्यते इति भाष्यम्। स च यश्च तौ। त्यदादितः शेषे पुंनपुंसकतो लिङ्गवचनानि। *। सा च देवदत्तश्च तौ। तच्च देवदत्तश्च यज्ञदत्ता च तानि। पुंनपुंसकयोस्तु परत्वान्नपुंसकं शिष्यते ।*। तच्च देवदत्तश्च ते। अद्वन्द्वतत्पुरुषविशेषणानामिति वक्तव्यम् ।*। कुक्कुटमयूर्याविमे, मयूरीकुक्कुटाविमौ। तच्च सा च अर्धपिप्पल्यौ ते। ग्राम्यपशुसंघेष्वतरुणेषु स्त्री ।१।२।७३। गाव इमाः अनेकशफेष्विति वाच्यम् ।*। अश्वा इमे। इह सर्वत्र एकशेष कृतेऽनेकसुबन्ताभावाद् द्वन्द्वो न। तेन शिरसी शिरांसि इत्यादौ समासत्वान्तोदात्तः प्राण्यङ्गत्वादेकवद्भावश्च न। पन्थानौ पन्थान इत्यादौ समासान्तो न। इत्येकशेषः॥

कृत्तद्धितसमासैकशेषसनाद्यन्तधातुरूपाः पञ्च वृत्तयः। परार्थाभिधानं वृत्तिः, वृत्त्यर्थावबोधकं वाक्यं विग्रहः। स द्विविधः, लौकिकोऽलौकिकश्च। परिनिष्ठितत्वात्साधुर्लौकिकः, प्रयोगानर्होऽसाधुरलौकिकः। यथा राज्ञः पुरुषः। राजन् अस् पुरुष सु इति। अविग्रहो नित्यसमास अस्वपदविग्रहो वा। अव्ययीभावतत्पुरुषबहुव्रीहिद्वन्द्वभेदात्समासश्चतुर्भिदः, तत्पुरुषविशेषः कर्मधारयः, तद्विशेषो द्विगुः। पूर्वपदप्रधानोऽव्ययीभावः, परपदप्रधानस्तत्पुरुषः, अन्यपदप्रधानो बहुव्रीहिः, उभयपदप्रधानो द्वन्द्वः इति प्राञ्चः। सुपां सुपा तिङा नाम्ना धातुनाऽथ तिङां तिङा। सुबन्तेनेति विज्ञेयः समासः षड्विधो बुधैः। इति सर्वसमासशेषः।

ऋक्पूरब्धूःपथामानक्षे ।५।४।७४। अ अनक्षे इति च्छेदः। ऋगाद्यन्तस्य समासस्य अप्रत्ययोऽन्तावयवः स्यात्। अक्षे या धूस्तदन्तस्य तु न। अर्धर्चः। अनृचबह्वृचावध्येतर्येव। नेह अनृक्साम, बह्वृक्सूक्तम् विष्णुपुरम्, विमलापं सरः। द्व्यन्तरुपसर्गेभ्योऽप ईत् ।६।३।९७। द्विर्गता आपो यस्मिन्निति द्वीपम्, अन्तरीपम्, प्रतीपम्, समीपम्। अपरूपाभावान्नेह। स्वप्, स्वपी। अवर्णान्ताद्वा ।*। प्रेपम् प्रापम्, परेप परापम्। ऊदनोर्देशे ।६।३।९८। अनूपो देशः। राजधुरा। अक्षे तु अक्षधूः, । सखिपथः, रम्यपथ देशः। अच् प्रत्यन्ववपूर्वात्सामलोम्नः ।५।४।७५। प्रतिसामम्, अनुसामम्, अवसामम्, प्रतिलोमम् अनुलोमम्, अवलोमम्। कृष्णोदक्पाण्डुसंख्यापूर्वाया भूमेरजिष्यते ।*। कृष्णभूमः, द्विभूमः प्रासादः। संख्याया नदीगोदावरीभ्यां च ।*। पञ्चनदम्, सप्तगोदावरम्।

अजिति योगविभागादन्यत्रापि । पद्मनाभः । अक्ष्णोऽदर्शनात् ।५।४।७६। अचक्षुःपर्यायादक्ष्णोऽच् स्यात्समासान्तः । गवामक्षीव गवाक्षः । अचतुरविचतुरसुचतुरस्त्रीपुंसधेन्वनडुह्क्र्सामवाङ्मनसाक्षिभ्रुवदारगवोर्वष्ठीवपदष्ठीवनक्तंदिवरात्रिन्दिवाहर्दिवसरजसनिःश्रेयसपुरुषायुषद्व्यायुषत्र्यायुषर्ग्यजुषजातोक्षमहोक्षवृद्धोक्षोपशुनगोष्ठश्वाः ।५।४।७७। एते अजन्ता निपात्यन्ते । आद्यास्त्रयो बहुव्रीहयः । अचतुरः, विचतुरः, सुचतुरः । त्र्युपाभ्यां चतुरोऽजिष्यते । ॐ त्रिचतुराः, चतुर्णां समीपे उपचतुराः । तत एकादश द्वन्द्वाः । स्त्रीपुंसौ, धेन्वनडुहौ, ऋक्सामे, वाङ्मनसे, अक्षिभ्रुवम्, दारगवम्, ऊर्वष्ठीवम्, निपातनाट्टिलोपः । पदष्ठीवम्, टिलोपः पादशब्दस्य पद्भावश्च । नक्तंदिवम्, रात्रिन्दिवम् । रात्रेर्मान्तत्वं निपात्यते । अहर्दिवम्, सरजसमिति साकल्येऽव्ययीभावः, बहुव्रीहौ तु सरजः पङ्कजम्, निश्चितं श्रेयो निःश्रेयसम् । तत्पुरुष एव, नेह निःश्रेयान् पुरुषः । पुरुषायुषम्, द्व्यायुषम्, त्र्यायुषम् । ऋग्यजुषम् । जातोक्षः, महोक्षः । वृद्धोक्षः । शुनः समीपम् उपशुनम् । टिलोपाभावः संप्रसारणं च निपात्यते । गोष्ठे श्वा गोष्ठश्वः **ब्रह्महस्तिभ्यां वर्चसः** ।५।४।७८। ब्रह्मवर्चसम्, हस्तिवर्चसम् । पल्यराजभ्यां चेति वक्तव्यम् । ॐ । पल्यवर्चसम्, राजवर्चसम् । **अवसमन्धेभ्यस्तमसः** ।५।४।७९। अवतमसम्, संतमसम्, अन्धतमः अन्धतमसम् । **श्वसो वसीयःश्रेयसः** ।५।४।८०। श्वोवसीयसम्, श्वःश्रेयसं ते भूयात् । **अन्ववतप्ताद्रहसः** ।५।४।८१। अनुरहसम्, अवरहसम्, तप्तरहसम् । **प्रतेरुरसः सप्तमी स्थात्** ।५।४।८२। उरसि इति, प्रत्युरसम् । **अनुगवमायामे** ।५।४।८३। अनुगवं यानम्, यस्य चायाम इति समासः । **द्विस्तावा त्रिस्तावा वेदिः** ।५।४।८४। अच् प्रत्ययष्टिलोपः समासश्च निपात्यते । **उपसर्गादध्वनः** ।५।४।८५। प्राध्वो रथः । **न पूजनात्** ।५।४।६९। पूजनार्थात्परेभ्यः समासान्ता न स्युः । सुराजा, अतिराजा । स्वतिभ्यामेव । ॐ । नेह परमराजः । अतिगवः । बहुव्रीहौ सक्थ्यक्ष्णोः प्रागेवायं नियमः । नेह सुसक्थः, स्वक्षः । **किमः क्षेपे** ।५।४।७०। किंराजा, किंसखा, किंगौः । **नञस्तत्पुरुषात्** ।५।४।७१। अराजा असखा । **पथो विभाषा** ।५।४।७२। अपथम्, अपन्थाः । तत्पुरुषादित्येव । नेह अपथो देशः, अपथं वर्तते । इति समासान्ताः ।

अलुगुत्तरपदे ।६।३।१। अधिक्रियते । **पञ्चम्याः स्तोकादिभ्यः** ।६।३।२। स्तोकान्मुक्तः । एवमन्तिकार्थदूरार्थकृच्छ्रेभ्यः । ब्राह्मणाच्छंसिन उपसंख्यानम् ।ॐ। ब्राह्मणानि शंसतीति ब्राह्मणाच्छंसी । **ओजःसहोऽम्भस्तमसस्तृतीयायाः** ।६।३।३। ओजसाकृतमित्यादि । अञ्जस उपसंख्यानम् ।ॐ। अञ्जसा कृतम् । पुंसानुजो जनुषान्ध इति च ।ॐ। पुंसानुजः जनुषान्धः । **मनसः संज्ञायाम्** ।६।३।४। मनसागुप्ता । **आज्ञायिनि च** ।६।३।५। मनसाज्ञायी । **आत्मनस्तृतीयायाः** ।६।३।६। पूरण इति वक्तव्यम् ।ॐ। पूरणप्रत्ययान्ते उत्तरपदे इत्यर्थः । आत्मना पञ्चमः । **वैयाकरणाख्यायां चतुर्थ्याः** ।६।३।७। आत्मने पदम् । आत्मने भाषा । **परस्य च** ।६।३।८। परस्मैपदम्, परस्मैभाषा । **हलदन्तात्सप्तम्याः संज्ञायाम्** ।६।३।९। त्वचिसारः । गवि-

युधिभ्यां स्थिरः ।८।३।९५। सस्य षः स्यात् । गविष्ठिरः, युधिष्ठिरः, अरण्ये तिलकाः । हृद्द्युभ्यां च । हृदिस्पृक् दिविस्पृक् । कारनाम्नि च प्राचां हलादौ ।६।३।१०। हलदन्तादेव । मुकुटे कार्षापणम्, दृषदि माषकः । मध्याद् गुरौ ।६।३।११। मध्येगुरुः । अन्ताच्च ।❀। अन्ते गुरुः । अमूर्धमस्तकात्स्वाङ्गादकामे ।६।३।१२। कण्ठेकालः, उरसिलोमा । बन्धे च विभाषा ।६।३।१३। हस्तेबन्धः । तत्पुरुषे कृति बहुलम् ।६।३।१४। स्तम्बेरमः, कर्णेजपः । क्वचिन्न । कुरुचरः । प्रावृट्शरत्कालदिवां जे ।६।३।१५। प्रावृषिजः, शरदिजः, कालेजः, दिविजः । पूर्वस्यायं प्रपञ्चः । विभाषा वर्षक्षरशरवरात् ।६।३।१६। वर्षेजः वर्षजः, क्षरेजः, क्षरजः । इत्यादि । घकालतनेषु कालनाम्नः ।६।३।१७। पूर्वाह्णेतरे, पूर्वाह्णतरे । पूर्वाह्णेतमे, पूर्वाह्णतमे । पूर्वाह्णेकाले, पूर्वाह्णकाले । पूर्वाह्णेतने पूर्वाह्णतने । शयवासवासिष्वकालात् ।६।३।१८। खेशयः खशयः । ग्रामेवासः, ग्रामवासः, ग्रामेवासी, ग्रामवासी अपोयोनियन्मतुषु ।❀। अप्सु योनिः अप्सु भवः अप्सव्यः। अप्सुमन्तौ । नेन्सिद्धबध्नातिषु च ।६।३।१९। इन्नन्तादिषु सप्तम्या अलुग् न । स्थण्डिलशायी । साङ्काश्यसिद्धः, चक्रबद्धः । स्थे च भाषायाम् ।६।३।२०। समस्थः । षष्ठ्या आक्रोशे ।६।३।२१। अलुक् स्यात् । चौरस्य कुलम् । वाग्दिक्पश्यद्भ्यो युक्तिदण्डहरेषु ।❀। वाचोयुक्तिः, दिशोदण्डः, पश्यतोहरः । आमुष्यायणाऽऽमुष्यपुत्रिकाऽऽमुष्यकुलिकेति च ।❀। अमुष्यापत्यम् आमुष्यायणः । नडादित्वात्फक् आमुष्यपुत्रिका, आमुष्यकुलिका । देवानां प्रिय इति च मूर्खे ।❀। अन्यत्र देवप्रियः । शेपपुच्छलाङ्गूलेषु शुनः । शुनःशेपः, शुनःपुच्छः, शुनोलाङ्गूलः । दिवश्च दासे ।❀। दिवोदासः पुत्रेऽन्यतरस्याम् ।६।३।२२। षष्ठ्याः पुत्रे परे अलुग्वा निन्दायाम् । दास्याः पुत्रः, दासीपुत्रः । ऋतो विद्यायोनिसंबन्धेभ्यः ।६।३।२३। होतुरन्तेवासी, होतुः पुत्रः । पितुरन्तेवासी, पितुः पुत्रः । विद्यायोनिसंबन्धेभ्यस्तत्पूर्वोत्तरपदग्रहणम् ।❀। नेह होतृधनम् । विभाषा स्वसृपत्योः ।६।३।२४। ऋदन्तादेव । मातुःपितुर्भ्यामन्यतरस्याम् ।८।३।८५। आभ्यां स्वसुः सस्य षो वा स्यात्समासे । मातुःष्वसा, मातुः स्वसा, पितुः ष्वसा, पितुः स्वसा । लुक् पक्षे तु । मातृपितृभ्यां स्वसा ।८।३।८४। मातृष्वसा । असमासे तु । मातुः स्वसा, पितुः स्वसा । इत्यलुक्समासः ।

घरूपकल्पचेलड्ब्रुवगोत्रमतहतेषु ङ्योऽनेकाचो ह्रस्वः ।६।३।४३। भाषितपुंस्काद्यो ङी तदन्तस्यानेकाचो ह्रस्वः स्याद् घरूपादिषु परेषु । ब्राह्मणितरा, ब्राह्मणितमा, ब्राह्मणिरूपा, ब्राह्मणिकल्पा, ब्राह्मणिचेला ब्राह्मणिब्रुवा, ब्राह्मणिगोत्रेत्यादि । नद्याः शेषस्यान्यतरस्याम् ।६।३।४४। अङ्यन्तनद्याङ्यन्तस्यैकाचश्च घादिषु ह्रस्वो वा स्यात्, ब्रह्मबन्धुतरा, ब्रह्मबन्धूतरा । स्त्रितरा, स्त्रीतरा । कृन्नद्या न ।❀। लक्ष्मीतरा । उगितश्च ।६।३।४५। विदुषितरा । ह्रस्वाभावपक्षे तसिलादिष्वति पुंवत् । विद्वत्तरा । हृदयस्य हृल्लेखयदण्लासेषु ।६।३।५०। हृल्लेखः हृद्यम्, हार्दम्, हृल्लासः । लेखेत्यणन्तस्य ग्रहणम्, घञि तु हृदयलेखः । वा शोकष्यञ्रोगेषु ।६।३।५१। हृच्छोकः, हृदयशोकः । सौहार्द्यम्, सौहृदय्यम्, हृद्रोगः, हृदयरोगः । पादस्य

पदाज्यातिगोपहतेषु ।६।३।५२। पदाजिः, पदातिः **पद्यत्यतदर्थे** ।६।३।५३। पादौ विध्यन्ति पद्याः शर्कराः। इके चरतावुपसंख्यानम् ।*। पादिकः। **हिमकाषिहतिषु च** ।६।३।५४ पद्धिमम्, पत्काषिः पद्धतिः। **ऋचः शे** ।६।३।५५। गायत्रीं पच्छः शसति। **वा घोषमिश्रशब्देषु** ।६।३।५६। पद्घोषः, पादघोषः। पन्मिश्रः, पादमिश्रः पच्छब्दः, पादशब्दः। निष्के चेति वाच्यम् ।*। पन्निष्कः। पादनिष्कः **उदकस्योदः संज्ञायाम्** ।६।३।५७। उदमेघः, उत्तरपदस्येति वक्तव्यम् ।*। क्षीरोदः। **पेषंवासवाहनधिषु च** ।६।३।५८। उदपेषं पिनष्टि, उदवासः उदवाहनः उदधिर्घटः। **एकहलादौ पूरयितव्येऽन्यतरस्याम्** ।६।३।५९ उदकुम्भः, उदककुम्भः। **मन्थौदनसक्तुविन्दुवज्रभारहारवीवधगाहेषु च** ।६।३।६०। उदमन्थः, उदकमन्थ इत्यादि। **इको ह्रस्वोऽङ्यो गालवस्य** ।६।३।६१। ग्रामणिपुत्रः ग्रामणीपुत्रः। इयङुवङ्भाविनामव्ययानां च नेति वाच्यम् ।*। श्रीमदः, भ्रूभङ्गः। शुक्लीभावः। अभ्रुकुंसादीनामिति वक्तव्यम् ।*। भ्रुकुंसः, भ्रूकुंसः। भ्रूकुटिः भ्रूकुटिः। अकारोऽनेन विधीयत इति व्याख्यान्तरम्। भ्रकुंसः भ्रकुटिः। **एकतद्धिते च** ।६।३।६२ एकस्या आगतम् एकरूप्यम्, एकक्षीरम्। **ङ्यापोः संज्ञाछन्दसोर्बहुलम्** ।६।३।६३। रेवतिपुत्रः, अजक्षीरम्। **त्वे च** ६।३।६४। अजत्वम्, अजात्वम्। रोहिणित्वम् रोहिणीत्वम् **ष्यङः संप्रसारणं पुत्रपत्योस्तत्पुरुषे** ।६।१।१३। स्पष्टम्। **संप्रसारणस्य** ।६।३।१३९। संप्रसारणस्य दीर्घः स्यादुत्तरपदे। कौमुदगन्ध्याः पुत्रः कौमुदगन्धीपुत्रः, कौमुदगन्धीपतिः। व्यवस्थितविभाषया ह्रस्वो न। स्त्री प्रत्यये चानुपसर्जनेनेति तदादिनियमप्रतिषेधात्, परमकारीषगन्धीपुत्रः। उपसर्जने तु तदादिनियमान्नेह, अतिकारीषगन्ध्यापुत्रः। **बन्धुनि बहुव्रीहौ** ।६।१।१४। कारीषगन्ध्या वन्धुरस्येति कारीषगन्धीबन्धुः मातच्मातृकेमातृषु वा ।*। कारीषगन्धीमातः, कारीषगन्ध्यामातः इत्यादि। **इष्टकेषीकामालानां चिततूलभारिषु** ।६।३।६५। ह्रस्वः स्यात्। इष्टकचितम्, पक्वेष्टकचितम्। इषीकतूलम्, मुञ्जेषीकतूलम्, मालभारि, उत्पलमालभारि। **कारे सत्यागदस्य** ।६।३।७०। मुम् स्यात्। सत्यंकारः, अगदंकारः। अस्तोश्चेति वक्तव्यम्।*। अस्तुंकारः। धेनोर्भव्यायाम्।*। धेनुंभव्या। लोकस्य पृणे।*। लोकंपृणः। इत्येऽनभ्याशस्य।*। अनभ्याशमित्यः। भ्राष्ट्राग्न्योरिन्धे।*। भ्राष्ट्रमिन्धः, अग्निमिन्धः। गिलेऽगिलस्य।*। तिमिङ्गिलः। गिलगिले च।*। तिमिङ्गिलगिलः। उष्णभद्रयोः करणे।*। उष्णंकरणम्, भद्रंकरणम्। **रात्रेः कृति विभाषा** ।६।३।७२। रात्रिंचरः, रात्रिचरः। रात्रिमटः, रात्र्यटः। **सहस्य सः संज्ञायाम्** ।६।३।७८। सपलाशम्। **ग्रन्थान्ताधिके च** ।६।३।७९। समुहूर्तं ज्योतिषमधीते, सद्रोणा खारी। **द्वितीये चानुपाख्ये** ।६।३।८०। अनुमेये द्वितीये सहस्य सः स्यात्। सराक्षसिका निशा। **समानस्य छन्दस्यमूर्धप्रभृत्युदर्केषु** ।६।३।८४। अनुभ्राता सगर्भ्यः। अनुसखा सयूथ्यः। यो नः सनुत्यः। सहशब्दः सदृशवाची तेन सपक्षः, साधर्म्यं सजातीयं ससखोत्यादि। **ज्योतिर्जनपदरात्रिनाभिनामगोत्ररूपस्थानव-**

ण्वयोवचनबन्धुषु ।६।३।८५। सज्योतिः सजनपद इत्यादि । **चरणे ब्रह्मचारिणि** ।६।३।८६। चरणे समानस्य सः स्यात्समानत्वेन गम्यमाने । समानो ब्रह्मचारी इति, सब्रह्मचारी । एकशाखाध्यायीत्यर्थः । **तीर्थे ये** ।६।३।८७। सतीर्थ्यः, एकगुरुकः । **विभाषोदरे** ।६।३।८८। सोदर्यः, समानोदरः । **दृग्दृशवतुषु** ।६।३।८९। सदृक्, सदृशः, । दृक्षे चेति वक्तव्यम् ।॥। सदृक्षः । **इदंकिमोरीश्की** ।६।३।९०। ईदृक्, ईदृशः, कीदृक्, कीदृशः । दृक्षे चेति वक्तव्यम् ।॥। ईदृक्षः, कीदृक्षः । आसर्वनाम्नः । दृक्षे च । तादृक्, तादृशः तावान्, तादृक्षः । अमूदृक्, अमूदृशः, अमूदृक्षः । **समासेऽङ्गुलेः सङ्गः** ।८।३।८०। सस्य षः स्यात् । अङ्गुलिषङ्गः । **भीरोः स्थानम्** ।८।३।८१। भीरुष्ठानम् । असमासे तु भीरोः स्थानम् । **ज्योतिरायुषः स्तोमः** ।८।३।८३। ज्योतिष्टोमः, आयुष्टोमः । **सुषामादिषु च** ।८।३।९८। शोभनं साम यस्य सः, सुषामा, सुषन्धिः । **एति संज्ञायामगात्** ।८।३।९९। हरिषेणः । **नक्षत्राद्वा** ।८।३।१००। रोहिणीषेणः, रोहिणीसेनः । **अषष्ठ्यतृतीयास्थस्यान्यस्य दुगाशीराशाऽऽस्थाऽऽस्थितोत्सुकोतिकारकरागच्छेषु** ।६।३।९९। अन्यदाशीः, अन्यदाशा, अन्यदास्था, अन्यदास्थितः, अन्यदुत्सुकः, अन्यदूतिः, अन्यद्रागः । कारके छे च नायं निषेधः । ॥ । अन्यस्य कारकः, अन्यत्कारकः, अन्यस्यायम् अन्यदीयः । **अर्थे विभाषा** ।६।३।१००। अन्यदर्थः, अन्यार्थः । **कोः कत्तत्पुरुषेऽचि** ।६।३।१०१। कदश्वः, कदन्नम् । त्रौ च । ॥ । कत्त्रयः । **रथवदयोश्च** ।६।३।१०२। कद्रथः, कद्वदः । **तृणे च जातौ** ।६।३।१०३। कत्तृणम् । **का पथ्यक्षयोः** ।६।३।१०४। का पथः, काक्षः । **ईषदर्थे** ।६।३।१०५। काजलम्, काम्लः । **विभाषा पुरुषे** ।६।३।१०६। कापुरुषः, कुपुरुषः । अप्राप्तविभाषेयम् । ईषदर्थे हि पूर्वविप्रतिषेधान्नित्यमेव । ईषत्पुरुषः कापुरुषः । **कवं चोष्णे** ।६।३।१०७। कवोष्णम्, कोष्णम्, कदुष्णम्, **पृषोदरादीनि यथोपदिष्टम्** ।६।३।१०९। पृषतः उदरम् पृषोदरम् । तलोपः । वारिवाहकः-बलाहकः । भवेद् वर्णागमाद् हंसः, सिंहो वर्णविपर्ययात् । गूढोत्मावर्णविकृतेर्वर्णनाशात्पृषोदरम् । ॥ । दिक्शब्देभ्यस्तीरस्य तारभावो वा ।॥। दक्षिणतारम्, दक्षिणतीरम् । उत्तरतारम्, उत्तरतीरम् । दुरो दाशनाशदभध्येषूत्वमुत्तरपदादेः ष्टुत्वं च । ॥ । दूडाशः, दूणाशः, दूडभः । दूढ्यः । ब्रुवन्तो ऽस्यां सीदन्तीति बृसी । ब्रुवच्छब्दस्य बृ इत्यादेशः, सदेरधिकरणे डट् । आकृतिगणोयम्, **संहितायाम्** ।६।३।११४। अधिकारोऽयम् । **कर्णे लक्षणस्याऽविष्टाष्टपञ्चमणिभिन्नच्छिन्नच्छिद्रस्रुवस्वस्तिकस्य** ।६।३।११५। वर्णशब्दे परे लक्षणवाचकस्य दीर्घः स्यात् । द्विगुणाकर्णः । अविष्टत्याद्युक्तेर्नेह-विष्टकर्णः, अष्टकर्ण इत्यादि । **नहिवृतिवृषिव्यधिरुचिसहितनिषु क्वौ** ।६।३।११६। उपानत्, नीवृत्, प्रावृट् । विभाषा पुरुष इत्यतो मण्डूकप्लुत्या विभाषाऽनुवर्तते, सा च व्यवस्थिता । तेन गतिकारकयोरेव । नेह-पटुरुक्, तिग्मरुक् । **वनगिर्योः संज्ञायां कोटरकिंशुलकादीनाम्** ।६।३।११७। दीर्घः स्यात् । **वनं पुरगामिश्रकासिध्रकासारिकाकोटराग्रेभ्यः** ।८।४।४। वनशब्दस्योत्तरपदस्य एभ्य एव णत्वं नान्येभ्यः । पुरगावणम्, मिश्रकावणम्, सिध्रका-

वणम्, शारिकावणम्, कोटरावणम्। वनस्याग्रे अग्रेवणम्। राजदन्तादिषु निपातनात् सप्तम्या अलुक्। किंशुलुकागिरिः। अञ्जनागिरिः। **वले** ।६।३।११८। वलप्रत्यये संज्ञायां दीर्घः। कृषीवलः। **मतौ बह्वचोऽनजिरादीनाम्** ।६।३।११९। अमरावती। संज्ञायामित्येव नेह। वलयवती। **शरादीनां च** ।६।३।१२०। शरावती। **इको वहेऽपीलोः** ।६।३।१२१। ऋषीवहम्, कपीवहम्। अपील्वादीनामिति वाच्यम्। ॐ। पीलुवहम्, दारुवहम्। **उपसर्गस्य घञ्यमनुष्ये बहुलम्** ।६।३।१२२। परीपाकः। **इकः काशे** ।६।३।१२३। विकाशः नीकाशः। **अष्टनः संज्ञायाम्** ।६।३।१२५। अष्टापदम्। **चितेः कपि** ।६।३।१२७। चितीकः। **नरे संज्ञायाम्** ।६।३।१२९। विश्वानरः। **मित्रे चर्षौ** ।६।३।१३०। विश्वामित्रः। शुनो दन्तदंष्ट्राकर्णकुन्दवराहपुच्छपदेषु दीर्घो वाच्यः। ॐ। श्वादन्तः, श्वापदमित्यादि। **प्रनिरन्तःशरेक्षुप्लक्षाम्रकार्ष्यखदिरपीयूक्षाभ्योऽसंज्ञायामपि** ।८।४।५। एभ्यो वनस्य णत्वं स्यात्, प्रवणम्, अन्तर्वणम्, आम्रवणम्। **विभाषौषधिवनस्पतिभ्यः** ।८।४।६। दूर्वावणम्, दूर्वावनम्। शिरीषवणम्, शिरीषवनम्। द्व्यच्त्र्यज्भ्यामेव। ॐ। नेह देवदारुवनम्। इरिकादिभ्यः प्रतिषेधो वाच्यः। ॐ। इरिकावनम्, मिरिकावनम्। **वाहनमाहितात्** ८।४।८। आरोप्य यदुह्यते तद्वाचिस्थान्निमित्तात्परस्य वाहननकारस्य णत्वं स्यात्, इक्षुवाहणम्। **पानं देशे** ।८।४।९। क्षीरं पानं येषां ते क्षीरपाणा उशीनराः, सुरापाणाः प्राच्याः। **वा भावकरणयोः** ।८।४।१०। पानस्येत्येव। क्षीरपाणम्, क्षीरपानम् गिरिनद्यादीनां वा।ॐ। गिरिणदी गिरिनदी, चक्रनितम्बा, चक्रणितम्बा। **प्रातिपदिकान्तनुम्विभक्तिषु च** ।८।४।११। एषु वा णत्वम्। माषवापिणौ, व्रीहिवापाणि, माषवापेण। पक्षे माषवापिनावित्यादि। उत्तरपदं यत्प्रातिपदिकं तदन्तस्यैव णत्वं वाच्यम्। ॐ नेह गर्गाणां भगिनी गर्गभगिनी। युवादेर्न। ॐ। रम्ययूना, परिपक्वानि। एकाजुत्तरपदे णः। नित्यमेवेत्युक्तं वृत्रहणौ, नुमि-क्षीरपाणि, विभक्तौ-क्षीरपेण, रम्यविणा। **कुमति च** ।८।४।१३। हरिकामिणौ, हरिकामाणि, हरिकामेण। **पदव्यवायेऽपि** ।८।४।३८। णत्वं न स्यात्। माषकुम्भवापेन, चतुरङ्गयोगेन। अतद्धित इति वाच्यम्। ॐ। आर्द्रगोमयेण, शुष्कगोमयेण। **कुस्तुम्बुरूणि जातिः** ।६।१।१४३। निपातनात्सुट्। कुस्तुम्बुरु-धान्याकम्। **अपरस्पराः क्रियासातत्ये** ।६।१।१४४। अपरस्पराः सार्था गच्छन्ति। सततमविच्छेदेन गच्छन्तीत्यर्थः। **गोष्पदं सेवितासेवितप्रमाणेषु** ।६।१।१४५। सुट् षत्वं च निपात्यते। गोष्पदः, अगोष्पदान्यरण्यानि, गोष्पदमात्रं क्षेत्रम्। **आस्पदं प्रतिष्ठायाम्** ।६।१।१४६। अन्यत्र आःपदम्। **आश्चर्यमनित्ये** ।६।१।१४७। आश्चर्यं यदि स भुञ्जीत। **वर्चस्केऽवस्करः** ।६।१।१४८। अवकीर्यत इत्यवस्करः। अवकारोऽन्यः। **अपस्करो रथाङ्गम्** ।६।१।१४९। अपकारोऽन्यः। **विष्किरः शकुनौ वा** ।६।१।१५०। पक्षे विकिरः। **प्रतिष्कशश्च कशेः** ।६।१।१५२। सहायः पुरोयायी प्रतिष्कश इत्युच्यते। **प्रस्कण्वहरिश्चन्द्रावृषी** ।६।१।१५३।

मस्करमस्करिणौ वेणुपरिव्राजकयोः ।६।१।१५४। अन्यत्र मकरो ग्राहः, मकरी समुद्रः। कास्तीराजस्तुन्दे नगरे ।६।१।१५५। कुत्सितं तीरमस्यास्तीति कास्तीरम्, अजस्तुन्दं नगरम्। कास्करो वृक्षः ।६।१।१५६। पारस्करप्रभृतीनि च संज्ञायाम् ।६।१।१५७। पारस्करः, किष्किन्धा। तद्बृहतोः करपत्योश्चोरदेवतयोः सुट् तलोपश्च। ❁। चोरदेवतयोरिति समुदायोपाधिः। तस्करः, बृहस्पतिः। प्रायस्य चित्तिचित्तयोः। ❁। प्रायश्चित्तिः, प्रायश्चित्तम्। वनस्पतिरित्यादि आकृतिगणोऽयम्। इति समासाश्रयविधिः।

समर्थानां प्रथमाद्वा ।४।१।८२। इदमधिक्रियते। सामर्थ्यं परिनिष्ठितत्वम्। प्राग्दीव्यतोऽण् ।४।१।८३। तेन दीव्यतीत्यतः प्राग् अणधिक्रियते। अश्वपत्यादिभ्यश्च ।४।१।८४। अण् स्यात्प्राग्दीव्यतीयेष्वर्थेषु। तद्धितेष्वचामादेः ।७।२।११७। ञिति णिति च तद्धिते परे वृद्धिः स्यात्। किति च ।७।२।११८। अश्वपतेरपत्यादि आश्वपतम्, गाणपतम्। दित्यदित्यादित्यपत्युत्तरपदाण्ण्यः ।४।१।८५। प्राग्दीव्यतीयेष्वर्थेषु ण्यः स्यादणोऽपवादः। दैत्यः, आदित्यः, प्राजापत्यः। यमाच्चेति काशिकायाम्। याम्यः, पृथिव्या ञाञौ ।❁। पार्थिवा, पार्थिवी। देवाद् यञञौ ।❁। दैव्यम्, दैवम्। बहिषष्टिलोपो यञ्च ।❁। बाह्यः। ईकक् च ।❁। बाहीकः। स्थाम्नोऽकारः ।❁। अश्वत्थामः। पृषोदरादित्वात्सस्य तः। भवार्थे तु लुग्वाच्यः ।❁। अश्वत्थामा। लोम्नोऽपत्ये बहुष्वकारः ।❁। अन्यत्र बाह्वादिभ्य इति इञ्। औडुलोमिः, उडुलोमाः। गोरजादिप्रसङ्गे यत् ।❁। गव्यम्। उत्सादिभ्योऽञ् ।४।१।८६। औत्सः। अग्निकलिभ्यां ढग्वक्तव्यः ।❁। आग्नेयम्, कालेयम्। इत्यपत्यादिविकारान्तार्थसाधारणाः प्रत्ययाः।

स्त्रीपुंसाभ्यां नञ्स्नञौ भवनात् ।४।१।८७। धान्यानां भवन इत्यतः प्रागर्थेषु स्त्रीपुंसाभ्यां क्रमान्नञ्स्नञौ स्तः। स्त्रैणः, पौंस्नः। वत्यर्थे न। स्त्रीवत्, पुंवत्। द्विगोर्लुगनपत्ये ।४।१।८८। द्विगुनिमित्तस्य तद्धितस्यादेरनपत्यार्थस्य प्राग्दीव्यतीयस्य प्रत्ययस्य लुक् स्यात्। पञ्चसु कपालेषु संस्कृतः पुरोडाशः पञ्चकपालः। गोत्रेऽलुगचि ।४।१।८९। अजादौ प्राग्दीव्यतीये विवक्षिते गोत्रप्रत्ययस्यालुक् स्यात्। गर्गाणां छात्राः। वृद्धाच्छः। आपत्यस्य च तद्धितेऽनाति ।६।१।१५१। हलः परस्यापत्ययकारस्य लोपः स्यात्तद्धिते परे नत्वाकारे। गार्गीयाः। यूनि लुक् ।४।१।९०। अजादौ प्रत्यये विवक्षिते युवप्रत्ययस्य लुक् स्यात्। ग्लुचुकस्य गोत्रापत्यं ग्लौचुकायनिः, वक्ष्यमाणः फिन्। ततो यून्यण्। ग्लौचुकायनः, तस्य छात्रोऽपि ग्लौचुकायनः। अणो लुकि वृद्धत्वाभावाच्छो न। पैलादिभ्यश्च ।२।४।५९। पीलाया वेत्यण्। तस्मादणो द्व्यचः इति फिञ् तस्य लुक्। पैलः पिता पुत्रश्च। तद्राजाच्चाणः। द्व्यच् मगधेत्यणन्तादाङ्गशब्दादणो द्व्यच इति फिञो लुक्। आङ्गः पिता पुत्रश्च। इञः प्राचाम् ।२।४।६०। गोत्रे इञन्ताद् युवप्रत्ययस्य लुक् स्यात् तच्चेद् गोत्रं प्राचां भवेत्। पन्नागारस्यापत्यम्, अत इञ् अत्रिञोश्चेति फक्। पान्नागारिः पिता पुत्रश्च। न तौल्वलिभ्यः ।२।४।६१। युवप्रत्ययस्य लुक् न स्यात्। तौल्वलिः पिता, तौल्वलायनः

पुत्रः। फक्फिञोरन्यतरस्याम् ।४।१।९१। कात्यायनस्य छात्राः कातीयाः, कात्याय-
नीयाः। यास्कः, तस्यापत्यं यास्कायनिः। तस्य छात्राः यास्कायनीयाः। तस्यापत्यम्
।४।१।९२। षष्ठ्यन्तादपत्येऽर्थे उक्ता वक्ष्यमाणाश्च प्रत्यया वा स्युः। उपगोरपत्यम्
औपगवः। भानोरपत्यं भानवः। औपगवी, आश्वपतः, दैत्यः, औत्सः, स्त्रैणः, पौंस्नः।
अपत्यं पौत्रप्रभृतिगोत्रम् ।४।१।६२। स्पष्टम्। जीवति तु वंश्ये युवा ।४।१।६३।
वंश्ये पित्रादौ जीवति पौत्रादेर्यदपत्यं चतुर्थादि तद् युवसंज्ञमेव न तु गोत्रसंज्ञम्।
भ्रातरि च ज्यायसि ।४।१।६४। पूर्ववत्। वाऽन्यस्मिन्सपिण्डे स्थविरतरे जीवति
।४ १।६५। भ्रातुरन्यस्मिन्सपिण्डे स्थविरतरे जीवति पौत्रप्रभृतेरपत्यं जीवदेव युवसंज्ञं
वा स्यात्। तरब्निर्देश उभयोरुत्कर्षार्थः। स्थानेन वयसा चोत्कृष्टे पितृव्ये मातामहे
भ्रातरि वा जीवति। गार्ग्यस्यापत्यं गार्ग्यायणः, गार्ग्यो वा। वृद्धस्य च पूजायामिति
वाच्यम् ।*। गोत्रस्यैव वृद्धसंज्ञा प्राचाम्, गोत्रस्य युवसंज्ञा पूजायां गम्यमानायाम्।
तत्र भवान् गार्ग्यायणः। यूनश्च कुत्सायां गोत्रसंज्ञेति वाच्यम् ।*। गार्ग्यो जाल्मः। एको गोत्रे
।४।१।९३। गोत्रे एक एवापत्यप्रत्ययः स्यात्। उपगोर्गोत्रापत्यम् औपगवः, गार्ग्यः, नाडा-
यनः। गोत्राद्यून्यस्त्रियाम् ।४।१।९४। यून्यपत्ये गोत्रप्रत्ययान्तादेवापत्यप्रत्ययः स्यात्,
स्त्रियां तु न युवसंज्ञा। गर्गस्य युवापत्यं गार्ग्यायणः स्त्रियां गोत्रत्वादेक एव प्रत्ययः।
अत इञ् ।४।१।९५। दाक्षिः। बाह्वादिभ्यश्च ।४।१।९६। बाहविः, औडुलोमिः। आकृति-
गणोऽयम्। सुधातुरकङ् च ।४।१।९७। चादिञ्। सौधातकिः। व्यासवरुडनिषाद-
चण्डालबिम्बानां चेति वक्तव्यम् ।*। न य्वाभ्यां पदान्ताभ्यां पूर्वौ तु ताभ्यामैच्
।७।३।३। आभ्यां परस्य न वृद्धिः किं तु ताभ्यां पूर्वौ क्रमादैचावागमौ स्तः। वैयासकिः
वारुडकिरित्यादि। गोत्रे कुञ्जादिभ्यश्च्फञ् ।४।१।९८। व्रातच्फञोरस्त्रियाम् ।५।३।११३।
व्रातवाचिभ्यश्च्फञन्तेभ्यश्च स्वार्थे ञ्यः स्यान्नतु स्त्रियाम्। कौञ्जायन्यः। बहुत्वे तद्रा-
जत्वाल्लुक्। व्राध्नायन्यः। गोत्रत्वेन जातित्वात् ङीष्। कौञ्जायनी। अनन्तरापत्ये
कौञ्जिः। नडादिभ्यः फक् ।४।१।९९। गोत्र इत्येव। नाडायनः चारायणः। अनन्तरो
नाडिः। हरितादिभ्योऽञः ।४।१।१००। एभ्योऽञन्तेभ्यो यूनि फक्, हारितायनः।
यून्ययम्। यञिञोश्च ।४।१।१०१। गोत्रे यौ यञिञौ तदन्तात्फक् स्यात्। गार्ग्यायणः।
शरद्वच्छुनकदर्भाद्भृगुवत्साग्रायणेषु ।४।१।१०२। गोत्रे फक्। अञिञोरपवादः। आद्यौ
बिदादी। शारद्वतायनो भार्गवश्चेत्। शारद्वतोऽन्यः। शौनकायनो वात्स्यश्चेत्, शौनको
ऽन्यः। दार्भायण आग्रायणश्चेत्, दार्भिरन्यः। द्रोणपर्वतजीवन्तादन्यतरस्याम् ।४।१।१०३।
गोत्रे फग् वा। द्रौणायनः। द्रौणिः। पार्वतायनः पार्वतिः। जैवन्तायनः, जैवन्तिः।
अनृष्यानन्तर्ये बिदादिभ्योऽञ् ।४।१।१०४। एभ्योऽञ् गोत्रे। बिदस्य गोत्रापत्यं बैदः।
अनन्तरो बैदिः। बाह्वादेराकृतिगणत्वादिञ्। पुत्रस्यापत्यं पौत्रः। दौहित्रः। गर्गादिभ्यो यञ्
।४।१।१०५। गोत्र एव गार्ग्यः। वात्स्यः। यञञोश्च ।२।४।६४। गोत्रे एतयोर्लुक् स्यात्। तत्कृते
बहुत्वे न तु स्त्रियाम्। गर्गाः, वत्साः, बिदाः, उर्वाः। स्त्रियां तु गार्ग्यः स्त्रियः। प्रवराध्यायप्र-

सिद्धमिह गोत्रम्, तेनेह न पौत्राः, दौहित्राः। **मधुबभ्र्वोर्ब्राह्मणकौशिकयोः** ।४।१।१०६। माधव्यो ब्राह्मणः, माधवोऽन्यः। बाभ्रव्यः, कौशिकः, बाभ्रवोऽन्यः। बभ्रुशब्दात् गर्गादिपाठात्सिद्धेऽपि नियमार्थमिदम्, गर्गादिपाठफलं तु लोहितादिकार्यार्थम्। बाभ्रव्यायणी। **कपिबोधादाङ्गिरसे** ।४।१।१०७। काप्यः, बोध्यः। **वतण्डाच्च** ।४।१।१०८। आङ्गिरस इत्येव। वातण्ड्यः। **लुक् स्त्रियाम्** ।४।१।१०९। वतण्डाच्चेति विहितस्य लुक् स्यात् स्त्रियाम्। शार्ङ्गरवादित्वान् ङीन्। वतण्डी। अनाङ्गिरसे तु वातण्ड्यायनी। अणि वातण्डी। **अश्वादिभ्यः फञ्** ।४।१।११०। आश्वायनः। पुंसि जाते। *। जातस्य गोत्रापत्यं जातायनः। **भर्गात् त्रैगर्ते** ।४।१।१११। भार्गायणस्त्रैगर्तः। **शिवादिभ्योऽण्** ।४।१।११२। गोत्र इति निवृत्तम्। शैवः, गाङ्गः। पक्षे तिकादित्वात् फिञ्। गाङ्गायनिः, शुभ्रादित्वाढ् ढक्, गाङ्गेयः। **अवृद्धाभ्यो नदीमानुषीभ्यस्तन्नामिकाभ्यः** ।४।१।११४। एभ्योऽण् स्यात्, ढकोऽपवादः। यामुनः, नार्मदः। चिन्तिताया अपत्यं चैन्तितः। **ऋष्यन्धकवृष्णिकुरुभ्यश्च** ।४।१।११४। ऋषयो मन्त्रद्रष्टारः। वाशिष्ठः, वैश्वामित्रः, अन्धकेभ्यः, श्वाफल्कः, वृष्णिभ्यः वासुदेवः, अनिरुद्धः, कुरुभ्यः, नाकुलः, साहदेवः, अत्रिशब्दात्परत्वाड्ढक्। आत्रेयः। **मातुरुत्संख्यासंभद्रपूर्वायाः** ।४।१।११५। अण् उदादेशश्च। द्वैमातुरः, पाण्मातुरः। सांमातुरः, भाद्रमातुरः। स्त्रीलिङ्गनिर्देशोऽर्थापेक्षः, तेन धान्यमातुर्नं। शुभ्रादित्वाद् वैमात्रेयः। **कन्यायाः कनीन च** ।४।१।११६। अण् कनीनादेशश्च। कानीनो व्यासः, कर्णश्च। **विकर्णशुङ्गच्छगलाद्वत्सभरद्वाजात्रिषु** ।४।१।११७। वैकर्णो वात्स्यः, वैकर्णिरन्यः। शौङ्गो भारद्वाजः, शौङ्गिरन्यः। छागल आत्रेयः, छागलिरन्यः। **पीलाया वा** ।१।४।११८। पीलाया अपत्यं पैलः पैलेयः। **ढक् च मण्डूकात्** ।४।१।११९। चादण् पक्षे इञ्। माण्डूकेयः, माण्डूकः, माडूकिः। **स्त्रीभ्यो ढक्** ।४।१।१२०। वैनतेयः। बाह्वादित्वात्सौमित्रिः। शिवादित्वात्सापत्नः। **द्व्यचः** ।४।१।१२१। तन्नामिकाणोऽपवादः। दात्तेयः। पार्थ इत्यत्र तु तस्येदमित्यण्। **इतश्चानिञः** ।४।१।१२२। इकारान्तात् द्व्यचोऽपत्येऽर्थे ढक् स्यात्, न त्विञन्तात्। दौलेयः, नैधेयः। **शुभ्रादिभ्यश्च** ।४।१।१२३। शुभ्रस्यापत्यं शौभ्रेयः। **विकर्णकुषीतकात्काश्यपे** ।४।१।१२४। वैकर्णेयः, कौषीतकेयः। **भ्रुवो वुक् च** ।४।१।२२५। चाड्ढक्। भ्रौवेयः। **प्रवाहणस्य ढे** ।४।१।१२८। प्रवाहणशब्दस्योत्तरपदस्याचामादेरचो वृद्धिः स्यात्, पूर्वपदस्य तु वा ढे परे। प्रवाहणस्यापत्य प्रावाहणेयः प्रवाहणेयः। **तत्प्रत्ययस्य च** ।७।३।२९। प्रावाहणेयिः, प्रवाहणेयिः। **कल्याण्यादीनामिनङ्** ।४।१।११६। काल्याणिनेयः, बान्धकिनेयः। **कुलटाया वा** ।४।१।१२७। कौलटिनेयः, कौलटेयः। सती भिक्षुकीयम्। व्यभिचारिण्याः कौलटेरः। **हृद्भगसिन्ध्वन्ते पूर्वपदस्य च** ।७।३।१९। सुहृदोऽपत्यं सौहार्दः। सौभागिनेयः, साक्तुसैन्धवः। **चटकाया ऐरक्** ।४।१।१२८। चटकस्येति वाच्यम् ।*। चाटकैरः। स्त्रियामपत्ये लुग्वक्तव्यः ।*। तयोरेव स्त्र्यपत्यं चटका ।**गोधाया ढ्रक्** ।४।१।१२९। गौधेरः, पक्षे शुभ्रादित्वात् ढक्।

गौधेयः। आरगुदीचाम् ।४।१।१३०। गौधारः । रका सिद्धे आकारोच्चारणमन्यतो विधानार्थम्। जाडारः, पाण्डारः। क्षुद्राभ्यो वा ।४।१।१३१ पक्षे ढक्। काणेरः, काणेयः। दासेरः, दासेयः। पितृष्वसुश्छण् ।४।१।१३२। पैतृष्वस्रीयः। ढकि लोपः ।४।१।१३३। अत एव ज्ञापकाद् ढक्। पैतृष्वसेयः। मातृष्वसुश्च ।४।१।१३४ मातृष्वस्रीयः, मातृष्वसेयः। चतुष्पाद्भ्यो ढञ् ।४।१।१३५। ढे लोपोऽकद्र्वाः ।६।४।१४७। उवर्णान्तस्य लोपो ढे परे। कामण्डलेयः। गृष्ट्यादिभ्यश्च ।४।१।१३६। गार्ष्टेयः। केकयमित्रयुप्रलयानां यादेरियः ।७।३।२। इति इयादेशे प्राप्ते। दाण्डिनायनहास्तिनायनाथर्वणिकजैह्माशिनेयवाशिनायनिभ्रौणहत्यधैवत्यसारवैक्ष्वाकमैत्रेयहिरण्मयानि ।६।४।१७४। एतानि निपात्यन्ते इति युलोपः। मैत्रेयः। मैत्रेयौ। यस्कादिभ्यो गोत्रे ।२।४।६३। अपत्यप्रत्ययस्य लुक् स्यात्तत्कृते बहुत्वे न तु स्त्रियाम्। मित्रयवः। अत्रिभृगुकुत्सवशिष्ठगोतमाङ्गिरोभ्यश्च ।२।४।६५। अत्रयः, भृगवः कुत्साः, वशिष्ठाः, गोतमाः, अङ्गिरसः। बह्वच इञः प्राच्यभरतेषु ।२।४।६६। पन्नागाराः, युधिष्ठिराः। न गोपवनादिभ्यः ।२।४।६७ एभ्यो लुग् न स्यात्। गौपवनाः, शैग्रवाः। तिककितवादिभ्यो द्वन्द्वे ।२।४।६८। बहुत्वे लुक् स्यात्। तैकायनश्च कैतवायनश्च तिककितवाः। उपकादिभ्योऽन्यतरस्यामद्वन्द्वे ।२।४।६९। द्वन्द्वे चाद्वन्द्वे च। औपकायनाश्च लामकायनाश्च, उपकलमकाः, औपकायनलामकायनाः। भ्राष्ट्रककपिष्ठलाः, भ्राष्ट्रकिकापिष्ठलयः। लमकाः, लामकायनाः। आगस्त्यकौण्डिन्ययोरगस्तिकुण्डिनच् ।२।४।७०। एतयोर्यञिञोर्बहुषु लुक् अवशिष्टयोरगस्तिकुण्डिनचौ स्तः। अगस्तयः, कुण्डिनाः। राजश्वशुराद् यत् ।४।१।१३७। राज्ञो जातावेवेति वाच्यम् ।*। ये चाभावकर्मणोः ।६।४।१६८। अन् प्रकृत्या स्यात्। राजन्यः। श्वशुर्यः, शूद्रादावुत्पन्नः। अन् ।६।४।१६७ अणि प्रकृत्या स्यात्। राजनः। संयोगादिश्च ।६।४।१६६। इन् प्रकृत्या। चाक्रिणः। न मपूर्वोऽपत्येऽवर्मणः ।६।४।१७०। भाद्रसाम्नः। वा हितनाम्न इति वाच्यम् ।*। हैतनामः, हैतनामनः। ब्राह्मोऽजातौ ।६।४।१७१। ब्राह्मं हविः। योगविभागात्। अपत्ये जातावणि ब्राह्मणष्टिलोपो न स्यात्। ब्रह्मणोऽपत्यं ब्राह्मणः। औक्षमनपत्ये ।६।४।१७३ औक्षं पदम्। षपूर्वहन्धृतराज्ञामणि ।६।४।१३५। भस्यातो लोपोऽणि। औक्ष्णः, ताक्ष्णः। औणघ्नः, धार्तराज्ञः। क्षत्राद्धः ।४।१।१३८। क्षत्रियः। जाताविव्येव। क्षात्रिरन्यः। कुलात्खः ।४।१।१३९। कुलीनः। तदन्तादपि। उत्तरसूत्रेऽपूर्वपदादिति लिङ्गात्, आढ्यकुलीनः। अपूर्वपदादन्यतरस्यां यड्ढकञौ ।४।१।१४०। कुलादेव। पक्षे खः। कुल्यः, कौलेयकः कुलीनः। महाकुलादञ्खञौ ।४।१।१४१। माहाकुलः, माहाकुलीनः, महाकुलीनः। दुष्कुलाड्ढक् ।४।१।१४२। दौष्कुलेयः, दुष्कुलीनः। स्वसुश्छः ।४।१।१४३। स्वस्रीयः। भ्रातुर्व्यच्च ।४।१।१४४। चाच्छः। भ्रातृव्यः, भ्रात्रीयः। व्यन्सपत्ने ।४।१।१४५। भ्रातृव्यः शत्रुः।

पाप्मना भ्रातृव्येणेति तूपचारात्। रेवत्यादिभ्यष्ठक् ।४।१।१४६। ठस्येकः। रैवतिकः। **गोत्रस्त्रियाः कुत्सने ण च** ।४।१।१४७। चात् ठक्। गार्ग्या अपत्यं गार्गो, गार्गिको वा जाल्मः। **वृद्धाट्ठक् सौवीरेषु बहुलम्** ।४।१।१४८। वृद्धात्सौवीरगोत्राद् यूनि बहुलं ठक् स्यात् कुत्सायाम्। भागवित्तिकः, पक्षे फक्। भागवित्तायनः। **फेश्छ च** ।४।१।१४९। यामुन्दायनीयः, यामुन्दायनिकः। **फाण्टाहृतिमिमताभ्यां णफिञौ** ।४।१।१५०। फाण्टाहृतः, फाण्टाहृतायनिः। मैमतः, मैमतायनिः। **कुर्वादिभ्यो ण्यः** ।४।१।१५१। कौरव्या ब्राह्मणाः, वावदूक्याः। सम्राजः क्षत्रिये ।❀। साम्राज्यः, साम्राजोऽन्यः। **सेनान्तलक्षणकारिभ्यश्च** ।४।१।१५२। हारिषेण्यः, लाक्षण्यः, कारिः शिल्पी तस्मात् तान्तुवाय्यः। कौम्भकार्यः, नापित्यः। **उदीचामिञ्** ।४।१।१५३। हारिषेणिः, लाक्षणिः, तान्तुवायिः, कौम्भकारिः। नापितात्तु परत्वात्फिञेव। नापितायनिः। तक्ष्णोऽण उपसंख्यानम् ।❀। ताक्ष्णः, पक्षे ताक्षण्यः। **तिकादिभ्यः फिञ्** ।४।१।१५४ तैकायनिः। **कौशल्यकार्मार्याभ्यां च** ।४।१।१५५। परमप्रकृतेरेवायमिष्यते ।❀। कौशल्यायनिः, कार्मार्यायणिः। छागवृषयोरपि ।❀। छाग्यायनिः, वार्ष्यायणिः। **अणो द्व्यचः** ।४।१।१५६। कार्त्रायणिः। त्यदादीनां फिञ् वा वाच्यः ।❀। त्यादायनिः, त्यादः। **उदीचां वृद्धादगोत्रात्** ।४।१।१५७। आम्रगुप्तायनिः। प्राचां तु आम्रगुप्तिः। **वाकिनादीनां कुक् च** ।४।१।१५८। वाकिनकायनिः, वाकिनिः। **पुत्रान्तादन्यतरस्याम्** ।४।१।१५९। गार्गीपुत्रकायणिः, गार्गीपुत्रायणिः, गार्गीपुत्रिः। **प्राचामवृद्धात्फिन्बहुलम्** ।४।१।१६०। ग्लुचुकायनिः। **मनोर्जातावञ्यतौ षुक् च** ।४।१।१६१। मानुषः, मनुष्यः। **जनपदशब्दात्क्षत्रियादञ्** ।४।१।१६८। जनपदक्षत्रिययोर्वाचकादञ् स्यादपत्ये। ऐक्ष्वाकः, ऐक्ष्वाकौ, इक्ष्वाकवः। क्षत्रियसमानशब्दाज्जनपदात्तस्य राजन्यपत्यवत् ।❀। पञ्चालानां राजा पाञ्चालः। पुरोरण् वक्तव्यः ।❀। पौरवः, पाण्डोर्ड्यण् ।❀। पाण्ड्यः। **साल्वेयगान्धारिभ्यां च** ।४।१।१६९। वृद्धेदिति ञ्यङोऽपवादः। साल्वेयः, गान्धारः। **द्व्यञ्मगधकलिङ्गसूरमसादण्** ।४।१।१७०। आङ्गः, वाङ्गः, सौह्मः, मागधः कालिङ्गः, सौरमसः। **वृद्धेत्कोसलाजादाञ्ञ्यङ्** ।४।१।१७१। वृद्धात् आम्बष्ठ्यः, सौवीर्यः। इतः आवन्त्यः, कौसल्यः। अजादस्यापत्यम् आजाद्यः। **कुरुनादिभ्यो ण्यः** ।४।१।१७२। कौरव्यः, नैषध्यः। सनैषधस्यार्थपतेरित्यादौ शैषिकोऽण्॥ **साल्वावयवप्रत्यग्रथकलकूटाश्मकादिञ्** ।४।१।१७३। औदुम्बरिः, प्रात्यग्रथिः, कालकूटिः, आश्मकिः। राजन्यपत्येवम्। **ते तद्राजाः** ।४।१।१७४। अञादय एतत्संज्ञाः स्युः। **तद्राजस्य बहुषु तेनैवास्त्रियाम्** ।२४।६२। बहुष्वर्थेषु तद्राजस्य लुक् स्यात्तदर्थकृते बहुत्वे, न तु स्त्रियाम्। इक्ष्वाकवः, पञ्चालाः। **कम्बोजाल्लुक्** ।४।१।१७५। कम्बोजः। कम्बोजादिभ्य इति वक्तव्यम् ।❀। चोलः, शकः। द्व्यज्लक्षणस्याणो लुक्। केरलः, यवनः। अञोलुक। **स्त्रियामवन्तिकु-**

न्तिकुरुभ्यश्च ।४।१।१७६। अवन्ती, कुन्ती, कुरूः । अतश्च ।४।१।११७। शूरसेनी, मद्री, न प्राच्यभर्गादियौधेयादिभ्यः ।४।१।१७८। लुक् न । पाञ्चाली, वैदर्भी, आङ्गी, वाङ्गी, मागधी । एते प्राच्याः । भार्गी, कारूशी, कैकेयी । यौधेयी, शौक्रेयी । अणिञोरनार्षयोर्गुरूपोत्तमयोः ष्यङ् गोत्रे ।४।१।१७८। कुमुदगन्धेः अपत्यं स्त्री कौमुदगन्ध्या, वाराह्या । गोत्रावयवात् ।४।१।७६। गोत्रावयवा गोत्राभिमताः कुलाख्यास्ततो गोत्रे विहितयोरणिञोः स्त्रियां ष्यङादेशः स्यात् । अगुरूपोत्तमार्थ आरम्भः । पौणिक्या, भौणिक्या क्रौड्यादिभ्यश्च ।४।१।१८०। स्त्रियां ष्यङ् प्रत्ययः स्यात् । अगुरूपोत्तमार्थोऽनणिञर्थश्चारम्भः । क्रौड्या, व्याड्या, । सूतयुवत्याम् । * । सूत्या । भोजक्षत्रिये । * । भोज्या । दैवयज्ञिशौचिवृक्षिसात्यमुग्रिकाण्डेविद्धिभ्योऽन्यतरस्याम् ।४।१।८१। एभ्यश्चतुर्भ्यः ष्यङ् वा । अगोत्रार्थमिदम्, गोत्रेऽपि परत्वात्प्रवर्तते । दैवयज्ञ्या, दैवयज्ञी । इत्यपत्याधिकारः ।

—❀०❀—

॥ अथ चातुरर्थिकाः ॥

तेनरक्तं रागात् ।४।४२१ रज्यतेऽनेनेति रागः । कषायेण रक्तं वस्त्रं काषायम् । माञ्जिष्ठम् । लाक्षारोचनाट्ठक् ।४।२।२। लाक्षिकः । रोचनिकः । शकलकर्दमाभ्यामुपसंख्यानम् ।❀। शाकलिकः । कार्दमिकः । आभ्यामणपीति वृत्तिकारः । शाकलः । कार्दमः । नील्या अन् ।❀। नीलम् । पीतात्कन् ।❀। पीतकम् । हरिद्रामहारजनाभ्यामञ् ।❀। हारिद्रम् । माहारजनम्, नक्षत्रेण युक्तः कालः ।४।२।३। पौषमहः पौषी रात्रिः । लुबविशेषे ।४।२।४। अद्य पुष्यः । संज्ञायां श्रवणाश्वत्थाभ्याम् ।४।२।५। श्रवणा रात्रिः । अश्वत्थो मुहूर्तः । द्वन्द्वाच्छः ।४।२।६। तिष्यपुनर्वसवीयमहः । राधानुराधीया रात्रिः । दृष्टं साम ।४।२।७। वासिष्ठं साम । अस्मिन्नर्थेऽण् डिद्वा वक्तव्यः ।❀। औशनम् । औशनसम् । कलेर्ढक् ।४।२।८। कालेयम् । वामदेवाड्ड्यड्ड्यौ ।४।२।९। वामदेव्यम् । परिवृतो रथः ।४।२।१०। वास्त्रो रथः । पाण्डुकम्बलादिनिः ।४।२।११। पाण्डुकम्बली । द्वैपवैयाघ्रादञ् ।४।२।१२। द्वैपो रथः । वैयाघ्रः । कौमारापूर्ववचने ।४।२।१३। कौमारः पतिः । यद्वा । कौमारी भार्या । तत्रोद्धृतममत्रेभ्यः ।४।२।१४। शाराव ओदनः । स्थण्डिलाच्छयितरि व्रते ।४।२।१५। स्थाण्डिलो भिक्षुः । संस्कृतं भक्षाः ।४।२।१६। भ्राष्ट्रे संस्कृता भ्राष्ट्रा यवाः । अष्टाकपालः ।

शूलोखाद्यत् ।४।२।१७। शूल्यं मांसम् । उख्यम् । दध्नष्ठक् ।४।२।१८। दाधिकम् । उदश्वितोऽन्यतरस्याम् ।४।२।१९। इसुसुक्तान्तात्कः ।७।३।५१। औदश्वित्कः । औदश्वितः । दोष उपसंख्यानम् ।❀। दोर्भ्यां चरति दौष्कः । क्षीराड्ढञ् ।४।२।२०। क्षैरेयी । साऽस्मिन्पौर्णमासीति ।४।२।२१। पौषो मासः । आग्रहायण्यश्वत्थाट्ठक् ।४।२।२२। आग्रहायणी पौर्णमास्यस्मिन् आग्रहायणिको मासः । अश्वत्थेन युक्ता पौर्णमास्यश्वत्थः । आश्वत्थिकः । विभाषाफाल्गुनीश्रवणाकार्तिकीचैत्रीभ्यः ।४।२।२३। फाल्गुनो मासः । श्रावणिकः—

श्रावणः, कार्तिक्किकः-कार्तिकः। चैत्रिकः-चैत्रः। **साऽस्य देवता** ।४।२।२४ ऐन्द्रं हविः। पाशुपतम्। बार्हस्पत्यम्। **कस्येत्** ।४।२।२५। कायं हविः। श्रायम्। **शुक्राद् घन्** ।४।२।२६। शुक्रियम्। **अपोनप्त्रपान्नप्तृभ्यां घः** ।४।२।२७। अपोनप्त्रियम्। अपां नप्त्रियम्। घप्रत्यययोगे निपात्यते। **छच** ।४।२।२८। अपोनप्त्रीयम्। अपांनप्त्रीयम्। 'छप्रकरणे पैङ्गाक्षीपुत्रादिभ्य उपसंख्यानम् ।*।' पैङ्गाक्षीपुत्रीयम्। तार्णबिन्दवीयम्। शतरुद्राद्घश्च ।*। शतरुद्रियम् शतरुद्रीयम्। **महेन्द्राद्घाणौ च** ।४।२।२९। महेन्द्रियम्, हविः। माहेन्द्रम्। महेन्द्रीयम्। **सोमाट्ट्यण्** ।४।२।३०। सौम्यम्। सौमी ऋक्। **वाय्वृतुपित्रुषसो यत्** ।४।२।३१। वायव्यम्। ऋतव्यम्। **रीङृतः** ।७।४।२७। पित्र्यम्। उषस्यम्। **द्यावापृथिवीशुनासीरमरुत्वदग्नीषोमवास्तोष्पतिगृहमेधाच्छ च** ।४।२।३२। चाद्यत्। द्यावापृथिवीयम्। द्यावापृथिव्यम्। शुनासीरीयम्। शुनासीर्यम्। **अग्नेर्ढक्** ।४।२।३३। आग्नेयम्। **कालेभ्यो भववत्** ।४।२।३४। मासिकम्। प्रावृषेण्यम्। **महाराजप्रोष्ठपदाट् ठञ्** ।४।२।३५। माहाराजिकम्। प्रौष्ठपदिकम्। **देवताद्वन्द्वे च** ।७।३।२१। अत्र उभयपदादिवृद्धिर्ञिदादौ। आग्निमारुतम्। **नेन्द्रस्य परस्य** ।७।३।२२। सौमेन्द्रः। **दीर्घाच्च वरुणस्य** ।७।३।२३। ऐन्द्रावरुणम्। तदस्मिन्वर्तत इति नवयज्ञादिभ्य उपसंख्यानम् ।*। नावयज्ञिकः कालः। पाकयज्ञिकः। पूर्णमासादण्वक्तव्यः ।*। पौर्णमासी तिथिः। **पितृव्यमातुलमातामहपितामहाः** ।४।२।३६। एते निपात्यन्ते। पितुर्भ्रातरि व्यत् ।*। पितृव्यः। मातुर्डुलच् ।*। मातुलः। मातृपितृभ्यां पितरि डामहच् ।*। मातामहः। पितामहः। मातरि षिच्च ।*। मातामही। पितामही। अवेर्दुग्धे सोढदूसमरीसचो वक्तव्याः ।*। अविसोढम्। अविदूसम्। अविमरीसम्। तिलान्निष्फलात्पिञ्जपेजौ ।*। तिलपिञ्जः। तिलपेजः। पिञ्जश्छन्दसि डिच्च ।*। तिल्पिञ्जः। **तस्य समूहः** ।४।२।३७। काकम्। बाकम्। **भिक्षादिभ्योऽण्** ।४।२।३८। भैक्षम्। गार्भिणम्। इह भस्याढे इति पुंवद्भावे। **इनण्यनपत्ये** ।६।४।१६४। अनपत्यार्थेऽणि इन् प्रकृत्या स्यात्। तेन टिलोपो न। यौवनम्। शत्रन्तादनुदात्तादेरञि यौवतम्। **गोत्रोक्षोष्ट्रोरभ्राजराजन्यराजपुत्रवत्समनुष्याजाद्वुञ्** ।४।२।३९। लौकिकमिह गोत्रं तच्चापत्यमात्रम्। **युवोरनाकौ** ।७।१।१। ग्लौचुकायनम्। औक्षकमित्यादि। यलोपे प्राप्ते। प्रकृत्याऽके राजन्यमनुष्ययुवानः ।*। राजन्यकम्। मानुष्यकम्। वृद्धाच्चेति वक्तव्यम् ।*। वार्द्धकम्। **केदाराद्यञ्च** ।४।२।४०। कैदार्यम् कैदारकम्। गणिकाया यञिति वक्तव्यम् ।*। गाणिक्यम्। **ठञ् कवचिनश्च** ।४।२।४१। कावचिकम्। कैदारिकम्। **ब्राह्मणमाणववाडवाद्यत्** ।४।२।४२। ब्राह्मण्यम्। माणव्यम्। वाडव्यम्। पृष्ठादुपसंख्यानम् ।*। पृष्ठ्यम्। **ग्रामजनबन्धुभ्यस्तल्** ।४।२।४३। ग्रामता। जनता। बन्धुता। गजसहायाभ्यां चेति वक्तव्यम् ।*। गजता। सहायता। अह्नः खः क्रतौ ।*। अहीनः। पर्श्वा णस् वक्तव्यः ।*। **सिति च** ।१।४।१६। सिति पूर्वं पदं स्यात्। पार्श्वम्। **अनुदात्तादेरञ्** ।४।२।४४। कापोतम्। मायूरम्। **खण्डिकादिभ्यश्च** ।४।२।४५। खाण्डिकम्। **चरणेभ्यो धर्मवत्** ।४।२।४६। काठकम्।

छान्दोग्यम् । अचित्तहस्तिधेनोष्ठक् ।४।२।४७। आक्तुकम् । हास्तिकम् । धैनुकम् । केशाश्वाभ्यां यञ्छावन्यतरस्याम् ।४।२।४८। कैश्यम् । कैशिकम् । आश्वीयम् । आश्वम् । पाशादिभ्यो यः ।४।२।४९। पाश्या । तृण्या । धूम्या । वन्या । वात्या । खलगोरथात् ।४।२।५०। खल्या । गव्या । रथ्या । इनित्रकट्यचश्च ।४।२।५१। खलिनी, गोत्रा । रथकट्या । खलादिभ्य इनिर्वक्तव्यः ।*। डाकिनी । कुटुम्बिनी । विषयो देशे ।४।२।५२। शिबीनां विषयो देशः शैबः । राजन्यादिभ्यो वुञ् ।४।२।५३। राजन्यकः । भौरिक्याद्यैषुकार्यादिभ्यो विधल्भक्तलौ ।४।२।५४। भौरिकिविधम् । भौलिकिविधम् । ऐषुकारिभक्तम् । सारसायनभक्तम् । सोऽस्यादिरिति च्छन्दसः प्रगाथेषु ।४।२।५५। अण् । पाङ्क्तः प्रगाथः । स्वार्थ उपसंख्यानम् ।*। त्रैष्टुभम् । संग्रामे प्रयोजनयोद्धृभ्यः ४।२।५६। सुभद्रा प्रयोजनमस्य सङ्ग्रामस्येति सौभद्रः । भारता योद्धारोऽस्य संग्रामस्य भारतः । तदस्यां प्रहरणमिति क्रीडायां णः । दाण्डा । मौष्टा । घञः सास्यां क्रियेति ञः ।४।२।५८। श्येनतिलस्य पाते ञे ६।३।७१। एतयोर्मुमागमः स्यात् अप्रत्यये परे पातशब्दे उत्तरपदे । श्येनपातोऽस्यां वर्तते श्यैनम्पाता मृगया । तैलम्पाता स्वधा । तदधीते तद्वेद व्याकरणमधीते वेद वा वैयाकरणः क्रतूक्थादिसूत्रान्ताट्ठक् ।४।२।६०। आग्निष्टोमिकः वाजपेयिकः औक्थिकः । नैयायिकः । वार्तिकः । लौकायतिकः । सूत्रान्तात्त्वकल्पादेरेवेष्यते ।*। सांग्रहसूत्रिकः । विद्यालक्षणकल्पान्ताच्चेति वक्तव्यम् ।*। वायसविद्यिकः । गौलक्षणिकः । आश्वलक्षणिकः । पाराशरकल्पिकः । अङ्गक्षत्रधर्मत्रिपूर्वाद्विद्यान्तान्नेति वक्तव्यम् ।*। आङ्गविद्यः । क्षात्रविद्यः । धार्मविद्यः । त्रैविद्यः । आख्यानाख्यायिकेतिहासपुराणेभ्यश्च ।*। यावक्रीतिकः । वासवदत्तिकः । अत्र ङ्यस्य लुकि, ततोऽनेन ठक् । ऐतिहासिकः, पौराणिकः । सर्वादेः सादेश्च लुग् वक्तव्यः ।*। सर्ववेदः । सर्वतन्त्रः । सवार्तिकः । द्वितन्त्रः । अत्र द्विगोरिति लुक् । इकन्पदोत्तरपदाच्छतषष्टेः, षिकन् पथः ।*। पूर्वपदिकः । उत्तरपदिकः । शतपथिकः । शतपथिकी । षष्टिपथिकः । षष्टिपथिकी । क्रमादिभ्यो वुन् ।४।२।६१। क्रमकः । अनुब्राह्मणादिनिः ।४।२।६२। अनुब्राह्मणी । वसन्तादिभ्यष्ठक् ।४।२।६३। वासन्तिकः । आथर्वणिकः । दाण्डिनायन इति सूत्रे निपातनाट्टिलोपो न । प्रोक्ताल्लुक् ।४।२।६४। प्रोक्तार्थकप्रत्ययात्परस्याध्येतृवेदितृप्रत्ययस्य लुक् स्यात् । गाथिविदथिकेशिगणिपणिनश्च ।६।४।१६५। एतेऽणि प्रकृत्या स्युः । पाणिनिः । ण्यक्षत्रियार्षञितो यूनि लुगणिञोः ।२।४।५८। कौरव्यः पिता । कौरव्यः पुत्रः । श्वाफल्कः पिता । श्वाफल्कः पुत्रः । वासिष्ठः पिता । वासिष्ठः पुत्रः । तैकायनिः पिता । तैकायनिः पुत्रः । पाणिनीयः । पाणिनीया । सूत्राच्च कोपधात् ।४।२।६५। अप्रोक्तार्थं आरम्भः । अष्टकाः । संख्याप्रकृतिकादिति वाच्यम् ।*। नेह माहावार्तिकः । कालापकः । छन्दोब्राह्मणानि च तद्विषयाणि ।४।२।६६। अध्येतृवेदितृप्रत्ययं विना न प्रयोज्यानीत्यर्थः । कठेन प्रोक्तमधीयते कठाः । तदस्मिन्नस्तीति देशे तन्नाम्नि ।४।२।६७। औदुम्बरः । तेन

निर्वृत्तम् ।४।२।६८। कौशाम्बी नगरी । तस्य निवासः ।४।२।६९। शैवः । अदूरभवश्च ।४।२।७०। वैदिशम् । चकारेण प्रागुक्तास्त्रयोऽर्थाः सन्निधाप्यन्ते, तेन वक्ष्यमाणप्रत्ययानां चातुरर्थिकत्वं सिद्ध्यति । ओरञ् ।४।२।७१। काक्षतवम् । नद्यास्तु परत्वान्मतुप् । इक्षुमती मतोश्च बह्वजङ्गात् ।४।२।७२। सैध्रकावतम् । बह्वचः कूपेषु ।४।२।७३। दैर्घवरत्रः कूपः । उदक्च विपाशः ।४।२।७४। दात्तः कूपः । सङ्कलादिभ्यश्च ।४।२।७५। साङ्कलम् । पौष्कलम् स्त्रीषु सौवीरसाल्वप्राक्षु ।४।२।७६। दात्तामित्री नगरी । वैधूमाग्नी । माकन्दी । सुवास्त्वादिभ्योऽण् ।४।२।७७। अञोऽपवादः । सुवास्तोरदूरभवं सौवास्तवम् वार्णवम् । अणग्रहणं नद्यां मतुपो बाधनार्थम् । सौवास्तवी । रोणी ।४।२।७८। कूपाञोऽपवादः । रौणः । आजकरौणः । कोपधाच्च ।४।२।७९। कार्णच्छिद्रकः कूपः । कार्कवाकवम् । त्रैशङ्कवम् । वुञ्छण्कठजिलसेनिरढञ्ण्ययफक्फिञिञ्ञ्यककठकोऽरीहणकृशाश्वर्श्यकुमुदकाशतृणप्रेक्षाश्मसखिसङ्काशबलपक्षकर्णसुतङ्गमप्रगदिन्वराहकुमुदादिभ्यः ।४।२।८०। सप्तदशभ्यो गणेभ्यः सप्तदश क्रमात्स्युश्चतुरर्थ्याम् । अरीहणेन निर्वृत्तम्, आरीहणकम् । कार्शाश्वीयम् । आर्श्यकम् कुमुदिकम् । काशिलः । तृणसम् । प्रेक्षी । अश्मरः । साखेयम् । साङ्काश्यम् । बल्यम् । पाक्षायणः । पथः पन्थ च (ग० सू० ७९) । पान्थायनः । कार्णायनिः । सौतङ्गमिः । प्रागद्यः । वाराहकः । कौमुदिकः । जनपदे लुप् ।४।२।८१। लुपि युक्तवद् व्यक्तिवचने ।१।२।५१ लुपि सति प्रकृतिवल्लिङ्गवचने स्तः । पञ्चालानां निवासो जनपदः पञ्चालाः । कुरवः । अङ्गाः । बङ्गाः कलिङ्गाः । तदशिष्यं संज्ञाप्रमाणत्वात् ।१।२।५३। युक्तवद्वचनं न कर्तव्यम् । संज्ञानां प्रमाणत्वात् । लुब्योगाप्रख्यानात् ।१।२।५४। लुबपि न कर्तव्योऽवयवार्थस्येहाप्रतीतेः । योगप्रमाणे च तदभावेऽदर्शनं स्यात् ।१।२।५५। यदि हि योगस्यावयवार्थस्येदं बोधकं स्यात्तदा तदभावे न दृश्येत । प्रधानप्रत्ययार्थवचनमर्थस्यान्यप्रमाणत्वात् ।१।२।५६। 'प्रत्ययार्थः प्रधानम्' इत्येवं रूपं वचनमशिष्यम् । कुतः, अर्थस्य लोकत एव सिद्धेः । कालोपसर्जने च तुल्यम् ।१।२।५७। अतीताया रात्रेः पश्चार्धेनागामिन्याः पूर्वार्धेन च सहितो दिवसोऽद्यतनः । विशेषणमुपसर्जनमित्यादिपूर्वाचार्यैः परिभाषितम् । तत्राप्यशिष्यत्वं समानम्, लोकप्रसिद्धेः । विशेषणानां चाजातेः ।१।२।५२ । लुबर्थस्य विशेषणानामपि तद्वल्लिङ्गवचने स्तो जातिं वर्जयित्वा । पञ्चाला रमणीयाः । गोदौ रमणीयौ । हरीतक्यादिषु व्यक्तिः *। हरीतक्याः फलानि हरीतक्यः । खलतिकादिषु वचनम् *। खलतिकस्य पर्वतस्यादूरभवानि खलतिकं वनानि । मनुष्यलुपि प्रतिषेधः *। चञ्चा अभिरूपः । वरणादिभ्यश्च, ।४।२।८२। वरणानामदूरभवं नगरं वरणाः । शर्कराया वा ।४।२।८३। ठक्छौच ।४।२।८४। कुमुदादौ वराहादौ च पाठसामर्थ्यात् पक्षे ठच्कौ । वाग्रहणसामर्थ्यात् पक्षे, औत्सर्गिकोऽण् । तस्य लुब्विकल्पः । शर्करा-शार्करम्-शार्करिकम्-शर्करीयम्-शर्करिकम्-शार्करम् । नद्यां मतुप् । ४।२।७५। इक्षुमती । मध्वादिभ्यश्च ।४।२।८६। मधुमान् । कुमुदनडवेतसेभ्यो ड्मतुप् ।४।२।८७। कुमुद्वान् । नड्वान् ।

वेतस्वान्। महिषाच्चेति वक्तव्यम् ॐ। महिष्मान्नाम देशः। नडशादाड् ड्वलच् ।४।२।८८। नड्वलः शाद्वलः। शिखाया वलच् ।४।२।८९। शिखावलम्। उत्करादिभ्यश्छः ।४।२।९०। उत्करीयः। नडादीनां कुक्च ।४।२।९१। नडकीयम्। कुञ्चा ह्रस्वत्वञ्च (ग० सू०)। कुञ्चकीयः। तक्षन्नलोपश्च (ग० सू०)। तक्षकीयः। बिल्वकादिभ्यश्छस्य लुक् ।६।४।१५३। बिल्वा यस्यां सन्ति सा बिल्वकीया। तस्यां भवा बैल्वकाः। वेत्रकीयाः वैत्रकाः। कुकोऽनिवृत्यर्थं छग्रहणम्। अन्यथा सन्नियोगशिष्टन्यायः प्रवर्तेत।

॥ इति चातुरर्थिकप्रकरणम् ॥

॥ अथ शैषिकप्रकरणम् ॥

शेषे ।४।२।९२। अपत्यादिचतुर्थ्यन्तादन्योऽर्थः शेषः। तत्राणादयः स्युः। चक्षुषा गृह्यते चाक्षुषं रूपम्। श्रावणः शब्दः। औपनिषदः पुरुषः। दृषदि पिष्टा दार्षदाः सक्तवः। उलूखले क्षुण्ण औलूखलो यावकः। अश्वैरुह्यते आश्वो रथः। चतुर्भिरुह्यते चातुरं शकटम्। चतुर्दश्यां दृश्यते चातुर्दशं रक्षः। शेषे, इति लक्षणं चाधिकारश्च। तस्य विकारः, इत्यतः प्राक् शेषाधिकारः। राष्ट्रावारपाराद्घखौ ।४।२।९३। राष्ट्रियः। अवारपारीणः। अवारपाराद्विगृहीतादपि विपरीताच्चेति वक्तव्यम् ॐ। अवारीणः। पारीणः। पारावारीणः। ग्रामाद्यखञौ ।४।२।९४। ग्राम्यः। ग्रामीणः। कत्त्र्यादिभ्यो ढकञ् ।४।२।९५। कात्त्रेयकः। नागरेयकः। ग्रामादित्यनुवृत्तेः ग्रामेयकः। कुलकुक्षिग्रीवाभ्यः श्वास्यलङ्कारेषु ।४।२।९६। कौलेयकः श्वा। कौलोऽन्यः। कौक्षेयकोऽसिः। कौक्षोऽन्यः। ग्रैवेयकोऽलङ्कारः। ग्रैवोऽन्यः। नद्यादिभ्यो ढक् ।४।२।९७। नादेयम् माहेयम्। वाराणसेयम्। दक्षिणापश्चात्पुरसस्त्यक् ।४।२।९८। दाक्षिणात्यः। पाश्चात्यः पौरस्त्यः। कापिश्याः ष्फक् ।४।२।९९। कापिशायनं मधु। कापिशायनी द्राक्षा। रङ्कोरमनुष्येऽण् च ।४।२।१००। राङ्कवो गौः। राङ्कवायणः। द्युप्रागपागुदक्प्रतीचो यत् ।४।२।१०१। दिव्यम्। प्राच्यम्। अपाच्यम्। उदीच्यम्। प्रतीच्यम्। कन्थायाष्ठक् ।४।२।१०२। कान्थिकः। वर्णौ वुक् ।४।२।१०३। वर्णु समीपदेशो वर्णुस्तद्विषयार्थवाचकन्थाशब्दाद्वुक् स्यात्। कान्थकम्। अव्ययात्त्यप् ।४।२।१०२। अमेहक्वतसित्रेभ्य एव ।ॐ। अमान्तिकसहार्थयाः। अमात्यः। इहत्यः। क्वत्यः। ततस्त्यः। तत्रत्यः। अव्ययानां भमात्रे टिलोपः ।ॐ। अनित्योऽयं बहिर्षष्टिलोपविधानात्। तेनेह न। आरातीयः। शाश्वतीयः। त्यब्नेर्ध्रुव इति वक्तव्यम् ।ॐ। नित्यः। निसो गत *। ह्रस्वात्तादौ तद्धिते ।८।३।१०१। ह्रस्वादिणः परस्य सस्य षः स्यात्तादौ तद्धिते। निर्गतो वर्णाश्रमेभ्यो निष्ट्यश्चाण्डालादिः। अरण्याण्णः ।ॐ। आरण्याः सुमनसः। दूरादेत्यः दूरेत्यः। उत्तरादाहञ् *। औत्तराहः। ऐषमोह्यः श्वसोऽन्यतरस्याम् ।४।२।१०५। ऐषमस्त्यम्। ऐषमस्तनम्, ह्यस्त्यम्। ह्यस्तनम्। श्वस्त्यम्। श्वस्तनम्। तीररूपोत्तरपदादञ्ञौ

।४।२।१०६। काकतीरम्। पाल्वलतीरम्। शैवरूप्यम्। दिक्पूर्वपदादसंज्ञायां ञः ।४।२।१०७। पौर्वशालः। मद्रेभ्योऽञ् ।४।२।१०८। पौर्वमद्रः। आपरमद्रः। उदीच्यग्रामाच्च बह्वचोऽन्तोदात्तात् ।४।२।१०९। शैवपुरम्। प्रस्थोत्तरपदपलद्यादिकोपधादण् ।४।२।११०। माहीकिप्रस्थः। पालदः। नैलीनकः। कण्वादिभ्यो गोत्रे ।४।२।१११। कण्वो गर्गादिः। कण्वस्य छात्राः काण्वाः। इञश्च ।४।२।११२। दाक्षाः। न द्व्यचः प्राच्यभरतेषु ।४।२।११३। इञश्चेत्यणोऽपवादः। प्रौष्ठीयाः। काशीयाः। वृद्धिर्यस्याचामादिस्तद्वृद्धम् ।१।१।७३। त्यदादीनि च ।१।१।७४। वृद्धसंज्ञानि स्युः। वृद्धाच्छः ।४।२।११४। शालीयः। मालीयः। तदीयः। एङ् प्राचां देशे ।१।१।७५। एङ् यस्याचामादिस्तद् वृद्धसंज्ञं वास्याद्देशाभिधाने। एणीपचनीयः। गोनर्दीयः। भोजकटीयः। पक्षेऽण, ऐणीपचनः गोनर्दः। भौजकटः। वा नामधेयस्य वृद्धसंज्ञा वक्तव्या ।*। दैवदत्तः। देवदत्तीयः। भवतष्ठक्छसौ ।४।२।११५। भावत्कः भवदीयः। काश्यादिभ्यष्ठञ्ञिठौ ।४।२।११६। काशिकी। काशिका। वैदिकी, वैदिका। आपदादिपूर्वपदात् कालान्तात् (ग० सू०)। आपत्कालिकी। आपत्कालिका। वाहीकग्रामेभ्यश्च ।४।२।११७। कास्तीरिकी—कास्तीरिका। विभाषोशीनरेषु ।४।२।११८। सौदर्शनकी सौदर्शनिका सौदर्शनीया, ओर्देशे ठञ् ।४।२।११९। नैषादकर्षुकः। दाक्षिकर्षुकः। वृद्धात्प्राचाम् ।४।२।१२०। आढकजम्बुकः। शाकजम्बुकः। धन्वयोपधाद्वुञ् ।४।२।१२१। ऐरावतं धन्व ऐरावतकः। साङ्काश्यकः। काम्पिल्यकः। प्रस्थपुरवहान्ताच्च ।४।२।१२२। मालाप्रस्थकः। नान्दीपुरकः पैलुवहकः। रोपधेतोः प्राचाम् ।४।२।१२३। पाटलिपुत्रकः। काकन्दकः। जनपदतदवध्योश्च ।४।२।१२४। आदर्शकः। त्रैगर्तकः। अवृद्धादपि बहुवचनविषयात् ।४।२।१२५। आङ्गकः। आजमीढकः। दार्वकः—कालञ्जरकः। कच्छाग्निवक्त्रवर्तोत्तरपदात् ।४।२।१२६। दारुकच्छकः। काण्डाग्नकः। सैन्धुवक्त्रकः। बाहुवर्तकः। धूमादिभ्यश्च ।४।२।१२७। धौमकः। तैर्थकः। नगरात्कुत्सनप्रावीण्ययोः ।४।२।१२८। नागरकश्चौरः शिल्पी वा। अरण्यान्मनुष्ये ।४।२।१२९। पथ्यध्यायन्यायविहारमनुष्यहस्तिष्विति वाच्यम् आरण्यकः। वा गोमयेषु ।*। आरण्यका आरण्या वा गोमयाः विभाषा कुरुयुगन्धराभ्याम् ।४।२।१३०। कौरवकः। कौरवः। यौगन्धरकः। यौगन्धरः। मद्रवृज्योः कन् ।४।२।१३१। मद्रकः। वृजिकः। कोपधादण् ।४।२।१३२। माहिषकः। कच्छादिभ्यश्च ।४।२।१३३। काच्छः। सैन्धवः। मनुष्यतत्स्थयोर्वुञ् ।४।२।१३४। काच्छको मनुष्यः। काच्छकं हसितम्। अपदातौ साल्वात् ।४।२।१३५। साल्वको ब्राह्मणः। गोयवाग्वोश्च ।४।२।१३६। साल्वका गाः। साल्विका यवागूः। गर्तोत्तरपदाच्छः ।४।२।१३७। वृकगर्तीयम्। गहादिभ्यश्च ।४।२।१३८। गहीयः। मुखपार्श्वतसोर्लोपश्च (ग० सू०) मुखतीयम्। पार्श्वतीयम्। कुग्जनस्य परस्य च (ग० सू०) जनकीयम्।

परकीयम्। देवस्य च (ग० सू०) देवकीयम्। स्वस्य च (ग० सू०) स्वकीयम्। वेणुकादिभ्यश्छण् वाच्यः (ग०सू०) वैणुकीयम्। वैत्रकीयम्। औत्तरपदकीयम्। **प्राचां कटादेः** ।४।२।१३९। कटनगरीयम्। कटघोषीयम्। कटपल्वलीयम्। **राज्ञः क च** ।४।२।१४०। राजकीयम्। **वृद्धादकेकान्तखोपधात्** ।४।२।१४१। ब्राह्मणकीयः। शाल्मलिकीयः। अयःमुखीयः। **कन्थापलदनगरग्रामह्रदोत्तरपदात्** ।४।२।१४२। दाक्षिकन्थीयम्। दाक्षिपलदीयम्। दाक्षिनगरीयम्। दाक्षिग्रामीयम्। दाक्षिह्रदीयम्। **पर्वताच्च** ।४।२।१४३। पर्वतीयः। **विभाषाऽमनुष्ये** ।४।२।१४४। पर्वतीयानि पार्वतानि वा फलानि। **कृकणपर्णाद् भारद्वाजे** ।४।२।१४५। कृकणीयम्। पर्णीयम्। **युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ् च** ।४।३।१। युवयोर्युष्माकं वाऽयं युष्मदीयः। अस्मदीयः। **तस्मिन्नणि च युष्माकास्माकौ** ।४।३।२। यौष्माकीणः। आस्माकीनः। यौष्माकः। आस्माकः। **तवकममकावेकवचने** ।४।३।३। तावकीनः। तावकः। मामकीनः। मामकः। छे तु। प्रत्ययोत्तरपदयोश्च ।७।२।९८। त्वदीयः। मदीयः। उत्तरपदे तु त्वत्पुत्रः। मत्पुत्रः। **अर्धाद्यत्** ।४।३।४। अर्ध्यः। **परावराधमोत्तमपूर्वाच्च** ।४।३।५। परार्ध्यम्। अवरार्ध्यम्। अधमार्ध्यम्। उत्तमार्ध्यम्। **दिक्पूर्वपदाट्ठञ् च** ।४।३।६। पौर्वार्धिकम्। पूर्वार्ध्यम्। **ग्रामजनपदैकदेशादञ्ठञौ** ।४।३।७। इमेऽस्माकं ग्रामस्य जनपदस्य वा। पौर्वार्धाः। पौर्वार्धिकाः। **मध्यान्मः** ।४।३।८। मध्यमः। **असाम्प्रतिके** ।४।३।९। मध्या वैयाकरणः। मध्यं दारु **द्वीपादनुसमुद्रं यञ्** ।४।३।१०। द्वैप्यम्। द्वैप्या। **कालाट्ठञ्** ।४।३।११। मासिकम्। सांवत्सरिकम्। सायंप्रातिकः। पौनःपुनिकः। **श्राद्धे शरदः** ।४।३।१२। शारदिकं श्राद्धम्। **विभाषा रोगातपयोः** ।४।३।१३। शारदिकः-शारदो वा रोग आतपो वा। **निशाप्रदोषाभ्यां च** ।४।३।१४। नैशिकम्। नैशम्। प्रादोषिकम्। प्रादोषम्। **श्वसस्तुट् च** ।४।३।१५। **द्वारादीनां च** ।७।३।४ एषां न वृद्धिरैजागमश्च। शौवस्तिकम्। **सन्धिवेलाद्यृतुनक्षत्रेभ्योऽण्** ।४।३।१६। सान्धिवेलम्। ग्रैष्मम्। तैषम्। संवत्सरात्फलपर्वणोः, (ग० सू०) सांवत्सरं फलं पर्व वा। सांवत्सरिकमन्यत्। **प्रावृष एण्यः** ४।३।१७। प्रावृषेण्यः। **वर्षाभ्यष्ठक्** ।४।३।१८। वर्षासु साधु वार्षिकं वासः। कालात्साधुपुष्प्यत्पच्यमानेषु (ग० सू०) इत्यस्यार्थे। **सर्वत्राण् च तलोपश्च** ।४।३।२२। हैमनम्। हैमन्तम्। **सायंचिरंप्राह्णेप्रगेऽव्ययेभ्यष्ट्युट्युलौ तुट् च** ४।३।२३। सायंतनम्। चिरन्तनम्। प्राह्णप्रगयोरेदन्तत्वं निपात्यते। प्राह्णेतनम्। प्रगेतनम्। दोषातनम्। दिवातनम्। चिरपरुत्परारिभ्यस्त्नो वक्तव्यः। (*)। चिरत्नम्। परुत्नम्। परारित्नम्। अग्रादिपश्चाड्डिमच्। (*) अग्रिमम्। आदिमम्। पश्चिमम्। अन्ताच्च। (*) अन्तिमम्। **विभाषा पूर्वाह्णापराह्णाभ्याम्** ।४।३।२४। पूर्वाह्णेतनम्। अपराह्णेतनम्। घकालतनेषु-इत्यलुक्। पूर्वाह्णः सोढोऽस्येति विग्रहे तु पूर्वाह्णतनम्। अपराह्णतनम्। पौर्वाह्णिकम्। आपराह्णिकम्। **तत्र जातः** ।४।३।२५। स्रौघ्नः।

औत्सः राष्ट्रियः । अवारपारीणः । प्रावृषष्ठप् ।४।३।२६। प्रावृषिकः । संज्ञायां शरदो वुञ् ।४।३।२७। शारदकाः-दर्भविशेषा मुद्गविशेषाश्च । उत्तरपदस्य ।७।३।१०। अधिकारोऽयम्, हनस्त इत्यतः प्राक् । अवयवाद्दतोः ।७।३।११। अवयववाचिनः पूर्वपदादृतुवाचिनोऽचामादेरचो वृद्धिः स्यात् ञ्णिदादौ तद्धिते। पूर्ववार्षिकः अपरहैमनः। ऋतोर्वृद्धिमद्विधाववयवानाम्, इति तदन्तविधिः। इह तु न पौर्ववर्षिकः । अवयवत्वाभावात्। सुसर्वार्धाज्जनपदस्य ।७।३।१२। उत्तरपदस्य वृद्धिः। सुपाञ्चालकः। सर्वपाञ्चालकः। अर्धपाञ्चालकः। सुसर्वार्धदिक्छब्देभ्यो जनपदस्य । ॐ । इति तदन्तविधिः। दिशोऽमद्राणाम् ।७।३।१३। पूर्वपाञ्चालकः। प्राचां ग्रामनगराणाम् ।७।३।१४। पूर्वैषुकामशमः। पूर्वपाटलिपुत्रकः। पूर्वाह्णापराह्णार्द्रामूलप्रदोषावस्कराद्वुन् ।४।३।२७। पूर्वाह्णकः। अपराह्णकः। आर्द्रकः। मूलकः। प्रदोषकः। अवस्करकः। पथः पन्थ च ।४।३।२९। पन्थकः। अमावास्याया वा ।४।३।३०। अमावास्यकः। अमावास्यः। अ च ।४।३।३१। अमावास्यः। सिन्ध्वपकराभ्यां कन् ।४।३।३२। सिन्धुकः, अपकरकः। अणञौ च ।४।३।३३। सैन्धवः। आपकरः। श्रविष्ठाफल्गुन्यनुराधास्वातितिष्यपुनर्वसुहस्तविशाखाषाढाबहुलाल्लुक् ।४।३।३४। लुक्तद्धितलुकि ।१।२।४९। उपसर्जनस्त्रीप्रत्ययस्य लुक्। श्रविष्ठः। फल्गुनः। चित्रारेवतीरोहिणीभ्यः स्त्रियामुपसंख्यानम्। चित्रा। रेवती। रोहिणी। लुकि कृते पिप्पल्यादित्वात्पुनर्ङीष्। फल्गुन्यषाढाभ्यां टानौ वक्तव्यौ।ॐ। फल्गुनी। अषाढा। श्रविष्ठाषाढाभ्यां छण्वक्तव्यः। ॐ। श्राविष्ठीयः। आषाढीयः। जे प्रोष्ठपदानाम् ।७।३।१८। उत्तरपदस्याचो वृद्धिर्ञ्णिदादौ। प्रौष्ठपादो माणवकः। भद्रपादः। स्थानान्तगोशालखरशालाच्च ।४।३।३५। गोस्थानः। गोशालः। खरशालः। वत्सशालाभिजिदश्वयुक्छतभिषजो वा ।४।३।३६। वत्सशालः। वात्सशालः। जातार्थे प्रतिप्रसूतोऽणवाऽद्वक्तव्यः। ॐ। शातभिषजः। शातभिषः। शतभिषक्। नक्षत्रेभ्यो बहुलम् ।४।३।३७। रोहिणः। रौहिणः। कृतलब्धक्रीतकुशलाः ।४।३।३८। स्रौघ्नः। प्रायभवः ।४।३।३९। स्रौघ्नः। उपजानूपकर्णोपनीवेष्ठक् ।४।३।४०। औपजानुकः। औपकर्णिकः। औपनीविकः। संभूते ।४।३।४१। स्रौघ्नः। कोशाड्ढञ् ।४।३।४२। कौशेयं वस्त्रम्। कालात्साधुपुष्प्यत्पच्यमानेषु ।४।३।४३। हैमन्तः प्राकारः। वासन्त्यः कुन्दलताः। शारदाः शालयः। उप्ते च ।४।३।४४। हैमन्ता यवाः। आश्वयुज्या वुञ् ।४।३।४५। आश्वयुजका माषाः। ग्रीष्मवसन्तादन्यतरस्याम् ।४।३।४६। ग्रैष्मकम्। ग्रैष्मम्। वासन्तम्। देयमृणे ।४।३।४७। मासिकम्। कलाप्यश्वत्थयवबुसाद्वुन् ।४।३।४८। कलापकम्। अश्वत्थकम्। यवबुसकम्। ग्रीष्मावरसमाद्वुञ् ।४।३।४९। ग्रैष्मकम्। आवरसमकम्। संवत्सराग्रहायणीभ्यां ठञ्च ।४।३।५०। सांवत्सरिकम्। सांवत्सरकम्। आग्रहायणिकम्। आग्रहायणकम्। व्याहरति मृगः ।४।३।५१। नैशो मृगः, नैशिकः। तदस्य सोढम् ।४।३।५२। नैशिकः। नैशः।

तत्र भवः ।४।३।५३। स्रुघ्ने भवः स्रौघ्नः । राष्ट्रियः । **दिगादिभ्यो यत्** ।४।३।५४। दिश्यम् । वर्ग्यम् । **शरीरावयवाच्च** ।४।३।५५। दन्त्यम् । कण्ठ्यम् । **प्राचां नगरान्ते** ।७।३।२४। उभयपदवृद्धिर्ञ्णिदादौ । सौह्मनागरः । पौण्ड्रनागरः । **जङ्गलधेनुवलजान्तस्य विभाषितमुत्तरम्** ।७।३।२५। कौरुजङ्गलम् । कौरुजाङ्गलम् । वैश्वधेनवम् । वैश्वधैनवम । सौवर्णवलजम् । सौवर्णवालजम् । **दृतिकुक्षिकलशिवस्त्यस्त्यहेर्ढञ्** ।४।३।५६। दार्तेयम् । कौक्षेयम् । कालशेयम् । **ग्रीवाभ्योऽण् च** ।४।३।५७। ग्रैवेयम् । ग्रैवम् । **गम्भीराञ्ञ्यः** ।४।३।५८। गाम्भीर्यम् । पञ्चजनादुपसंख्यानम् । ❀ । पाञ्चजन्यम् । **अव्ययीभावाच्च** ।४।३।५९। पारिमुख्यम् । परिमुखादिभ्य एवेष्यते । ❀ । **अन्तःपूर्वपदाट् ठञ्** ।४।३।६०। अव्ययीभावादित्येव । आन्तर्वेश्मिकम् । आन्तर्गणिकम् । अध्यात्मादेष्ठञिष्यते ।❀। आध्यात्मिकम् **अनुशतिकादीनां च** ।७।३।२०। उभयपदवृद्धिर्ञ्णिदादौ । आधिदैविकम । आधिभौतिकम ऐहलौकिकम् । पारलौकिकम् । **देविकाशिंशपादित्यवाड्दीर्घसत्रश्रेयसामात्** ।७।३।१। आदेरच आत् ञ्णिदादौ । दाविकम् । दाविका कूलाः शालयः । शांशपश्चमसः । पलाशादित्वादञ् । दात्यौहम् । दार्घसत्रम् । श्रायसम् । **ग्रामात्पर्यनुपूर्वात्** ।४।३।६१। पारिग्रामिकः । आनुग्रामिकः । **जिह्वामूलाङ्गुलेश्छः** ।४।३।६२। जिह्वामूलीयम् । अङ्गुलीयम् । **वर्गान्ताच्च** ।४।३।६३। कवर्गीयम् । **अशब्दे यत्खावन्यतरस्याम्** ।४।३।६४। मद्वर्ग्यः । मद्वर्गीणः । मद्वर्गीयः । **कर्णललाटात्कनलङ्कारे** ।४।३।६५। कर्णिका । ललाटिका **तस्य व्याख्यान इति च व्याख्यातव्यनाम्नः** ।४।३।६६। सुपां व्याख्यानः सौपो ग्रन्थः । तैङः । कार्तः । सुप्सु भवं सौपम् । **बह्वचोऽन्तोदात्ताट्ठञ्** ।४।३।६७। षात्वणत्विकः **क्रतुयज्ञेभ्यश्च** ।४।३।६८। आग्निष्टोमिकः । वाजपेयिकः । राजसूयिकः । पाकयज्ञिकः । नावयज्ञिकः । **अध्यायेष्वेवर्षेः** ।४।३।६९। वासिष्ठिको ऽध्यायः । **पौरोडाशपुरोडाशात्ष्ठन्** ।४।३।७०। पौरोडाशिकः । पुरोडाशिकः । **छन्दसो यदणौ** ।४।३।७१। छन्दस्यः । छान्दसः । **द्व्यजृद्ब्राह्मणर्क्प्रथमाध्वरपुरश्चरणनामाख्याताट् ठक्** ।४।३।७२। शैषिकः, पाशुकः । चातुर्होतृकः ब्राह्मणिकः । आर्चिकः । **अणृगयनादिभ्यः** ।४।३।७३। आर्गयनः । औपनिषदः वैयाकरणः । **तत आगतः** ।४।३।७४। स्रुघ्नादागतः स्रौघ्नः । **ठगायस्थानेभ्यः** ।४।३।७५। शौल्कशालिकः । **शुण्डिकादिभ्योऽण्** ।४।३।७६। शौण्डिकः । कार्कणः । तैर्थः । औदपानः । **विद्यायोनिसम्बन्धेभ्यो वुञ्** । ४ । ३ । ७७ । औपाध्यायकः । पैतामहकः । **ऋतष्ठञ्** । ४ । ३ । ७८ । हौतृकम् । भ्रातृकम् । **पितुर्यच्च** । ४ । ३ । ७९ । पित्र्यम् । पैतृकम् । **गोत्रादङ्कवत्** ४।३।८०। वैदम् । गार्गम् । दाक्षम् । औपगवकम् । **नञः शुचीश्वरक्षेत्रज्ञकुशलनिपुणानाम्** ७ । ३ । ३० । आशौचम् । अशौचम , आनैश्वर्यम् । अनैश्वर्यम् । आक्षैत्रज्ञम् । अक्षैत्रज्ञम् । आकौशलम । अकौशलम् । आनैपुणम् अनैपुणम् । **हेतुमनुष्येभ्योऽन्यतरस्यां रूप्यः** ४।३।८१ । समरूप्यम् , विषमरूप्यम् । समीयम् विषमीयम् । देवदत्तरूप्यम् , दैवदत्तम् ।

देवदत्तीयम् । मयट् च ४ । २ । ८२ । समयम् विषमयम् । देवदत्तमयम् । प्रभवति । ४ । ३ । ८३ । हैमवती गङ्गा । विदूराञ्ज्यः । ४ । ३ । ८४ । वैदूर्यो मणिः । तद्गच्छति पथिदूतयोः । ४ । ३ । ८५ स्रौघ्नः पन्था दूतो वा । अभिनिष्क्रामति द्वारम् ४ । ३ । ८६ स्रौघ्नः । अधिकृत्य कृते ग्रन्थे ४ । ३ । ८७ । शारीरकीयः । शिशुक्रन्दयमसभद्वन्द्वेन्द्रजननादिभ्यश्छः ४ । ३ । ८८ । शिशुक्रन्दीयः । यमसभीयः । किरातार्जुनीयम् । इन्द्रजननीयम् । विरुद्धभोजनीयम् ॥ सोऽस्य निवासः । ४ । ३ । ८९ । स्रौघ्नः । अभिजनश्च । ४ । ३ । ९० । स्रौघ्नः । आयुधजीविभ्यश्छः पर्वते । ४ । ३ । ९१ । ह्रद्गोलः पर्वतोऽभिजनो येषामायुधजीविनां ते ह्रद्गोलीयाः । शण्डिकादिभ्योञ्यः ४ । ३ । ९२ । शाण्डिक्यः । सिन्धुतक्षशिलादिभ्योऽणञौ । ४ ३ । ९३ । सैन्धवः । ताक्षशिलः । तुदीसलातुरवर्मतीकूचवाराड्ढक्छण्ढञ्यकः । ४ । ३ । ९४ । तौदेयः । शालातुरीयः । वार्मतेयः । कौचवार्यः । भक्तिः । ४ । ३ ९५ । स्रौघ्नः । अचित्ताददेशकालाट्ठक् । ४ । ३ । ९६ । आपूपिकः । पायसिकः । महाराजाट्ठञ् । ४ । ३ । ।९७ । माहाराजिकः । वासुदेवार्जुनाभ्यां वुन् । ४ । ३ । ९८ । वासुदेवकः । अर्जुनकः । गोत्रक्षत्रियाख्येभ्यो बहुलं वुञ् । ४ । ३ । ९९ । ग्लौचुकायनकः । नाकुलकः । जनपदिनां जनपदवत्सर्वं जनपदेन समानशब्दानां बहुवचने । ४।३। १०० । अङ्गा जनपदो भक्तिरस्य, आङ्गकः । अङ्गाः क्षत्रिया भक्तिरस्य, आङ्गकः । तेन प्रोक्तम् ।४।३।१०१। पाणिनीयम् । तित्तिरिवरतन्तुखण्डिकोखाच्छण् ।४।३।१०२। तैत्तिरीयाः । काश्यपकौशिकाभ्यामृषिभ्यां णिनिः ।४।३।१०३। काश्यपिनः । कलापिवैशम्पायनान्तेवासिभ्यश्च ।४।३।१०४। हारिद्रविणः । आलम्बिनः । पुराणप्रोक्तेषु ब्राह्मणकल्पेषु ।४।३।१०५। आल्लबिनः । शाट्य । यनिनः । पैङ्गीकल्पः । शौनकादिभ्यश्छन्दसि ।४।३।१०६। शौनकिनः । कठचरकाल्लुक् ।४।३।१०७। कठाः । चरकाः । कलापिनोऽण् ।४।३।१०८। कालापाः । नान्तस्य टिलोपे सब्रह्मचारिपीठसर्पिकलापिकौथुमितैतिलिजाजलिलाङ्गलिशिलालिशिखण्डिसूकरसद्मसुपर्वणामुपसंख्यानम् ।॥ इत्युपसंख्यानाट्टिलोपः । छगलिनो ढिनुक् ।४।३।१०९। छागलेयिनः । पाराशर्यशिलालिभ्यां भिक्षुनटसूत्रयोः ।४।३।११०। पाराशरिणो भिक्षवः । शैलालिनो नटाः । कर्मन्दकृशाश्वादिनिः ।४।३।१११। कर्मन्दिनो भिक्षवः । कृशाश्विनो नटाः । तेनैकदिक् ।४।३।११२। सौदामनी । तसिश्च ।४।३।११३। पीलुमूलतः । उरसो यच्च ।४।३।११४। उरस्यः । उरस्तः । उपज्ञाते ।४।३।११५। पाणिनीयम् । कृते ग्रन्थे ।४।३।११६। वाररुचो ग्रन्थः । संज्ञायाम् ।४।३।११७। माक्षिकं मधु । कुलालादिभ्यो वुञ् ।४।३।११८। कौलालकम् । वारुडकम् । क्षुद्राभ्रमरवटरपादपादञ् ।४।३।११९। क्षौद्रम् । भ्रामरम् वाटरम् । पादपम् । तस्येदम् ।४।३ १२०। औपगवम् । रथाद्यत् । वहेस्तुरणिट् च । संवोढुः स्वं सांवहित्रम् ।

अग्नीधःशरणेरण् भत्वं च ।*। आग्नीध्रम् । तात्स्थात्सोऽप्याग्नीध्रः । समिधामाधाने षेण्यण् ।*। सामिधेन्यो मन्त्रः । सामिधेनी ऋक् । रथाद्यत् ।४।३।१२१। रथ्यं चक्रम् । पत्रपूर्वादञ् ।४।३।१२२। आश्वरथम् । पत्राध्वर्युपरिषदश्च ।४।३।१२३। पत्राद्वाह्ये ।*। आश्वम् । आध्वर्यवम् । पारिषदम् । हलसीराट्ठक् ।४।३।१२४। हालिकम् । सैरिकम् । द्वन्द्वाद्वुन्वैरमैथुनिकयोः ।४।३।१२५। काकोलूकिका । कुत्सकुशिकिका । वैरे देवासुरादिभ्यः प्रतिषेधः ।*। दैवासुरम् गोत्रचरणाद्वुञ् ।४।३।१२६। औपगवकम् । चरणाद्धर्माम्नाययोरिति वक्तव्यम् ।*। काठकम् । सङ्घाङ्कलक्षणेष्वञ्यञिञामण् ।४।३।१२७। घोषग्रहणमपि कर्तव्यम् ।*। वैदः । वैदम् । गार्गः । गार्गम् । दाक्षः । दाक्षम् । शाकलाद्वा ।४।३।१२८। शाकलः । शाकलकः । छन्दोगौक्थिकयाज्ञिकबह्वृचनटाञ्ञ्यः ।४।३।१२९। छन्दोगानां धर्म आम्नायो वा छान्दोग्यम् । औक्थिक्यम् । याज्ञिक्यम् । बाह्वृच्यम् । नाट्यम् । चरणाद्धर्माम्नाययोः ।*। न दण्डमाणवान्तेवासिषु ।४।३।१३०। दाक्षा दण्डमाणवाः शिष्या वा । रैवतिकादिभ्यश्छः ।४।३।१३१। रैवतिकीयम् । वैजावापीयम् । कौपिञ्जलहास्तिपदादण् ।४।३।१३२। कौपिञ्जलः । हास्तिपदः । आथर्वणिकस्येकलोपश्च ।४।३।१३३। आथर्वणिकस्यायमाथर्वणो धर्म आम्नायो वा ॥

॥ इति शैषिकप्रकरणम् ॥

॥ अथप्राग्दीव्यतीयप्रकरणम् ॥

तस्य विकारः ।४।३।१३४। अश्मनो विकारे टिलोपो वक्तव्यः । अश्मनो विकार आश्मः । आश्मनः । मार्त्तिकः अवयवे च प्राण्योषधिवृक्षेभ्यः ।४।३।१३५। मायूरः । मौर्वम् पैप्पलम् । बिल्वादिभ्योऽण् ।४।३।१३६। बैल्वम् । कोपधाच्च ।४।३।१३७। तार्कवम् । तैत्तिडीकम् । त्रपुजतुनोः षुक् ।४।३।१३८। त्रापुषम् । जातुषम् । ओरञ् ।४।३।१३९। दैवदारवम् । भाद्रदारवम् । अनुदात्तादेश्च ।४।३।१४०। दाधित्थम् । कापित्थम् । पलाशादिभ्यो वा ।४।३।१४१। पालाशम् । खादिरम् । कारीरम् । शम्याः ष्लञ् ।४।३।१४२। शामीलं भस्म । शामीली स्रुक् । मयड्वैतयोर्भाषायामभक्ष्याच्छादनयोः ।४।३।१४३। अश्ममयम् । आश्मनम् । नित्यं वृद्धशरादिभ्यः ।४।३।१४४। आम्रमयम् । शरमयम् । एकाचो नित्यम् ।*। त्वङ्मयम् । वाङ्मयम् । गोश्च पुरीषे ।४।३।१४५। गोमयम् । पिष्टाच्च ।४।३।१४६। पिष्टमयम् । संज्ञायां कन् ।४।३।१४७। पिष्टकः पूपः । व्रीहेः पुरोडाशे ।४।३।१४८। व्रीहिमयः । असंज्ञायां तिलयवाभ्याम् ।४।३।१४९। तिलमयम् । यवमयम् । तालादिभ्योऽण् ।४।३।१५२। तालाद्धनुषि (ग० सू०) तालधनुः । ऐन्द्रायुधम् । जातरूपेभ्यः परिमाणे ।४।३।१५३। हाटकः तापनीयः सौवर्णो वा निष्कः । प्राणिरजता-

दिभ्योऽञ् ।४।३।१५४। शौकम् । बाकम् । राजतम् । **ञितश्च तत्प्रत्ययात्** ।४।३।१५५ शार्मीलम् । दाधित्थम् । कापित्थम् । **क्रीतवत्परिमाणात्** ।४।३।१५६। परिमाणवद् विकारेऽप्यतिदिश्यन्ते । निष्केण क्रीतं नैष्किकम् । एवं निष्कस्य विकारोऽपि नैष्किकः । शत्यः शतिकः **उष्ट्राद्वुञ्** ।४।३।१५७। औष्ट्रकः । **उमोर्णयोर्वा** ।४।३।१५८। औमकम् । औमम् । और्णकम् और्णम् । **एण्या ढञ्** ।४।३।१५९। ऐणेयम् । **गोपयसोर्यत्** ।४।३।१६०। गव्यम् । पयस्यम् । **द्रोश्च** ।४।३।१६१। द्रव्यम् । **माने वयः** ।४।३।१६२। द्रुवयम् । **फले लुक्** ।४।३।६३। आमलक्याः फलमामलकम् । **प्लक्षादिभ्योऽण्** ।४।३।१६४। प्लाक्षम् **न्यग्रोधस्य च केवलस्य** ।७।३।५। नैयग्रोधम् । **जम्ब्वा वा** ।४।३।१६५। जम्बु । **लुप् च** ।४।३।१६६। जम्ब्वाः फलं जम्बूः । फलपाकशुषामुपसंख्यानम् ।❀। व्रीहयः मुद्गाः । पुष्पमूलेषु बहुलम् । मल्लिका । जाती । विदारी । **हरीतक्यादिभ्यश्च** ।४।३।१६१। हरीतक्याः फलानि हरीतक्यः । **कंसीयपरशव्ययोर्यञञौ लुक् च** ।४।३।१६८। कांस्यम् । पारशवः ।

॥ इति प्राग्दीव्यतीयप्रकरणम् ॥

॥ अथ प्राग्वहतीयप्रकरणम् ॥

प्राग्वहतेष्ठक् ।४।४।१। तदाहेतिमाशब्दादिभ्य उपसंख्यानम् ।❀। माशब्दिकः । **स्वागतादीनां च** ।७।३।७। ऐज्न । स्वागतिकः । स्वाध्वरिकः । स्वाङ्गिः । व्याङ्गिः । व्याडिः । व्यावहारिकः । स्वापतेयम् । आहौप्रभूतादिभ्यः ।❀। प्राभूतिकः । पार्याप्तिकः । पृच्छतौ सुस्नातादिभ्यः ।❀। सौस्नातिकः । सौखशायनिकः । गच्छतौ परदारादिभ्यः ।❀। पारदारिकः । गौरुतल्पिकः । **तेन दीव्यति खनति जयति जितम्** ।४।४।२। आक्षिकः । आभ्रिकः । **संस्कृतम्** ।४।४।३। दाधिकम् । मारीचिकम् । **कुलत्थकोपधादण्** ।४।४।४। कौलत्थम् । तैत्तिडीकम् । **तरति** ।४।४।५। औडुपिकः । **गोपुच्छाट्ठञ्** ।४।४।६। गौपुच्छिकः **नौद्व्यचष्ठन्** ।४।४।७। नाविकः । घटिकः । बाहुका स्त्री । **चरति** ।४।४।८। हास्तिकः । शाकटिकः । दाधिकः । **आकर्षात्ष्ठल्** ।४।४।९। आकर्षिकः । आकर्षिकी । **पर्पादिभ्यः ष्ठन्** ।४।४।१०। पर्पिकः । पर्पिकी । अश्विकः । रथिकः । **श्वगणाट्ठञ् च** ।४।४।११। **श्वादेरिञि** ।७।३।८। ऐज्न । श्वाभस्त्रिः । श्वादंष्ट्रिः । इकारादाविति वाच्यम् ।❀। श्वागणिकः । श्वागणिकी । श्वगणिकः । श्वगणिकी । **पदान्तस्यान्यतरस्याम्** ।७।३।९। ऐज् वा । श्वापदम् । शौवापदम् । **वेतनादिभ्यो जीवति** ।४।४।१२। वैतनिकः । धानुष्कः । **वस्नक्रयविक्रयाट्ठन्** ।४।४।१३। वस्निकः । क्रयविक्रयिकः । क्रयिकः । विक्रयिकः । **आयुधाच्छ च** ।४।४।१४। आयुधीयः । आयुधिकः । **हरत्युत्सङ्गादिभ्यः** ।४।४।१५। औत्सङ्गिकः । **भस्त्रादिभ्यः ष्ठन्** ।४।४।१६।

भस्त्रिकः। भस्त्रिकी। विभाषा विवधात् ।४।४।१७। विवधिकः। वैवधिकः। एकदेश-विकृतन्यायेन-वीवधिकः। वीवधिकी। अण् कुटिलिकायाः ।४।४।१८। कौटिलिको व्याधः कर्मारश्च। निर्वृत्तेऽक्षद्यूतादिभ्यः ।४।४।१९। आक्षद्यूतिकं वैरम्। त्रेर्मम्नित्यम् ।४।४।२०। कृत्रिमम्। पक्त्रिमम्। भावप्रत्ययान्तादिमब्वक्तव्यः। *। पाकिमम्। त्यागिमम्। अपमित्ययाचिताभ्यां कक्कनौ ।४।४।२१। आपमित्यकम्। याचितकम्। संसृष्टे ।४।४।२२। दाधिकम्। चूर्णादिनिः ।४।४।२३। चूर्णिनोऽपूपाः। लवणाल्लुक् ।४।४।२४। लवणः सूपः। लवणं शाकम्। मुद्गादण् ।४।४।२५। मौद्ग ओदनः। व्यञ्जनैरुपसिक्ते ।४।४।२६। दाधिकम्। ओजःसहोम्भसा वर्तते ।४।४।२७। औजसिकः शूरः। साहसिकश्चौरः। आम्भसिको मत्स्यः। तत्प्रत्यनुपूर्वमीपलोमकूलम् ।४।४।२८। प्रातीपिकः। आन्वीपिकः। प्रातिलोमिकः। आनुलोमिकः। प्रातिकूलिकः। आनुकूलिकः। परिमुखं च ।४।४।२९। पारिमुखिकः। चात् पारिपार्श्विकः। प्रयच्छति गर्ह्यम् ।४।४।३०। द्वैगुणिकः। त्रैगुणिकः। वृद्धेर्वृधुषिभावो वक्तव्यः। *। वार्धुषिकः। कुसीददशैकादशात् ष्ठन्ष्ठचौ ।४।४।३१। कुसीदिकः। कुसीदिकी। दशैकादशिकः। दशैकादशिकी। उञ्छति ।४।४।३२। बादरिकः। रक्षति ।४।४।३३। सामाजिकः। शब्ददर्दुरं करोति ।४।४।३४। शाब्दिकः। दार्दुरिकः। पक्षिमत्स्यमृगान् हन्ति ।४।४।३५। स्वरूपस्य पर्यायाणां विशेषाणां च ग्रहणम्। *। पाक्षिकः। शाकुनिकः। मायूरिकः। मात्स्यिकः। मैनिकः। शाकुलिकः। मार्गिकः। हारिणिकः। सारङ्गिकः। परिपन्थं च तिष्ठति ।४।४।३६। पारिपन्थिकश्चौरः। परिपन्थं हन्ति पारिपन्थिकः। माथोत्तरपदपदव्यनुपदं धावति ।४।४।३७। दाण्डमाथिकः। पादविकः। आनुपदिकः। आक्रन्दाट्ठञ्च ।४।४।३८। आक्रन्दिकः। पदोत्तरपदं गृह्णाति पौर्वपदिकः। औत्तरपदिकः। प्रतिकण्ठार्थललामं च ।४।४।४०। प्रातिकण्ठिकः। आर्थिकः। लालामिकः। धर्मं चरति ।४।४।४१। धार्मिकः। अधर्माच्चेति वक्तव्यम्। *। आधर्मिकः। प्रतिपथमेति ठंश्च ।४।४।४२। प्रतिपथिकः। प्रातिपथिकः। समवायान्समवैति ।४।४।४३। सामवायिकः। सामूहिकः। परिषदो ण्यः ।४।४।४४। पारिषद्यः। सेनाया वा ।४।४।४५। सैन्याः। सैनिकाः। संज्ञायां ललाटकुक्कुट्यौ पश्यति ।४।४।४६। लालाटिकः सेवकः। कौक्कुटिको भिक्षुः। तस्य धर्म्यम् ।४।४।४७। आपणिकम्। अण् महिष्यादिभ्यः ।४।४।४८। माहिषम्। याजमानम्। ऋतोऽञ् ।४।४।४९। यात्रम्। नराच्चेति वक्तव्यम्। *। नारं। विशसितुरिड्लोपश्चाञ्च वक्तव्यः। *। वैशस्त्रम्। विभाजयितुर्णिलोपश्चाञ्च वाच्यः। *। वैभाजित्रम्। अवक्रयः ।४।४।५०। आपणिकः। तदस्य पण्यम् ।४।४।५१। आपूपिकः। लवणाट्ठञ् ।४।४।५२। लावणिकः। किसरादिभ्यष्ठन् ।४।४।५३। किसरिकः। किसरिकी। शलालुनोऽन्यतरस्याम् ।४।४।५४। शलालुकः। शलालुकी। शालालुकः। शालालुकी। शिल्पम् ।४।४।५५। मार्दङ्गिकः। मड्डुकझर्झरा-

दण्न्यतरस्याम् ।४।४।५६। माड्डुकः। माड्डुकिकः। झार्झरः। झार्झरिकः। **प्रहरणम्** ।४।४।५७। आसिकः। धानुष्कः। **परश्वधाट्ठञ् च** ।४।४।५८। पारश्वधिकः। **शक्तियष्ट्योरीकक्** ।४।४।५९। शाक्तीकः। याष्टीकः। **अस्तिनास्तिदिष्टं मतिः** ।४।४।६०। आस्तिकः। नास्तिकः। दैष्टिकः। **शीलम्** ।४।४।६१। आपूपिकः। **छत्रादिभ्यो णः** ।४।४।६२। छात्रः। **कार्मस्ताच्छील्ये** ।६।४।१७२। णे टिलोपः। कार्मः। **कर्माध्ययने वृत्तम्** ।४।४।६३। एकमन्यद्वृत्तमस्य, ऐकान्यिकः। **बह्वच्पूर्वपदाट्ठच्** ।४।४।६४। द्वादशान्यिकः। **हितं भक्षाः** ।४।४।६५। आपूपिकः। **तदस्मै दीयते नियुक्तम्** ।४।४।६६। आग्रभोजनिकः। **श्राणामांसौदनाट्टिठन्** ।४।४।६७। श्राणिकः। श्राणिकी। मांसौदनिकः। मांसिकः। ओदनिकः। **भक्तादणन्यतरस्याम्** ।४।४।६८। भाक्तः। भाक्तिकः। **तत्र नियुक्तः** ।४।४।६९। आकरिकः। **अगारान्ताट्ठन्** ।४।४।७०। देवागारिकः। **अध्यायिन्यदेशकालात्** ।४।४।७१। श्माशानिकः। चातुर्दशिकः। **कठिनान्तप्रस्तारसंस्थानेषु व्यवहरति** ।४।४।७२। वांशकठिनिकः। प्रास्तारिकः। सांस्थानिकः। **निकटे वसति** ।४।४।७३। नैकटिको भिक्षुः। **आवसथात् ष्ठल्** ।४।४।७४। आवसथिकः। आवसथिकी। "आकर्षात्पर्पादेर्भस्त्रादिभ्यः कुशीदसूत्राच्च। आवसथात् किसरादेः, षितः षडेते ठगधिकारे ॥१॥"

॥ इति ठगधिकारप्रकरणम् ॥

॥ अथ प्राग्घितीयप्रकरणम् ॥

प्राग्घिताद्यत् ।४।४।७५। अस्मै हितमित्यतः प्राग् यदधिक्रियते। **तद्वहति रथयुगप्रासङ्गम्** ।४।४।७६। रथ्यः। युग्यः। प्रासङ्ग्यः। **धुरो यड्ढकौ** ।४।४।७७। **न भकुर्छुराम्** ।८।२।७९। दीर्घो न। धुर्यः। धौरेयः। **खः सर्वधुरात्** ।४।४।७८। सर्वधुरीणः। **एकधुराल्लुक् च** ।४।४।७९। एकधुरीणः। एकधुरः। **शकटादण्** ।४।४।८०। शाकटो गौः। **हलसीराट्ठक्** ।४।४।८१। हालिकः। सैरिकः। **संज्ञायां जन्याः** ।४।४।८२। जन्या। जना वधूः। **विध्यत्यधनुषा** ।४।४।८३। पद्याः शर्कराः। **धनगणं लब्धा** ।४।४।८४। धन्यः। गण्यः। **अन्नाण्णः** ।४।४।८५। आन्नः। **वशं गतः** ।४।४।८६। वश्यः। **पदमस्मिन् दृश्यम्** ।४।४।८७। पद्यः कर्दमः। **मूलमस्याबर्हि** ।४।४।८८। मूल्या मुद्गाः। **संज्ञायां धेनुष्या** ।४।४।८९। धेनुष्या बन्धके स्थिता। **गृहपतिना संयुक्ते ञ्यः** ।४।४।९०। गार्हपत्योऽग्निः। **नौवयोधर्मविषमूलमूलसीतातुलाभ्यस्तार्यतुल्यप्राप्यवध्यानाम्यसमसमितसंमितेषु** ।४।४।९१। नाव्यम्। वयस्यः। धर्म्यम्। विष्यः। मूल्यम्। मूल्यः। सीत्यम्। तुल्यम्। **धर्मपथ्यर्थन्यायादनपेते** ।४।४।९२। धर्म्यम्। पथ्यम्। अर्थ्यम्। न्याय्यम्। **छन्दसो निर्मिते** ।४।४।९३। छन्दस्यम्। **उरसोऽण् च** ।४।४।९४।

औरसः—उरस्यः । हृदयस्य प्रियः ।४।४।९५। हृद्यो देशः । बन्धने चर्षौ ।४।४।९६ हृद्यो वशीकरणमन्त्रः । मतजनहलात्करणजल्पकर्षेषु ।४।४।९७। मत्यम् । जन्यः । हल्यः तत्र साधुः ।४।४।९८। अग्र्यः । सामन्यः । कर्मण्यः शरण्यः, प्रतिजननादिभ्यः खञ् ।४।४।९९। प्रातिजनीनः । सांयुगीनः । सार्वजनीनः । वैश्वजनीनः । भक्ताण्णः ।४।४।१००॥ भाक्ताः शालयः । परिषदो ण्यः ।४।४।१०१। पारिषद्यः। योगविभागाण्णोऽपि पारिषदः । पाठान्तरे पार्षदः । कथादिभ्यष्ठक् ।४।४।१०२ काथिकः । गुडादिभ्यष्ठञ् ।४।४।१०३। गौडिक इक्षुः । साक्तुको यवः । पथ्यतिथिवसतिस्वपतेर्ढञ् ।४।४।१०४। पाथेयम् । आतिथेयम् । वासतेयी रात्रिः । स्वापतेयं धनम् । सभाया यः ।४।४।१०५। सभ्यः । समानतीर्थेवासी ।४।४।१०७। सतीर्थ्यः । समानोदरे शयित ओ चोदात्तः ।४।४।१०८। समानोदर्यो भ्राता । सोदराद्यः ।४।४।१०९। सोदर्यः ।

॥ इति प्राग्घितीयप्रकरणम् ॥

---०❀०---

❀ ॥ अथ छयद्विधिप्रकरणम् ॥ ❀

प्राक् क्रीताच्छः ।५।१।१ ।अधिक्रियते । उगवादिभ्यो यत् । ।५।१।२। नाभिनभं च (ग० सू०) नभ्योऽक्षः । नभ्यमञ्जनम् । शुनः सम्प्रसारणं वा च दीर्घत्वम् (ग० सू०) शून्यम् । शुन्यम् । ऊधसोऽनङ् च (ग० सू०) ऊधन्यः । कम्बलाच्च संज्ञायाम् ।५।१।३। कम्बल्यम् । विभाषा हविरपूपादिभ्यः ।५।१।४। आमिक्ष्यं दधि । आमिक्षीयम् । पुरोडाश्यास्तण्डुलाः, पुरोडाशीयाः । अपूप्यम् । अपूपीयम् । तस्मै हितम् ।५।१।५। वत्सीयो गोधुक् । शङ्कव्यं दारु गव्यम् । हविष्यम् । शरीरावयवाद्यत् ।५।१।६। दन्त्यम् । कण्ठ्यम् । नस् नासिकायाः ।❀। नस्यम् । नाभ्यम् ये च तद्धिते ।६।१।६१। शिरःशब्दस्य शीर्षन्नादेशः । शीर्षण्यः । वा केशेषु ।❀। शीर्षण्याः शिरस्या वा केशाः । अचि शीर्ष इति वाच्यम् । ❀ । स्थौलशीर्षम् । खलयवमाषतिलवृषब्रह्मणश्च ।५।१।७। खल्यम् । यव्यम् । माष्यम् । तिल्यम् । वृष्यम् । ब्रह्मण्यम् । चाद्रथ्या । अजाविभ्यां थ्यन् ।५।१।८। अजथ्या यूथिः, अविथ्या । आत्मन्विश्वजनभोगोत्तरपदात्खः ।५।१।९। आत्माध्वानौ खे ।६।४।१६९। प्रकृत्या स्तः । आत्मनीनम् । विश्वजननीम् । कर्मधारयादेवेष्यते । षष्ठीतत्पुरुषाद्बहुव्रीहेश्च छ एव । विश्वजनीनम् । पञ्चजनादुपसंख्यानम् ।❀। पञ्चजनीनम् । सर्वजनाट्ठञ्खश्च ।❀। सार्वजनिकः । सर्वजनीनः । महाजनाट्ठञ् ❀ । माहाजनिकः । मातृभोगीणः । पितृभोगीणः । राजभोगीणः । आचार्यादणत्वं च (ग० स०) आचार्यभोगीनः । सर्वपुरुषाभ्यां णढञौ ।५।१।१०। सर्वाण्णो वेति वक्तव्यम् ।❀। सार्वम् । सर्वीयम् । पुरुषाद्वधविकारसमूहतेनकृतेषु ।❀। पौरुषेयः । माणवचरकाभ्यां खञ् ।५।१।११। माणवीनम् । चारकीणम् । तदर्थं विकृतेः प्रकृतौ, ।५।१।१२। अङ्गारेभ्य एतानि, अङ्गारीयाणि काष्ठानि । प्राकारीया

इष्टकाः। शङ्कव्यं दारु । छदिरुपधिबलेर्ढञ् ।५।१।१३। छादिषेयाणि तृणानि। बालेयास्तण्डुलाः। उपधिशब्दः स्वार्थे इष्यते ।*। औपधेयम्। ऋषभोपानहोर्ञ्यः ।५।१।१४। आर्षभ्यो वत्सः औपानह्यो मुञ्जः। औपानह्यं चर्म। चर्मणोऽञ् ।५।१।१५। वार्ध्रं चर्म वारत्रं चर्म। तदस्य तदस्मिन्स्यादिति ।५।१।१६। प्राकारीया इष्टकाः। प्रासादीयं दारु। प्राकारीयो देशः। परिखाया ढञ् ।५।१।१७। पारिखेयी भूमिः।

॥ इति छयतोः पूर्णोऽवधिः ॥

॥ अथ आर्हीयप्रकरणम् ॥

प्राग्वतेष्ठञ् ।५।१।१८। अधिक्रियते। आर्हादगोपुच्छसङ्ख्यापरिमाणाट्ठक् ।५।१।१९। ठञोऽपवादष्ठगधिक्रियते। असमासे निष्कादिभ्यः ।५।१।२०। आर्हादित्येतत् तेन क्रीतमिति यावत् सप्तदशसूत्र्यामनुवर्तते। नैष्ककम्। परिमाणान्तस्यासंज्ञाशाणयोः ।७।३।१७। उत्तरपदवृद्धिः स्यात् ञिदादौ। परमनैष्किकः। असमासग्रहणसामर्थ्यादतः प्राक् तदन्तविधिः। इत ऊर्ध्वं तु—संख्यापूर्वपदानां तदन्तग्रहणं प्राग्वतीष्यते तच्चालुकि *। पारायणिकः, द्वैपारायणिकः। ठञ् ।द्वैशाणिकम्। अर्धात्परिमाणस्य पूर्वस्य तु वा ।७।३।२६। अर्धद्रौणिकम्। आर्धद्रौणिकम्, नातः परस्य ।७।३।२७। परिमाणाकारस्य न वृद्धिः पूर्वपदस्य तु वा ञिदादौ। अर्धप्रस्थिकम्। आर्धप्रस्थिकम्। शताच्च ठन्यतावशते ।५।१।२१। शतकम्। शत्यम्। संख्याया अतिशदन्तायाः कन् ।५।१।२२। पञ्चकः। बहुकः। वतोरिड्वा ।५।१।२३। तावतिकः। तावत्कः। विंशतित्रिंशद्भ्यां ड्वुन्नसंज्ञायाम् ।५।१।२४। विंशकः। त्रिंशकः। कंसाट्टिठन् ।५।१।२५। कंसिकः। कंसिका। अर्धाच्चेति वक्तव्यम् *। अर्धिकः। अर्धिकी। कार्षापणाट्टिठन् वक्तव्यः प्रतिरादेशश्च वा *। कार्षापणिकः। कार्षापणिकी। प्रतिकः। प्रतिकी। शूर्पादञन्यतरस्याम् ।५।१।२६। शौर्पम्। शौर्पिकम्। शतमानविंशतिकसहस्रवसनादण् ।५।१।२७। शातमानम्। वैंशतिकम्। साहस्रम्। वासनम्। अध्यर्धपूर्वद्विगोर्लुगसंज्ञायाम् ।५।१।२८। अध्यर्धकंसम्। द्विकंसम्। विभाषा कार्षापणसहस्राभ्याम् ।५।१।२९। अध्यर्धकार्षापणम्। अध्यर्धकार्षापणिकम्। द्विकार्षापणम्। द्विकार्षापणिकम्। पक्षे–अध्यर्धप्रतिकम्। द्विप्रतिकम्। अध्यर्धसहस्रम्। अध्यर्धसाहस्रम्। द्विसहस्रम्। द्विसाहस्रम्। द्वित्रिपूर्वान्निष्कात् ।५।१।३०। द्विनिष्कम्। द्विनैष्किकम्। त्रिनिष्कम्। त्रिनैष्किकम्। बहुपूर्वाच्चेति वक्तव्यम् *। बहुनिष्कम्। बहुनैष्किकम्। बिस्ताच्च ।५।१।३१। द्विबिस्तम्। द्विबैस्तिकम्। विंशतिकात्खः ।५।१।३२। अध्यर्धविंशतिकीनम्। द्विविंशतिकीनम्। खार्या ईकन् ।५।१।३३। अध्यर्धखारीकम्। द्विखारीकम् केवलायाश्चेति वक्तव्यम् *। खारीकम्। पणपादमाषशताद्यत्

।५।१।३४। अध्यर्धपण्यम्। द्विपण्यम्। अध्यर्धपाद्यम्। द्विपाद्यम्। शाणाद्वा ।५।१।३५। अध्यर्धशाण्यम्। अध्यर्धशाणम्। द्वित्रिपूर्वादण् च ।५।१।३६। आदिवृद्धिः। द्वैशाणम्। द्विशाण्यम्। द्विशाणम्। इह ठञादयस्त्रयोदश प्रत्ययाः प्रकृतास्तेषां समर्थविभक्तयोऽर्थाश्चाकाङ्क्षितास्त इदानीमुच्यन्ते। तेन क्रीतम् ।५।१।३७। ठञ्। गौपुच्छिकम्। साप्ततिकम्। प्रास्थिकम्। ठक्। नैष्किकम्। इद्गोण्याः ।१।२।५०। पञ्चगोणिः। तस्य निमित्तं संयोगोत्पातौ ।५।१।३८। शतिकः-शत्यः-वा धनपतिसंयोगः। शतिकं-शत्यं दक्षिणाक्षिस्पन्दनम्। वातपित्तश्लेष्मभ्यः शमनकोपनयोरुपसंख्यानम् ❀। वातिकम्। पैत्तिकम्। श्लैष्मिकम्। संनिपाताच्चेति वक्तव्यम् ❀। सान्निपातिकम्। गोद्व्यचोऽसंख्यापरिमाणाश्वादेर्यत् ।५।१।३९। गव्यः। यशस्यः। स्वर्ग्यः। धन्यः। ब्रह्मवर्चसादुपसंख्यानम् ❀। ब्रह्मवर्चस्यम्। पुत्राच्छ च ।५।१।४०। पुत्रीयः। पुत्र्यः। सर्वभूमिपृथिवीभ्यामणञौ ।५।१।४१। सार्वभौमः। पार्थिवः। तस्येश्वरः ।५।१।४२ तत्र विदित इति च ।५।१।४३। सर्वभूमेरीश्वरः सर्वभूमौ विदितो वा सार्वभौमः। पार्थिवः। लोकसर्वलोकाट्ठञ् ।५।१।४४। लौकिकः। सार्वलौकिकः। तस्य वापः ।५।१।४५। प्रस्थस्य वापः प्रास्थिकम्। द्रौणिकम्। खारीकम्। पात्रात्ष्ठन् ।५।१।४६। पात्रिकम्। पात्रिकी क्षेत्रभक्तिः। तदस्मिन् वृद्ध्यायलाभशुल्कोपदा दीयते ।५।१।४७। पञ्च अस्मिन् वृद्धिः, आयः, लाभः, शुल्कम् उपदा वा दीयते पञ्चकः। शतिकः। शत्यः। साहस्रः। चतुर्थ्यर्थ उपसंख्यानम् ❀। पञ्चास्मै वृद्ध्यादिर्दीयते पञ्चको देवदत्तः। पूरणार्धाट्ठन् ।५।१।४८। द्वितीयकः। तृतीयकः। अर्धिकः। भागाद्यच्च ।५।१।४९। भाग्यं भागकं शतम्। भाग्या भागिका विंशतिः। तद्धरति वहत्यावहति भाराद्वंशादिभ्यः ।५।१।५०। वांशभारिकः। ऐक्षुभारिकः। भारभूतेभ्यो वंशादिभ्य इति व्याख्याने-वांशिकः। ऐक्षुकः। वस्नद्रव्याभ्यां ठन्कनौ ।५।१।५१। वस्निकः। द्रव्यकः। सम्भवत्यवहरति पचति ।५।१।५२। प्रास्थिकः कटाहः। प्रास्थिकी ब्राह्मणी। तत्पचतीति द्रोणादण्च ।❀। चाट्ठञ्। द्रौणी। द्रौणिकी। आढकाचितपात्रात्खोऽन्यतरस्याम् ।५।१।५३। पक्षे ठञ्। आढकीना। आढकिकी। आचितीना, आचितिकी। पात्रीणा। पात्रिकी। द्विगोः ष्ठंश्च ।५।१।५४। ष्ठन् खौ वास्तः पक्षे ठञ् तस्य लुक्। द्व्याढकिकी। द्व्याढकीना द्व्याढकी। द्व्याचितिकी। द्व्याचितीना। द्व्याचिता। द्विपात्रिकी। द्विपात्रीणा। द्विपात्री कुलिजाल्लुक्खौ च ।५।१।५५। द्विकुलिजी-द्विकुलिजीना। द्विकुलिजिकी। द्वैकुलिजिकी। सोऽस्यांशवस्नभृतयः ।५।१।५६। पञ्चकः। तदस्य परिमाणम् ।५।१।५७। प्रास्थिको राशिः। संख्यायाः संज्ञासंघसूत्राध्ययनेषु ।५।१।५८। तत्र संज्ञायां स्वार्थे प्रत्ययो वाच्यः।❀। पञ्चैव पञ्चकाः शकुनयः। सङ्घे पञ्चकः। सूत्रे-अष्टकं पाणिनीयम्। पञ्चकमध्ययनम्। स्तोमे डविधिः ।❀। पञ्चदशः स्तोमः। सप्तदशः। एकविंशः। पङ्क्तिविंशतित्रिंशच्चत्वारिंशत्पञ्चाशत्षष्टिसप्तत्यशीतिनवतिशतम् ।५।१।५९।

निपात्यन्ते । **पञ्चद्दशतौ वर्गे वा** ।५।१।६०। पञ्चद्वर्गः । दशत् । पक्षे-पञ्चकः, दशकः । **त्रिंशच्चत्वारिंशतोर्ब्राह्मणे संज्ञायां डण्** ।५।१।६२। त्रैंशानि । चात्वारिंशानि । **तदर्हति** ।५।१।६३। द्वितीयान्ताट्ठञादयः स्युः । श्वैतच्छत्रिकः । **छेदादिभ्यो नित्यम्** ।५।१।६४। छैदिको वेतसः त्रिरागविरङ्गं च [ग० सू०] वैरागिकः । **शीर्षच्छेदाद्यच्च** ।५।१।६५। शीर्षच्छेद्यः । शैर्षच्छेदिकः । शीर्षभावो निपातनात् । **दण्डादिभ्यो यत्** ।५।१।६६। दण्ड्यः । अर्घ्यः । वध्यः । **पात्राद् घंश्च** ।५।१।६८। पात्रियः । पात्र्यः । **कडङ्करदक्षिणाच्छ च** ।५।१।६९। कडङ्करीयो गौः । कडङ्कर्यः । दक्षिणीयः । दक्षिण्यः । **स्थालीबिलात्** ।५।१।७०। स्थालीबिलीयास्तण्डुलाः । स्थालीबिल्याः । **यज्ञर्त्विग्भ्यां घखञौ** ।५।१।७१। यज्ञियः । आर्त्विजीनो यजमानः । यज्ञर्त्विग्भ्यां तत्कर्मार्हतीत्युपसंख्यानम् ।*। यज्ञियो देशः । आर्त्विजीनः, ऋत्विक् ।

॥ इत्यार्हीयाणां ठगादीनां द्वादशानां पूर्णोऽवधिः ॥

॥ अथप्राग्वतीये ठञधिकारे कालाधिकारप्रकरणम् ॥

अतः परं ठञेव । **पारायणतुरायणचान्द्रायणं वर्तयति** ।५।१।७२। पारायणिकश्छात्रः तौरायणिको यजमानः, चान्द्रायणिकः । **संशयमापन्नः** ।५।१।७३। सांशयिकः । **योजनं गच्छति** ।५।१।७४। यौजनिकः । क्रोशशतयोजनशतयोरुपसंख्यानम् ।*। क्रौशशतिकः यौजनशतिकः । ततोऽभिगमनमर्हतीति च वक्तव्यम् ।*। क्रौशशतिको भिक्षुः । यौजनशतिक आचार्यः । **पथः ष्कन्** ।५।१।७५। पथिकः पथिकी । **पन्थो ण नित्यम्** ।५।१।७६। पान्थः । पान्था । **उत्तरपथेनाहृतं च** ।५।१।७७। औत्तरपथिकम् । औत्तरपथिकः । आहृतप्रकरणे वारिजङ्गलस्थलकान्तारपूर्वादुपसंख्यानम् ।*। वारिपथिकम् । **कालात्** ।५।१।७८। व्युष्टादिभ्योऽण्, इत्यतः प्रागधिकारोऽयम् । **तेन निर्वृत्तम्** ।५।१।७९। अह्ना निर्वृत्तम् आह्निकम् । **तमधीष्टोभृतोभूतोभावी** ।५।१।८०। मासमधीष्टोमासिकोऽध्यापकः मासं भृतो मासिकः कर्मकरः । मासं भूतो मासिको व्याधिः । मासं भावी मासिक उत्सवः । **मासाद् वयसि यत्खञौ** ।५।१।८१। मासं भूतो मास्यः मासीनः । **द्विगोर्यप्** ।५।१।८२। द्वौ मासौ भूतो द्विमास्यः । **षण्मासाण्ण्यच्च** ।५।१।८३। पक्षे यप्ठञौ । षाण्मास्यः । षण्मास्यः षाण्मासिकः । **अवयसि ठंश्च** ५।१।८४। षण्मासिको व्याधिः । षाण्मास्यः । **समायाः खः** ।५।१।८५। समीनः । **द्विगोर्वा** ।५।१।८६। समायाः ख इत्येव । तेन परिजय्य इत्यतः प्राक् निर्वृत्तादिषु पञ्चस्वर्थेषु प्रत्ययाः । द्विसमीनः । द्वैसमिकः । **रात्र्यहः संवत्सराच्च** ।५।१।८७। द्विरात्रीणः । द्वैरात्रिकः । द्व्यहीनः । द्वैयह्निकः । द्विसंवत्सरीणः । **संख्यायाः संवत्सरसंख्यस्य च** ।७।३।१५। उत्तरपदस्य वृद्धिः । द्विसांवत्सरिकः । द्विषाष्टिकः । **वर्षाल्लुक् च** ।५।१।८८। द्विवर्षीणो व्याधिः । द्विवर्षः । **वर्षस्याभविष्यति** ।७।३।१६। द्विवार्षिकः ।

भविष्यति तु द्वैवर्षिकः । द्वे वर्षेऽधीष्टो भृतो वा कर्म करिष्यतीति द्विवार्षिको मनुष्यः । द्वौ कुडवौ प्रयोजनमस्य द्विकौडविकः । द्वाभ्यां सुवर्णाभ्यां क्रीतं द्विसौवर्णिकम् । द्विनैष्किकम् । **चित्तवति नित्यम्** ।५।१।८९। द्विवर्षो दारकः । **षष्टिकाः षष्टिरात्रेण पच्यन्ते** ।५।१।९०। तृतीयान्तात्कन् रात्रशब्दलोपश्च निपात्यते । षष्टिको धान्यविशेषः। **तेन परिजय्यलभ्यकार्यसुकरम्** ।५।१।९३। मासेन परिजय्यो मासिको व्याधिः । मासेन लभ्यं कार्यं सुकरं वा मासिकम् । **तदस्य ब्रह्मचर्यम्** ।५।१।९४। मासिको ब्रह्मचारी । आर्धमासिकः । यद्वा प्रथमान्तादस्येत्यर्थे प्रत्ययः । मासोऽस्येति मासिकं ब्रह्मचर्यम् । महानाम्न्यादिभ्यः षष्ठ्यन्तेभ्य उपसंख्यानम् ।*। माहानाम्निकः । हरदत्तस्तु पुंवद्भावान्माहानामिकः, आह । चतुर्मासाण्ण्यो यज्ञे तत्र भव इत्यर्थे ।*। चातुर्मास्यानि यज्ञकर्माणि । अण् संज्ञायाम् ।*। चातुर्मासी आषाढी पौर्णमासी । **तस्य च दक्षिणायज्ञाख्येभ्यः** ।५।१।९५। द्वादशाहस्य दक्षिणा द्वादशाहिकी । आग्निष्टोमिकी । वाजपेयिकी । तत्र च दीयते कार्यं भववत् । प्रावृषेण्यम् । शारदम् ॥

॥ इतिप्राग्वतीये ठञधिकारे कालादित्यधिकारः ॥

॥ अथ ठञ्विधिप्रकरणम् ॥

व्युष्टादिभ्योऽण् ।५।१।९७। व्युष्टे दीयते कार्यं वा वैयुष्टम् । अग्निपदादिभ्य उपसंख्यानम् ।*। आग्निपदम् । पैलुमूलम् । **तेन यथाकथाच हस्ताभ्यां णयतौ** ।५।१।९८। याथाकथाचम् । हस्त्यम् । **सम्पादिनि** ।५।१।९९। कार्णवेष्टकिकं मुखम् । **कर्मवेषाद्यत्** ।५।१।१००। कर्मण्यं शौर्यम् । वेष्यो नटः । **तस्मै प्रभवति संतापादिभ्यः** ।५।१।१०१। सन्तापाय प्रभवति सान्तापिकः । साङ्ग्रामिकः । **योगाद्यच्च** ।५।१।१०२। चाट्ठञ् । योग्यः । यौगिकः । **कर्मण उकञ्** ।५।१।१०३। कार्मुकम् । **समयस्तदस्य प्राप्तम्** ।५।१।१०४। सामयिकम् । **ऋतोरण्** ।५।१।१०५। आर्तवम् । उपवस्त्रादिभ्य उपसंख्यानम् ।*। औपवस्त्रम् । प्राशित्रम् । **कालाद्यत्** ।५।१।१०७। काल्यं शीतम् । **प्रकृष्टे ठञ्** ।५।१।१०८। प्रकृष्टो दीर्घः कालोऽस्येति कालिकं वैरम् । **प्रयोजनम्** ।५।१।१०९। ऐन्द्रमहिकम् । **विशाखाषाढादण्मन्थदण्डयोः** ।५।१।११०। वैशाखो मन्थः । आषाढो दण्डः । चूडादिभ्य उपसंख्यानम् ।*। चौडम् । श्राद्धम् । **अनुप्रवचनादिभ्यश्छः** ।५।१।१११। अनुप्रवचनीयम् । **समापनात्सपूर्वपदात्** ।५।१।११२। व्याकरणसमापनीयः । **ऐकागारिकट् चौरे** ।५।१।११३। ऐकागारिकश्चौरः । **आकालिकडाद्यन्तवचने** ।५।१।११४। समानकालावाद्यन्तौ यस्येत्याकालिकः । समानकालस्याकाल आदेशः । आकालाट्ठंश्च ।*। आकालिका विद्युत् ।

। इतिप्राग्वतीयस्य ठञः पूर्णोऽवधिः ।

॥ अथ भावकर्मार्थाः ॥

तेन तुल्यं क्रिया चेद्वतिः ।५।१।११५। ब्राह्मणेन तुल्यं ब्राह्मणवदधीते । **तत्र तस्येव** ।५।१।११६। मथुरायामिव मथुरावत् स्रुघ्ने प्राकारः । चैत्रस्येव चैत्रवन्मैत्रस्य गावः । **तदर्हम्** ।५।१।११७। विधिमर्हति विधिवत्पूज्यते **तस्य भावस्त्वतलौ** ।५।१।११९। गोर्भावो गोत्वम् । गोता । त्वान्तं क्लीबम् । तलन्तं स्त्रियाम् । **आ च त्वात्** ।५।१।१२०। ब्रह्मणस्त्व इत्यतः प्राक्त्वतलावधिक्रियेते । अपवादैः सह समावेशार्थं गुणवचनादिभ्यः कर्मणि विधानार्थं चेदम् । चकारो नञ्स्नञ्भ्यामपि समावेशार्थः । स्त्रैणम् । स्त्रीत्वम् । स्त्रीता । पौंस्नं । पुंस्त्वम् । पुंस्ता । **न नञ्पूर्वात्तत्पुरुषादचतुरसङ्गतलवणवटयुधकतरसलसेभ्यः** ।५।१।१२१। अपतित्वम् । अपटुत्वम् । **पृथ्वादिभ्य इमनिज्वा** ।५।१।१२२। वेत्यणाद्यर्थम् । **र ऋतो हलादेर्लघोः** । ६।४।१६१। हलादेर्लघोर्ऋकारस्य रः स्यादिष्ठेमेयस्सु । **टेः** ।६।४।१५५। अस्य टेर्लोपः स्यादिष्ठेमेयस्सु । प्रथिमा । पार्थवम् । म्रदिमा । मार्दवम् । **वर्णदृढादिभ्यः ष्यञ्च** ।५।१।१२३। शौक्ल्यम् । शुक्लिमा । दार्ढ्यम् । पृथुमृदुभृशकृशदृढपरिवृढानामेव रत्वम् * । द्रढिमा । औचिती । याथाकामी । **गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च** ।५।१।१२४। चाद्भावे । जाड्यम् । मौढ्यम् । ब्राह्मण्यम् । अर्हतो नुम् । च * । आर्हन्त्यम् , आर्हन्ती । ब्राह्मणादिराकृतिगणः । **यथातथायथापुरयोः पर्यायेण** ।७।३।३१। नञः परयोरेतयोः पूर्वोत्तरपदयोः पर्यायेणादेरचोवृद्धिर्ञिति णिति किति । आयथातथ्यम् । अयाथातथ्यम् । आयथापुर्यम् । अयाथापुर्यम् । आपादसमाप्तेर्भावकर्मणोरधिकारः । चतुर्वर्णादीनां स्वार्थे उपसंख्यानम् * । चातुर्वर्ण्यम् । चातुराश्रम्यम् । त्रैस्वर्यम् । षाड्गुण्यम् । सैन्यम् । सान्निध्यम् । सामीप्यम् । औपम्यम् । त्रैलोक्यम् । सार्ववैद्यः । चतुर्वेदस्योभयपदवृद्धिश्च (ग० सू०) चातुर्वैद्यः । चतुर्विद्यस्येति पाठान्तरम् । चतुर्विद्य एव चातुर्वैद्यः । **स्तेनाद्यन्नलोपश्च** । ५।१।१२५। स्तेयम् । स्तेनादिति योगं विभज्य ष्यञि स्तैन्यमिति केचित् । **सख्युर्यः** ।५।१।१२६। सख्यम् । दूतवणिग्भ्यां च * । दूत्यम् । वणिज्यमिति काशिका । भाष्ये तु ष्यञि वाणिज्यमपि । **कपिज्ञात्योर्ढक्** ।५।१।१२७। कापेयम् । ज्ञातेयम् । **पत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक्** ।५।१।१२८। सैनापत्यम् । पौरोहित्यम् । राजाऽसे (ग० सू०) राज्यम् । **प्राणभृज्जातिवयोवचनोद्गात्रादिभ्योऽञ्** ।५।१।१२९। आश्वम् । औष्ट्रम् । कौमारम् । कैशोरम् । औद्गात्रम् । औन्नेत्रम् । सौष्ठवम् । दौष्ठवम् । **हायनान्तयुवादिभ्योऽण्** ।५।१।१३०। द्वैहायनम् । त्रैहायनम् । यौवनम् । स्थाविरम् । श्रोत्रियस्य यलोपश्च * । श्रौत्रम् । कुशलचपलनिपुणपिशुनकुतूहलक्षेत्रज्ञा युवादिषु ब्राह्मणादिषु च पठ्यन्ते । कौशल्यम् । कौशलम् । **इगन्ताच्च लघुपूर्वात्** ।५।१।१३१। शौचम् । मौनम् । ष्यञि काव्यम् । **योपधाद् गुरूपोत्तमाद्वुञ्** ।५।१।१३२। रामणीयकम् आभिधानीयकम् । सहायाद्वा * । साहाय्यम् । साहायकम् । **द्वन्द्वमनोज्ञादिभ्यश्च** ।५। १ । १३३। शैष्योपाध्यायिका । मानोज्ञकम् ।

गोत्रचरणाच्छ्लाघात्याकारतदवेतेषु ।५।१।१३४। गार्गिकया श्लाघते । गार्गिकया अत्या कुरुते । गार्गिकामवेतः । होत्राभ्यश्छः ।५।१।१३५। अच्छावाकीयम् । मैत्रावरुणीयम् । ब्रह्मणस्त्वः ।५।१।१३६। ब्रह्मत्वम् । त्ववचनं तलो बाधनार्थम् । ब्राह्मणपर्यायाद् ब्रह्मन्शब्दात्तु त्वतलौ । ब्रह्मत्वम् । ब्रह्मता ।

॥ इति नञ्स्नञधिकारप्रकरणम् ॥

॥ अथ पाञ्चमिकप्रकरणम् ॥

धान्यानां भवने क्षेत्रे खञ् ।५।२।१। मुद्गानां भवनं क्षेत्रं मौद्गीनम् । व्रीहिशाल्योर्ढक् ।५।२।२। व्रैहेयम् । शालेयम् । यवयवकषष्टिकाद्यत् ।५।२।३। यव्यम् । यवक्यम् । षष्टिक्यम् । विभाषातिलमाषोमाभङ्गाणुभ्यः ।५।२।४। तिल्यम् । तैलीनम् । माष्यम् । माषीणम् । उम्यम् । औमीनम् । भङ्ग्यम् भाङ्गीनम् । अणव्यम् । आणवीनम् । सर्वचर्मणः कृतः खखञौ ।५।२।५। सर्वचर्मीणः । सार्वचर्मीणः । यथामुखसंमुखस्य दर्शनः खः ।५।२।६। यथामुखीनः । सम्मुखीनः । तत्सर्वादेः पथ्यङ्गकर्मपत्रपात्रं व्याप्नोति ।५।२।७। सर्वपथीनः । सर्वाङ्गीणः, सर्वकर्मीणः । सर्वपत्रीणः । सर्वपात्रीणः । आप्रपदं प्राप्नोति ।५।२।८। आप्रपदीनः पटः । अनुपदसर्वान्नायानयं बद्धाभक्षयति नेयेषु ।५।२।९। अनुपदीना उपानत् । सर्वान्नीनो भिक्षुः । आयानयीनः शारः । परोवरपरम्परपुत्रपौत्रमनुभवति ।५।२।१०। परांश्चावरांश्चानुभवतीति परोवरीणः । अवरस्योत्वं निपात्यते । परांश्च परतरांश्चानुभवति परम्परीणः । प्रकृतेः परम्परभावो निपात्यते । पुत्रपौत्रीणः । अवारपारात्यन्तानुकामं गामी ।५।२।११। अवारपारीणः । अवारीणः । पारीणः । पारावारीणः । अत्यन्तीनः । अनुकामीनः । समांसमां विजायते ।५।२।१२। यलोपो विभक्तेरलुक् च पूर्वपदे निपात्यते । समांसमीना गौः । खप्रत्ययानुत्पत्तौ यलोपो वा वक्तव्यः । * । समां समां विजायते । समायां समायां वा । अद्यश्वीनावष्टब्धे ।५।२।१३। अद्यश्वीना वडवा । केचित्तु विजायत इति नानुवर्तयन्ति । अद्यश्वीनं मरणम् । आगवीनः ।५।२।१४। आगवीनः । अनुग्वलंगामी ।५।२।१५। अनुगवीनो गोपालः । अध्वनो यत्खौ ।५।२।१६। अध्वन्यः । अध्वनीनः । अभ्यमित्राच्छ च ।५।२।१७। अभ्यमित्रीयः । अभ्यमित्र्यः । अभ्यमित्रीणः । गोष्ठात्खञ्भूतपूर्वे ।५।२।१८। गौष्ठीनो देशः । अश्वस्यैकाहगमः ।५।२।१९। आश्वीनोऽध्वा । शालीनकौपीनेऽधृष्टाकार्ययोः ।५।२।२०। शालाप्रवेशमर्हति शालीनोऽधृष्टः । कूपपतनमर्हति कौपीनं पापम् । व्रातेन जीवति ।५।२।२१। व्रातीनः । साप्तपदीनं सख्यम् ।५।२।२२। सप्तभिः पदैरवाप्यते साप्तपदीनम् । हैयङ्गवीनं संज्ञायाम् ।५।२।२३। ह्यो गोदोहस्य विकारो हैयङ्गवीनम् ।

तस्य पाकमूले पील्वादिकर्णादिभ्यः कुणब्जाहचौ ।५।२।२४। पीलुकुणः । कर्णजाहम् । **पक्षात्तिः** ।५।२।२५। पक्षस्य मूलं पक्षतिः । **तेन वित्तश्चुञ्चुप्चणपौ** ।५।२।२६। विद्याचुञ्चुः। विद्याचणः । **विनञ्भ्यां नानाञौ नसह** ।५।२।२७। विना । नाना । **वेः शालच्छङ्कटचौ** ।५।२।२८। विशालम् । विशङ्कटम् । **संप्रोदश्च कटच्** ।५।२।२९। संकटम् । प्रकटम् । उत्कटम् । अलाबूतिलोमाभङ्गाभ्यो रजस्युपसंख्यानम् ।*। अलाबूकटम् । गोष्ठजादयः स्थानादिषु पशुनामभ्यः ।*। गोगोष्ठम् । संघाते कटच् ।*। अविकटः । विस्तारे पटच् ।*। अविपटः । द्वित्वे गोयुगच् ।*। वृषगोयुगम् । षट्त्वे षड्गवच् ।*। अश्वषड्गवम् । स्नेहे तैलच् ।*। तिलतैलम् । सर्षपतैलम् । भवने क्षेत्रे शाकटशाकिनौ ।*। इक्षुशाकटम् । इक्षुशाकिनम् । **अवात्कुटारच्च** ।५।२।३०। अवकुटारः । अवकटः । **नते नासिकायाः संज्ञायां टीटञ्नाटज्भ्रटचः** ।५।२।३१। नासिकायाः नतं अवटीटम् । अवनाटम् । अवभ्रटम् । तद्योगान्नासिका अवटीटा । पुरुषोऽप्यवटीटः । **नेर्बिडज्बिरीसचौ** ।५।२।३२। निबिडम् । निबिरीसम् । **इनच्पिटच्चिकचि च** ।५।२।३३। नेर्नासिकाया नतेऽभिधेये । कप्रत्ययचिकादेशौ च वक्तव्यौ ।*। चिकिनम् । चिपिटम् । चिक्कम् । क्लिन्नस्य चिल् पिल् लश्चास्य चक्षुषी ।*। क्लिन्ने चक्षुषी, अस्य चिल्लः, पिल्लः । चुल् च ।*। चुल्लः । **उपाधिभ्यां त्यकन्नासन्नारूढयोः** ।५।२।३४। उपत्यका । अधित्यका । **कर्मणि घटोऽठच्** ।५।२।३५। कर्मठः पुरुषः । **तदस्य सञ्जातं तारकादिभ्य इतच्** ।५।२।३६। तारकितं नभः । आकृतिगणोऽयम् । **प्रमाणे द्वयसज्दघ्नञ्मात्रचः** ।५।२।३७। ऊरुद्वयसम् । ऊरुदघ्नम् । ऊरुमात्रम् । प्रमाणे लः ।*। शमः । दिष्टिः । वितस्तिः । द्विगोर्नित्यम् ।*। द्विशमम् । प्रमाणपरिमाणाभ्यां संख्यायाश्चापि संशये मात्रज् वक्तव्यः ।*। शममात्रम् । प्रस्थमात्रम् । पञ्चमात्रम् । वत्वन्तात्स्वार्थे द्वयसज्मात्रचौ बहुलम् ।*। तावद्द्वयसम् । तावन्मात्रम् । **पुरुषहस्तिभ्यामण्च** ।५।२।३८। पौरुषम् । पुरुषद्वयसम् । हास्तिनम् । हस्तिद्वयसम् । **यत्तदेतेभ्यः परिमाणे वतुप्** ।५।२।३९। यावान् । तावान् । एतावान् । **किमिदंभ्यां वो घः** ।५।२।४०। कियान् । इयान् । **किमः संख्यापरिमाणे डति च** ।५।२।४१। का संख्या एषां ते कति, कियन्तः । **संख्याया अवयवे तयप्** ।५।२।४२। पञ्चतयं दारु । **द्वित्रिभ्यां तयस्यायज्वा** ।५।२।४३। द्वयम् । द्वितयम् । त्रयम् । त्रितयम् । **उभादुदात्तो नित्यम्** ।५।२।४४। उभयम् ।

॥ इतिपाञ्चमिकाः ॥

॥ अथ मत्वर्थीयप्रकरणम् ॥

तदस्मिन्नधिकमिति दशान्ताड्डः ।५।२।४५। एकादशम् । शतसहस्रयोरेवेष्यते ।*। नेह-एकादश अधिकाः अस्यां विंशतौ । प्रकृतिप्रत्ययार्थयोः समानजातीयत्वमेवेष्यते ।*। नेह—एकादश माषाः, अधिकाः, अस्मिन् सुवर्णशते । **शदन्तविंशतेश्च** ।५।२।४६

त्रिंशं शतम । विंशम् । संख्यायागुणस्य निमाने मयट् ।५।२।४७। यवानां द्वौ भागौ निमानमस्योदश्विद्भागस्य द्विमयमुदश्विद्यवानाम् ।। तस्य पूरणे डट् ।५।२।४८। एकादशः । नान्तादसंख्यादेर्मट् ।५।२।४९। डटो मडागमः । पञ्चमः । षट्कतिकतिपयचतुरां थुक् ।५।२।५१। थुगागमः स्याड्डटि । षष्ठः । कतिथः । कतिपयथः । चतुर्थः । चतुरश्छयतावाद्यक्षरलोपश्च ।*। तुरीयः। तुर्यः । बहुपूगगणसङ्घस्य तिथुक् ।५।२।५२। डटि । बहुतिथः । वतोरिथुक् ।५।२।५३। यावतिथः । द्वेस्तीयः ।५।२।५४। द्वितीयः । त्रेः संप्रसारणं च ।५।२।५५। तृतीयः । विंशत्यादिभ्यस्तमडन्यतरस्याम् ।५।२।५६। डटस्तमडागमो वा, विंशतितमः । विंशः । एकविंशतितमः । एकविंशः । नित्यं शतादिमासार्धमाससंवत्सराच्च ।५।२।५७। शततमः । एकशततमः । मासतमः । अर्धमासतमः । संवत्सरतमः । षष्ट्यादेश्चासंख्यादेः ।५।२।५८। षष्टितमः । मतौ छः सूक्तसाम्नोः ।५।२।५९। अच्छावाकीयं सूक्तम् । वारवन्तीयं साम । अध्यायानुवाकयोर्लुक् ।५।२।६०। विधानसामर्थ्याच्च विकल्पेन लुक्। गर्दभाण्डः । गर्दभाण्डीयः । विमुक्तादिभ्योऽण् ।५।२।६१। वैमुक्तः । दैवासुरः । गोषदादिभ्यो वुन् ।५।२।६२। गोषदकः । इषेत्वकः । तत्र कुशलं पथः ।५।२।६३। पथिकः । आकर्षादिभ्यः कन् ।५।२।६४। आकर्षकः । रेफरहितो मुख्यः पाठः । आकषो निकषः । धनहिरण्यात्कामे ।५।२।६५। धनको देवदत्तस्य । हिरण्यकः । स्वाङ्गेभ्यः प्रसिते ।५।२।६६। केशकः । उदराट्ठगाद्यूने ।५।२।६७। औदरिकः । सस्येन परिजातः ।५।२।६८। कन् स्यात् । सस्यकः साधुः । अंशं हारी ।५।२।६९ । अंशको दायादः । तन्त्रादचिरापहृते ।५।२।७० । तन्त्रकः पटः । ब्राह्मणकोष्णिके संज्ञायाम् ।५।२।७१। ब्राह्मणकः । उष्णिका यवागूः । अल्पान्नशब्दस्योष्णादेशो निपात्यते । शीतोष्णाभ्यां कारिणि ।५।२।७२। शीतकोऽलसः । उष्णकः शीघ्रकारी । अधिकम् ।५।२।७३। अध्यारूढशब्दात्कनुत्तरपदलोपश्च । अनुकाभिकाभीकः कमिता ।५।२।७४। कन् । अभेः दीर्घो वा । अनुकः । अभिकः। अभीकः । पार्श्वेनान्विच्छति ।५।२।७५। पार्श्वकः । अयःशूलदण्डाजिनाभ्यां ठक्ठञौ ।५।२।७६। आयःशूलिकः । दाण्डाजिनिकः । तावतिथं ग्रहणमिति लुग्वा ।५।२।७७। कन् स्यात् पूरणप्रत्ययस्य लुग्वा । द्वितीयकं द्विकं वा ग्रहणं देवदत्तस्य । तावतिथेन गृह्णातीति कन् वक्तव्यो नित्यं च लुक् ।*। षट्को देवदत्तः, पञ्चकः । स एषां ग्रामणीः ।५।२।७८। देवदत्तकाः । त्वत्काः । मत्काः । शृङ्खलमस्य बन्धनं करभे ।५।२।७९। शृङ्खलकः करभः । उत्क उन्मनाः ।५।२।८०। उत्कः, उत्कण्ठितः, कालप्रयोजनाद्रोगे ।५।२।८१। द्वितीयेऽहनि भवो द्वितीयको ज्वरः । विषपुष्पैर्जनितो विषपुष्पकः । उष्णं कार्यमस्योष्णकः । तदस्मिन्नन्नं प्रायेण संज्ञायाम् ।५।२।८२। गुडापूपाः प्रायेणान्नमस्यां गुडापूपिका पौर्णमासी । वटकेभ्य इनिर्वाच्यः ।*। वटकिनी-

कुल्माषादञ् ।५।२।८३। कौल्माषी । **श्रोत्रियंश्छन्दोऽधीते** ।५।२।८४। श्रोत्रियः । वेत्यनुवृत्तेश्छान्दसः । **श्राद्धमनेन भुक्तमिनिठनौ** ।५।२।८५। श्राद्धी । श्राद्धिकः । **पूर्वादिनिः** ।५।२।८६। पूर्वं कृतमनेन पूर्वी । **सपूर्वाच्च** ।५।२।८७। कृतपूर्वी कटम् । **इष्टादिभ्यश्च** ।५।२।८८। इष्टी, अधीती, **छन्दसि परिपन्थिपरिपरिणौ पर्यवस्थातरि** ।५।२.८९। **अनुपद्यन्वेष्टा** ।५।२।९०। अनुपदमन्वेष्टा गवामनुपदी । **साक्षाद्द्रष्टरि संज्ञायाम्** ।५।२।९१। साक्षी । **क्षेत्रियच् परक्षेत्रे चिकित्स्यः** ।५.२.९२। क्षेत्रियो व्याधिः । शरीरान्तरे चिकित्स्यः **इन्द्रियमिन्द्रलिङ्गमिन्द्रदृष्टमिन्द्रसृष्टमिन्द्रजुष्टमिन्द्रदत्तमिति वा** ।५।२।९३। इन्द्रेण दुर्जयमिन्द्रियम् । **तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्** ।५।२।९४। गावोऽस्यास्मिन्वा सन्ति गोमान् ।

॥ भूमनिन्दाप्रशंसासु नित्ययोगेऽतिशायने ।

संसर्गेऽस्तिविवक्षायां भवन्ति मतुबादयः ॥

रसादिभ्यश्च ।५।२।९५। रसवान् । रूपवान् । अन्यमत्वर्थीयनिवृत्यर्थम् । गुणात् (ग० सू०) एकाचः । (ग० सू०) स्ववान् । **तसौ मत्वर्थे** ।१।४।१९। तान्तसान्तौ भसंज्ञौ स्तो मत्वर्थे प्रत्यये परे । विदुष्मान् । गुणवचनेभ्यो मतुपो लुगिष्टः॥ शुक्लः पटः । कृष्णः **मादुपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्यः** ।८।२।९। मवर्णावर्णान्तान्मवर्णावर्णोपधाच्च यवादिवर्जात्परस्य मतोर्मस्य वः स्यात् । किंवान् । ज्ञानवान् । विद्यावान् । लक्ष्मीवान् । यशस्वान् । भास्वान् । **झयः** ।८।२,१०। झयन्तान्मतोर्मस्य वः । विद्युत्वान् । **संज्ञायाम्** ।८।२।११। मतोर्मस्य वः । अहीवती । मुनीवती । **आसन्दीवदष्ठीवच्चक्रीवत्कक्षीवद्रुमण्वच्चर्मण्वती** ।८।२।१२। संज्ञायां निपात्यन्ते । आसनशब्दस्यासन्दीभावः । आसन्दीवान् ग्रामः । अस्थिशब्दस्याष्ठीभावः । अष्ठीवान् । चक्रस्य चक्रीभावः । चक्रीवान्नाम राजा । कक्ष्यायाः सम्प्रसारणम् । कक्षीवान्नामर्षिः । लवणस्य रुमण्भावः । रुमण्वान्नाम पर्वतः । चर्मणो नलोपाभावो णत्वं च । चर्मण्वतीनाम नदी । **उदन्वानुदधौ च** ।८।२।१३। उदकस्योदन्भावो मतावुदधौ संज्ञायां च । उदन्वान्, समुद्रः । ऋषिश्च । **राजन्वान्सौराज्ये** ।८।२।१४। राजन्वती भूः । **प्राणिस्थादातो लजन्यतरस्याम्** ।५।२।९६। चूडालः । चूडावान् । **सिध्मादिभ्यश्च** ।५।२।९७। सिध्मलः । सिध्मवान् । वातदन्तबलललाटानामूङ्च (ग० सू०) वातूलः । **वत्सांसाभ्यां कामबले** ।५।२।९८। वत्सलः । अंसलः । **फेनादिलच्च** ।५।२।९९। फेनिलः । फेनलः । फेनवान् । **लोमादिपामादिपिच्छादिभ्यः शनेलचः** ।५।२।१००। लोमशः । लोमवान् । रोमशः । रोमवान् । पामनः । अङ्गात्कल्याणे (ग० सू०) अङ्गना लक्ष्म्या अच (ग० सू०) लक्ष्मणः । विष्वगित्युत्तरपदलोपश्चाकृतसन्धेः॥ । विषुणः । पिच्छिलः । पिच्छवान् । उरसिलः । उरस्वान् । **प्रज्ञाश्रद्धार्चाभ्यो णः** । प्राज्ञो व्याकरणम् । प्राज्ञा । श्राद्धः । आर्चः । वृत्तेश्च॥ वार्तः । **तपःसहस्राभ्यां विनीनी** ।५।२।१०२। तपस्वी । सहस्री । **अण् च** ।५।२।१०३। योगविभाग उत्तरार्थः ।

तापसः । साहस्रः । ज्योत्स्नादिभ्य उपसंख्यानम् ॐ। ज्यौत्स्नः । तामिस्रः । **सिकताशर्कराभ्यां च** ।५।२।१०४। सैकतो घटः । शार्करः । **देशे लुबिलचौ च** ।५।२।१०५। सिकताः । सिकतिलः । सैकतः । सिकतावान् । एवं शर्करेत्यादि । **दन्त उन्नत उरच्** ।५।२।१०६। दन्तुरः । **ऊषसुषिमुष्कमधो रः** ।५।२।१०७। ऊषरः । सुषिरः । मुष्करः । मधुरः । रप्रकरणे खमुखकुञ्जेभ्य उपसंख्यानम् । ॐ । खरः । मुखरः । कुञ्जरः । नगपांसुपाण्डुभ्यश्च ॐ । नगरम् । पांसुरः । पाण्डुरः । कच्छ्वा ह्रस्वत्वञ्च ॐ । कच्छुरः । **द्युद्रुभ्यां मः** ।५।२।१०८। द्युमः । द्रुमः । **केशाद्वोऽन्यतरस्याम्** ।५।२।१०९। केशवः । केशी, केशिकः । केशवान् । अन्येभ्योऽपि दृश्यते ॐ । मणिवः । हिरण्यवः । अर्णसो लोपश्च ॐ। अर्णवः । **गाण्डयजगात्संज्ञायाम्** ।५।२।११०। गाण्डिवम् । गाण्डीवम् । अजगवं । **काण्डाण्डादीरन्नीरचौ** ।५।२।१११। काण्डीरः । आण्डीरः । **रजःकृष्यासुतिपरिषदो वलच्** ।५।२।११२। रजस्वला स्त्री । कृषीवलः । आसुतीवलः । परिषद्वलः । पर्षदिति पाठान्तरम् । पर्षद्वलम् । अन्येभ्योऽपि दृश्यते ॐ । भ्रातृवलः । पुत्रवलः । शत्रुवलः । **दन्तशिखात्संज्ञायाम्** ।५।२।११३। दन्तावलो हस्ती । शिखावलः केकी । **ज्योत्स्नातमिस्राशृङ्गिणोर्जस्विन्नूर्जस्वलगोमिन्मलिनमलीमसाः**, ।५।२।११४। मत्वर्थे निपात्यन्ते । ज्योतिष उपधालोपो नश्च प्रत्ययः । ज्योत्स्ना । तमस उपधाया इत्वं रश्च । तमिस्रा । तमिस्रम् । शृङ्गादिनच् । शृङ्गिणः । ऊर्जसो बलच । विनिरपि । ऊर्जस्वी । ऊर्जस्वलः । गोशब्दान्मिनिः । गोमी । मलशब्दादिनच् । मलिनः । ईमसच । मलीमसः । **अत इनिठनौ** ।५।२।११५। दण्डी । दण्डिकः । **व्रीह्यादिभ्यश्च** ।५।२।११६। व्रीही । व्रीहिकः । न च सर्वेभ्यो व्रीह्यादिभ्य इनिठनाविष्येते । किं तर्हि । शिखा मलसंज्ञादिभ्य इनिः, यवखलादिभ्य इकः ॐ। अन्येभ्य उभयम् । **तुन्दादिभ्य इलच्च** ।५।२।११७। तुन्दिलः । तुन्दी । तुन्दिकः । तुन्दवान् । स्वाङ्गाद्विवृद्धौ (ग० सू०) कर्णिलः । कर्णी । कर्णिकः । कर्णवान् । **एकगोपूर्वाट्ठञ् नित्यम्** ।५।२।११८। ऐकशतिकः । ऐकसहस्रिकः । गौशतिकः । गौसहस्रिकः । शतसहस्रान्ताच्च निष्कात् । नैष्कशतिकः । नैष्कसहस्रिकः । **रूपादाहतप्रशंसयोर्यप्** ५।२।१२० रूप्यः कार्षापणः । रूप्यो गौः । अन्येभ्योऽपि दृश्यते ।ॐ। हिम्याः पर्वताः । गुण्याः ब्राह्मणाः। **अस्मायामेधास्रजो विनिः** ।५।२।१२१। यशस्वी । यशस्वान् । मायावी । व्रीह्यादित्वादिनिठनौ । मायी । मायिकः । स्रग्वी । आमयस्योपसंख्यानं दीर्घश्च ।ॐ। आमयावी । शृङ्गवृन्दाभ्यामारकन् ।ॐ। शृङ्गारकः । वृन्दारकः । फलबर्हाभ्यामिनच् ।ॐ। फलिनः, बर्हिणः। हृदयाच्चालुरन्यतरस्याम् ।ॐ। हृदयालुः । हृदयी । हृदयिकः । हृदयवान् । शीतोष्णतृप्रेभ्यस्तदसहने ।ॐ। शीतालुः । उष्णालुः । तृप्रालुः । हिमाच्चेलुः ।ॐ। हिमेलुः । बलादूलः ।ॐ। बलूलः । वातात्समूहे ।ॐ। वातूलः । तत्पर्वमरुद्भ्याम् ।ॐ। पर्वतः । मरुत्तः । **ऊर्णाया युस्** ।५।२।१२३। ऊर्णायुः **वाचो ग्मिनिः** ।५।२।१२४। वाग्मी । **आलजाटचौब-**

हुभाषिणि ।५।२।१२५। कुत्सित इति वक्तव्यम् ।*। वाचालः । वाचाटः। **स्वामिन्नैश्वर्ये** ।५।२।१२६। स्वामी, **अर्श आदिभ्योऽच्** ।५।२।१२७। अर्शसः । आकृतिगणोऽयम् । **द्वन्द्वोपतापगर्ह्यात्प्राणिस्थादिनिः** । ५।२।१२८। कटकवलयिनी । शङ्खनूपुरिणी । कुष्ठी। किलासी । ककुदावर्ती । काकतालुकिनी । **वातातीसाराभ्यां कुक्च** ।५।२।१२९। वातकी। अतीसारकी । 'रोगे चायमिष्यते' । पिशाचाच्च * पिशाचकी । **वयसि पूरणात्** ।५।२।१३०। मासः संवत्सरो वा पञ्चमोऽस्यास्तीति पञ्चमी। **सुखादिभ्यश्च** ।५।२।१३१ सुखी । दुःखी। मालाक्षेपे (ग० सू०) माली । **धर्मशीलवर्णान्ताच्च** ।५।२।१३२। ब्राह्मणधर्मी। ब्राह्मणशीली । ब्राह्मणवर्णी । **हस्ताज्जातौ** ५।२।१३३। हस्ती । **वर्णाद्ब्रह्मचारिणि** ।५।२।१३४। वर्णी । **पुष्करादिभ्यो देशे** ।५।२।१३५। पुष्करिणी । पद्मिनी । बाहूरुपूर्वपदाद्बलात् ।*। बाहुबली । ऊरुबली । सर्वादेश्च ।*। सर्वधनी । सर्वबीजी । अर्थाच्चासन्निहिते ।*। अर्थी । तदन्ताच्च ।*। धान्यार्थी । हिरण्यार्थी । **बलादिभ्यो मतुबन्यतरस्याम्** ।५।२। १३६। बलवान् । बली । उत्साहवान् । उत्साही । **संज्ञायां मन्माभ्याम्** ।५।२।१३७। मन्नन्तान्मान्ताच्चेनिर्मत्वर्थे । प्रथिमिनी । दामिनी । होमिनी । सोमिनी । **कंशंभ्यां बभयुस्तितुतयसः** ।५।२।१३८। कंवः । कंभः । कंयुः । कंतिः । कंतुः । कंतः । कंयः । शंवः । शंभः । शंयुः । शंतिः । शंतुः । शंतः । शंयः । **तुन्दिवलिवटेर्भः** ।५।२।१३९। तुन्दिभः । वलिभः । वटिभः । पामादित्वाद्वलिनोऽपि । **अहंशुभमोर्युस्** ।५।२।१४०। अहंयुः, अहङ्कारवान् । शुभंयुः शुभान्वितः ।

* इति मत्वर्थीयप्रकरणम् *

॥ अथ प्राग्दिशीयप्रकरणम् ॥

प्राग्दिशो विभक्तिः ।५।३।१। दिक्छब्देभ्य इत्यतः प्राग्वक्ष्यमाणाः प्रत्ययाः, विभक्तिसंज्ञाः स्युः । अथ स्वार्थिकाः प्रत्ययाः । 'समर्थानाम्, इति 'प्रथमादिति च निवृत्तम्। वा, इति त्वनुवर्तत एव । **किंसर्वनामबहुभ्योऽद्व्यादिभ्यः** ।५।३।२। एभ्यः प्राग्दिशोऽधिक्रियते । **इदम इश्** ।५।३।३। **एतेतौ रथोः** ।५।३।४। इशोऽपवादः । **एतदोऽन्** ।५।३।५। योगविभागः कर्तव्यः । एतदः, एतेतौ स्तो रथोः । अन् । एतद इत्येव । **सर्वस्य सोऽन्यतरस्यां दि** ।५।३।६। **पञ्चम्यास्तसिल्** ।५।३।७। **कुतिहोः** ।७।२।१०४। किमः कुः स्यात्तादौ हादौ च विभक्तौ परतः । कुतः । कस्मात् । यतः । ततः । अतः । इतः । अमुतः । बहुतः । **तसेश्च** ।५।३।८। तसेस्तसिलादेशः स्यात् । **पर्यभिभ्यां च** ।५।३।९। आभ्यां तसिल् स्यात् । सर्वोभयार्थाभ्यामेव ।*। परितः सर्वत इत्यर्थः, अभितः, उभयत इत्यर्थः। **सप्तम्यास्त्रल्** ।५।३।१०। कुत्र । यत्र । बहुत्र । **इदमो हः** ।५।३।११। त्रलोऽपवादः । इशादेशः।

इह । किमोऽत् ।५।३।१२। सप्तम्यन्तात् किमोऽद्वा स्यात् । क्वाति ।७।२।१०५। किमः कादेशः स्यादति । क । कुत्र । वाह च च्छन्दसि ।५।३।१३। कुहस्थः । कुहजग्मथुः । एतदस्त्रतसोस्त्रतसौ चानुदात्तौ ।२।४।३३। अन्वादेशविषये, एतदोऽश् स्यात्सचानुदात्तस्त्रतसोः परतः तौ चानुदात्तौ स्तः । एतस्मिन् ग्रामे सुखं वसामः । अतोऽत्राधीमहे । अथो न गन्तारः स्मः । इतराभ्योऽपि दृश्यन्ते ।५।३।१४। दृशिग्रहणाद्भवदादियोग एव ।*। सभ्वान् । ततोभवान् । तत्रभवान् । तंभवन्तम् । ततोभवन्तम् । तत्रभवन्तम् । एवं दीर्घायुः । देवानां प्रियः । आयुष्मान् । सर्वैकान्यकिंयत्तदः काले दा ।५।३।१५ सदा । सर्वदा ! एकदा । अन्यदा । कदा यदा । तदा । इदमोर्हिल् ।५।३।१६। एतर्हि । अधुना ।५।३।१७। अधुना । दानीं च ।५।३।१८। इदानीम् तदो दा च ।५।३।१६। तदा । तदानीम् । तदो दावचनमनर्थकं विहितत्वात् ।*। अनद्यतने र्हिलन्यतरस्याम् ।५।३।२१। कर्हि, कदा । यर्हि । यदा । तर्हि । तदा । एतर्हि । सद्यः परुत्परार्यैषमः परेद्यव्यद्य पूर्वेद्युरन्येद्युरन्यतरेद्युरितरेद्युरपरेद्युरधरेद्युरुभयेद्युरुत्तरेद्युः ।५।३।२२। एते निपात्यन्ते समानस्य सभावो द्यश्चाहनि ।*। समानेऽहनि सद्यः । पूर्वपूर्वतरयोः परभाव उदारी च संवत्सरे ।*। पूर्वस्मिन् वत्सरे परुत् । पूर्वतरे वत्सरे परारि । इदम इश् समसण ।*। अस्मिन्संवत्सरे, ऐषमः । परस्मादेद्यव्यहनि ।*। परस्मिन्नहनि परेद्यवि । इदमोऽश्भावो द्यश्च ।*। अस्मिन्नहनि, अद्य । पूर्वान्यान्यतरेतरापराधरोभयोत्तरेभ्य एद्युस् च ।*। पूर्वस्मिन्नहनि पूर्वेद्युः । अन्यस्मिन्नहनि, अन्येद्युः । उभयोरह्नोरुभयेद्युः । द्युश्चोभयाद्वक्तव्यः ।*। उभयेद्युः । प्रकारवचने थाल् ।५।३।२३। तेन प्रकारेण तथा । यथा । इदमस्थमुः ।५।३।२४। एतदो वाच्यः ।*। अनेन एतेन वा प्रकारेण, इत्थम् । किमश्च ।५।३।२५। केन प्रकारेण कथम् ॥

॥ इतिप्राग्दिशीयप्रकरणम् ॥

॥ अथप्रागिवीयप्रकरणम् ॥

दिक्शब्देभ्यः सप्तमीपञ्चमीप्रथमाभ्यो दिग्देशकालेष्वस्तातिः ।५।३।२७ स्वार्थे, स्तातिः । पूर्वाधरावराणामसि पुरधवश्चैषाम् ।५।३।३६। अस्तातिच ।५।३।४०। पूर्वादीनां पुरादयः स्युः । पूर्वस्यां पूर्वस्याः पूर्वा वा दिक् पुरः । पुरस्तात् । अधः । अधस्तात् । अवः । विभाषाऽवरस्य ।५।३।४१। अस्तातौ परे । अव् वा स्यात् । अवस्तात् । अवरस्तात् । एवं देशे काले च । दक्षिणोत्तराभ्यामतसुच् ।५।३।२८। दक्षिणतः । उत्तरतः । विभाषपरावराभ्याम् ।५।३।२६। परतः । अवरतः । परस्तात् । अवरस्तात् । अञ्चेर्लुक् ।५।३।३०। अञ्चत्यन्तादिक्शब्दादस्तातेर्लुक्स्यात् । प्राच्यां प्राची वा दिक् । प्राक् उदक् । एवं देशे काले च । उपर्युपरिष्टात् ।५।३।३१। अस्तातेर्विषये ऊर्ध्वशब्दस्योपादेशः स्याद्रिलिरिष्टातिलौच प्रत्ययौ । उपरि-उपरिष्टाद्वा वसति । पश्चात् ।५।३।३२। अपरस्य पश्चभाव आतिश्च

प्रत्ययोऽस्तातेर्विषये । उत्तराधरदक्षिणादातिः ।५।३।३४ उत्तरात् । अधरात् । दक्षिणात् । एनबन्यतरस्यामदूरेऽपञ्चम्याः ।५।३।३५। उत्तरेण । अधरेण । दक्षिणेन । केचित्तु दिक्शब्दमात्रादेनपमाहुः । पूर्वेण ग्रामम् । अपरेण ग्रामम् । दक्षिणादाच् ।५।३।३६। दक्षिणा वसति । आहि च दूरे ।५।३।३७। दक्षिणाहि । दक्षिणा । उत्तराच्च ।५।३।३८। उत्तराहि । उत्तरा । संख्याया विधार्थे धा ।५।३।४२। चतुर्धा । पञ्चधा । अधिकरणविचाले च ।५।३।४३। एकं राशिं पञ्चधा कुरु । एकाद्धो ध्यमुञन्यतरस्याम् ।५।३।४४। ऐकध्यम् । एकधा । द्वित्र्योश्च धमुञ् ।५।३।४५। द्वैधम् । द्विधा त्रैधम् । त्रिधा । धमुञन्तात्स्वार्थे डदर्शनम् ।*। पथि द्वैधानि । एधाच्च ।५।३।४६। द्वेधा । त्रेधा । याप्ये पाशप् ।५।३।४७। भिषक्पाशः । पूरणाद्भागे तीयादन् ।५।३।४८। द्वितीयः । तृतीयः । तीयादीकक् स्वार्थे वा वाच्यः ।*। द्वैतीयीकः । द्वितीयः । तार्तीयीकः । तृतीयः । न विद्यायाः ।*। द्वितीया तृतीया विद्या । प्रागेकादशभ्योऽच्छन्दसि ।५।३।४९। चतुर्थः । पञ्चमः । षष्ठाष्टमाभ्यां ञ च ।५।३।५०। षष्ठो भागः षाष्ठः । षष्ठः । आष्टमः । अष्टमः । मानपश्वङ्गयोः कन्लुकौ च ।५।३।५१। षष्ठको भागो मानं चेत् । अष्टमो भागः पश्वङ्गं चेत् । अस्याऽनो वा लुक् । चकाराद्यथाप्राप्तम् । षष्ठः । षाष्ठः । अष्टमः । आष्टमः । एकादाकिनिच्चासहाये ।५।३।५२। चात्कन्लुकौ । एकाकी । एककः । एकः । भूतपूर्वे चरट् ।५।३।५३। आढ्यचरः । षष्ठ्या रूप्य च ।५।३।५४। कृष्णरूप्यः । कृष्णचरः । शुभ्रारूप्यः । अतिशायने तमबिष्ठनौ ।५।३।५५। अयमेषामतिशयेनाढ्य आढ्यतमः । लघुतमः—लघिष्ठः । तिङश्च ।५।३।५६। तरप्तमपौ घः ।१।१।२२। किमेत्तिङव्ययघादाम्वद्रव्यप्रकर्षे ।५।४।११। किंतमाम् । प्राह्णेतमाम् । पचतितमाम् । उच्चैस्तमाम् । द्विवचनविभज्योपपदे तरबीयसुनौ ।५।३।५७। अयमनयोरतिशयेन लघुर्लघुतरः । लघीयान् । उदीच्याः प्राच्येभ्यः पटुतराः । पटीयांसः । अजादी गुणवचनादेव ।५।३।५८। प्रथिष्ठः । प्रथीयान् । तुश्छन्दसि ।५।३।५९। तुरिष्ठेमेयःसु ।६।४।१५४। तृशब्दस्य लोपः स्यात्, अतिशयेन कर्ता करिष्ठः । दोहीयसी धेनुः । प्रशस्यस्य श्रः ५।३।६०। प्रकृत्यैकाच् ।६।४।१६३। श्रेष्ठः । श्रेयान् । ज्य च ।५।३।६१। ज्येष्ठः । ज्यादादीयसः ।६।४।१६०। ज्यायान् । वृद्धस्य च ।५।३।६२। ज्येष्ठः । ज्यायान् । अन्तिकबाढयोर्नेदसाधौ ।५।३।६३। नेदिष्ठः । नेदीयान् । साधिष्ठः । साधीयान् । स्थूलदूरयुवह्रस्वक्षिप्रक्षुद्राणां यणादिपरं पूर्वस्य च गुणः ।६।४।१५६। स्थविष्ठः । दविष्ठः । यविष्ठः । ह्रसिष्ठः । क्षेपिष्ठः । क्षोदिष्ठः । एवमीयस् । पृथ्वादित्वात् ह्रसिमा । क्षेपिमा । क्षोदिमा । प्रियस्थिरस्फिरोरुबहुलगुरुवृद्धतृप्रदीर्घवृन्दारकाणां प्रस्थस्फवर्बंहिगर्वर्षित्रब्द्राघिवृन्दाः ।६।४।१५७। प्रेष्ठः । स्थेष्ठः । स्फेष्ठः । वरिष्ठः । बंहिष्ठः । गरिष्ठः । वर्षिष्ठः । त्रपिष्ठः द्राघिष्ठः । वृन्दिष्ठः । एवमीयसुन् । पृथ्वादित्वात् प्रेमा । बहोर्लोपो भू च बहोः ।६।४।१५८। भूमा । भूयान् । इष्ठस्य यिट् च ।६।४।१५९। भूयिष्ठः । युवाल्पयोः

कनन्यतरस्याम् ।५।३।६४। कनिष्ठः । कनीयान् । पक्षे–यविष्ठः । अल्पिष्ठः । विन्मतोर्लुक् ।५।३।६५। स्रजिष्ठः । स्रजीयान् । त्वचिष्ठः । त्वचीयान् । प्रशंसायां रूपप् ।५।३।६६। प्रशस्तः पटुः पटुरूपः । पचतिरूपम् । ईषदसमाप्तौ कल्पब्देश्यदेशीयरः ।५।३।६७। ईषदूनो विद्वान् विद्वत्कल्पः । यशस्कल्पम् । यजुष्कल्पम् । विद्वद्देश्यः । विद्वद्देशीयः । पचतिकल्पम् । विभाषा सुपो बहुच्पुरस्तात्तु ।५।३।६८। ईषदूनः पटुर्बहुपटुः । पटुकल्पः। प्रकारवचने जातीयर् ।५।३।६९। पटुप्रकारः । पटुजातीयः । प्रागिवात्कः ।५।३।७०। इवे प्रतिकृतौ–इत्यतः प्राक्काधिकारः । अव्ययसर्वनाम्नामकच्प्राक्टेः ।५।३।७१। तिङश्चेत्यनुवर्तते । कस्य च दः ।५।३।७२। अज्ञाते ।५।३।७३। कस्यायमश्वोऽश्वकः । उच्चकैः । नीचकैः । सर्वके । विश्वके । ओकारसकारभकारादौ सुपि सर्वनाम्नष्टेः प्रागकच्, अन्यत्र तु सुबन्तस्य टेः प्रागकच् ।॥ युवकयोः । आवकयोः। युष्मकासु । अस्मकासु । युष्मकाभिः। अस्मकाभिः । अकच्प्रकरणे तूष्णीमः काम् वक्तव्यः ।॥ तूष्णीकामास्ते । शीले को मलोपश्च ।॥ तूष्णीकः । पचतकि । जल्पतकि । धकित् । हिरकुत् । कुत्सिते ।५।३।७४। अश्वकः । संज्ञायां कन् ।५।३।७५। शूद्रकः । राधकः, अनुकम्पायाम् ।५।३।७६। पुत्रकः । नीतौ च तद्युक्तात् ।५।३।७७। हन्त ते धानकाः । गुडकाः । एहकि । अद्धकि । पूर्वेणानुकम्प्यमानात्प्रत्ययः । बह्वचो मनुष्यनाम्नष्ठज्वा ।५।३।७८। पूर्वसूत्रद्वयविषये । घनिलचौ च ।५।३।७९। तत्रैव । ठाजादावूर्ध्वं द्वितीयादचः ।५।३।८३। द्वितीयादत्र उर्ध्वं लुप्यते । अनुकम्पितो देवदत्तो देविकः देवियः देविलः । देवदत्तकः । वायुकः । पितृकः । चतुर्थादत्र ऊर्ध्वस्य लोपो वाच्यः ॥ । बृहस्पतिकः । अनजादौ च विभाषा लोपो वक्तव्यः ॥ । देवदत्तकः । देवकः । लोपः पूर्वपदस्य च ॥ । दत्तिकः । दत्तियः । दत्तिलः । दत्तकः । विनापि प्रत्ययं पूर्वोत्तरपदयोर्वा लोपो वक्तव्यः ॥ । देवदत्तः । दत्तः । देवः । सत्यभामा । भामा । सत्या । उवर्णाल्ल इलस्य च ॥ । भानुदत्तः । भानुलः । ऋवर्णादपि ॥ । सवित्रियः । सवितृलः । चतुर्थादनजादौ वा लोपः पूर्वपदस्य च ॥ अप्रत्यये तथैवेष्ट उवर्णा ल्ल इलस्य च ॥ । प्राचामुपादेरडज्वुचौ च ।५।३।८०। अनुकम्पित उपेन्द्रदत्त उपडः । उपकः । उपियः । उपिलः । उपिकः । उपेन्द्रदत्तकः । जातिनाम्नः कन् । ५।३।८१। सिंहकः । शरभकः । रासभकः । द्वितीयं सन्ध्यक्षरं चेत्तदादेर्लोपो वक्तव्यः ॥ । कहोडः, कहिकः । एकाक्षरपूर्वपदानामुत्तरपदलोपो वक्तव्यः ॥ । वागाशीर्दत्तः, वाचिकः । कथं षडङ्गुलिदत्तः षडिक इति । षषष्ठाजादिवचनात् सिद्धम् ॥ । शेवलसुपरिविशालवरुणार्यमादीनां तृतीयात् ।५।३।८४। ठाजादौ परे तृतीयादच ऊर्ध्वं लुप्यते । अनुकम्पितः शेवलदत्तः शेवलिकः । शेवलियः । शेवलिलः । सुपरिकः । विशालिकः । वरुणिकः । अर्यमिकः । अजिनान्तस्योत्तरपदलोपश्च ।५।३।८२। अनुकम्पितो व्याघ्राजिनो व्याघ्रकः । सिंहकः । अल्पे । ५।३।८५। तैलकम् । ह्रस्वे ।५।३।८६। वृक्षकः । संज्ञायां कन् ।५।३।८७। वंशकः । वेणुकः । कुटीशमीशुण्डाभ्यो रः ।५।३।८८। कुटीरः । शमीरः । शुण्डारः । कुत्वा डुपच् । कुतुपः । कासूगोणीभ्यां ष्टरच् ।५।३।९०।

कासूतरी । गोणीतरी । **वत्सोक्षाश्वर्षभेभ्यश्च तनुत्वे** ।५।३।९१। वत्सतरः । उक्षतरः । अश्वतरः । ऋषभतरः । **किंयत्तदो निर्धारणे द्वयोरेकस्य डतरच्** । ५ । ३ । ९२ । अनयोः कतरो वैष्णवः । यतरः । ततरः । महाविभाषया-कः-यः-सः । **वा बहूनां जातिपरिप्रश्ने डतमच्** ।५।३।९३। कतमो भवतां कठः । यतमः । ततमः । वाग्रहणमकजर्थम् । यकः । सकः । महाविभाषया यः । सः । किमोऽस्मिन्विषये डतरजपि । कतरः । **एकाच्च प्राचाम्** । ५।३।९४। डतरच् डतमच्च स्यात् । अनयोरेकतरो मन्त्रः । एषामेकतमः । **अवक्षेपणे कन्** । ५।३।९५। व्याकरणकेन गर्वितः व्याकरणकः ॥—॥

॥ इति प्रागिवीयप्रकरणम् ॥

॥ अथ स्वार्थिकप्रकरणम् ॥

इवे प्रतिकृतौ ।५।३।९६। कन् स्यात् । अश्व इव प्रतिकृतिः, अश्वकः । **संज्ञायां च** ।५।३।९७। अश्वसदृशस्य संज्ञा अश्वकः । उष्ट्रकः । **लुम्मनुष्ये** ।५।३।९८। चञ्चेव मनुष्यश्चञ्चा । वध्रिका । **जीविकार्थे चापण्ये** ।५।३।९९। वासुदेवः । शिवः । स्कन्दः । **देवपथादिभ्यश्च** ।५।३।१००। देवपथः । हंसपथः । **वस्तेर्ढञ्** ।५।३।१०१। वस्तिरिव वास्तेयम् । वास्तेयी । **शिलाया ढः** । ५।३।१०२। शिलेयम् । योगविभागात्, ढञपि शैलेयम् । **शाखादिभ्यो यः** ।५।३।१०३। शाखेव शाख्यः । मुख्यः । जघन्यः । अग्र्यः । शरण्यः । **द्रव्यं च भव्ये** ।५।३।१०४। द्रव्यमयं ब्राह्मणः । **कुशाग्राच्छः** ।५।३।१०५। कुशाग्रीया बुद्धिः । **समासाच्च तद्विषयात्** ।५।३।१०६। काकतालीयो देवदत्तस्य वधः । अजाकृपाणीयः । **शर्करादिभ्योऽण्** ।५।३।१०७। शर्करेव शार्करम् । **अङ्गुल्यादिभ्यष्ठक्** । ५।३।१०७। आङ्गुलीकः । भारुजिकः, **एकशालायाष्ठजन्यतरस्याम्** । ५ । ३ । १०९। एकशालिकः । ऐकशालिकः । **कर्कलोहितादीकक्** ।५।३।११०। कार्कीकः । लौहितीकः । **पूगाञ्ञ्योऽग्रामणीपूर्वात्** ।५।३।११२। स्वार्थे । लौहितध्वज्यः । व्रातच्फञोरस्त्रियाम् (ग० सू०) कापोतपाक्यः । कौञ्जायन्यः । ब्राध्नायन्यः । **आयुधजीविसङ्घाञ्ञ्यड्वाहिकेष्वब्राह्मणराजन्यात्** ।५।३।११४। क्षौद्रक्यः, मालव्यः । ङीष्-क्षौद्रकी । **वृकाट्टेण्यण्** ।५।३।११५। वार्केण्यः । **दामन्यादित्रिगर्तषष्ठाच्छः** ।५।३।११६। दामनीयः, दामनीयौ । दामनयः । त्रिगर्तः, कौण्डोपरथीयः । दाण्डकीयः । **पर्श्वादियौधेयादिभ्योऽणञौ** ।५।३।११७। पार्शवः । पार्शवौ । पर्शवः । यौधेयः । यौधेयौ । यौधेयाः । **अभिजिद्विदभृच्छालावच्छिखावच्छमीवदूर्णावच्छ्रुमदणो यञ्** ।५।३।११८। आभिजित्यः । वैदभृत्यः । शालावत्यः शैखावत्यः । शामीवत्यः । और्णावत्यः । श्रौमत्यः । **ञ्यादयस्तद्राजाः** ।५।३।११९। पूगाञ्ञ्य इत्यारभ्य

उक्ता एतत्संज्ञाः स्युः। तेनास्त्रियां बहुषु लुक्। लोहितध्वजाः। कपोतपाकाः। कौञ्जायनाः। ब्राध्नायनाः। **पादशतस्य संख्यादेर्वीप्सायां वुन्लोपश्च** ।५।४।१। द्वौ द्वौ पादौ ददाति द्विपदिकाम्। द्विशतिकाम्। पादशतग्रहणमनर्थकमन्यत्रापि दर्शनात् ❀। द्विमोदकिकाम्। **दण्डव्यवसर्गयोश्च** ।५।४।२। अवीप्सार्थमिदम्। द्वौ पादौ दण्डितो द्विपदिकाम्। द्विशतिकाम्। **स्थूलादिभ्यः प्रकारवचने कन्** ।५।४।३। स्थूलकः। अणुकः। चञ्चद्बृहतोरुपसंख्यानम् ❀। चञ्चत्कः। बृहत्कः। सुराया अहौ (ग० सू०) सुरावर्णोऽहिः सुरकः। **अनत्यन्तगतौ क्तात्** ।५।४।४। छिन्नकम्। भिन्नकम्। अभिन्नकम्। **न सामिवचने** ।५।४।५। सामिकृतम् अर्धकृतम्। अनत्यन्तगतेरिह प्रकृत्यैवाभिधानात्पूर्वं कन्न प्राप्तः। इदमेव निषेधसूत्रमत्यन्तस्वार्थिकमपि कनं ज्ञापयति। बहुतरकम्। **बृहत्या आच्छादने** ।५।४।६। बृहतिका। **अषडक्षाशितङ्ग्वलंकर्मालम्पुरुषाध्युत्तरपदात्खः** ।५।४।७। अषडक्षीणो मन्त्रः। आशितङ्गवीनमरण्यम्। निपातनान्मुम्। अलंकर्मीणः। अलंपुरुषीणः। ईश्वराधीनः। **विभाषाञ्चेरदिक् स्त्रियाम्** ।५।४।८। प्राचीनम्। प्रतीचीनम्। अवाचीनम्। अर्वाचीनम्। **जात्यन्ताच्छ बन्धुनि** ।५।४।९। ब्राह्मणजातीयः। **स्थानान्ताद्विभाषा सस्थानेनेतिचेत्** ।५।४।१०। पित्रा तुल्यः पितृस्थानीयः, पितृस्थानः। **अनुगादिनष्ठक्** ।५।४।१३। आनुगादिकः। **विसारिणो मत्स्ये** ।५।४।१६। अण् स्यात्। वैसारिणः। **संख्यायाः क्रियाभ्यावृत्तिगणने कृत्वसुच्** ।५।४।१७। पञ्चकृत्वो भुङ्क्ते। **द्वित्रिचतुर्भ्यः सुच्** ।५।४।१८। द्विर्भुङ्क्ते। त्रिः। चतुः। **एकस्य सकृच्च** ।५।४।१९। सकृत् भुङ्क्ते। **विभाषा बहोर्धाऽविप्रकृष्टकाले** ।५।४।२०। बहुधा। दिवसस्य भुङ्क्ते। **तत्प्रकृतवचने मयट्** ।५।४।२१। भावे ल्युटि प्रकृतमन्नमन्नमयम्। अपूपमयः। यवागूमयी। अधिकरणे ल्युटि अन्नमयो यज्ञः। अपूपमय पर्व। **समूहवच्च बहुषु** ।५।४।२२। मोदकाः प्रकृताः, मौदकिकम्। मोदकमयम्। शाष्कुलिकम्। शष्कुलीमयम्। द्वितीयेऽर्थे मौदकिको यज्ञः। मोदकमयः। **अनन्तावसथेतिहभेषजाञ्ञ्यः** ।५।४।२३। आनन्त्यम्। आवसथ्यम्। ऐतिह्यम् भैषज्यम्। **देवतान्तात्तादर्थ्ये यत्** ।५।४।२४। अग्निदेवत्यम्। पितृदेवत्यम्। **पादार्घाभ्यां च** ।५।४।२५। पादार्थमुदकं पाद्यम्। अर्घ्यम्। नवस्य नू आदेशः त्नप्तनप्खाश्च प्रत्यया वक्तव्याः ❀। नूत्नम्। नूतनम्। नवीनम्। नश्च पुराणे प्रात् ❀। प्रणम्। प्रत्नम्। प्रतनम्। प्रीणम्। भागरूपनामभ्यो धेयः ❀। भागधेयम्। रूपधेयम्। नामधेयम्। आग्नीध्रसाधारणादञ् ❀। आग्नीध्रम्। साधारणम्। स्त्रियां ङीप्। आग्नीध्री। साधारणी। **अतिथेर्ञ्यः** ।५।४।२६। आतिथ्यम्। **देवात्तल्** ।५।४।२७। देव एव देवता। **अवेः कः** ।५।४।२८। अविकः। **यावादिभ्यः कन्** ।५।४।२९। यावकः। मणिकः। **लोहितान्मणौ** ।५।४।३०। लोहितको मणिः। **वर्णे चानित्ये** ।५।४।३१। लोहितकः कोपेन, लोहिताल्लिङ्गबाधनं वा ❀। लोहितिका। लोहिनिका कोपेन। **रक्ते** ५।४।३२। लिङ्गबाधनं वा ❀ इत्येव, लोहितिका, लोहिनिका शाटी। **कालाच्च** ५।४।३३। कालकः पटः। कालिका

शाटी । **विनयादिभ्यष्ठक्** । ५ । ४ । ३४ । वैनयिकः सामयिकः । उपायाद्ध्रस्वत्वं च (ग० सू०) औपयिकः । **वाचोव्याहृतार्थायाम्** । ५ । ४ । ३५ । सन्देशवाग् वाचिकं स्यात् । **तद्युक्तात् कर्मणोऽण्** । ४ । ३६ । कर्मैव कार्मणम् । **ओषधेरजातौ** ५ । ४ । ३७ । औषधम् **प्रज्ञादिभ्यश्च** । ५ । ४ । ३८ । प्राज्ञः । प्राज्ञी । दैवतः बान्धवः । **मृदस्तिकन्** । ५ । ४ । ३९ । मृत्तिका । **सस्नौ प्रशंसायाम्** । ५ । ४ । ४० । मृत्सा । मृत्स्ना । **बह्वल्पार्थाच्छस्कारकादन्यतरस्याम्** । ५ । ४ । ४२ । बहूनि ददाति बहुशः । अल्पशः । बह्वल्पार्थान्मङ्गलामङ्गलवचनम् । ❀ । नेह–बहूनि ददात्यनिष्टेषु । अल्पं ददात्याभ्युदयिकेषु । **संख्यैकवचनाच्च वीप्सायाम्** । ५ । ४ । ४३ । द्वौ द्वौ ददाति द्विशः । माषशः । प्रस्थशः । **प्रतियोगे पञ्चम्यास्तसिः** । ५ । ४ । ४४ । प्रद्युम्नः कृष्णतः प्रति । आद्यादिभ्य उपसंख्यानम् । ❀ । आदौ आदितः । मध्यतः अन्ततः । पृष्ठतः पार्श्वतः । आकृतिगणोऽयम् । स्वरतः । वर्णतः । **अपादाने चाहीयरुहोः** । ५ । ४ ४५ । ग्रामतः । **अतिग्रहाव्यथनक्षेपेष्वकर्तरि तृतीयायाः** ।५।४।४६। तसिः । चारित्रेणातिगृह्यते । चारित्रतोऽतिगृह्यते । वृत्तेन न व्यथते । वृत्ततो न व्यथते । वृत्तेन क्षिप्तः । **हीयमानपापयोगाच्च** ।५।४।४७। वृत्तेन हीयते वृत्तेन पापः–वृत्ततः **षष्ठ्या व्याश्रये** । ५ ।४। ४८ । देवा अर्जुनतोऽभवन् । आदित्याः कर्णतोऽभवन् ।–" **रोगाच्चापनयने** । ५ ।४ । ४९ प्रवाहिकातः कुरु । **कृभ्वस्तियोगे संपद्यकर्तरि च्विः** । ५ । ४ ५० । अभूततद्भाव इति वक्तव्यम् ।❀। **अस्य च्वौ** । ७ ।४ ४१ । ईत्स्यात् । व्ययन्तत्वादव्ययत्वम् । अकृष्णः कृष्णः संपद्यते तं करोति कृष्णीकरोति । ब्रह्मीभवति, गङ्गास्यात् । अव्ययस्य च्वावीत्वं नेति वाच्यम् ।❀ । दोषाभूतमहः । दिवाभूता रात्रिः । **क्यच्व्योश्च** । ६ । ४ । १५२ । हलः परस्यापत्ययकारस्य लोपः स्यात् क्ये च्वौ च परतः । गार्गीभवति **च्वौ च** । ७ । ४ । २६ । च्वौ परे पूर्वस्य दीर्घः स्यात् । शुचीभवति । पटूस्यात् । मात्रीकरोति । **अरुर्मनश्चक्षुश्चेतो रहोरजसां लोपश्च** । ५ । ४ । ५१ । अरूकरोति । उन्मनीस्यात् । उच्चक्षूकरोति । ऊचेतीकरोति । विरहीकरोति । विरजीकरोति । **विभाषा साति कार्त्स्न्ये** । ५ । ४ । ५२ । च्विविषये । **सात्पदाद्योः** । ८ । ३ । १११ । सस्य षत्वं न स्यात् । दधि सिञ्चति । कृत्स्नं शस्त्रमग्निः संपद्यतेऽग्निसाद्भवति । अग्नीभवति । **अभिविधौ संपदा च** । ५ । ४ । ५३ । अग्निसात्संपद्यते । अग्निसाद्भवति शस्त्रम् । अग्नीभवति । जलसात्संपद्यते जलीभवति लवणम् । **तदधीनवचने** । ५। ४ । ५४। राजसात्करोति । राजसात्संपद्यते । **देये त्रा च** ।५ । ४ । ५५ । विप्राधीनं देयं करोति विप्रत्रा करोति । विप्रत्रा संपद्यते । पक्षे–विप्रसात्करोति । **देवमनुष्यपुरुषपुरुमर्त्येभ्यो द्वितीयासप्तम्योर्बहुलम्** । ५ । ४ । ५६ । देवत्रा वन्दे रमे वा । बाहुलकात्–बहुत्रा जीवतो मनः । **अव्यक्तानुकरणाद्द्व्यजवरार्धादनितौ डाच्** । ५ । ४ । ५७ । डाचि विवक्षिते द्वे बहुलम् । ❀ । नित्यमाम्रेडिते डाचीति वक्तव्यम् ❀ । पूर्वपरयोर्वर्णयोः पररूपं स्यात् । पटपटाकरोति ।

कृञो द्वितीयतृतीयशम्बबीजात्कृषौ । ५ । ४ । ५८ । द्वितीयं तृतीयं कर्षणं करोति, द्वितीयाकरोति । तृतीयाकरोति । शंबाकरोति । बीजाकरोति । संख्यायाश्च गुणान्तायाः । ५ । ४ । ५९ । द्विगुणाकरोति । समयाच्च यापनायाम् । ५ । ४ । ६० । कृषौ निवृत्तम् । समयाकरोति । सपत्त्रनिष्पत्त्रादतिव्यथने । ५ । ४ । ६१ । सपत्त्राकरोति मृगम् । निष्पत्त्राकरोति । निष्कुलान्निष्कोषणे । ५ । ४ । ६२ । निष्कुलाकरोति दाडिमम् । सुखप्रियादानुलोम्ये । ५ । ४ । ६४ । सुखाकरोति । प्रियाकरोति गुरुम् । दुःखात्प्रातिलोम्ये । ५ । ४ । ६४ दुःखाकरोति स्वामिनम् । शूलात्पाके । ५ । ४ । ६५ । शूलाकरोति मांसम् । सत्यादशपथे । ५ । ४ । ६६ । सत्याकरोति भाण्डं वणिक् । मद्रात्परिवापणे ५ । ४ । ६७ । मद्राकरोति । भद्राच्चेति वक्तव्यम् ॐ । भद्राकरोति ।

॥ इति स्वार्थिकप्रकरणम् ॥ — ॥ इति तद्धिताः ॥

॥ अथ द्विरुक्तप्रकरणम् ॥

सर्वस्य द्वे । ८ । १ । १ । इत्यधिकृत्य, नित्यवीप्सयोः । ८ । १ । २ । इह नित्यत्वेन आभीक्ष्ण्यं गृह्यते । तच्च तिङन्तेषु अव्ययसंज्ञककृदन्तेषु च । पचतिपचति । भुक्त्वा भुक्त्वा । वीप्सायाम् । वृक्षंवृक्षं सिञ्चति । ग्रामो ग्रामो रमणीयः । परेर्वर्जने । ८ । १ । ५ । परिपरि वङ्गेभ्यो वृष्टो देवः । परेर्वर्जने वा वचनम् । ॐ । परि वङ्गेभ्यः । उपर्यध्यधसः सामीप्ये । ८ । १ । ७ । उपर्युपरि ग्रामम्, अध्यधि सुखम्, अध्यधिलोकम् वाक्यादेरामन्त्रितस्यासूयासंमतिकोपकुत्सनभर्त्सनेषु । ८ । १ । ८ । सुन्दरसुन्दर वृथा ते सौन्दर्यम् । संमतौ—देव देव वन्द्योऽसि । कोपे—दुर्विनीत दुर्विनीत इदानीं ज्ञास्यसि । कुत्सने—धानुष्क धानुष्क वृथा ते धनुः । भर्त्सने—चोर चोर घातयिष्यामि त्वाम् । एकं बहुव्रीहिवत् । ८ । १ । ९ । तेन सुब्लोपपुंवद्भावौ । एकैकमक्षरम्, एकैकयाहुत्या एकैकस्मै देहि । आबाधे च । ८ । १ । १० । पीडायां द्योत्यायां द्वे स्तो बहुव्रीहिवच्च । गतगतः गतगता । इह पुंवद्भावश्च । कर्मधारयवदुत्तरेषु । ८ । १ । ११ । इत उत्तरेषु द्विर्वचनेषु कर्मधारयवत्कार्यम् । तेन सुब्लोपपुंवद्भावान्तोदात्तत्वानि ॥ प्रकारे गुणवचनस्य । ८ । १ । १२ । द्वे स्तः, तच्च कर्मधारयवत् । पटुपट्वी, पटुपटुः, पटुसदृश इत्यर्थः । गुणोपसर्जनद्रव्यवाचिनः केवलगुणवाचिनश्चेह गृह्यन्ते । शुक्लशुक्लं रूपम्, शुक्लशुक्लः पटः । आनुपूर्व्ये द्वे वाच्ये । ॐ । मूलमूले स्थूलः । संभ्रमेण प्रवृत्तौ यथेष्टमनेकधा प्रयोगो न्यायसिद्धः । ॐ । सर्पः सर्पः बुध्यस्व २ सर्पः ३ बुध्यस्व ३ । क्रियासमभिहारे च । ॐ । लुनीहि २ इत्येवायं लुनाति । कर्मव्यतिहारे सर्वनाम्नो द्वे वाच्ये । ॐ । समासवच्च बहुलम् । ॐ । बहुलग्रहणादन्यपरयोर्न समासवत् । इतरशब्दस्य तु नित्यम् । असमासवद्भावे पूर्वपदस्थस्य सुपः सुर्वक्तव्यः । ॐ । अन्योऽन्यं

विप्रा नमन्ति । अन्योन्यौ, अन्योऽन्येन कृतम्, अन्योऽन्यस्मै दत्तमित्यादि । एवं परस्परम्। कस्कादित्वाद्विसर्गस्य सः। इतरेतरम्, इतरेतरेणेत्यादि। स्त्रीनपुंसकयोरुत्तरपदस्थाया विभक्तेराम्भावो वा वक्तव्यः। ॥ अन्योन्याम् अन्योन्यं वा ब्राह्मण्यौ कुले वा भोजयतः। एवं परस्परां परस्परम्, इतरेतराम् इतरेतरमित्यादि। "द्वन्द्वये टाबभावः क्लीवे चाड्विरहः स्वमोः। समासे सोरलुक् चेति सिद्धं बाहुलकात्त्रयम् ।१।" तथाहि—अन्योऽन्यं परस्परमित्यत्र टाप्प्राप्तः, अन्योऽन्यमितरेतरमित्यत्र चाड्डतरादिभ्य इत्यद्ड् प्राप्तः। अन्योऽन्याश्रयः, परस्पराक्षिप्तसादृश्यम्, अदृष्टपरस्परैरित्यादौ सोर्लुक् च प्राप्तः सर्वं बाहुलकान्न भवति ॥ अकृच्छ्रे प्रियसुखयोरन्यतरस्याम् ।८।१।१३। प्रियप्रियेण ददाति, प्रियेण वा। सुखसुखेन ददाति, सुखेन वा। द्विर्वचने कर्मधारयवद्भावात्सुपि लुकि तदेव वचनम् । यथास्वे यथायथम् ।८।१।१४। योऽयमात्मा यच्चात्मीयं तद्यथास्वम् । यथाशब्दस्य द्वे क्लीबत्वं निपात्यते। यथायथं ज्ञाता। यथास्वभावं यथाऽऽत्मीयमिति वा । द्वन्द्वं रहस्यमर्यादावचनव्युत्क्रमणयज्ञपात्रप्रयोगाभिव्यक्तिषु ।८।१।१५। एष्वर्थेषु द्वन्द्वमिति निपात्यते, द्वन्द्वं मन्त्रयते । मर्यादा स्थित्यनतिक्रमः । आचतुरं हीमे पशवो द्वन्द्वं मिथुनीयन्ति। द्वन्द्वं व्युत्क्रान्ताः । द्वन्द्वं यज्ञपात्राणि प्रयुनक्ति। द्वन्द्वं संकर्षणवासुदेवौ । साहचर्येणाभिव्यक्तावित्यर्थः । योगविभागादन्यत्रापि द्वन्द्वमितीष्यते । इति द्विरुक्तप्रक्रिया ।

इति श्री सर्वतन्त्रस्वतन्त्र विद्यावारिधि महामहोपाध्याय
पं० मथुराप्रसाददीक्षितकृतौ पाणिनीय-
सिद्धान्तकौमुद्यां पूर्वार्द्धं
समाप्तम् ।

॥ श्रीः ॥

उत्तरार्धम्

प्रणौमि देवदेवेशं मङ्गलाभेदविग्रहम् ।
कृपाकटाक्षतो यस्योद्बुध्यते सकलं जगत् ॥ १ ॥

सूत्रोपदिष्टाः काव्येषु प्रयुक्ता ये च धातवः ।
गणेषु वक्ष्ये तानेव नापरानप्रयोजकान् ॥ २ ॥

तत्र लट् लोट् लङ् लिङ् एते सार्वधातुकेषु प्रयुज्यन्ते । लिट् लुट् लृट् लिङ् लुङ् लृङ् एते चार्धधातुकेषु । तत्र विध्यादौ लिङादेशाः सार्वधातुकाः, आशिषि चार्धधातुका इति विवेकः । लेट् लकारस्तु छन्दोमात्रगोचरत्वान्नेह प्रदर्श्यते । **वर्तमाने लट्** । ३ । २ । १२३ । वर्तमानक्रियावृत्तेर्धातोर्लट् स्यात् । अटावितौ । **लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः** । ३ । १ । ६९ । लकाराः सकर्मकेभ्यः कर्मणि कर्तरि च स्युः, अकर्मकेभ्यो भावे कर्तरि च । **लस्य** । ३ । ४ । ७७ । अधिकारोऽयम् । **तिप्तस्झि, सिप्थस्थ, मिब्वस्मस् ताताञ्झ थासाथां ध्वमिड्वहिमहिङ्** । ३ । ४ । ७८ । एतेऽष्टादश लादेशाः स्युः । **लः परस्मैपदम्** । ४ । ४ । ९९ । **तङानावात्मनेपदम्** । १ । ४ । १०० । तङ् प्रत्याहारः शानच्कानचौ चैतत्संज्ञाः स्युः । **अनुदात्तङित आत्मनेपदम्** । १ । ३ । १२ । अनुदात्तेतो ङितश्च धातोरात्मनेपदं स्यात् । **स्वरितञितः कर्त्रभिप्राये क्रियाफले** । १ । ३ । ७२ । आभ्यां कर्तृगामिनि क्रियाफले आत्मनेपदम् । **शेषात्कर्तरि परस्मैपदम्** । १ । ३ । ७८ । **तिङस्त्रीणि त्रीणि प्रथममध्यमोत्तमाः** । १ । ४ । १०१ । **तान्येकवचनद्विवचनबहुवचनान्येकशः** । १ । ४ । १०२ । स्पष्टम् । **युष्मद्युपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि मध्यमः** । १ । ४ । १०५ । युष्मदि प्रयुज्यमाने अप्रयुज्यमाने च मध्यमः स्यात् । **प्रहासे च मन्योपपदे मन्यतेरुत्तम एकवच्च** । १ । ४ । १०६ । मन्योपपदात्प्रकृतिभूताद्धातोर्मध्यमः स्यात्परिहासे मन्यतेस्तूत्तमः सचैकार्थवाचकः स्यात् । **अस्मद्युत्तमः** । १ । ४ । १०७ । **शेषे प्रथमः** । १ । ४ । १०८ । भू सत्तायाम् । कर्तृविवक्षायां भू ति इति स्थिते । **तिङ् शित्सार्वधातुकम्** । ३ । ४ । ११३ । **कर्तरि शप्** । ३ । १ । ६८ । कर्त्रर्थे सार्वधातुके परे धातोः शप् स्यात् । शपावितौ । **सार्वधातुकार्धधातुकयोः** । ७ । ३ । ८४ । अनयोः परयोरिगन्ताङ्गस्य गुणः स्यात् । अवादेशः, भवति, भवतः । **झोऽन्तः** । ७ । १ । ३ । अतो गुणे । भवन्ति । भवसि, भवथः, भवथ । **अतो दीर्घो यञि** । ७ । ३ । १०१ । यञादौ सार्वधातुके इत्यर्थः । भवामि, भवावः, भवामः । एहि मन्ये, ओदनं भोक्ष्यसे

इति भुक्तः सोऽतिथिभिः। यथार्थकथने तु, एहि मन्यसे, ओदनं भोक्ष्ये इति भुक्तः सोऽतिथिभिः। **लोट् च**। ३। ३। १६२। विध्यादिष्वर्थेषु धातोर्लोट् स्यात्। **आशिषि लिङ्लोटौ**। ३। ३। १७३। **एरुः**। ३। ३। ७६। भवतु। **तुह्योस्तातङाशिष्यन्यतरस्याम्**। ७। १। ३५। अनेकाल्त्वात्सर्वादेशः। भवतात्। **लोटो लङ्वत्**। ३। ४। ८५। **तस्थस्थमिपां तान्तंतामः**। ३। ४। १०१। ङितश्चतुर्णां तामादयः क्रमात्स्युः। भवताम्, भवन्तु। **सेर्ह्यपिच्च**। ३। ४। ७७। **अतो हेः**। ६। ४। १०५। लुक् स्यात्। भव, भवतात्, भवतम्, भवत॥ **मेर्निः** ३। ४। ८९। **आडुत्तमस्यपिच्च** ३। ४। ९२। हिन्योरुत्वं न, इकारोच्चारणसामर्थ्यात्। भवानि। **नित्यं ङितः**। ३। ४। ९९। सकारान्तस्य ङिदुत्तमस्य नित्यं लोपः स्यात्। भवाव, भवाम। **अनद्यतने लङ्** ३। २। १११। अनद्यतनभूतार्थवृत्तेर्धातोर्लङ् स्यात्। **लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः** ६। ४। ७१। इत्यट्। **इतश्च**। ३। ४। १००। ङितो लस्य परस्मैपदमिकारान्तं यत्तस्य लोपः स्यात्। अभवत्, अभवताम्, अभवन्,। अभवः, अभवतम्, अभवत। अभवम्, अभवाव, अभवाम। **विधिनिमन्त्रणामन्त्रणाधीष्टसंप्रश्नप्रार्थनेषु लिङ्**। ३। ३। १६१। **यासुट्परस्मैपदेषूदात्तोङिच्च**। ३। ४। १०३। लिङः परस्मैपदानां यासुट्। **सुट् तिथोः**। ३। ४। १०७। लिङस्तथयोः सुट् स्यात्। **लिङः सलोपोऽनन्त्यस्य**। ७। २। ७९। सार्वधातुकलिङोऽनन्त्यस्य सस्य लोपः स्यात्। इति सकारद्वयस्य निवृत्तिः। **अतो येयः** ७। २। ८०। सार्वधातुकावयवस्य या इत्यस्य इय् स्यात्। यलोपः। भवेत्। भवेताम्। **झेर्जुस्**। ३। ४। १०८। लिङो झेर्जुस्। **उस्यपदान्तात्**। ६। १। ९६। अपदान्तादवर्णादुसि परे पररूपमेकादेशः स्यात्। इति प्राप्ते, परत्वान्नित्यत्वाच्च या इत्यस्य इय्। भवेयुः, भवेः, भवेतम्, भवेत। भवेयम्, भवेव, भवेम। **परोक्षे लिट्**। ३। २। ११५। लस्य तिबादयः। **लिट् च**। ३। ४। ११५। आर्धधातुकसंज्ञ एव स्यान्नतु सार्वधातुकसंज्ञः। तेन शबादयो न। **परस्मैपदानां णल् अतुस् उस्, थल् अथुस् अ, णल् व माः** ३। ४। ८२। लिटस्तिबादीनामेते स्युः। भू अ इति स्थिते। **भुवोवुग्लुङ्लिटोः**। ६। ४। ८८। वुक् स्यादचि। **एकाचो द्वे प्रथमस्य** ६। १। १। **अजादेर्द्वितीयस्य**। ६। १। २। इत्यधिकृत्य। **लिटि धातोरनभ्यासस्य**। ६। १। ८। धात्ववयवस्यैकाचः प्रथमस्य द्वे स्तः, आदिभूतादचः परस्य तु द्वितीयस्य। भूव् भूव् अ इति स्थिते। **पूर्वोऽभ्यासः**। ६। १। ४। **हलादिः शेषः**। ७। ४। ६०। अभ्यासस्यादिर्हल् शिष्यते, अन्ये हलो लुप्यन्ते। इति वलोपः। **ह्रस्वः**। ७। ४। ५९। अभ्यासस्याचो ह्रस्वः स्यात्। **भवतेरः**। ७। ४। ७३ भवतेरभ्यासोकारस्य अः स्याल्लिटि। **अभ्यासे चर्च**। ८। ४। ५४। झलां चरः स्युः, जशश्च। झशां जशः, खयां चरः इति विवेकः। **असिद्धवदत्राभात्**। ६। ४। २२। समानाश्रये तस्मिन्कर्तव्ये तदसिद्धं स्यात्। इति वुकोऽसिद्धत्वादुवङि प्राप्ते। **वुग्युटावुवङ्**

यणोः सिद्धौ वक्तव्यौ । ※ । बभूव, बभूवतुः, बभूवुः । आर्धधातुकस्येड् वलादेः । ७ । २।३५। बभूविथ बभूवथुः, बभूव, बभूव बभूविव बभूविम। अनद्यतने लुट् ।३ । ३ । १५ । भविष्यत्येव । स्यतासी लृलुटोः । ३ । १ । ३३ । ऌ इति लृङ् लृटोर्ग्रहणम् । धातोः क्रमादेतौ स्तः । शबाद्यपवादः । आर्धधातुकं शेषः । ३ । ४ । ११४ । तिङ्शिद्भ्योऽन्यो धात्वधिकारोक्तः प्रत्यय एतत्संज्ञः स्यात् । इट् । लुटः प्रथमस्य डारौरसः । २ । ४ । ८५ । डित्वसामर्थ्यादभस्यापि टेर्लोपः । पुगन्तलघूपधस्य च । ७ । ३ । ८६ । एतद्रूपस्याङ्गस्येको गुणः स्यात्सार्वधातुकार्धधातुकयोः । भवित् आ । अत्रेको गुणे प्राप्ते । दीधीवेवीटाम् । १ । १ । ६ । गुणवृद्धी न स्तः । भविता । तासस्त्योर्लोपः ७ । ४ । ५० । सादौ प्रत्यये परे । रि च । ७ ।४ । ७१ । भवितारौ, भवितारः । भवितासि, भवितास्थः भवितास्थ । भवितास्मि, भवितास्वः, भवितास्मः । लृट् शेषे च ।३।१३। भविष्यदर्थाद्धातोर्लृट् स्यात् । स्य इट् । षत्वम् । भविष्यति । भविष्यतः, भविष्यन्ति । भविष्यसि, भविष्यथः, भविष्यथ । भविष्यामि, भविष्यावः भविष्यामः। लिङाशिषि । ३ । ४ । ११६ । आशिषि लिङस्तिङार्धधातुकसंज्ञः स्यात् । किदाशिषि । ३ । ४ । १०४ । इति कित् । क्ङिति च । १ । १ । ५ । गित्किन्ङिन्निमित्ते इग्लक्षणे गुणवृद्धी न स्तः । स्कोरिति सलोपः । भूयात्, भूयास्ताम् भूयासुः । भूयाः, भूयास्तम्, भूयास्त । भूयासम्, भूयास्व, भूयास्म । लुङ् । ३ । २ । ११० । भूतार्थवृत्तेर्धातोर्लुङ् स्यात् । माङि लुङ् ।३।३ । १७५ । स्मोत्तरे लङ् च । ३ । ३ । ७६ । चाल्लुङ् । च्लि लुङि । ३ । १ ।४३ । शबाद्यपवादः । च्लेः सिच् । ३ । १ । ४४ । गातिस्थाघुपाभूभ्यः सिचः परस्मैपदेषु । २ । ४ । ७७ । इह गापाग्रहणेन इणादेशपिबती गृह्यते। भूसुवोस्तिङि । ७।३ ।८८। एतयोः सार्वधातुके तिङि गुणो न स्यात् । अस्ति सिचोऽपृक्ते । ७ । ३ । ९६ । विद्यमानात्सिचोऽस्तेश्च परस्यापृक्तहल ईडागमः स्यात् । इतीड् न । सिचो लुका लुप्तत्वात् । अभूत्, अभूताम् । सिजभ्यस्तविदिभ्यश्च । ३ । ४ १०९ । एभ्यः परस्य ङित्सम्बन्धिनो झेर्जुस् स्यात् । इति । आतः । ३ । ४ । ११० । सिज् लुक्यादन्तादेव झेर्जुस् स्यात् । अभूवन् । अभूः, अभूतम्, अभूत । अभूवम् अभूव, अभूम । नमाङ्योगे । ६ । ४ । ७४ । अडाटौ न स्तः । मा भवान् भूत्, । मा स्म भवत्, भूद्वा । लिङ्निमित्ते लृङ् क्रियातिपत्तौ । ३ । ३ । १३९ । हेतुहेतुमद्भावादि लिङ्निमित्तम् । तत्र भविष्यत्यर्थे लृङ् स्यात् क्रियाया अनिष्पत्तौ गम्यमानायाम् । अभविष्यद्, अभविष्यताम्, अभविष्यन् । अभविष्यः, अभविष्यतम्, अभविष्यत । अभविष्यम् अभविष्याव, अभविष्याम । ते प्राग्धातोः । १ । ४ । ८० । ते गत्युपसर्गसंज्ञा धातोः प्रागेव प्रयोक्तव्याः । आनि लोट् । ८ । ४ । १६ । नस्य णः स्यात् । प्रभवाणि । दुरः षत्वणत्वयोरुपसर्गत्वप्रतिषेधो वक्तव्यः । ※ । दुःस्थितिः, दुर्भवानि । अन्तःशब्द॰

स्याङ्किविधिणत्वेषूपसर्गत्वं वाच्यम् । अन्तर्धा । अन्तर्धिः । अन्तर्भवाणि । **शेषे विभाषाऽकखादावषान्त उपदेशे** । ८ । ४ । १८ । उपदेशे कादिखादिषान्तवर्जे गदनदादेरन्यस्मिन्धातौ परे उपसर्गस्थान्निमित्तात्परस्य नेर्नस्य णत्वं वा स्यात् । प्रणिभवति, प्रनिभवति । सत्ताद्यर्थनिर्देशश्चोपलक्षणम् । यागात् स्वर्गो भवतीत्यादावुत्पद्यत इत्याद्यर्थात् । प्रभवति पराभवति संभवति अनुभवति अभिभवति उद्भवति परिभवतीत्यादौ विलक्षणार्थावगतेः । उक्तं च । उपसर्गेण धात्वर्थो बलादन्यः प्रतीयते । प्रहाराहारसंहार-विहार-परिहारवत् । इति । अथ तवर्गीयान्ता अनुदात्तेतः । एध वृद्धौ । **टित आत्मनेपदानां टेरे** । ३ । ४ । ७९ । एधते । **सार्वधातुकमपित्** १ । २ । ४ । ङिद्वत्स्यात् । **आतो ङितः** । ७ । २ । ८१ । आतः परस्य ङितामाकारस्य इय् स्यात् । यलोपः । एधेते, एधन्ते । **थासः से** । ३ । ४।८० । एधसे, एधेथे एधध्वे । अतो गुणे । एधे, एधावहे, एधामहे । **आमेतः** ।३।४। ९० । लोट एकारस्याम् । एधताम् एधेताम् एधन्ताम् । **सवाभ्यां वामौ** । ३ । ४ । ९१ । एधस्व, एधेथाम् , एधध्वम् । **एत ऐ** । ३ । ४।९। लोडुत्तमस्य एत ऐ स्यात् । आमोपवादः । एधै, एधावहै एधामहै । **आडजादीनाम्** । ६ । ४ । १०२ । लुङादिष्विति । आटश्च । ऐधत, ऐधेताम् , ऐधन्त । ऐधथाः, ऐधेथाम् , ऐधध्वम् ऐधे, ऐधावहि । ऐधामहि । **लिङः सीयुट्** । ३ । ४ । १०२ - सलोपो, यलोपश्च । एधेत । एधेयाताम् । **झस्य रन्** । ३ । ४ १०५ । लिङो झस्य रन् स्यात् । एधेरन् एधेथाः, एधेयाथाम् , एधेध्वम् । **इटोऽत्** । ३ । ४। १०६ । एधेय, एधेवहि, एधेमहि । परोक्षे लिट् । **इजादेश्च गुरुमतोऽनृच्छः** । ३ । १ । ३५ । इजादिर्यो धातुर्गुरुमानृच्छत्यन्यस्तत आम् स्याल्लिटि । आमो मकारस्य नेत्वम् । आस्कासोराम् विधानात् । **आमः** ।२।४।८१। आमः परस्य प्रत्ययस्य लुक् स्यात् । **कृञ्चानुप्रयुज्यते लिटि** ।३।१।४०। आमन्ताल्लिट् पराः कृभ्वस्तयोऽनुप्रयुज्यन्ते । कृवस्तु क्रियाफले परगामिनि परस्मैपदे प्राप्ते । **आम्प्रत्ययवत्कृञोऽनुप्रयोगस्य** ।१। २ । ६३ । आम् प्रकृत्या तुल्यमनुप्रयुज्यमानात्कृञः पूर्ववदात्मनेपदं स्यात् । **लिटस्तझयोरेशिरेच्** ।३।४।८१। एधां कृ ए इति स्थिते , **असंयोगाल्लिट् कित्** ।१।२।५। अपिल्लिट् कित्स्यात् । क्ङिति चेति निषेधाद्गुणो न । द्वित्वात्परत्वाद् यणि प्राप्ते । **द्विर्वचनेऽचि** ।१।१।५९। द्वित्वनिमित्तेऽचि परे अच आदेशो न स्यात् , द्वित्वे कर्तव्ये । **उरत्** । ७ । ४।६६। अभ्यासऋवर्णस्य अत्स्यात्प्रत्यये परतः । रपरत्वम् । हलादिः शेषः । **कुहोश्चुः** । ७ । ४ । ६२। अभ्यासस्यैव । एधांचक्रे । एधांचक्राते । एधांचक्रिरे । **एकाच उपदेशेऽनुदात्तात्** ।७।४।१०। उपदेशे यो धातुरेकाजनुदात्तश्च ततः परस्य वलादेरार्धधातुकस्येट् न स्यात् । एधांचकृषे एधांचक्राथे । **इणः षीध्वंलुङ् लिटां धोऽङ्गात्** ।८।३।७८। एषां धस्य मूर्धन्यादेशः स्यात् । एधांचकृढ्वे । एधांचक्रे एधांचकृवहे, एधांचकृमहे । एधांबभूव, एधांबभूवतुरित्यादि । **अत आदेः** ।७।४।७०। अभ्यासस्यादेरतो दीर्घः स्यात् । एधामास एधामासतुरित्यादि । एधिता,

एधितारौ, एधितारः एधितासे, एधितासाथे। धि च।८।२।२५। सलोपः स्यात्। एधिताध्वे। ह एति।७।४।५२। तासस्त्योः सस्य हः स्यादेति परे। एधिताहे, एधितास्वहे, एधितास्महे। लृटि। एधिष्यते एधिष्येते एधिष्यन्ते। एधिष्यसे, एधिष्येथे एधिष्यध्वे। एधिष्ये, एधिष्यावहे एधिष्यामहे। आशीर्लिङि आर्धधातुकत्वात् लिङः सलोपो न। सीयुट्सुटोः प्रत्ययावयवत्वात्षत्वम्। एधिषीष्ट, एधिषीयास्ताम्, एधिषीरन्। एधिषीष्ठाः एधिषीयास्थाम्, एधिषीध्वम्। एधिषीय, एधिषीवहि, एधिषीमहि। ऐधिष्ट। ऐधिषाताम्। आत्मनेपदेष्वनतः।७।१।५। अनकारात्परस्यात्मनेपदेषु झस्य अत्स्यात्। ऐधिषत। ऐधिष्ठाः, ऐधिषाथाम्। इणः षीध्वं लुङ्लिटां धोऽङ्गात्। ऐधिढ्वम्। इण् भिन्न एव इण् गृह्यते इति पक्षे ऐधिध्वम्। ऐधिषि ऐधिष्वहि, ऐधिष्महि। ऐधिष्यत ऐधिष्येताम्, ऐधिष्यन्त। ऐधिष्यथाः ऐधिष्येथाम्, ऐधिष्यध्वम्। ऐधिषि, ऐधिष्वहि, ऐधिष्महि। उदात्तत्वाद् वलादेरिट् अनुदात्ताः संगृहीष्यन्ते

ऊदृदन्तैर्यौति रुक्ष्णु शी स्नु नु क्षु श्वि डीङ् श्रिभिः।
वृङ् वृञ्भ्यांञ्च विनैकाचोऽजन्तेषु निहताः स्मृताः ॥१॥

कवर्गमध्ये शकिरेव पठ्यते पचिः सिचिर्मुच्लृरिची विचिर्वचिः।
इमे तु षट् यान्ति चकारतः पुनश्छकारतः पृच्छतिरेव नेतरः ॥ २ ॥

त्यजिर्निजिर्भञ्जिभुजी च मस्जति-र्भजिर्युजिर्भ्रस्जति रञ्जती यजिः।
विजीरुजी स्वञ्जतिसञ्जती सृजि-र्जकारतः पञ्चदशैव कीर्तिताः ॥३॥

अदिः क्षुदिः पद्यति विद्यती खिदि-स्तुदिच्छिदी स्विद्यनुदी भिदिः शदिः।
सदिर्विनद् स्कन्दि हदी दकारतो मनीषिभिः पञ्चदशैव दर्शिताः ॥४॥

क्रुधिः क्षुधिर्बुध्यतिबन्धिसिध्यति व्यधी रुधो राधशुधी युधिस्तथा।
इमे च राधिश्च धकारतो बुधैर्दर्शि चैकादश नैव तत्परे ॥ ५ ॥

नकारतो मन्यहनी द्वकौ स्मृतौ पकारतस्तृप्यति दृप्यती क्षिपिः।
लुपिर्लिपिश्चाप्लृवपो शपिस्वपी तपिस्तिपिश्चापी सृपिश्छुपिः स्मृतः ॥६॥

त्रयोदशैतेऽथ मकारतो यमी रभिर्लभिश्चेति न चेतरे त्रिकात्।
गमिं नमिं चापि यमिं रमिं तथा पठन्ति तज्ज्ञाश्चतुरो मकारतः ॥७॥

क्रुशिर्दशिर्दंशिदिशो मृशि स्पृशो रिशी रुशिश्चापि लिशिस्तथा विशिः
दशैव तालव्यशकारतस्त्विमे भवन्ति शास्त्रे निहता न चापरे ॥८॥

कृषिं त्विषिं पुष्यतुषी द्विषिं दुषिं पिषिं विषिं शिलष्यशिषी शुषिं तथा।
वदन्ति मूर्धन्यषकारतो बुधाः क्वचिन्नचैकादशतोऽधिकान्पुनः ॥९॥

अथापि सान्तौ वसतिर्घसिर्द्वकौ दिहिर्दुहिर्नह्यति रोहती वहिः।
दहिर्मिहिश्चापि लिहिः प्रकीर्तिता हकारतोऽष्टौ निपुणैर्मनीषिभिः ॥१०॥

श्यनादिरूपमापन्ना ज्ञेयास्तद्भिन्नशुद्धये।
सानुबन्धा अपि तथा शुद्धानां विनिवृत्तये ॥११॥

नचानिटष्टवर्गान्ताः कवर्गान्ताः शकिं विना ।
तथझान्ताः फत्रयस्-लवकारान्तका अपि ॥ १२ ॥

स्पर्ध संघर्षे । संघर्षः पराभिभवेच्छा । धात्वर्थेनोपसंग्रहादकर्मकः । स्पर्धते, स्पर्धताम्, अस्पर्धत, स्पर्धेत । **शर्पूर्वाः खयः** ।७।४।६१। हलादिः शेष इत्यस्यापवादः । पस्पर्धे, स्पर्धिता, स्पर्धिष्यते । स्पर्धिषीष्ट, अस्पर्धिष्ट, अस्पर्धिष्यत । गाधृ प्रतिष्ठालिप्सयोर्ग्रन्थे च । गाधते, जगाधे । बाधृ लोडने । बाधते । नाथृ नाधृ याच्ञोपतापैश्वर्याशीःषु । आशिषि नाथ इति वाच्यम् ।*। अस्याशिष्येवात्मनेपदं स्यात् । नाथते । अन्यत्र नाथति । दध धारणे । दधते । **अत एकहल्मध्येऽनादेशादेर्लिटि** ।६।४।१२०। असंयुक्तहल्मध्यस्थस्याकारस्य एकारः स्यादभ्यासलोपश्च किति लिटि । **थलि च सेटि** ।६।४।१२१। प्रागुक्तं स्यात् । आदेशश्चेह वैरूप्यसंपादक एवाश्रीयते । देधे, देधाते, देधिरे । लिटा आदेशविशेषणादिह स्यादेव । नेमिथ सेहे । वदि अभिवादनस्तुत्योः । **इदितो नुम् धातोः** ।७।१।५८। वन्दते ववन्दे । भदि कल्याणे सुखे च । भन्दते । स्पदि किञ्चिच्चलने । स्पन्दते । क्लिदि परिदेवने । शोक इत्यर्थः । क्लिन्दते चैत्रम् । मुद हर्षे । मोदते । दद दाने । ददते । **न शसददवादि गुणानाम्** ।६।४।१२६। एत्वाभ्यासलोपौ न स्तः । दददे, ददाते, दददिरे । ष्वद आस्वादने । **धात्वादेः षः सः** ।६।१।६४। स्वदते । षात्पदाद्योरिति षत्वनिषेधः । अनुस्वदते । उर्द माने क्रीडायां च । **उपधायां च** ।८।२।७८। धातोरुपधाभूतयो रेफवकारयोर्हल्परयोः परे इको दीर्घः स्यात् । ऊर्दते, ऊर्दांचक्रे । कुर्द क्रीडायाम् । कूर्दते । षूद क्षरणे । सूदते, सुषूदे । सेक्, सृप्, सृस्त्, सृज, स्तृ, स्त्यान्ये दन्त्याजन्तसादयः । एकाचः षोपदेशाः ष्वष्क् स्विद् स्वद् स्वञ्जि स्वप् स्मिङः । दन्त्यः केवलदन्त्यो नतु दन्त्योष्ठ्योऽपि, ष्वष्कादीनां पृथग्ग्रहणाज्ज्ञापकात् । ह्राद अव्यक्ते शब्दे । ह्लादी सुखे च । चादव्यक्ते शब्दे । ह्लादते । स्वाद आस्वादने स्वादते । पर्द कुत्सिते शब्दे । गुदरवे इत्यर्थः । यती प्रयत्ने । यतते, येते । कत्थ श्लाघायाम् । कत्थते । + । अथ परस्मैपदिनः । अत सातत्यगमने । अतति । अत आदेः आत, आततुः । लुङि । आतिस् ईत् इति स्थिते । **इट ईटि** ।८।२।२८। इति लोपः ॥ सिज्लोप एकादेशे सिद्धो वाच्यः ।*। आतीत्, आतिष्टाम्, आतिषुः । **वदव्रजहलन्तस्याचः** ।७।२।३। एषामचः स्थाने वृद्धिः स्यात्, सिचि परस्मैपदे । इति प्राप्ते । **नेटि** ।७।२।४। इडादौ सिचि वृद्धिर्न स्यात् । मा भवान् अतीत्, चिती संज्ञाने । चेतति, अचेतीत्, अचेतिष्टामित्यादि । च्युतिर् आसेचने । आङ् ईषदर्थे अभिव्याप्तौ च इर इत्संज्ञा वाच्या । च्योतति, चुच्योत । **इरितो वा** ।३।१।५७। अस्माच्च्लेरङ् वा स्यात्परस्मैपदे परे । अच्युतत्, अच्योतीत् । मन्थ विलोडने । मन्थति । यासुटः किदाशिषीति कित्त्वादनिदितामिति नलोपः । मथ्यात् । सिध् गत्याम् । सेधति सिषेध । असेधीत् । सात्पदाद्योरिति निषेधे प्राप्ते । **उपसर्गात्सुनोतिसुवतिस्यतिस्तौतिस्तोभतिस्थासेनयसेधसिचसञ्जस्वञ्जाम्** ।८।३।६५। उपसर्गस्थादिणः परस्य एषां सस्य षः स्यात् । **सदिरप्रतेः** ।८।३।६६। स्पष्टम् । **स्तम्भेः** ।८।३।६७। **अवाच्चालम्बनाविदूर्ययोः** ।८।३।६८।

अवास्तन्भेरेतयोरर्थयोः षत्वं स्यात्। **वेश्च स्वनो भोजने** ।८।३।६९। व्यवाभ्यामित्यर्थः । **परिनिविभ्यः सेवसितसयसिवुसहसुट्स्तुस्वञ्जाम्** ।८।३।७०। सस्य षः स्यात् । निषेधति । **प्राक् सितादड्व्यवायेऽपि** ।८।३।६३। सेवसितेत्यत्र सितशब्दात्प्राग् ये सुनोत्यादयस्तेषामड्व्यवायेऽपि षत्वं स्यात् । न्यषेधत्, न्यषेधीत् । **स्थादिष्वभ्यासेन चाभ्यासस्य** ।८।३।६४। प्राक्सितात्स्थादिष्वभ्यासेन व्यवधानेऽपि षत्वं स्यात् । निषिषेध, निषिषिधतुः । **सेधतेर्गतौ** ।८।३।११३। षत्वं न स्यात् । गङ्गां विसेधति । षिधू शास्त्रे माङ्गल्ये च । **स्वरतिसूतिसूयतिधूञूदितो वा** ।७।२।४४। एषां वलादेरार्धधातुकस्येड् वा स्यात् । **झषस्तथोर्धोऽधः** ।८।२।४०। झषः परयोस्तथयोर्धः स्यात् न तु दधातेः । जश्त्वम् । सिषेधिथ सिषेद्ध, सेधिता, सेद्धा । असेधीत्, असेधिष्टाम् । पक्षे असैत्सीत् । **झलो झलि** ।८।२।२६। झलः परस्य सस्य लोपः स्याज्झलि । असैद्धाम्, असैत्सुः, असैत्सीः । खाद भक्षणे । खादति, चखाद । गद व्यक्तायां वाचि । गदति । **अत उपधायाः** ।७।१।६१। ञिति णिति च वृद्धिः स्यात् । जगाद, जगदतुः जगदुः । **णलुत्तमो वा** ।७।१।९१। वा णित्स्यात् । जगाद, जगद । **अतो हलादेर्लघोः** ।७।२।७। हलादेर्लघोरकारस्य इडादौ परस्मैपदे परे सिचि वृद्धिर्वा स्यात् । अगादीत्, अगदीत् । **नेर्गदनदपतपदघुमास्यतिहन्तियातिवातिद्रातिप्सातिवपतिवहतिशाम्यतिचिनोतिदेग्धिषु च** ।८।४।१७। नेर्नस्य णः स्यात् । प्रणिगदति । रद विलेखने । रदति । रराद, रेदतुः । णद अव्यक्ते शब्दे । **णो नः** ।६।१।६५। धातोरादेर्णस्य नः स्यात् । णोपदेशास्त्वनर्द् नाटि नाथ नाध् नन्द् नक्क नॄ नृतः । नाधतेर्नृनद्योश्च केचिण्णोपदेशतामाहुः । **उपसर्गादसमासेऽपि णोपदेशस्य** ।८।४।१४। उपसर्गस्थान्निमित्तात्परस्य णोपदेशस्य धातोर्नस्य णः स्यात्समासेऽसमासेऽपि । प्रणदति, प्रणिनदति । अर्द गतौ, याचने च । अत आदेः । **तस्मान्नुड् द्विहलः** ।७।४।७१। द्विहलो धातोर्दीर्घीभूतादकारात्परस्य नुट् स्यात् । आनर्द, आर्दीत् । नर्द शब्दे । णोपदेशत्वाभावान्न णः । प्रनर्दति । अति अदि बन्धने । अन्तति. आनन्त । अन्दति, आनन्द । इदि परमैश्वर्ये । इन्दति, इन्दांचकार । गडि वदनैकदेशे । गण्डति । णिदि कुत्सायाम् । निन्दति, प्रणिन्दति । टुनदि समृद्धौ । **आदिर्ञिटुडवः** ।१।३।५। एते इतः स्युः । नन्दति । इदित्वान्नलोपो न । नन्द्यात् । चदि आह्लादे । चन्दति । चचन्द । कदि क्रदि क्लदि आह्वाने रोदने च । कन्दति, क्रन्द्यात् । शुन्धगतौ. शुन्धति. न लोपः शुध्यात् ।॥ अथ कवर्गीयान्ता अनुदात्तेतः । शीकृ सेचने । शीकते, शिशीके । लोकृ दर्शने, लोकते । श्लोकृ संघाते । श्लोकते । रेकृ शङ्कायाम् । रेकते । सेकृ गतौ । अषोपदेशत्वान्नषः । सिसेके । शकि शङ्कायाम् शङ्कते । शशङ्के । अकि लक्षणे । अङ्कते, आनङ्के । वकि कौटिल्ये । वङ्कते । ककु लौल्ये । लौल्यं गर्वश्चापल्यं च । ककते । वृक आदाने । वर्कते । ॠदुपधेभ्यो लिटः कित्वं गुणात्पूर्वविप्रतिषेधेन । ॥ । ववृके । चकतृप्तौ प्रतिघाते च । चकते । ढौकृ त्रौकृ ष्वष्क वस्क मस्क रघि लघि गत्यर्थाः । डुढौके, तुत्रौके ।

मुच्धातुष्ठिवुष्वक्कतीनां प्रतिषेधो वक्तव्यः ।*। ष्वक्कते, षष्वक्के । लघि भोजननिवृत्तावपि । लङ्घते । श्लाघृ कत्थने । श्लाघते ।*। अथ परस्मैपदिनः । फक्कनीचैर्गतौ । फक्कति । पफक्क । तक हसने । तकि कृच्छ्रजीवने । तङ्कति । बुक्क भषणे, भषणं श्वरवः । बुक्कति । शाखृ व्याप्तौ । शाखति । उख उखि वख वखि मख मखि रगि लगि गत्यर्थाः । ओखति । **अभ्यासस्यासवर्णे** । ६ । ४ । ७८ । अभ्यासस्य इवर्णोवर्णयोरियुवङौ स्तोऽसवर्णेऽचि । उवोख । ऊखतुः, ऊखुः । उङ्खांचकार । ववखतुः । वादित्वादेत्वाभ्यासलोपौ न । वङ्खति, मेखतुः । प्रायेण आङ्पूर्वः । आलिङ्गति । मघि मण्डने । मङ्घति । शिघि आघ्राणे । शिङ्घति । अथ चवर्गीयान्ता अनुदात्तेतः । वर्च दीप्तौ । वर्चते । लोचृ दर्शने । लोचते, लुलोचे । कच बन्धने । कचते । कचि काचि दीप्तिबन्धनयोः । काञ्चते चकाञ्चे । मचि धारणोच्छ्रायपूजनेषु । मञ्चते । पचि व्यक्तीकरणे । प्रपञ्चते । ऋज गतिस्थानार्जनोपार्जनेषु । अर्जते । तुड्विधौ ऋकारैकदेशो रेफो हल्त्वेन गृह्यते । तेन द्विहल्त्वात् नुट् । आनृजे । ऋजिभृजी भर्जने । ऋञ्जते । ऋञ्जांचक्रे । आर्ञ्जिष्ट । भर्जते । अभर्जिष्ट । एजृभ्रेजृभ्राजृ दीप्तौ । ईजगतिकुत्सनयोः । ईजांचक्रे ।*। अथ परस्मैपदिनः । शुच शोके । शोचति । कुच्ञ क्रुञ्च कौटिल्याल्पीभावयोः । नलोपः । कुच्यात्, क्रुच्यात् । लुञ्च अपनयने । अञ्चु गतिपूजनयोः । गतौ न लोपः । अच्यात् । पूजायाम् । अञ्च्यात् । वञ्चु म्रुचुम्लुचुगत्यर्थाः । वञ्चति । **जॄस्तम्भुम्रुचुम्लुचुग्रुचुग्लुचुग्लुञ्चुश्विभ्यश्च** ।३।१।५८। एभ्यश्च्लेरङ् वा स्यात् । अम्रुचत्, अम्रोचीत् । अम्लुचत्, अम्लोचीत् । ग्रुचु ग्लुचु स्तेयकरणे । जुग्रोच, अग्रुचत्, अग्रोचीत् । अग्लुचत् अग्लोचीत् । ग्लुञ्चुषस्ज गतौ । क्त्वायान्नलोपः । अग्लुचत्, अग्लुञ्चीत् । सस्य श्चुत्वेन शः, तस्य जश्त्वेन जः । सज्जति । अयमात्मनेपद्यपि, सज्जते । गुजि अव्यक्ते शब्दे, गुञ्जति । अर्च पूजायाम् । आनर्च । म्लेच्छ अव्यक्ते शब्दे, अस्फुटे अपशब्दे चेत्यर्थः । मिम्लेच्छ । वाछि इच्छायाम् । वाञ्छति । आछि आयामे । आञ्छति । औपदेशिकह्रस्वाभावात् । अत आदेरिति न दीर्घः । आञ्छ । तपरकरणं मुखसुखार्थमिति मते तु नुट् । आनाञ्छ । मुर्च्छा मोहसमुच्छ्राययोः । उछि उञ्छे । उञ्छः कणश आदानं कणिशाद्यर्जनं शिलमिति यादवः । उञ्छति । ध्वज ध्वजि गतौ । ध्वजति ध्वञ्जति । कूज अव्यक्ते शब्दे । चुकूज । अर्ज अर्जने गर्ज शब्दे । तर्ज भर्त्सने । कर्ज व्यथने । चकर्ज । अज गतिक्षेपणयोः । अजति, अजतु, अजेत्, आजत् । **अजेर्व्यघञपोः** ।२।४।५६। अजेर्वी इत्ययमादेशः स्यादार्धधातुकविषये, घञमपं च वर्जयित्वा । वलादावार्धधातुके वेष्यते ।*। विवाय, विव्यतुः, विव्युः । थलि एकाजिति इण्निषेधे प्राप्ते । **कृसृभृवृस्तुद्रुस्रुश्रुवो लिटि** ।७।२।१३। एभ्यो लिट इण्न स्यात् । क्रादीनां चतुर्णां ग्रहणं नियमार्थम् प्रकृत्यश्रयः, प्रत्यायाश्रयो वा यावान् इण्निषेधः स लिटि चेत्तर्हि क्रादिभ्य एव नान्येभ्य इति । ततश्चतुर्णां थलि भारद्वाजनियमप्रापितस्य वमादिषु क्रादिनियमप्रापितस्य च इटो निषेधार्थम् । **अचस्तास्वत्थल्यनिटो नित्यम्** ।७।२।७१। उपदेशेऽजन्तो यो धातुस्तासौ नित्यानिट् ततः परस्य थल इण न स्यात् । **ऋतो भारद्वाजस्य** ।७।२।६३। तासौ नित्यानिट ऋदन्तादेव थलो नेड् भारद्वाजस्य मतेन । तेन अन्यस्य मते इट् स्यादेव । विवयिथ, विवेथ । आजिथ । विवाय, विवय, विव्यिव, विव्यिम । वेता अजिता । वेष्यति अजिष्यति । वीयात् । **सिचि वृद्धिः**

परस्मैपदेषु ।७।२।१। इगन्ताङ्गस्य वृद्धिः स्यात्परस्मैपदे परे सिचि। अवैषीत् आजीत्। खजि गति वैकल्ये। खञ्जति। एजृ कम्पने। टु ओस्फूर्जा वज्रनिर्घोषे। स्फूर्जति। लजलजि भर्जने। गजमदने शब्देच। व्रजगतौ। वदव्रजेति वृद्धिः। अव्राजीत्।❀। अथ टवर्गीयान्ता आत्मनेपदिनः। अट्ट अतिक्रमहिंसयोः। अट्टते। वेष्ट वेष्टने। चेष्ट चेष्टायाम्। अचेष्टिष्ट गोष्ट लोष्ट संघाते। घट्ट चलने। जघट्टे। स्फुट विकसने। स्फोटते। हेठ विबाधायाम्। जिहेठे। हिडिगत्यनादरयोः। हिण्डते। हुडि संघाते। कुडि दाहे। वडि विभाजने। वण्डते। भडिपरिभाषणे। परिहासः सनिन्दोपालम्भश्च परिभाषणम्। बभण्डे। पिडि संघते। पिण्डते। मुडि मार्जने। मार्जनं शुद्धिर्न्यग्भावश्च। चडि कोपे। चण्डते। तडि ताडने। पडि गतौ। पण्डते। खडिमन्थे। हेडृहोडृ अनादरे। जिहेडे। बाडृ आप्लवे। बाडते। शाडृश्लाघायाम् शाडते। ❀। अथ परस्मैपदिनः। कटे वर्षावरणयोः। चकाट। चटे इत्येके। सिचि अतो हलादेर्लघोरिति वृद्धौ प्राप्तायाम्। ह्मयन्तक्षणश्वसजागृणिश्व्येदिताम् ।७।२।५। एषां वृद्धिर्न स्यादिडादौ सिचि। अकटीत्। अट पट गतौ। पेटतुः पेटुः। रट परिभाषणे। लट बाल्ये। ललाट। शटरुजाविशरणगत्यवसादनेषु। वट वेष्टने। ववटतुः, ववटुः। किट खिट त्रासे। खेटति। शिट षिट अनादरे। भट भृतौ। तट उच्छ्राये। खट काङ्क्षायाम् नट नृत्तौ। पिट शब्द संघातयोः। लुड् विलोडने। लोडति। इट किट कटी गतौ। केटति। ई इ इति प्रश्लेषात् अयति, इयाय, ईयतुः, ईयुः। दीर्घस्यतु इजादेरित्यामि। अयांचकारेत्यादि। मडिभूषायाम्। चुडिअल्पीभावे। मुडि खण्डने। रुटि लुटि स्तेये। लुण्टति। रुठि लुठि इत्येके। स्फुटिर् विशरणे। इरित्वादङ् वा। अस्फुटत्, अस्फोटीत्। स्फुटि इत्येके। स्फुण्टति। पठव्यक्तायां वाचि। पेठतुः पेठुः। अपाठीत्, अपठीत्। मठ मदनिवासयोः। रट परिभाषणे। हठप्लुतिशठत्वयोः। बलात्कार इत्येके। हठति। शठ कैतवे। शुठ शुठि कुठि प्रतिघाते। चुड्ड भावकरणे। भावकरणमभिप्रायसूचनम्। चुड्डति। क्रीड़ विहारे। चिक्रीड। लड विलासे। लडति। रलयोर्डलयोश्चैकत्वस्मरणाल्ललतीति स्वाम्यादयः। गडि वदनैकदेशे। गण्डति।❀। अथ पवर्गीयान्ता आत्मनेपदिनः। तिपृतेपृष्टिपृष्टेपृक्षरणार्थाः। तेपते। क्रादिनियमादिट्। तितिपिषे। तेप्ता तेप्स्यते। लिङ्सिचावात्मनेपदेषु ।१।२।११। इक्समीपाद्धलः परौ झलादी लिङ् आत्मनेपदपरः सिच्चेत्येतौ कितौ स्तः। कित्वान्न गुणः। तिप्सीष्ट। लुङि झलोझलीति सलोपः। अतिप्त। अतिप्सातोम्, अतिप्सत। तिष्टिपे तिष्टिपाते। तेपृकम्पने च। टुवेपृ कम्पने। वेपते। त्रपूष् लज्जायाम्। त्रपते। तॄफलभजत्रपश्च ।६।४।१२२। एषामत एकारोऽभ्यासलोपश्च स्यात्किति लिटि सेटि थलि च। त्रेपे, त्रेपाते, त्रेपिरे। ऊदित्वादिड् वा। त्रपिता, त्रप्ता, त्रपिषीष्ट त्रप्सीष्ट। कपि चलने। कम्पते चकम्पे। क्लीबृ अधार्ष्ट्ये। चिक्लीबे। क्षीबृ मदे। क्षीबते। ष्टभिस्कभिप्रतिबन्धे। स्तम्भते, उत्तम्भते। विस्तम्भते। अत्र स्तम्भेरिति षत्वं तु न भवति, सौत्रस्यैव तत्र ग्रहणात्। जभीजृभी गात्रविनामे। रधिजभोरचि ।७।१।६१। एतयोर्नुमागमः स्यादचि। जम्भते जजम्भे, जम्भिता अजम्भिष्ट। जृम्भते। गल्भधार्ष्ट्ये। गल्भते। श्रम्भुप्रमादे। ष्टुभु स्तम्भे। स्तोभते। विष्टोभते। व्यष्टोभिष्ट।❀। अथ परस्मैपदिनः। गुपूरक्षणे। गुपूधूपविच्छिपणिपनिभ्य आयः ।३।१।२८। स्वार्थे। पुगन्तेति गुणः। सनाद्य-

न्ता धातवः ।३।१।३२। धातुत्वाल्लडादयः । गोपायति । आयादय आर्धधातुके वा ।३।१।३१ कास्प्रत्ययादाममन्त्रे लिटि ।३।१।३५। कास्यनेकाज्ग्रहणं कर्तव्यम् ।*। सूत्रे प्रत्ययग्रहणमपनीय तत्स्थाने अनेकाच इति वाच्यमित्यर्थः । आर्धधातुके ।६।४।४६। इत्यधिकृत्य । अतो लोपः ।६।४।४८। अकारस्य लोपः स्यादार्धधातुके परे । गोपायांचकार। गोपायांबभूव, जुगोप, ऊदित्वाद्वेट् । जुगोपिथ जुगोप्थ । गोपायिता, गोपिता, गोप्ता। अगोपायीत्, अगोपीत् अगौप्सीत् । धूपसंतापे धूपायति । धूपायांचकार दुधूप । जप जल्प व्यक्तायां वाचि । जप मानसे च । रपलपव्यक्तायां वाचि । चुप मन्दायां गतौ । चोपति चोपिता । तुपतुम्प हिंसायाम् । तुतोप, तुतुम्प, किरवान्न लोपः । तुप्यात् । पारस्करे पाठात् सुट् । प्रस्तुम्पति गौः । चुम्बिवक्त्रसंयोगे । चुम्बति । शुभशुम्भभाषणे, भासने इत्येके, हिंसायामित्यन्ये ।*। अथानुनासिकान्ता आत्मनेपदिनः । घुण घूर्ण भ्रमणे । पण व्यवहारे स्तुतौ च । पन च पृथग्निर्देशात्स्तुतावेव संबध्यते, पनिसाहचर्यात्पणेरपि स्तुतावेवायप्रत्ययः । अन्यत्र पणते, पेणे । अनुबन्धस्य केवले चरितार्थत्वादायप्रत्ययान्नात्मनेपदम्। पणायति । पणायांचकार, पेणे । पनायति, । भामक्रोधे । भामते । क्षमूष् सहने । क्षमते, चक्षमे । चक्षमिषे, चक्षंसे । चक्षमिध्वे । चक्षंध्वे । चक्षमिवहे । म्वोश्च ।८।२।६५। मान्तस्य धातोर्मस्य नः स्यात् मकारे वकारे च । चक्षण्वहे । चक्षमिमहे, चक्षण्महे । क्षमिषीष्ट, क्षंसीष्ट । अक्षमिष्ट अक्षंस्त । कमु कान्तौ । कान्तिरिच्छा । कमेर्णिङ् ।३।१।३०। स्वार्थे । कामयते । अयामन्ताल्वाय्येत्न्विष्णुषु ।६।४।५५। आम् अन्त आलु आय्य इत्नु इष्णु एषु णेरयादेशः स्यात् । लोपापवादः । कामयांचक्रे । चकमे । कामयिता, कमिता । णिश्रिद्रुस्रुभ्यः कर्तरि चङ् ।३।१।४८। एभ्यश्च्लेश्चङ् स्यात्कर्त्रर्थे लुङि परे । काम् इ अतेति स्थिते । णेरनिटि ।६।४।५१। अनिडादौ आर्धधातुके परे णेर्लोपः । परत्वादेरनेकाच इति यणि प्राप्ते । एयल्लोपावियङ् यण्गुणवृद्धिदीर्घेभ्यः पूर्वविप्रतिषेधेनेति वाच्यम् ।*। णौ चङ्युपधाया ह्रस्वः ।७।४।११। चङ् परे णौ यदङ्गं तस्योपधाया ह्रस्वः स्यात् । चङि ।६।१।११ चङि परे अनभ्यासधात्ववयवस्यैकाचः प्रथमस्य द्वे स्तः, अजादेस्तु द्वितीयस्य । सन्वल्लघुनि चङ्परेऽनग्लोपे ७।४।९३। चङ् परे इति बहुव्रीहिः । स च अङ्गस्येति च द्वयमप्यावर्तते अङ्गसंज्ञानिमित्तं यच्चङ् परं णिरिति यावत्, तत्परं यल्लघु तत्परो योऽङ्गस्याभ्यासस्तस्य सनीव कार्यं स्यात् णावग्लोपेऽसति । सन्यतः ।८।४।७९। अभ्यासस्यात इकारः स्यात्सनि । दीर्घो लघोः ।७।४।९४। लघोरभ्यासस्य दीर्घः स्यात्सन्वद्भावविषये । अचीकमत । णिङभावपक्षे । कमेश्च्लेश्चङ् वक्तव्यः ।*। णेरभावान्न दीर्घसन्वद्भावौ । अचकमत । अथ परस्मैपदिनः । रण वण भण कण शब्दार्थाः । रणति वणति, ववणतुः । ओणृ अपनयने । ओणाञ्चकार । शोणृ वर्णगत्योः । शोणति, शुशोण । श्रोणृ संघाते । कनी दीप्तिकान्तिगतिषु चकान । ष्टन वन शब्दे । वनषण संभक्तौ । ससान, सेनतुः । ये विभाषा ।६।४।४३। जनसनखनामात्वं वा स्याद् यादौ क्ङिति । सायात् सन्यात् । चमुजमु अदने । ष्ठिवुक्लमुचमां शिति ।७।३।७५। एषामचो दीर्घः स्याच्छिति । आङि चम इति वाच्यम् ।*। आचामति

अचमीत् । क्रमु पादविक्षेपे । भ्राशभ्लाशभ्रमुक्रमुक्लमुत्रसित्रुटिलषः ।७।३।७६। एभ्यः श्यन् वा स्यात्कर्त्रर्थे सार्वधातुके परे । क्रमः परस्मैपदेषु ।७।३।७६। क्रमेर्दीर्घः स्यात्परस्मैपदे परे शिति । क्राम्यति, क्रामति । क्राम्यतु, क्रामतु । स्नुक्रमोरनात्मनेपदनिमित्ते ।७।२।३६। अत्रैवेट् । अक्रमीत् ॥ अथ यरलवान्ता आत्मनेपदिनः । अय गतौ । अयते । दयायासश्च ।३।१।३७। दय अय आस् एभ्य आम् स्याल्लिटि । अयांचक्रे । अयिषीष्ट । विभाषेटः ।८।३।७६। इणः परो य इट् ततः परेषां षीध्वं लुङ् लिटां धस्य वा मूर्धन्यः स्यात् । अयिषीढ्वम् अयिषीध्वम् । आयिष्ट । आयिढ्वम्, आयिध्वम् । उपसर्गस्यायतौ ।८।२।१९। रस्य लः स्यात् । प्लायते, पलायते । निस्दुसोरुत्वस्यासिद्धत्वान्न लत्वम् । निरयते दुरयते । निर्दुरोस्तु निलयते दुलयते । दय दानगतिहिंसादानेषु । दयांचक्रे । रय गतौ । पूयी विशरणे दुर्गन्धे च । क्ष्मायी विधूनने, चक्ष्माये । स्फायी ओप्यायी वृद्धौ । प्यायते लिड्यङोश्च ।६।१।२९। लिटि यङि च प्यायः पीभावः स्यात् । पुनः प्रसङ्गविज्ञानाद्द्वित्वम् । एरनेकाच इति यण् । पिप्ये, पिप्याते, पिप्यिरे । दीपजनबुधपूरितायिप्यायिभ्योऽन्यतरस्याम् ।३।१।६१। एभ्यश्च्लेश्चिण् वा स्यादेकवचने तशब्दे परे । चिणो लुक् ।६।४।१०४। अप्यायि, अप्यायिष्ट । मल मल्ल धारणे । भल भल्ल परिभाषणहिंसादानेषु । बभल्ले । कल शब्दसंख्यानयोः । चकले । षेवृ सेवने । परिनिविभ्य इति षत्वम् । परिषेवते । अथ परस्मैपदिनः । ईर्ष्य ईर्ष्यायाम् । ईर्ष्यांचकार । हय गतौ । अहयीत् । ह्म्यन्तेति न वृद्धिः । अलं भूषणपर्याप्तिवारणेषु । अलति । अतोल्रान्तस्य ।७।२।२। अतः समीपौ यौ रेफलकारौ तदन्तस्याङ्गस्यातो वृद्धिः स्यात्परस्मैपदे परे सिचि । नेटीति निषेधस्य, अतो हलादेरिति विकल्पस्य चापवादः । मा भवान् आलीत् । त्रिफला विशरणे । तृफलेत्येत्वम् । फेलतुः, फेलुः । अफालीत् । मील निमेषणे । नील वर्णे । शील समाधौ । कील बन्धने । शूल रुजायां संघोषे च । तूल निष्कर्षे । पूल संघाते । मूल प्रतिष्ठायाम् । फुल्ल विकसने । फुल्लति । गल अदने । गलति । अगालीत् । दल विशरणे । चर गतिभक्षणयोः । चरति, अचारीत् । ष्ठिवु निरसने । ष्ठिवुक्लमुचमामितिदीर्घः । ष्ठीवति । धिन्वि कृण्वोर च ।३।१।८०। अनयोरकारोऽन्तादेशः स्यादुप्रत्ययश्च शब्विषये । अतो लोपः । तस्य स्थानिवत्त्वाल्लघूपधगुणो न । धिनोति, धिनुतः, धिन्वन्ति । लोपश्चास्यान्यतरस्यां म्वोः ।६।४।१०७। असंयोगपूर्वो यः प्रत्ययोकारस्तदन्तस्याङ्गस्य लोपो वा स्यात्, म्वोः परयोः । धिन्वः, धिनुवः । धिन्मः, धिनुमः । उतश्च प्रत्ययादसंयोगपूर्वात् ।६।४।१०६। हेर्लुक् स्यात् धिनु । नित्यत्वादकारलोपात्पूर्वमाट् । धिनवाव, धिनवाम । कृवि हिंसाकरणयोश्च । धिविवत् । मव बन्धने । मेवतुः, मेवुः । अमवीत्, अमावीत् । अव रक्षणादौ । माभवानवीत् । × । अथोष्मान्ता आत्मनेपदिनः । धुक्ष धिक्ष संदीपनक्लेशन जीवनेषु । धुक्षते, दुधुक्षे । वृक्ष वरणे । शिक्ष विद्योपादाने । भिक्ष भिक्षायामलाभे लाभे च । भिक्षते । दक्ष वृद्धौ शीघ्रार्थे च । दीक्ष मौण्ड्येज्योपनयननियमव्रतादेशेषु । दीक्षते । ईक्ष दर्शने । ईक्षांचक्रे । ईष गतिहिंसादर्शनेषु । भाष व्यक्तायां वाचि । भाषते । वेष्ट वृकशब्दे । हेष्ट ह्रेष्ट अश्वशब्दे । कासृ शब्दकुत्सायाम् । कासांचक्रे । भासृ दीप्तौ । बभासे । भाक्षः शसि इच्छायाम् । आशंसते, आशशंसे । ग्रसु ग्लसु

अदने । ईह चेष्टायाम् । ईहांचक्रे । गर्ह कुत्सायाम्, गर्हते । ऊह वितर्के । ऊहांचक्रे । गाहू विलोडने । गाहते, जगाहे । जगाहिषे, जघाक्षे । जगाहिढ्वे, जगाहिध्वे, जघाढ्वे । ढो ढे लोपः ।८।३।१३। गाहिता, गाढा गाहिषीष्ट, घाक्षीष्ट । अगाहिष्ट, अगाढ । गृहू ग्रहणे । गर्हते, जगृहे । ऋदुपधेभ्यो लिटः कित्वं गुणात्पूर्वविप्रतिषेधेन ।*। जगृहिषे, जघृक्षे, जघृढ्वे । गर्हिता, गर्ढा । गर्हिष्यते, घर्क्ष्यते, गर्हिषीष्ट, घृक्षीष्ट । अगर्हिष्ट, इडभावे । **शल इगुपधादनिटः क्सः** ।३।१।४५। च्लेः क्सः स्यात् । अघृक्षत । **क्सस्याचि** ।७।३।७२। अजादौ तङि क्सस्य लोपः स्यात् । अलोऽन्त्यस्य । अघृक्षाताम्, अघृक्षन्त । अथ परस्मैपदिनः । घुषिर् अविशब्दने । शब्दे इत्यन्ये । घोषति । इरित्वादङ् वा । अघुषत्, अघोषीत् । अक्षू व्याप्तौ । **अक्षोऽन्यतरस्याम्** ।३।१।७५। वा श्नुप्रत्ययः स्यात्कर्त्रर्थे सार्वधातुके परे । अक्ष्णोति, अक्ष्णुतः, अक्ष्णुवन्ति । पक्षे शप् । अक्षति, अक्षतः, अक्षन्ति । अक्ष्णोतु, अक्ष्णुहि । आक्ष्णोत । अक्ष्णुयात् । आनक्ष, आनक्षिथ, आनष्ठ । अक्षिष्यति, अक्ष्यति । ऊदित्वाद्वेट् । नेटीति निषेधः । मा भवानक्षीत् । इडभावे । आक्षीत्, आष्टाम्, आक्षुः । तक्षू त्वक्षू तनूकरणे । **तनूकरणे तक्षः** ।३।१।७६। श्नुः स्याद्वा शब्विषये । तक्ष्णोति, तक्षति वा काष्ठम् । ततक्षिथ ततष्ठ, अतक्षीत्, इडभावे । अताक्षीत् । रक्ष पालने । पक्ष परिग्रहे । चूष पाने । चुचूष । मूष स्तये । भूष अलंकारे । भूषति । ईष उञ्छे । रुष रिष हिंसायाम् । **तीषसहलुभरुषरिषः** ।७।२।४८। एभ्यस्तादेरार्धधातुकस्येड् वा स्यात् । रोषिता, रोष्टा, रोषिष्यति । रेषिता, रेष्टा । रेषिष्यति । भष भर्त्सने । भर्त्सनं श्वरवः । भषति । उष दाहे । ओषति । **उषविदजागृभ्योऽन्यतरस्याम्** ।३।१।३८। एभ्यो लिटयाम् वा स्यात् । ओषांचकार, उवोष । ऊषतुः ऊषुः । पुष पुष्टौ । पोषति । अनिट्केषु श्यना निर्देशादयं सेट् । पोषिता अङ्विधौ दैवादिकस्य ग्रहणान्नाङ् । अपोषीत् । श्रिषु श्लिषु प्रुषु प्लुषु दाहे । शिश्लेष, श्लेषिता । पुप्रोष, पुप्लोष । घस्लृ अद ँ अयं न सार्वत्रिकः । लिट्यन्यतरस्यामिति घस्लादेशविधानात् । ततश्च यत्र लिङ्गं वचनं वास्ति तत्रैवास्य प्रयोगः । अत्र पाठः शपि परस्मैपदे लिङ्गम् । लृदित्करणमङि । अनिट्कारिकासु पाठो वलाद्यार्धधातुके । क्मरचि तु विशिष्योपादानम् । घसति । घस्ता । **सः स्यार्धधातुके** ।७।४।४९। सस्य तः स्यात्सादावार्धधातुके । घत्स्यति । गमकाभावादाशिष्यप्रयोगः । **पुषादिद्युताद्यॢदितः परस्मैपदेषु** ।३।१।५५। पुषादेर्द्युतादेर्लृदितश्च परस्य च्लेरङ् स्यात्परस्मैपदेषु । अघसत् । हसे हसने । एदित्वान्न वृद्धिः । अहसीत् । शव गतौ । अशवीत् । अशावीत् । शश प्लुतगतौ । शशशतुः । मह पूजायाम् । अमहीत् । बृहि वृद्धौ शब्दे च । बृंहति । अर्ह पूजायाम् । आनर्ह । अथ द्युतादयः, आत्मनेपदिनः । द्युत दीप्तौ । द्योतते । **द्युतिस्वाप्योः संप्रसारणम्** ।७।४।६७। अभ्यासस्येत्यर्थः । दिद्युते, द्योतिता । **द्युद्भ्यो लुङि** ।१।३।९१। लुङः परस्मैपदं वा स्यात् । पुषादीत्यङ् । अद्युतत्, अद्योतिष्ट । श्विता वर्णे । ञिमिदा स्नेहने । मेदते । **मिदेर्गुणः** ।७।३।८२। मिदेरिको गुणः स्यादित्संज्ञकशकारादौ । एशः शकारादित्वाभावान्न गुणः । मिमिदे । अमिदत्, अमेदिष्ट । रुच दीप्तौ । अरुचत्, अरोचिष्ट । घुट परिवर्तने, स्रंसु ध्वंसु भ्रंसु अवस्रंसने । अस्रसत्, अस्रंसिष्ट । वृतु वर्तने । वर्तते, ववृते । **वृद्भ्यः स्यसनोः** ।१।३।९२। वृतादिभ्यः

परस्मैपदं वा स्यात्, स्ये सनि च। न वृद्भ्यश्चतुर्भ्यः ।७।२।५९। एभ्यः सकारादेरार्धधातुकस्येण् न स्यात् तङानयोरभावे। वर्त्स्यति। वर्तिष्यते। अवृतत् अवर्तिष्ट। वृधु वृद्धौ। शृधु शब्दकुत्सायाम्। स्यन्दू प्रस्रवणे। स्यन्दते। सस्यन्दिषे, सस्यन्त्से। स्यन्दिता, स्यन्ता। विकल्पमिटं बाधित्वा चतुर्ग्रहणसामर्थ्यान्न वृद्भ्य इति निषेधः। स्यन्त्स्यति, स्यन्दिष्यते, स्यन्त्स्यते। लुङि अस्यदत्, अस्यन्दिष्ट, अस्यन्त। **अनुविपर्यभिनिभ्यः स्यन्दतेरप्राणिषु।** ।८।३।७२। एभ्यः परस्याप्राणिकर्तृकस्य स्यन्दतेः सस्य षो वा स्यात्। अनुष्यन्दते, अनुस्यन्दते वा जलम्। अप्राणिष्विति पर्युदासान्मत्स्योदके अनुष्यन्दते इत्यत्रापि पक्षे षत्वम्। कृपू सामर्थ्ये। **कृपो रो लः** ।८।२।१८। कृपे रेफस्य ऋकारावयवस्य रस्य च लः स्यात्। कल्पते, चक्लृपे। चक्लृपिषे, चक्लृप्से। **लुटि च क्लृपः** ।१।३।९३। लुटि स्यसनोश्च क्लृपेः परस्मैपदं वा स्यात्। **तासि च क्लृपः** ।७।२।६०। कृपेः परस्य तासेः सकारादेरार्धधातुकस्य चेड्न स्यात् तङानयोरभावे। कल्प्तासि, कल्पितासे, कल्प्तासे। कल्प्स्यति, कल्पिष्यते, कल्प्स्यते। अक्लृपत्, अकल्पिष्ट अक्लृप्त। वृतः। द्युतादिर्वृतादिश्च गतः। घट चेष्टायाम्। घटते, जघटे। 'घटादयो मितः' इति वक्ष्यमाणेन मित्संज्ञा। तत्फलं णौ मितां ह्रस्वः, इति चिण्णमुलोर्दीर्घोऽन्यतरस्यामिति च वक्ष्यते। घटयति, विघटयति। व्यथ भयसंचलनयोः। व्यथते। **व्यथो लिटि** ।७।४।६८। अभ्यासस्य संप्रसारणं स्याल्लिटि। विव्यथे। प्रथ प्रख्याने। प्रस विस्तारे, म्रद मर्दने। स्खद स्खदने। क्षजि गतिदानयोः। मित्त्वसामर्थ्यादनुपधात्वेऽपि दीर्घविकल्पः। क्षञ्जम् २ क्षाञ्जम् २। अक्षाञ्जि अक्षञ्जि। दक्ष गतिहिंसनयोः। कदि क्रदि क्लदि वैक्लव्ये। वैकल्य इत्यन्ये। ञित्वरा संभ्रमे ।॥ अथ परस्मैपदिनः। ज्वर रोगे। गड सेचने। हेड वेष्टने। हेडति, जिहेड। हिडयति, अनादरे तु हेडयति। वट भट परिभाषणे। नट नृत्तौ। इत्थमेव पूर्वमपि पठितः। तत्रायं विवेकः। पूर्वं पठितस्य वाक्यार्थाभिनयो नाट्यमित्यर्थः। घटादौ पठितस्य पदार्थाभिनयो नृत्यमित्यर्थः। ष्टक प्रतिघाते, चक तृप्तौ। कखे हसने। एदित्वान्न वृद्धिः। अकखीत्। रगे शङ्कायाम्, लगे सङ्गे। ह्नगे ह्लगे षगे ष्टगे संवरणे। कगे क्रियासामान्यार्थे। अक अग कुटिलायां गतौ। कण रण गतौ। चण शण श्रण दाने च। श्रथ श्लथ क्नथ क्रथ क्लथ हिंसार्थाः। वन च। हिंसायामिति शेषः। वनु च नोच्यते। वनु इत्यपूर्व एवायं धातुः, नतु तानादिकस्यानुवादः। उदित्करणात्। तेन क्रियासामान्ये वनतीत्यादि। प्रवनयति। अनुपसृष्टस्यतु मित्त्वविकल्पो वक्ष्यते। ज्वल दीप्तौ। प्रज्वलयति। ह्वल ह्मल चलने। स्मृ आध्याने। चिन्तायां पठिष्यमाणस्य आध्याने मित्त्वार्थोऽनुवादः। आध्यानमुत्कण्ठापूर्वकं स्मरणम्। दॄ भये। दरयति, भयादन्यत्र दारयति। नॄ नये। नयादन्यत्र, नारयति। श्रा पाके। श्रै इति कृतात्वस्य श्रा इत्यदादिकस्य च सामान्येनानुकरणम्। लुग्विकरणालुग्विकरणयोर्मध्येऽलुग्विकरणस्य, लक्षणप्रतिपदोक्तयोः प्रतिपदोक्तस्यैव ग्रहणमिति परिभाषाभ्यामुभयोर्ग्रहणम्। श्रपयति विक्लेदयति। पाकादन्यत्र श्रापयति। मारणतोषणनिशामनेषु ज्ञा। एष्वेवार्थेषु जानातिर्मित्। ज्ञप मिच्चेति चुरादौ। ज्ञापयति, विज्ञापनेत्यादौ तु ज्ञानियोग इति चौरादिकस्य, धातूनामनेकार्थत्वात्। कम्पने चलिः। चलयति शाखाम्। कम्पनादन्यत्र शीलं चालयति। छदिरूर्जने। छदयति बलवन्तं प्राणवन्तं वा करोतीत्यर्थः। अन्यत्र छादयति। जिह्वोन्मथने लडिः। उन्मथनं

ज्ञापनम् । षष्ठीतत्पुरुषः । लडयति जिह्वाम् । मदी हर्षग्लेपनयोः । मदयति । अन्यत्र मादयति । ध्वन शब्दे । अत्र भोजः । दलि बलि स्खलि रणि ध्वनि त्रपि क्षपयश्चेति पपाठ। तत्र ध्वनिरणी उदाहृतौ । दल विशरणे, वल संवरणे स्खल संचलने । त्रपूष् लज्जायाम् । तेषां णौ । दलयति, वलयति, स्खलयति, त्रपयति । क्षपयति । स्वनतंसने । स्वनयति, स्वानयति। घटादयो मितः । मित्संज्ञा इत्यर्थः । जनीजृष् क्नसुरञ्जोऽमन्ताश्च । केचित्तु जनी जृष्णसु इति पठित्वा ष्णसु निरसन इति दैवादिकमुदाहरन्ति । ज्वलह्वल ह्मल नमामनुपसर्गाद्वा । एषां मित्त्वं वा । ज्वलयति । ज्वालयति । सोपसर्गे तु नित्यं मित्त्वम् । प्रज्वलयति । ग्लास्नावनुवमां च । अनुपसर्गादेषां कित्त्वं वा स्यात् । न कम्यमि चमाम् । अमन्तत्वात्प्राप्तं मित्त्वमेषां न स्यात्। कामयते, आमयति, चामयति । शमो दर्शने । मित्त्व स्यात् । निशामयति रूपम् । अन्यत्र निशमयति । कथं तर्हि निशामय तदुत्पत्तिमित्यादि । शम आलोचने इति चौरादिकस्य धातूनामनेकार्थत्वात् श्रवणेऽर्थे वृत्तिः शाम्यति वत् । यमोऽपरिवेषणे । भोजनतोऽन्यत्र मित्त्व स्यात् । आयामयति-द्रापयति व्यापारयति वेत्यर्थः । परिवेषणे तु यमयति ब्राह्मणान् भोजयतीत्यर्थः । पर्यवसितं नियमयन्नित्यादि तु नियमवच्छब्दात्तत्करोतीति णौ समाधेयम्। स्खदिरवपरिभ्यां च । मिन्नेत्येव । अवस्खादयति, परिस्खादयति । फण गतौ ।

फणां च सप्तानाम् । ६।४।१२५ एषां वा एत्त्वाभ्यासलोपौ स्तः । किति लिटि सेटि थलि च । फेणतुः पफणतुः । फेणिथ । पफणिथ । वृत् । घटादिः समाप्तः । राजृ दीप्तौ । स्वरितेत् । रेजतुः रराजतुः रेजे, रराजे । टुभ्राजृ टुभ्राशृ टुभ्लाशृ दीप्तौ । अनुदात्तेतः । भ्रेजे, बभ्राजे । वाभ्राशेतिश्यन् वा । भ्राश्यते, भ्राशते, भ्रेशे बभ्राशे । अथ परस्मैपदिनः । स्यमुस्वनध्वनशब्दे । स्वेनतुः सस्वनतुः । वेश्चस्वनोभोजने इति षत्वम् । विष्वणति अवष्वणति । ध्वेनतुः दध्वनतुः । फणादयो गताः । ज्वलदीप्तौ । अज्वालीत् । चलकम्पने स्थाल स्थान । हलविलेखन । बल प्राणने धान्यावरोधने च । पुल महत्त्वे । कुलसंस्त्याने, बन्धुषु च । बन्धुशब्देन तद्व्यापारो गृह्यते । चुकोल । पत्लृगतौ । पपात, पेततुः पतिता।

पतः पुम् ।७।४।१९। अङि परे । अपप्तत् । नेर्गदेति णत्वम् । प्रण्यपप्तत् । कथे निष्पाके । मथे विलोडने । अमथीत् । टुवम उद्गिरणे । ववमतुः । भ्रमु चलने । वाभ्राशेति श्यन् वा । भ्रम्यति, भ्रमति, दीर्घस्तु दिवादेर्वक्ष्यते । **राजृभ्रमुत्रसाम्** ।६।४।१२४। एषामेत्वाभ्यासलोपौ वा स्तः, किति लिटि सेटि थलि च । भ्रेमतुः बभ्रमतुः । अभ्रमीत् । अथ द्वावनुदात्तेतौ । षहमर्षणे । सहते । परिनिविभ्य इति षत्वम् । परिषहते, सेहे । तीषसहेति वा इट् । सहिता इडभावे ढत्वधत्वष्टुत्वढलोपाः । **सहिवहोरोदवर्णस्य** ।६।३।११२। ढलोपे सति । **सोढः** ।८।३।११५। सोढरूपस्य सस्य षत्वं न स्यात् । परिसोढा । **सिवादीनां वाड्व्यवायेऽपि** ।८।३।७१। परिनिविभ्यः परेषामेषां सस्य षो वा स्यादड्व्यवायेऽपि । पर्यषहत, पर्यसहत । रमु क्रीडायाम् रेमे, रस्यते, रंसीष्ट, अरंस्त । अथ परस्मैपदिनः । षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु । पाघ्राध्मा-

स्थाम्नादाण्दृश्यर्तिसर्त्तिशदसदां पिबजिघ्रधमतिष्ठमनयच्छपश्यर्च्छधौशीयसीदाः ।७।३।७८। पादानां पिबादय आदेशाः स्युरित्संज्ञकशकारादौ प्रत्यये परे । सीदति, सीदतु सीदेत् असीदत् । ससाद । सेदिथ ससत्थ । सत्ता, लृदित्वादङ् असदत् । सदिरप्रतेः । निषीदति। न्यषीदत् । **सदेः परस्य लिटि** ।८।३।११८। सदेरभ्यासात्परस्य षत्वं न स्याल्लिटि । निषसाद,

निषेदतुः । शद्लृ शातने । **शदेः शितः** ।१।३।६०। अस्मादात्मनेपदं स्यात् । शीयते । शेदिथ शशत्थ, शत्ता । अशदत् । क्रुश आह्वाने रोदने च । अक्रुक्षत् । कुच संपर्चनकौटिल्यप्रतिष्टम्भविलेखनेषु । बुध अवगमे । रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च । रोहति, रोढा, अरुक्षत् । वृत् । ज्वलादिगणः समाप्तः । अथ स्वरितेतः । हिक्क अव्यक्ते शब्दे । अञ्चु गतौ याचने च । अचु इत्येके । अचि इत्यपरे । टुयाचृ याच्ञायाम् । याचति याचते । मेधृ संगमे मेधाहिंसनेषु । बुधि बोधने । बोधति बोधते । अबुधत् अबोधीत् । दैवादिकस्यैवास्य ग्रहणादिह चिण् न । खनु अवदारणे खनति, खनते । **गमहनजनखनघसां लोपः क्ङित्यनङि** ।६।४।९८। एषामुपधाया लोपः स्यादजादौ क्ङिति, नत्वङि । चखनतुः चख्नुः । **ये विभाषा** ।६।४।४३। खायात्, खन्यात् । दाशृ दाने । ददाश ददाशे । सान्तोऽपि । लष गतौ । वा भ्राशेति श्यन् वा । लष्यति । लषति । लेषे । गुहू संवरणे । **ऊदुपधाया गोहः** ।६।४।८९। गुणहेतावजादौ प्रत्यये परे । गूहति गूहते । ऊदित्वादिड्वा । गूहिता, गोढा । गूहिष्यति घोक्ष्यति । अगूहीत् । इडभावे । अघुक्षत् । **लुग्वा दुहदिहलिहगुहामात्मनेपदे दन्त्ये** ।७।३।७३। एषां क्सस्य लुग्वा स्याद्दन्त्ये तङि । ढत्वधत्वष्टुत्वढलोपदीर्घाः । अगूढ, अघुक्षत अगुह्वहि, अघुक्षावहि, अघुक्षामहि ।क्षि। अथाजन्ता उभयपदिनः । श्रिञ् सेवायाम् । श्रयति, श्रयते । श्रयिता । **अकृत्सार्वधातुकयोर्दीर्घः** ।७।४।२५। अजन्ताङ्गस्य दीर्घः स्याद् यादौ प्रत्यये नतु कृत्सार्वधातुकयोः । श्रीयात् । णिश्रीति चङ अशिश्रियत । भृञ् भरणे । भरति भरते । बभार । बभ्रतुः बभ्रुः बभर्थ, बभृव बभृषे । **ऋद्धनोः स्ये** ।७।२।७०। इट् स्यात् । भरिष्यति । **रिङ् शयग्लिङ्क्षु** ।७।४।२८। शे यकि यादावार्धधातुके लिङि च ऋतो रिङादेशः स्यात् । रीङृतः इति प्रकृते पुनः रिङ्विधानाद्दीर्घो न भ्रियात् । **उश्च** ।१।२।१२। ऋवर्णात्परौ झलादी लिङ् तङ् परः सिच्चेत्येतौ कितौ स्तः । भृषीष्ट भृषीयास्ताम् । अभार्षीत् । **ह्रस्वादङ्गात्** ।८।२।२७। सिचो लोपः स्याज्झलि । अभृत अभृषाताम्, अभृषत । हृञ् हरणे । हरणं प्रापणं स्वीकारः स्तेयं नाशनं च । जहर्थ जह्रिव. हर्ता हरिष्यते । धृञ् धारणे अधार्षीत्, अधृत । णीञ् प्रापणे । निनयिथ, निनेथ । निन्यिषे ।क्षि। अथ परस्मैपदिनः । धेट् पाने । धयति । **आदेच उपदेशेऽशिति** ।६।१।४५। इत्यात्वम् । **आत औ णलः** ।७।१।३४। दधौ । **आतो लोप इटि च** ।६।४।६४। अजाद्योरार्धधातुकयोः क्ङिदिटोः परयोरातो लोपः स्यात् । दधतुः दधुः । दधिथ दधाथ । **दाधा घ्वदाप्** ।१।१।२०। दारूपा धारूपाश्च धातवो घुसंज्ञास्युर्दाप्दैपौ विना । **एर्लिङि** ।६।४।६७। घुसंज्ञानां मास्थादीनां च एत्वं स्यादार्धधातुके किति लिङि । धेयात्, धेयास्ताम् धेयासुः । **विभाषा धेट् श्व्योः** ।३।१।४९। आभ्यां च्लेश्चङ् वा स्यात्कर्तृवाचिनि लुङि परे । चङीति द्वित्वम् । अदधताम् । **विभाषा घ्राधेट्शाच्छासः** ।२।४।७८। एभ्यः सिचो लुग्वा स्यात्परस्मैपदे परे । अधात्, अधाताम्, अधुः । **यमरमनमातां सक् च** ।७।२।७३। एषां सक् स्यात् एभ्यः सिच इट् स्यात्परस्मैपदेषु । अधासीत्, अधासिष्टाम् अधासिषुः । ग्लै म्लै हर्षक्षये । हर्षक्षयो धातुक्षयः । जग्लिथ, जग्लाथ । **वाऽन्यस्य संयोगादेः** ।६।४।६८। घुमास्थादेरन्यस्य संयोगादेर्धातोरात एत्वं वा स्यादार्धधातुके किति

लिङि। ग्लायात्, ग्लेयात्। अग्लासीत्। ध्यै चिन्तायाम्। कै गै रै शब्दे। गेयात्। अगासीत्। पै शोषणे। पायात् अपासीत्। दैप् शोधने दायति, अघुत्वादेत्वसिज्लुकौ न। दायात् अदासीत्। पा पाने। पाघ्राध्मेति पिबादेशः। अदन्तत्वान्नोपधागुणः। पिबति पेयात् अपात्। घ्रा गन्धोपादाने। जिघ्रति। घ्रायात् घ्रेयात्। अघ्रात् अघ्रासीत्। ध्मा शब्दाग्निसंयोगयोः। धमति। ष्ठा गतिनिवृत्तौ। तिष्ठति अधितष्ठौ। उपसर्गादिति षत्वम्। अधिष्ठाता। स्थेयात्। म्ना अभ्यासे मनति। दाण् दाने। यच्छति। देयात् अदात्। ह्वृ कौटिल्ये। ह्वरति। **ऋतश्च संयोगादेर्गुणः** ।७।४।१०। लिटि गुणः स्यात्। रपरत्वम्, उपधावृद्धिः। जह्वार, जह्वरतुः, जह्वरुः। जह्वर्थ। ह्वरिष्यति। **गुणोऽर्तिसंयोगाद्योः** ।७।४।२९। अर्तेः संयोगादेर्ऋदन्तस्य च गुणः स्याद् यकि यादावार्धधातुके लिङि च। ह्वर्यात्, अह्वार्षीत् अह्वार्ष्टाम्। स्वृ शब्दोपतापयोः। स्वरतिसूतीति वेट्। सस्वरिथ सस्वर्थ। वमयोस्तु। **श्र्युकः किति** ।७।२।११। श्रिञ एकाच उगन्ताच्च परयोर्गित्कितोरिण् न स्यात्। इति निषेधे प्राप्ते क्रादिनियमान्नित्यमिट्। सस्वरिव, सस्वरिम। स्वरिष्यति। परत्वाद् ऋद्धनोरिति नित्यमिट्। स्वर्यात्। अस्वारीत्, पक्षे अस्वार्षीत्। स्मृ चिन्तायाम्। सृ गतौ। क्रादित्वान्नेट्। ससर्थ। सस्रिव। रिङ् स्रियात्। असार्षीत् असार्ष्टाम्। **सर्तिशास्त्यर्तिभ्यश्च** ।३।१।५६। च्लेरङ् स्यात्कर्तरि लुङि। इह लुग्विकरणः शासिना साहचर्यात्सर्त्यर्ती जौहोत्यादिकौ एव गृह्येते तेन भ्वाद्योर्नाङ्। शीघ्रगतौ तु पाघ्राध्मेति धौरादेशः। धावति। ऋ गतिप्रापणयोः। ऋच्छति। **ऋच्छत्यॄताम्** ।७।४।११। ऋच्छतेः ऋधातो ॠतां च गुणः स्याल्लिटि। गुणे उपधावृद्धौ। आर आरतुः आरुः। **इडत्त्यर्तिव्ययतीनाम्** ।७।२।६६। अद् ऋ व्येञ् एभ्यस्थलो नित्यमिट् स्यात्। आरिथ। अर्ता, अरिष्यति. अर्यात्, आर्षीत्। स्रु गतौ। सुस्रोथ। सुस्रुव, स्रूयात्। णिश्रीति चङ्। लघूपधगुणादन्तरङ्गत्वादुवङ्। असुस्रुवत्। षु प्रसवैश्वर्ययोः। सुसोथ, सुसविथ। सुसुविव, सोता। **स्तुसुधूञ्भ्यः परस्मैपदेषु** ।७।२।७२। सिच इट् स्यात्। असावीत्। श्रु श्रवणे। **श्रुवः शृ च** ।३।१।७४। चात् श्नुः प्रत्ययः शृणोति शृणुतः। **हुश्नुवोः सार्वधातुके** ।६।४।८७। अनयोर्यण् स्यादजादौ सार्वधातुके। शृण्वन्ति। शृणोमि, शृण्वः शृणुवः, शृण्मः शृणुमः। शुश्रोथ, शुश्रुव। शृणु, श्रूयात्, अश्रौषीत्। द्रु गतौ दुद्रविथ, दुद्रोथ, दुद्रुविव। दुद्रोथ, दुद्रुव। णिश्रीति चङ् अदुद्रुवत्। जि जये। जय उत्कर्षप्राप्तिः। जयति। **सन्लिटोर्जेः** ।७।३।५७। जयते सन्लिण्निमित्तो योऽभ्यासस्ततः परस्य कुत्वं स्यात्। जिगाय, जिग्यतुः, जिग्युः, जिगयिथ जिगेथ, जिगाय, जिगय, जिग्यिव। जिगिम। जेता जीयात् अजैषीत्। अयमभिभवेऽपि। अभिभवो न्यूनीकरणं न्यूनीभवनं च। आद्ये सकर्मकः। शत्रून्जयति द्वितीये त्वकर्मकः अध्ययनात् पराजयते अध्येतुं ग्लायतीत्यर्थः। विपराभ्यांजेरिति तङ्। क्षि क्षये। क्षयति। चिक्षाय, चिक्षियतुः, चिक्षियुः। चिक्षयिथ, चिक्षेथ। क्षेता। क्षीयात्, अक्षैषीत्। अथ ङितः। स्मिङ् ईषद्धासे। स्मयते। सिष्मियिढ्वे, सिष्मियिध्वे। गाङ् गतौ। गाते गाते गाते। इटि एत्वे वृद्धिः। गै गासीष्ट। गाङ् कुटादिसूत्रे इङादेशस्यैव गाङो ग्रहणं ङित्वस्य। तेनाङित्वाद् घुमास्थेतीत्वं न। अगास्त। मेङ् प्रणिदाने। प्रणिदानं विनिमयः प्रत्यर्पणं च। नेर्गदेति णत्वम्, प्रणिमयते। देङ् रक्षणे। दयते। **दयतेर्दिगि लिटि** ।७।४।९। दिग्यादेशेन द्वित्वबाधनमिष्यत इति वृत्तिः। दिग्ये। **स्थाघ्वोरिच्च** ।१।२।१७। इत् सिच कित्स्यात्। अदित,

अदिथाः, अदिषि । त्रैङ् पालने । त्रायते, तत्रे । डीङ् विहायसा गतौ । डीयते, डिड्ये, डयिता । तॄ प्लवनतरणयोः । ऋत इद्धातोः । ७ । १ । १०० । इत्वोत्वाभ्यां गुणवृद्धी वि प्रतिषेधेन । * । तरति । ऋच्छत्यॄतामिति गुणः । तॄफलेत्येत्वम् । तेरतुः, तेरुः । वृतो वा । ७ । २ । ३८ । वृङ् वृञ्भ्यां ॠदन्ताच्चेटो दीर्घो वा स्यान्नतु लिटि । तरीता-तरिता । हलि चेति दीर्घः, तीर्यात् । सिचि च परस्मैपदेषु । ७ । २ । ४० । अत्र वृत इटो दीर्घो न । अतारिष्टाम् अतारिषुः । अथाष्टावनुदात्तेतः । * । गुप् गोपने, तिज निशाने, मान पूजायाम्, बध बन्धने । गुप्तिज्किद्भ्यः सन् । ३ । १ । ५ । मान्-बधदान्शान्भ्यो दीर्घश्चाभ्यासस्य । ३ । १ । ६ । सूत्रद्वयोक्तेभ्यः सन्स्यान्माना-दीनामभ्यासस्येकारस्य दीर्घश्च । गुपेर्निन्दायाम् । * । तिजेः क्षमायाम् । * । कितेर्व्याधिप्रतीकारे निग्रहे अपनयने नाशने संशये च । * । मानेर्जिज्ञासायाम् । * । बधेश्चित्तविकारे । * । दानेरार्जवे । * । शानेर्निशाने । * सनाद्यन्ता इति धातुत्वम् । सन्यङोः । । ६ । १ । ९ । द्वित्वं स्यात् । ततोऽभ्यासकार्यम् । गुपि प्रभृतयः किद्भिन्ना निन्दाद्यर्थका एवानुदात्तेतः, दानशानौ च स्वरितेतौ । एते नित्यं सन्नन्ताः । धातोरित्यविहितत्वात्सनोऽत्र नार्धधातुकत्वम्, तेन इडगुणौ न । जुगुप्सते, जुगुप्सांचक्रे । तितिक्षते, मीमांसते, बीभत्सते । रभराभस्ये । आरभते, आरेभे । रब्धा, रप्स्यते । डुलभष् प्राप्तौ । लभते । ष्वञ्ज परिष्वङ्गे । दंशसञ्जस्वञ्जां शपि ६।४। २५ । रञ्जेश्च । ६ । ४ । २६ । एषां शपि न लोपः । स्वजते, परिष्वजते । श्रन्थिग्रन्थिदम्भिस्वञ्जीनां लिटः कित्वं वेति व्याकरणान्तरम् । देभतुः । सदेः परस्य लिटीति सूत्रे स्वञ्जेरुपसंख्यानम् । * अतोऽभ्यासात्परस्य षत्वं न । परिषस्वजे । परिषस्वञ्जिषे, सस्वजिषे, सष्वञ्जिषे, स्वङ्क्षीष्ट । प्रत्यष्वङ्क्त । प्राक्सितादिति षत्वम् । परिनिविभ्यस्तु सिवादीनां वेति विकल्पः । पर्यष्वङ्क्त पर्यस्वङ्क्त । हद पुरीषोत्सर्गे । हदते, हत्सीष्ट, अहत्त । * । अथ परस्मैपदिनः । कन्दिर् गतिशोषणयोः । चस्कन्दिथ, चस्कन्थ इरित्वादङ्वा । अस्कदत्, अस्कान्त्सीत् । वेस्कन्देरनिष्ठायाम् । ७ । ३ । ७३ । षत्वं वा स्यात् । कृत्येवेदम् । विष्कन्ता, । विस्कन्ता । निष्ठायांतु विस्कन्नः । परेश्च । ८ । ३ । ७४ । परिष्कन्दति, परिस्कन्दति । परिस्कन्नः । यभमैथुने । अयाप्सीत् । णम् प्रह्वत्वे शब्दे च । अनंसीत् । गमॢ सृप्लृगतौ । इषुगमियमां छः । ७ । १ । ७७ । एषां छः स्याच्छिति, गच्छति, जगाम, जग्मतुः । गमेरिट्परस्मैपदेषु । ७ । २ ५८ । गमेः सादेरिट् स्यात् । गमिष्यति । ॡदित्वादङ् । अनङीति पर्युदासान्नोपधालोपः । अगमत् । सर्पति, ससर्प । अनुदात्तस्य चर्दुपधस्यान्यतरस्याम् । ६ । १ । ५९ । उपदेशेऽनुदात्तो य ऋदुपधस्तस्याम् वा स्याद् झलादावकिति परे । स्रप्ता, सर्प्ता । स्रप्स्यति, सर्प्स्यति, । असृपत् । यम उपरमे । यच्छति अयंसीत्, तप संतापे । तप्ता, अताप्सीत् । निसस्तपतावनासेवने । ८ । ३ । १०२ । षः स्यात् । निष्टपति । त्यज् हानौ । तत्यजिथ, तत्यक्थ । षञ्जसङ्गे ।

१५

दंशसञ्जेति न लोपः, सजति । सङ्क्ता । दृशिर् प्रेक्षणे । पश्यति । विभाषा सृजिदृशोः । ७ । २ । ६५ । आभ्यां थल इड् वा । सृजिदृशोर्झल्यमकिति । ६ । १ । ५८ । अनयोरमागमः स्याज्झलादावकिति । ददर्शिथ, दद्रष्ठ । द्रष्टा इरित्वादङ् वा । ऋदृशोऽङि गुणः । ७ । ४ । १६ । अदर्शत् । अङभावे । न दृशः । ३ । १ । ४८ । दृशश्च्लेः क्सो न । अद्राक्षीत् । दंशदशने । दंशसञ्जेति नलोपः । दशति । ददंशिथ, ददंष्ठ, दङ्क्ष्यति, दश्यात्, अदाङ्क्षीत् । कृष विलेखने, विलेखनमाकर्षणम् । क्रष्टा, कर्ष्टा । क्रक्ष्यति । स्पृशमृशकृशतृपदृपां च्लेः सिज्वा वाच्यः । * । अक्राक्षीत् अकार्क्षीत्, अक्राष्टाम्, अकार्ष्टाम्, पक्षे क्सः । अकृक्षत्, अकृक्षाताम्, अकृक्षन् । दहभस्मीकरणे । देहिथ, ददग्ध । धक्ष्यति, अधाक्षीत्, अदाग्धाम्, अधाक्षुः । मिह सेचने । मिमेहिथ, मिमेढ, अमिक्षत् । कितनिवासे रोगापनयने च । चिकित्सति । अनुदात्तेत्त्वमाश्रित्य । चिकित्सते । निवासे केतयति । दानखण्डने, शान् तेजने । * । अथ स्वरितेतः । डुपचष् पाके । पचति, पचते । पेचिथ, पपक्थ । पेचे, पक्षीष्ट । षच समवाये, सचति, सचते । भजसेवायाम् । भेजतुः, भेजुः, भेजे । अभाक्षीत्, अभक्त । रञ्जरागे । न लोपः । रजति, रजते । अराङ्क्षीत्, अरङ्क्त । धावु गतिशुद्ध्योः । धावति धावते । शप आक्रोशे अशाप्सीत् अशप्त । त्विषदीप्तौ । अत्विक्षत । यजदेवपूजासङ्गतिकरणदानेषु । यजति, यजते । लिट्यभ्यासस्योभयेषाम् । ६ । १ । १७ । वच्यादीनां ग्रहादीनां चाभ्यासस्य संप्रसारणं स्याल्लिटि । इयाज । वचिस्वपियजादीनां किति । ६ । १ । १५ । पुनः प्रसङ्गविज्ञानाद् द्वित्वम् । ईजतुः, ईजुः । इयजिथ, इयष्ठ । अयाक्षीत् अयष्ट । टुवप् बीजसन्ताने । बीजसंतानं क्षेत्रे विकरणं गर्भाधानं च । अयं छेदनेऽपि । केशान् वपति । उवाप ऊपे । प्रण्यवाप्सीत्, अवप्त । वह प्रापणे । उवहिथ । सहिवहोरोदवर्णस्य । उवोढ । अवाक्षीत् अवोढात्, अवाक्षुः । अवोढ, अवक्षाताम्, अवक्षत । वस निवासे । परस्मैपदी । वसति उवास । शासिवसिघसीनां च । ८ । ३ । ६० । इण्कुभ्यां परस्यैषां सस्य षः स्यात् ऊषतुः, ऊषुः । उवसिथ, उवस्थ । सस्यार्धधातुके । ७ । ४ । ९ । सस्य तः स्यात्सादावार्धधातुके । वत्स्यति । उष्यात् । अवात्सीत्, अवात्ताम्, वेञ् संवरणे । वयति वयते । वेञो वयिः । २ । ४ । ४१ । वा स्याल्लिटि । उवाय । ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां किति च । ६ । १ । १६ । एषां किति ङिति च संप्रसारणं स्यात् । इति यकारस्य प्राप्ते । लिटिवयो यः । ६ । १ ३८ । वयो यस्य संप्रसारणं न स्याल्लिटि । ऊयतुः ऊयुः । वश्चास्यान्यतरस्यां किति । ६ । १ ३९ । वयो यस्य वो वा स्यात्किति लिटि । ऊवतुः ऊवुः । वयस्तासावभावात्थलि नित्यमिट् उवयिथ, ऊये, ऊवे । वयादेशाभावे । वेञः । ६ । १ । ४० । वेञो न संप्रसारणं स्याल्लिटि । ववौ, ववतुः, ववुः । ववे । ऊयात् वासीष्ट अवासीत् । व्येञ् संवरणे । व्ययति । न व्यो लिटि । ६ । १ । ४६ । आत्वं न स्याल्लिटि । वृद्धिः । संप्रसारणम्, विव्याय ।

इडत्त्यर्तीति नित्यमिट् विव्ययिथ, वीयात्। व्यासीष्ट अव्यासीत्, अव्यास्त। ह्वेञ् स्पर्धायां शब्दे च। अभ्यस्तस्य च ।६।१।३३। अभ्यस्तीभविष्यतो ह्वेञः संप्रसारणं स्यात्, ततो द्वित्वम्। जुहाव। जुहुवतुः, जुहुवुः। जुहविथ, जुहोथ। हूयात्, ह्वासीष्ट। लिपिसिचिह्वश्च ।३।१।५३। एभ्यश्च्लेरङ् स्यात्। आत्मनेपदेष्वन्यतरस्याम् ।३।१।५४। आतो लोपः। अह्वत्, अह्वताम्, अह्वन्। अह्वत, अह्वेताम् अह्वन्त। पक्षे अह्वास्त, अह्वासाताम्, अह्वासत। अथ द्वौ परस्मैपदिनौ। वद व्यक्तायां वाचि। वदति, उवाद, ऊदतुः, उवदिथ, वदिता, उद्यात्। वदव्रजेति वृद्धिः। अवादीत्। टुओश्वि गतिवृद्ध्योः। श्वयति। विभाषा श्वेः ।६।१।३०। श्वयतेः संप्रसारणं वा स्यात्, लिटि यङि च। शुशाव, शुशुवतुः। श्वयतेर्लिट्यभ्यासलक्षणप्रतिषेधो वाच्यः। *। तेन लिट्यभ्यासस्येति संप्रसारणं न। शिश्वाय, शिश्वियतुः। श्वयिता, शूयात्। जॄस्तम्भ्वित्यङ् वा। श्वयतेरः।७।४।१८ अङि परे। अतोऽन्त्यस्य। पररूपम्। अश्वत्, अश्वताम्, अश्वन्, विभाषाधेट्श्व्योरिति चङ्। इयङ्। अशिश्वियत्। ह्म्यन्तेति न वृद्धिः, अश्वयीत्। भ्वादिरेषाकृतिगणः। तेन चुलुम्पतीत्यादिसंग्रहः॥ इति भ्वादयः।

ऋतेरीयङ्।३।१।२९। स्वार्थे ईयङ् स्यात्। सौत्रोऽयं जुगुप्सायाम्, कृपायां चेत्येके। सनाद्यन्ता इति धातुत्वम्। ऋतीयते ऋतीयांचक्रे। आयादय आर्धधातुकेवेति पक्षे। आनर्त, आर्तीत्। अद भक्षणे। द्वौ परस्मैपदिनौ। अदिप्रभृतिभ्यः शपः २।४।७२। लुक् स्यात्। अत्ति, अत्तः, अदन्ति, 'लोटि'। हुझल्भ्यो हेर्धिः ६।४।१०१ अद्धि अत्ताम्। अदानि। अदः सर्वेषाम्।७।३।१००। अदः परस्यापृक्तसार्वधातुकस्याडागमः सर्वमतेन। आदत्, आत्ताम्, आदन्। अद्यात्। लिट्यन्यतरस्याम् २।४।४०। अदो घस्लृ वा स्याल्लिटि। जघास। गमहनेत्युपधालोपः। चर्त्वम्, तद्विधिं प्रति स्थानिवद्भावनिषेधात्। शासिवसीति षत्वम्। जक्षतुः। जक्षुः। घसस्तासावभावात्थलि नित्यमिट्। जघसिथ। आद आदतुः। इडत्त्यर्तीति नित्यमिट् आदिथ। अत्स्यति। अद्यात्, अद्यास्ताम्। लुङ्सनोर्घस्लृ।२।४।३७। अदो घस्लृस्याल्लुङि सनि च। लृदित्वादङ्। अघसत्। हन हिंसागत्योः। हन्ति। अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनामनुनासिकलोपो झलि क्ङिति।६।४।३७यमि रमि गमि हनि मन्यतयोऽनुदात्तोपदेशाः। वनु क्षणु क्षिणु ऋणु तृणु घृणु वनु मनु तनोत्यादयः। हतः, घ्नन्ति। हेमोर्वा।८।४।२३। उपसर्गस्थान्निमित्तात्परस्य हन्तेर्नस्य णो वा स्याद् वमयोः परयोः। प्रहण्मि, प्रहन्मि, प्रहण्वः, प्रहन्वः, हन्तु हतात् हताम्, घ्नन्तु। हन्तेर्जः ६।४।३६ हौ परे। जहि। हनानि, हनाव, हनाम। अहन् अहताम्। अघ्नन्। हन्तेरिति णत्वम्, प्रहण्यात्। हो हन्तेरिति कुत्वम्। जघान, जघ्नतुः जघ्नुः। अभ्यासाच्च।७।३।५५। हन्तेर्हस्य कुत्वं स्यात्। जघनिथ। जघन्थ। ऋद्धनोरितीट् हनिष्यति। आर्धधातुके २।४।३५। इत्यधिकृत्य। हनो वध लिङि।२।४।४२। लुङि च

।२।४।४३ वधादेशोऽदन्तः। अतोलोपः। वध्यात्। वध्यास्ताम्। अवधीत्। अथ स्वरितेतः। द्विष अप्रीतौ। द्वेष्टि, द्विष्टे। द्वेष्टु द्विष्टात् द्विड्ढि। अद्वेट्। द्विषश्च ३।४।११२। लङो झेर्जुस्वा स्यात्। अद्विषुः, अद्विषन्, अद्विक्षत्। दुह प्रपूरणे। दोग्धि दुग्धः। धुक्षि। दुग्धे, धुक्षे, धुग्ध्वे। धुक्ष्व, धुग्ध्वम्, अधोक्, अधुग्ध्वम्। अधुक्षत्, अधुक्षत। लुग्वा दुहेतिलुक्पक्षे। तथा स्वंवहिषु लङ्वदपि। दिह उपचये प्रणिदेग्धि। लिह आस्वादने,। लेक्षि, लिक्षे। लेढु लीढि। लेहानि अलेट्, अलिक्षत् अलिक्षताम् अलीढ, अलिक्षावहि। चक्षिङ्-व्यक्तायां वाचि दर्शने च, इकारोऽनुदात्तो युजर्थः। विचक्षणः प्रथयन्। चष्टे लाङ अचष्ट। आर्धधातुके इत्यधिकृत्य। चक्षिङः ख्याञ् ।२।४।५४। वा लिटि ।२।४।५५। भाष्ये खशादिरयमादेशः। शस्य यो वा। ञित्त्वात्पदद्वयम्। चख्यौ, चख्ये, चक्शौ, चक्शे। चचक्ष ख्यायात्, ख्येयात्। क्शायात्, क्शेयात्। अस्यति वक्ति ख्यातिभ्योऽङ् ३।१।५२ एभ्यश्च्लेरङ् स्यात्। अख्यत् अख्यत। अक्शासीत्, अक्शास्त। वर्जने ख्शाञ् नेष्टः। ॐ। समचक्षिष्ट। *। अथ अनुदात्तेतः। ईर गतौ, कम्पने च। ईर्ते, ईरांचक्रे ऐरिष्ट। ईड स्तुतौ। ईशः से ।७।२।७७ ईड्जनोर्ध्वे च ।७।२।७८। ईशीड्जनां से ध्वे शब्दयोः सार्वधातुकयोरिट् स्यात्। ईडिषे, ईडिध्वे। एकादेशविकृतस्यानन्यत्वात्, ईडिष्व, ईडिध्वम्। विकृतिग्रहणेन प्रकृतेरग्रहणात् ऐड्ढ्वम्। ईश ऐश्वर्ये। ईशिषे, ईशिध्वे। आस उपवेशने। आस्ते। दयायासश्च। आसांचक्रे। आस्स्व, आध्वम् आसिष्ट। आङः शासु इच्छायाम्। आशास्ते। आङ्पूर्वकत्व प्रायिकम्। प्रशास्महे। शिजि अव्यक्ते शब्दे। शिङ्क्ते। वृजी वर्जने। वृक्ते, इर्दिदित्यन्ये। वृङ्क्त। पूङ प्राणिगर्भविमोचने। सूते। भूसुवोरिति गुणनिषेधः। सुवै। क्रादिनियमान्नित्यमिट्। सुषुविषे। सविता, सोता। असविष्ट असोष्ट। शीङ् स्वप्ने शीङः सार्वधातुके गुणः ।७।४। २१। क्ङितिचेत्यस्यापवादः। शेते, शयाते। शीङो रुट् ।७।१।६। झादेशस्यातो रुडागमः स्यात्। शेरते शेषे, शेध्वे। शिश्ये, शयिष्यते, अशयिष्ट। *। अथ परस्मैपदिनः। यु मिश्रणेऽमिश्रणे च। उतो वृद्धिर्लुकि हलि ।७।३।८९। पिति हलादौ सार्वधातुके नत्वभ्यासस्य। यौति, युतः युवन्ति, युयात्, इह उतो वृद्धिर्न, विशेषविहितेन ङित्त्वेन पित्त्वस्य बाधात्। युयाव, यविता, यूयात्। अयावीत्। रु शब्दे। तुरुस्तुशम्यमः सार्वधातुके ।७।३।९५ एभ्यः सार्वधातुकस्य हलादेस्तिङ ईड्वा स्यात्। रवीति रौति। रुवीतः, रुतः। रुवीयात्, रुयात् आशिषि रूयात्। अरावीत्। तु इति सौत्रो धातुर्गतिवृद्धिहिंसासु। तवीति, तौति। तुवीतः, तुतः तोता। णु स्तुतौ। टुक्षु शब्दे। क्ष्णु तेजने। ष्णु प्रस्रवणे। इमे सेट्काः। ऊर्णुञ् आच्छादने। ऊर्णोतेर्विभाषा ।७।३।९०। वा वृद्धिः स्याद्धलादौ पिति सार्वधातुके। ऊर्णौति, ऊर्णोति, ऊर्णुतः। ऊर्णुवन्ति। ऊर्णुते। ऊर्णौतु। ऊर्णवानि ऊर्णवै। गुणोऽपृक्ते ।७।३।९१। ऊर्णोतेर्गुणः स्यादपृक्ते हलादौ पिति सार्वधातुके। और्णोत्, और्णोः। ऊर्णुयात्। ऊर्णोतेराम् नेति वाच्यम्। ॐ। नन्द्राः संयोगादयः।

६ । १ । ३ । अचः परा एते द्विर्न भवन्ति । नु शब्दस्य द्वित्वम् । ऊर्णुनाव, ऊर्णुनुवतुः, ऊर्णुनुवुः । विभाषोर्णोः । १ । २ । ३ । इडादिप्रत्ययो वा ङित्स्यात् । ऊर्णुनुविथ, ऊर्णुनविथ ऊर्णुविता, ऊर्णविता । ऊर्णूयात्, ऊर्णोतेर्विभाषा ७२६। इडादौ सिचि परस्मैपदे परे वा वृद्धिः स्यात् । और्णुवीत् और्णावीत्, और्णवीत्, षुप्रसवैश्वर्ययोः । असौषीत्, ष्टुञ्स्तुतौ। स्तौति, स्तवीति । स्तुतः स्तुवीतः। स्तुते, स्तुवीते । स्तुसुधूञ्भ्य इतीट् । अस्तावीत् । प्राक् सितादिति षत्वम् । अभ्यष्टौत् । सिवादीनां वा। पर्यष्टौत् । ब्रूञ् व्यक्तायां वाचि । ब्रुवः पञ्चानामादित आहो ब्रुवः। ३ । ४ । ८४। ब्रुवो लटः परस्मैपदानामादितः पञ्चानां णलादयः पञ्च वा स्युर्ब्रुवश्चाहादेशः । अकार उच्चारणार्थः। आह, आहतुः, आहुः । आह स्थः। ८ । २। ३५ । झलि परे। आत्थ, आहथुः । ब्रुव ईट् ७। ३। ९३ । ब्रुवः परस्य हलादेः पित ईट् स्यात्। ब्रवीति, ब्रूतः ब्रुवन्ति । ब्रूते। ब्रवीतु, ब्रूतात्, ब्रवाणि ब्रवै । ब्रूयात् । आर्धधातुके । ब्रुवो वचिः। २।४ ५३। उवाच, ऊचतुः ऊचुः । उवचिथ, उवक्थ । उच्यात् । अस्यति वक्ति ख्यातिभ्योऽङ्। वच उम् । ७ । ४।२०। अङि परे। अवोचत्, अवोचत। ❀। अथ परस्मैपदिनः। इङ् त्वात्मनेपदी, इण् गतौ । एति इतः । इणो यण्। ६। ४ । ८१ । अजादौ प्रत्यये परे। यन्ति। ऐत्, ऐताम्, आयन्, इयात्। इयाय। दीर्घ इणः किति ।७।४। ६९। इणोऽभ्यासस्य दीर्घः स्यात्किति लिटि। ईयतुः, ईयुः। इययिथ, इयेथ। ईयात्। एतेर्लिङि। ७। ४। २४। उपसर्गात्परस्य इणोऽणो ह्रस्वः स्यादार्धधातुके किति लिङि। निरियात्, उभयत आश्रयणे नान्तादिवत्। अभीयात्, इणो गा लुङि। २। ४। ५१। गातिस्थेति सिचोलुक् । अगात्, अगाताम्, अगुः। इङ् अध्ययने। नित्यमधिपूर्वः। अधीते, अधीयाते, अधीयते । अध्ययै । गुणायादेशयोः कृतयोरुपसर्गस्य यण्। अध्यैत । परत्वादियङ्। तत आट् वृद्धिः। अध्यैयाताम् । अध्यैयि। अधीयीत, अधीयीयाताम्, अधीयीय। गाङ् लिटि । २ । ४ । ४९ । अधिजगे, अधिजगाते । अध्येष्यते । अध्येषीष्ट । विभाषा लुङ् लृङोः। २।४।५०। इङो गाङ् वा स्यात्। गाङ् कुटादिभ्योऽञ्णिन्ङित्। गाङादेशात्कुटादिभ्यश्च परेऽञ्णितः प्रत्यया ङितः स्युः। घुमास्थागापाजहातिसां हलि ।६।४।६६। एषामात ईत्स्याद्धलादौ क्ङित्यार्धधातुके। अध्यगीष्ट अध्यैष्ट, अध्यगीष्यत, अध्यैष्यत। इक्स्मरणे । अयमप्यधिपूर्वः। इण्वदिक इति वक्तव्यम्। *। अधियन्ति, अगात्। या प्रापणे। प्रापणमिह गतिः। प्रणियाति। लङः शाकटायनस्यैव ।३।४।१११। आदन्तात्परस्य लङो झेर्जुस् वा स्यात्। अयुः, अयान्। यायात्। वा गतिगन्धनयोः। भा दीप्तौ। ष्णा शौचे। पा रक्षणे। पायास्तात्, अपासीत्। दाप्लवने। प्रणिदाति, प्रनिदाति । दायास्ताम्। अदासीत्। ख्या प्रकथने। अयं सार्वधातुकमात्रविषयः। मामाने। अकर्मकः। सोपसर्गस्त्वर्थान्तरे सकर्मकः। नेर्गदेत्यत्र नास्य ग्रहणम्, प्रणिमाति, प्रनिमाति। वच, परिभाषणे। वक्ति, वक्तः। अयमन्तिपरो न प्रयुज्यते। वग्धि, वच्यात्, उच्यात्, अवोचत्। विद ज्ञाने। विदो लटो वा ।३।४।८३। वेत्तेर्लटः परस्मै-

पदानां णलादयो वा स्युः। वेद, विदतुः विदुः। वेत्थेत्यादि। पक्षे, वेत्ति, वित्तः। **विदांकुर्वन्त्वित्यन्यतरस्याम्** ।३।१।४१। वेत्तेर्लोट्याम् गुणाभावो लोटो लुक् लोडन्तक-रोत्यनुप्रयोगश्च वा निपात्यते। पुरुषवचने न विवक्षते। इति शब्दात्। **तनादि-कृञ्भ्य उः** ।३।१।७६। शपोऽपवादः। विदांकरोतु। **अत उत्सार्वधातुके** । ६।४।११०। उप्रत्ययान्तस्य कृञोऽकारस्य उत्स्यात्सार्वधातुके क्ङिति। विदांकुरुतात्, विदांकुरुताम्। उतश्चेति हेर्लुक्। विदांकुरु। विदांकरवाणि। अवेत्, सिजभ्यस्तविदिभ्यश्चेति झेर्जुस्। अविदुः। **दश्च** ।८।२।७५। धातोर्दस्य पदान्तस्य सिपि परे रुर्वा स्यात्। अवेः, अवेत्। विवेद, विविदतुः उषविदेत्याम् पक्षे विदेत्यकारान्तनिपातनान्न लघूपधगुणः। विदांच-चकार। अवेदीत्। असभुवि। अस्ति। **श्नसोरल्लोपः** ।६।४।१११। श्नस्यास्तेश्चाकार-स्य लोपः स्यात्सार्वधातुके क्ङिति। स्तः, सन्ति। तासस्त्योरिति सलोपः। असि, स्थः, स्थ। अस्तु, स्तात्, स्ताम्, सन्तु। **घ्वसोरेद्धावभ्यासलोपश्च** ।६।४।११९। घोरस्तेश्च एत्वं स्यात् हौ परे अभ्यासलोपश्च। आभीयत्वेन एत्वस्यासिद्धत्वाद् हेर्धिः। श्नसोर-ल्लोपः। एधि। तातङि पक्षे एत्वं न। स्तात् स्तम् स्त। असानि। अस्तिसिच इतीट्। आसीत्। श्नसोरित्यल्लोपस्याभीयत्वेनासिद्धत्वादाट्। आस्ताम्, आसन्। स्यात्, आर्धधातुके इत्यधिकृत्य। **अस्तेर्भूः** ।२।४।५२। बभूव। भविता, भूयात्, अभूत्। **उपसर्गप्रादुर्भ्यामस्तिर्यच्परः** ।८।३।८७। उपसर्गेभ्यः प्रादुषश्च परस्यास्तेः सस्य षः स्याद् यकारेऽचि च परे। निष्यात्। प्रादुःष्यात्। निषन्ति, प्रादुःषन्ति। मृजूष् शुद्धौ। **मृजेर्वृद्धिः** ।७।२।११४। क्ङित्यजादौ वेष्यते। *। व्रश्चेति षः। मार्ष्टि। मृष्टः। मृजन्ति मार्जन्ति। मृड्ढि। अमार्ट्, अमार्जम्। ममार्ज। ममार्जतुः, ममृजतुः। ममार्जिथ, ममार्ष्ठ। मार्जिता। मार्ष्टा। अमार्जीत्, अमार्क्षीत्। रुदिर् अश्रुविमोचने। **रुदादिभ्यः सार्वधातुके** ।७।२।७६। रुद् स्वप् श्वस् अन् जक्ष एभ्यो वलादेः सार्वधातुकस्येट् स्यात्। रोदिति, रुदितः। हौ परत्वादिटि कृते धित्वं न। रुदिहि। **रुदश्च पञ्चभ्यः** ।७।३।९८। हलादेः पिति सार्वधातुकस्यापृक्तस्य ईट् स्यात्। **अड् गार्ग्यगालवयोः** ।७।३।९९। अरोदीत्, अरोदत्, अरोदिताम्। अरोदन्, अरोदीः, अरोदः। अन्तरङ्गत्वाद् यासुट्। रुद्यात्। अरुदत्, अरोदीत्। ञिष्वप् शये। स्वपिति, स्वपितः। अस्वपीत्, अस्वपत् स्वप्यात्। सुष्वाप सुषुपतुः। सुषुपुः। सुष्वपिथ, सुष्वप्थ। **सुविनिर्दुर्भ्यः सुपिसूतिसमाः** ।८।३।८८। एभ्यः सुप्यादेः सस्य षः स्यात्। सुषुषुपतुः, सुषुषुपुः। सुष्वप्ता। सुषुप्यात्। अस्वाप्सीत्। श्वस प्राणने। श्वसिति। अश्वसीत्, अश्वसत्, श्वस्यात्। ह्म्यन्तक्षणेति न वृद्धिः। अश्वसीत्। अन च। अनिति। आनीत्, आनत्। **अनितेः** ।८।४।१९। उपसर्गस्था-न्निमित्तात्परस्यानितेर्नस्य णः स्यात्। प्राणिति। जक्षभक्षहसनयोः। जक्षिति, जक्षतः। **अदभ्यस्तात्** ।७।१।४। झस्य अत्स्यात्। जक्षति। सिजभ्यस्तेति जुस्। अजक्षुः। रुदादयो गताः। जागृनिद्राक्षये। जागर्ति, जागृतः। जाग्रति। अजागः। अजागृताम्। अभ्यस्तत्वाज्जुस्। **जुसि च** ।७।३।८३। अजादौ जुसीगन्ताङ्गस्य गुणः स्यात्। अजागरुः

उषविदेत्याम्वा । जागरांचकार । जजागार । जाग्रोऽविचिण्णल्ङित्सु । ७।३।८५। जागर्तेर्गुणः स्याद् विचिण्णलङिद्भ्योऽन्यस्मिन् वृद्धिविषये प्रतिषेधविषयेच । जजागरतुः लुङि अजागरीत् । जाग्रोऽविचिण्णलिति गुणे अतो ल्रान्तस्येति वृद्धिः प्राप्ता ह्म्यन्तेति निषिध्यते । दरिद्रादुर्गतौ । दरिद्राति । इद् दरिद्रस्य ।६।४।११४। हलादौ क्ङिति सार्वधातुके । दरिद्रितः । श्नाभ्यस्तयोरातः ।६।४।११२। अनयोरातो लोपः स्यात्, क्ङिति सार्वधातुके । दरिद्रति अदरिद्रात्, अदरिद्रिताम्, अदरिद्रुः । दरिद्रियात् । अनेकाच्त्वादाम्, दरिद्रांचकार । आत औ णल इत्यत्र औकारविधानादाम् । नेत्येके ददरिद्रौ । दरिद्रातेरार्धधातुके विवक्षिते आलोपो वाच्यः । * । लुङि वा । * । सनि ण्वुलि ल्युटि च न । * । दरिद्रिता । दरिद्रिष्यात् । अदरिद्रीत् । इटसकौ । अदरिद्रासीत् । चकासृदीप्तौ झस्य अत् । चकासति । धिचेति सलोपः । चकाधि । सिच एवेत्येके । चकाद्धि । तिप्यनस्तेः ।८।२।७३। पदान्तस्य सस्य दः स्यात्तिपि नत्वस्तेः । अचकात्, अचकाद्, अचकासुः । सिपि धातो रुर्वा । ८ । २ । ७४ । पदान्तस्य धातोः सस्य रुः स्याद्वा । पक्षे दः । अच .।:, अचकात् । चकासांचकार । अचकासीत् । शासु अनुशिष्टौ । शास्ति । शास इदङ्हलोः । ६ । ४ । ३४ । हलादौ क्ङिति । शासिवसीति षः । शिष्टः, शासति । शाहौ । ६ । ४ । ३५ । शास्तेः शादेशः स्यात् हौ परे । तस्याभीयत्वेनासिद्धत्वाद् हेर्धिः । शाधि । अशात्, अशाद्, अशिष्टम, अशासुः । अशाः, अशात्, शिष्यात् । सर्तिशास्तीत्यङ् । अशिषत् । इतः पञ्च छान्दसाः । देधीङ् दीप्तिदेवनयोः । दीधीते । एरनेकाच इति यण् । दीध्याते । यीवर्णयोर्दीधीवेव्योः । ७ । ४ । ७३ । एतयोरनन्यस्य लोपः स्यात्, यकारे इवर्णे च परे । इति लोपं बाधित्वा नित्यत्वाद्गुरेत्वम । दीध्ये । देधीवेवीटामिति गुणनिषेधः । दीध्यांचक्रे । दीधिता । वेवीङ् वेतिनातुल्ये । वश कान्तौ । कान्तिरिच्छा । वष्टि उष्टः उषन्ति । वष्टु उष्टात्, उड्ढि । अवट् । औष्टाम औशन् । उश्यात् । ऊशतुः, वशिता चर्करीतं च । यङ्लुगन्तमदादौ बोध्यम् । ह्नुङ् अपनयने । ह्नुते । जुह्नुवे । ह्नोषीष्ट । अह्नोष्ट । इत्यदादिः ।

अथ जुहोत्यादिः ।

हुदानादनयोः । आदाने चेत्येके । पीडनेऽपीति भाष्यम् । अथ परस्मैपदिनः । जुहोत्यादिभ्यः श्लुः । २ । ४ । ७५ ।। श्लौ । ६ । १ । १० । धातो र्द्वे स्तः । जुहोति, जुहुतः अदभ्यस्तादित्यत्, हुश्नुवोरिति यण् । जुह्वति । जुहोतु, जुहुतात् । हुझल्भ्यो हेर्धिः । जुहुधि । जुहवानि । जुसिच । अजुहवुः । जुहुयात् । भीह्रीभृहुवां श्लुवच्च ३ । १ । ३९ । एभ्यो लिटयाम्वा स्यात्, आमि श्लाविव कार्यं च । जुहवांचकार, जुहाव होता, हूयात् अहौषीत् । ञिभीभये । बिभेति भियोऽन्यतरस्याम् । ६ । ४ । ११५ इकारो वा स्याद्धलादौ क्ङिति सार्वधातुके । बिभीतः बिभ्यति । बिभयांचकार, बिभाय । ह्रीलज्जायाम् । जिह्रेति । जिह्रयांचकार, जिह्राय । पॄपालनपूरणयोः । अर्तिपिपर्त्योश्च । ७ । ४ ७७ । अभ्यासस्य इकारोऽन्तादेशः स्यात् श्लौ । उदोष्ठ्यपूर्वस्य ।७।

१।१०२। अङ्गावयवौष्ठ्यपूर्वो यो ऋत्तदन्तस्याङ्गस्य उत् स्यात्। पिपर्ति, उत्वम्, रपरत्वम्, हलिचेति दीर्घः। पिपूर्तः। पिपुरति। अपिपः, अपिपूर्ताम्, अपिपरुः। पिपूर्यात्। पपार। क्किति लिटि ऋच्छत्यृतामिति गुणे प्राप्ते। **शृदृप्रां ह्रस्वो वा** ।७।४।१२। एषां क्किति लिटि ह्रस्वो वा स्यात्। पक्षे गुणः। पप्रतुः, पपरतुः, परिता, परीता। पूर्यात्, अपारीत्, अपारिष्टाम्। ह्रस्वान्तोऽयमिति केचित्, प्रियात्। अपार्षीत्। डुभृञ् धारणपोषणयोः। **भृञामित्** ।७।४।७६। भृञ् माङ् ओहाङ् एषां त्रयाणामभ्यासस्य इत्स्यात् श्लौ। बिभर्ति, बिभृतः, बिभ्रति। बिभृहि। अबिभः, अबिभृताम् अबिभरुः। श्लुवद्भावाद् द्वित्वे। बिभरांबभूव, बभार। बभर्थ। बभृव। भ्रियात्। अभार्षीत्, अभृत। माङ् माने शब्दे च। **ईहल्यघोः** ।३।४।११३। श्नाभ्यस्तयोरात ईत्स्यात्सार्वधातुके क्ङिति हलि नतु घुसंज्ञकस्य। मिमीते। मिमाते। मिमते। प्रणयमास्त। ओहाङ् गतौ। जिहीते। जिहाते। जिहते। ओहाक् त्यागे। परस्मैपदी। जहाति। **जहातेश्च** ।६।४।११६। इत्स्याद्वा, हलादौ क्ङिति सार्वधातुके। पक्षे ईत्वम्। जहितः, जहीतः। जहति। **आ च हौ** ।६।४।११७। चादिदीतौ। जहाहि, जहिहि, जहीहि। अजहात्। अजहुः। **लोपो यि** ।६।४।११८। जहातेरालोपः स्याद् यादौ सार्वधातुके। जह्यात्। एलिंङि। हेयात्। अहासीत्। डुदाञ् दाने। प्रणिददाति। दत्तः। ददति। श्नसोरित्यभ्यासलोपौ। देहि अददात्। अदत्ताम्। अददुः। दद्यात्। देयात्। अदात्। अदाताम्। अदुः। अदित। डुधाञ् धारणपोषणयोः। प्रणिदधाति। **दधस्तथोश्च** ।८।२।३८। द्विरुक्तस्य झषन्तस्य धाञो बशो भष् स्यात् तथयोः स्ध्वोश्च परतः। पूर्वत्रासिद्धेन स्थानिवत्। धत्तः। दधति। धत्से। धत्से। धध्वे। धेहि। अधित। अथ स्वरितेतः णिजिर् शौचपोषणयोः। **णिजां त्रयाणां गुणः श्लौ** ।७।४।७५। णिज् विज् विषामभ्यासस्य गुणः स्यात् श्लौ। नेनेक्ति, नेनिक्तः, नेनिजति। नेनेक्तु। नेनिग्धि। **नाभ्यस्तस्याचि पिति सार्वधातुके** ।७।३।८७। लघूपधगुणो न स्यात्। नेनिजानि। अनेनेक्। अनेनिक्ताम्। अनेनिजुः। नेक्ष्यति। अनिजत्, अनैक्षीत्। अनिक्त। विजिर् पृथग्भावे। वेवेक्ति। वेविक्ते। विवेजिथ। अत्र विज इट् इति ङित्वं न। ओविजी इत्यस्यैव तत्र ग्रहणात्। विष्लृ व्याप्तौ। वेवेष्टि, वेविष्टे। लृदित्त्वादङ्। अविषत्। तङि क्सः। अविक्षत। अविक्षाताम्। अविक्षन्त। अथ छान्दसाः। ऋ सृ गतौ। बहुलं छन्दसीत्येव सिद्धे अर्तिपिपर्त्योश्चेतीत्वविधानादयं भाषायामपि। अभ्यासस्यासवर्णे इतीयङ्। इयर्ति, इयृतः इय्रति। इयराणि। ऐयः। ऐयरुः। इडत्यर्तीति नित्यमिट् आरिथ। अर्ता। आरत्। भस भर्त्सनदीप्त्योः। बभस्ति। घसिभसोर्हलीत्युपधालोपः। झलोझलि। बब्धः। बप्सति। जन जनने। **जनसनखनां सञ्झलोः** ।६।४।४२। एषामाकारोन्तादेशः स्यात झलादौ सनि झलादौ क्ङिति च। जजातः। जज्ञति। जजन्यात्, जजायात्। जजान, जज्ञतुः। जायात्, जन्यात्। इति जुहोत्यादयः।

अथ दिवादिः।

अथ परस्मैपदिनः। दिवु क्रीडाविजिगीषाव्यवहारद्युतिस्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिगतिषु।

दिवादिभ्यः श्यन् । ३।१।६९। शपोऽपवादः । हलिचेति दीर्घः । दीव्यति, दीव्यतु । दीव्येत् । अदीव्यत् । देविता । अदेवीत् । अदेविष्यत् । षिवु तन्तुसन्ताने । परिषीव्यति । परिषिषेव । न्यषेवीत्, न्यसेवीत् । नृती गात्रविक्षेपे । नृत्यति ननर्त । सेऽसिचि कृतचृतच्छृदतृदनृतः । ७ । २ । ५७ । एभ्यः परस्य सिज्भिन्नस्य सादेरार्धधातुकस्येड्वा स्यात् । नर्तिष्यति, नर्त्स्यति अनर्तीत् । त्रसी उद्वेगे । वाभ्राशेति श्यन्वा । त्रस्यति, त्रसति, त्रेसतुः, तत्रसतुः । क्षिप प्रेरणे । क्षिप्यति । क्षेप्ता । पुष्प विकसने । पुष्प्यति । व्रीड चोदने लज्जायां च । इष गतौ । इष्यति । जॄष् झॄष् वयोहानौ । जीर्यति । जजरतुः, जेरतुः । जरिता । जरीता । जीर्यात् । जॄस्तम्भ्विति वाऽङ्वा । ऋदृशोऽङि गुणः । अजरत्, अजारीत् । अथ ङितः । षूङ् प्राणिप्रसवे । सूयते । सुषुवे । क्रादिनियमान्नित्यमिट् । सुषुविषे । सुषुविढ्वे । सोता, सविता । दूङ् परितापे । दूयते । दीङ् क्षये । दीयते । दीङो युडचि क्ङिति । ६ । ४ । ६३ । आर्धधातुकस्य युट् । वुग्युटावुवङ्यणोः सिद्धौ वक्तव्यौ । * । दिदीये । मीनातिमिनोतिदीङां ल्यपि च । ६ । १ । ५० । एषामात्त्वं स्याल्ल्यपि, चकारादशित्येज्निमित्ते । दाता । दास्यते । अदास्त । डीङ् विहायसा गतौ । डीयते । लीङ् श्लेषणे । विभाषा लीयतेः ६ । १ । ५१ । लीलीङोरात्त्वं वा स्यादेज्विषये ल्यपि च । लाता लेता । लास्यते, लेष्यते । प्रीङ् प्रीतौ । सकर्मकः । प्रीयते । पिप्रिये । * । अथ परस्मैपदिनः । शोतनूकरणे । ओतः श्यनि ७ । ३ । ७१ लोपः स्यात् श्यनि । श्यति । श्यतः । श्यन्ति । विभाषा घ्राधेडिति सिचो वा लुक् । लुगभावे, यमरमेतीट्सकौ । अशात् अशाताम् । अशुः अशासीत् । अशासिष्टाम् । छो छेदने । षोऽन्तकर्मणि । स्यति । अभिष्यति । अभ्यष्यत् । अभिससौ । दो अवखण्डने । द्यति । प्रणिदाता । देयात् । अदात् । अथात्मनेपदिनः । जनी प्रादुर्भावे । ज्ञाजनोर्जा । ७ । ३ । ७९ । जादेशः स्याच्छिति । जायते । जज्ञे । दीपजनेति वा चिण् । जनिवध्योश्च । ७ । ३ । ३५ अनयोरुपधाया वृद्धिर्न स्याच्चिणि ञ्णिति कृति च । अजनि, अजनिष्ट । दीपी दीप्तौ । दीप्यते । दिदीपे । अदीपि । अदीपिष्ट । पूरी आप्यायने । अपूरि अपूरिष्ट । तप ऐश्वर्ये वा । अयं धातुरैश्वर्ये वा तङ् श्यनौ लभते । तप्यते । तप्ता । पतेति पाठान्तरम् । वृतु वर्तने वृत्यते । वावृतु इति केचित् । वावृत्यते । क्लिश उपतापे । क्लिश्यते क्लेशिता । अथ स्वरितेतः । मृष तितिक्षायाम् । मृष्यति, मृष्यते । शुचिर पूतीभावे । शुच्यति । शुच्यते । अशुचत् । अशोचीत् । अशोचिष्ट । णह बन्धने । नह्यति नह्यते । नेहिथ, ननद्ध । अनात्सीत् । रञ्ज रागे । रज्यति । रज्यते । शप आक्रोशे । अथानुदात्तेतः पद गतौ । पद्यते । पेदे । पत्सीष्ट । चिण् ते पदः । ३ । १ । ६० । च्लेश्चिण् तशब्दे परे । प्रण्यपादि । अपत्साताम् । खिद दैन्ये । खिद्यते । अखित्त । विद सत्तायाम् । बुध अवगमे । बोद्धा । भोत्स्यते अबोधि, अबुद्ध । युध संप्रहारे । युध्यते । योद्धा । अयुद्ध । मन ज्ञाने । मन्यते । मेने । युज समाधौ । समाधिश्चित्तवृत्तिनिरोधः । युज्यते । सृज विसर्गे संसृज्यते । स्रष्टा । स्रक्ष्यते । लिङ्सिचाविति कित्वान्न गुणो नाप्यम् । सृक्षीष्ट । असृष्ट । असृक्षाताम् । लिश अल्पीभावे । लिश्यते । लिक्षीष्ट । अलिक्षत । अथागणान्ताः परस्मै-

पदिनः। राधोऽकर्मकाद् वृद्धावेव। राध वृद्धौ। राधोऽकर्मकादेव श्यन्। यन्मह्यमपराध्यति द्रुह्यतीत्यर्थः। राध्यत्योदनः सिध्यतीत्यर्थः। जीवतीत्यादिवद् अकर्मकत्वम्। रराधतुः। रराधुः। राधो हिंसायामित्येत्वाभ्यासलोपाविह न। हिंसार्थस्य सकर्मकतया दैवादिकत्वायोगात्। राद्धा रात्स्यति। व्यध ताडने। ग्रहिज्येति संप्रसारणम्। विध्यति। विविधतुः विव्याध्। अव्यात्सीत्। पुष पुष्टौ। पुषादीत्यङ्। अपुषत्। शुष शोषणे। अशुषत्। तुष प्रीतौ। दुष वैकृत्ये। श्लिष आलिङ्गने। श्लिष्यति श्लेक्ष्यति। श्लिषः। ३।१।५६। अस्मात्परस्यानिटश्च्लेः क्सः स्यात्। पुषादीत्यङोऽपवादो न तु चिणः। पुरस्तादपवादन्यायात्। आलिङ्गने। ३।१।५६। श्लिषश्च्लेरालिङ्गन एव क्सो नान्यत्र। आश्लिक्षत्कन्यां देवदत्तः। अनालिङ्गने। समश्लिषज्जतु काष्ठम्। कर्मणि। अश्लेषि। अश्लिक्षाताम् अश्लिक्षत। शक मर्षणे। उभयपदी। अशकत अशक्त। ञिष्विदा गात्रप्रक्षरणे। क्रुध क्रोधे क्षुध बुभुक्षायाम्। शुध शौचे। षिधु संराद्धौ। असिधत्। रधहिंसासंराध्योः। रध्यति रधिजभोरचीति नुम्। ररन्धतुः। रधादिभ्यश्च। ७।२।४५। रधनशतृपदृप द्रुह मुह ष्णुह ष्णिह एभ्यो वलाद्यार्धधातुकस्य वेट् स्यात्। ररन्धिव, ररध्व। नेट्यलिटि रधेः। ७।१।६२। लिड्वर्जे इटि रधेर्नुम न स्यात्। रधिता। रद्धा। अङि नुम् न लोपः। अरधत्। णश अदर्शने नश्यति। नेशिथ। मस्जिनशोर्झलि। ७।१।६०। नुम स्यात् ननंष्ठ। नेशिव नेश्व नेशिम नेश्म। नशिता नष्टा। अनशत्। प्रणश्यति। नशेः षान्तस्य। ८।४।३६। णत्वं न स्यात्। प्रनंष्टः। प्रनङ्क्ष्यति। तृप प्रीणने। प्रीणनं तृप्तिस्तर्पणञ्च। ततर्पिथ, तत्रप्थ, ततर्प्थ, त्रप्ता, तर्पिता, तर्प्ता। स्पृशमृशकृषेति सिज् वा। अतार्प्सीत्, अतर्पीत्, अत्राप्सीत् अतृपत्। दृप हर्षमोहनयोः। रधादित्वादिमौ वेट्कावगर्थमनुदात्तता। द्रुह जिघांसायाम् वा द्रुहमुहेति घत्व ढत्वे। दुद्रोहिथ, दुद्रोग्ध, दुद्रोढ। अद्रुहत्। मुह वैचित्ये। मोहिता, मोग्धा, मोढा अमुहत्। ष्णुह उद्गिरणे। अस्नुहत्। ष्णिह प्रीतौ अस्निहत्। वृत्। रधादयः समाप्ताः। शमु उपशमे। शमामष्टानां दीर्घः श्यनि। ७।३।७४। प्रणिशाम्यति। अशमत्। तमु काङ्क्षायाम्। दमु। उपशमे। अदमत्। श्रमु तपसि, खेदे च। श्राम्यति, अश्रमत्। भ्रमु अनवस्थाने वा भ्राशेति श्यन्वा। भ्राम्यति, भ्रमति, अभ्रमत्। क्षमू सहने। ऊदित्त्वाद्वेट। चक्षमिव, चक्षण्व। चक्षमिम चक्षण्म। क्लमु ग्लानौ। क्लाम्यति। क्लामति। अक्लमत्। मदी हर्षे। अमदत्। इति शमादयः। असु क्षेपणे। अस्यति। अस्यतेस्थुक्। ७।४।१७। आस्थत्। अस्यतिवक्तीत्यङ्। पर्यास्थत। यसु प्रयत्ने। यसोऽनुपसर्गात्। ३।१।७१। संयसश्च ३।१।७२। श्यन् वा स्यात्। यस्यति, यसति। संयस्यति, संयसति। प्लुष दाहे। अप्लुषत्। वुस उत्सर्गे। अवुसत्। लुठ बिलोडने,। भ्रशु भ्रंशु अधःपतने। अनिदितामिति नलोपः। भ्रश्यति। अभ्रशत्। कृश तनूकरणे। ञितृषा पिपासायाम् हृष तुष्टौ। कुप क्रोधे। लुभ गार्ध्ये। गार्ध्यमाकाङ्क्षा। तीषसहेति वेट्। लोभिता लोब्धा। अलुभत् क्षुभ संचलने क्लिदू आर्द्रीभावे। क्लिद्यति। चिक्लेदिथ, चिक्लेत्थ। क्लेदिता, क्लेत्ता। ञिमिदा स्नेहने। मिदेर्गुणः। मेद्यति। अमिदत्। गृधु अभिकाङ्क्षायाम्। अगृधत्। पुषादयो दिवादयश्च वृत्ताः

केचित्तु दिवादिस्तु भ्वादिवदाकृतिगणः, तेन क्षीयति, मृग्यतीत्यादि सिद्धमित्याहुः। इति दिवादिः।

षुञ् अभिषवे। अभिषवः, स्नपनं पीडनं स्नानं सुरासंधानं च स्वादिभ्यः श्नुः ।३।१।७३। सुनोति। हुश्नुवोरिति यण्। सुन्वन्ति। सुन्वः। सुनुवः। सुनु। सुनवानि। सूयात्। स्तुसुधूञ्भ्य इतीट् असावीत्। असोष्ट। अभिषुणोति अभ्यषुणोत् अभिसुषाव। सुनोतेः स्यसनोः ।८।३।११७। सुञः षो न स्यात्। विसोष्यति षिञ् बन्धने सिनोति विषिणोति। डुमिञ् प्रक्षेपणे। मीनातिमिनोतीत्यात्वम्। ममौ ममिथ, ममाथ। अमासीत्। अमास्त। चिञ् चयने प्रणिचिनोति। विभाषा चेः।७।३।५८। अभ्यासात्परस्य चिञः कुत्वं वा स्यात्सनि लिटि च। चिचाय, चिकाय। चिच्ये चिक्ये। अचैषीत्। अचेष्ट। स्तृञ् आच्छादने। स्तृणोति स्तृणुते। गुणोर्तीति गुणः स्तर्यात्। ऋतश्च संयोगादेः ।७।२।४३। ऋदन्तात्संयोगादेः परयोर्लिङ्सिचोरिड् वा स्यात्तङि। स्तरिषीष्ट, स्तृषीष्ट, अस्तरिष्ट अस्तृत। कृञ् हिंसायाम्। कृणोति, क्रियात्। कृषीष्ट। अकार्षीत् अकृत। वृञ् वरणे। बभूथाततन्थजगृम्भववर्थेति निगमे ।७।२।६४। एषां वेदे इडभावो निपात्यते। तेन भाषाऽयां थलीट्। ववरिथ वरिता, वरीता। लिङ्सिचो रात्मनेपदेषु ।७।२।४२। वृङ् वृञ् भ्यामॄदन्ताच्च परयोर्लिङ् सिचोरिड् वा स्यात्तङि। न लिङि ।७।२।३९। वृतो लिङि इटो दीर्घो न स्यात् वरिषीष्ट, वृषीष्ट। अवारीत्, अवरिष्ट, अवरीष्ट अवृत। धुञ् कम्पने। धुनोति। दीर्घान्तोऽप्ययम् धूनोति। स्वरति-सूतीति वेट्। दुधविथ, दुधोथ। क्रादिनियमान्नित्यमिट्। दुधुविव। स्तुसुधूञ्भ्य इति नित्यमिट्। अधावीत्। अधविष्ट, अधोष्ट। अथ परस्मैपदिनः। टुदु उपतापे। दुनोति। हि गतौ वृद्धौ च। हिनुमीना ।८।४।१५। उपसर्गस्थान्निमित्तात्परस्य एतयोर्नस्य णः स्यात् प्रहिणोति। हेरचङि ।७।३।५६। अभ्यासात्परस्य हिनोतेर्हस्य कुत्वं स्यान्नतु चङि। जिघाय। आप्लृ व्याप्तौ। आप्नोति। आप्नुहि। लृदित्त्वादङ्। आपत्। शक्लृ शक्तौ। अशकत्। राधसाध संसिद्धौ। राध्नोति। राधो हिंसायाम् ।६।४।१२३। एत्वाभ्यासलोपौ स्तः, किति लिटि सेटि थलि च। अपरेधतुः, रेधिथ असात्सीत् असाद्धाम्। अनुदात्तेत्। अशूङ् व्याप्तौ, संघाते च। अश्नुते। अश्नोतेश्च। ७ ४ ७२ दीर्घादभ्यासादवर्णात्परस्य नुट् स्यात् आनशे अशिता, अष्टा अशिषीष्ट, अक्षीष्ट। आशिष्ट, आष्ट। आगणान्ताः परस्मैपदिनः। ञिधृषा प्रागल्भ्ये। धृष्णोति। धर्षिता। दम्भु दम्भने। दभ्नोति। श्रन्थग्रन्थिदम्भिस्वञ्जीनां लिटः कित्वं वा। *। कित्त्वादनिदितामिति नलोपः। तस्यासिद्धत्वेनासिद्धवदत्राभादित्येत्वाभ्यासलोपयोरप्राप्तौ। दम्भेश्च एत्वाभ्यासलोपौ वक्तव्यौ। *। देभतुः, ददम्भतुः। इदं कित्त्व पिदपिद्विषयकमिति मते तिप् सिप् मिप्सु देभ देभिथ देभेति रूपान्तरं बोध्यम्। तृप् प्रीणने। क्षुभ्नादित्वान्न णत्वम्। तृप्नोति। क्षि हिंसायाम्। क्षिणोति। इति स्वादयः।

तुद व्यथने। इतः स्वरितेतः। तुदादिभ्यः शः ।३ १ ७७। तुदति, तुदते।

अतौत्सीत्, अतुत्त । णुद प्रेरणे । दिश अतिसर्जने, अदिक्षत्, अदिक्षत । भ्रस्ज पाके । ग्रहिज्येति संप्रसारणम् । श्चुत्वजश्त्वे । भृज्जति, भृज्जते । **भ्रस्जो रोपधयोरमन्यतरस्याम्** । ६ । ४ । ४७ । भ्रस्जे रेफस्योपधायाश्च स्थाने रमागमो वा स्यादार्धधातुके । मित्वादन्त्यादचः परः । स्थानषष्ठीनिर्देशाद्रोपधयोर्निवृत्तिः । बभर्ज बभ्रज्ज । बभर्जिथ, बभर्ष्ठ । पक्षे बभ्रज्जिथ स्कोरिति सलोपः । व्रश्चेति षः । बभ्रष्ठ भर्ष्टा, भ्रष्टा । क्ङिति रमागमं बाधित्वा संप्रसारणं पूर्वविप्रतिषेधेन । * भृज्ज्यात् । अभार्क्षीत् अभ्राक्षीत् । अभर्ष्ट अभ्रष्ट । क्षिप प्रेरणे । कृष विलेखने । कर्ष्टा, क्रष्टा । स्पृशमृशकृषेतिसिज् वा । पक्षे क्सःसिचि अमृवा । अकाक्षीत्, अक्राक्षीत्, अकृक्षत् । तङि लिङ्सिचाविति कित्वादम्न । अकृष्ट अकृक्षाताम्, अकृक्षत । अकृक्षत, अकृक्षाताम् अकृक्षन्त आत्मनेपदिनः । * । जुषी प्रीतिसेवनयोः । जुषते । ओविजी भयचलनयोः । प्रायेणायमुत्पूर्वः । उद्विजते । **विज इट्** । १ । २ । २ । इडादिः प्रत्ययो ङिद्वत् उद्विजिता । ओलजी, ओलस्जी व्रीडायाम् । लजते । लज्जते । अथ परस्मैपदिनः । * । ओव्रश्चू छेदने । संप्रसारणम् वृश्चति । वव्रश्चिथ । वव्रष्ठ व्रश्चिष्यति, व्रक्ष्यति । वृश्च्यात् । अव्रश्चीत्, अव्राक्षीत् । व्यच व्याजीकरणे । विचति । विव्याच । विविचतुः । अव्याचीत्, अव्यचीत् । उछि उञ्छे । ऋच्छगतीन्द्रियप्रलयमूर्तिभावेषु ऋच्छत्यृतामिति गुणः । द्विहल ग्रहणस्याने कहलुपलक्षणत्वान्नुट् । आनर्च्छ । त्वच संवरणे । उज्झ उत्सर्गे । लुभ विमोहने । लोभिता, लोब्धा । रिफ रिह कत्थनयुद्धनिन्दाहिंसादानेषु । तृप तृम्फ तृप्तौ । स्पृशमृशेति सिज्विकल्पः पौषादिकस्यैव अकर्मकत्वात्, तेनात्र नित्यं सिच् । अतर्पीत् अनिदितामिति न लोपे । शेतृम्फादीनां नुम्वाच्यः । * । आदिशब्दः प्रकारे । तेन येऽत्र नकारानुषक्तास्ते तृम्फादयः । तृम्फति । तृप्यात् गुफगुम्फ ग्रन्थे । गुफति । गुम्फति । चृती हिंसाग्रन्थनयोः चर्तिता । सेऽसिचीति वेट् । चर्तिष्यति, चर्त्स्यति । अचर्तीत् । विध विधाने । घुणघूर्ण भ्रमणे । खुर छेदने । क्षुर विलेखने । पुर अग्रगमने । इष इच्छायाम् । इषुगमीति छः । इच्छति । एषिता, एष्टा । ऐषीत् । तिल स्नेहे । चिल वसने । बिल भेदने । अक्षरविन्यासे । लिलेख । कुट कौटिल्ये । गाङ्कुटादिभ्य इति ङित्त्वम् । चुकुटिथ । कुच संकोचने । छुर छेदने । न भकुर्छुरामिति नदीर्घः छुर्यात् स्फुट विकसने । स्फुटति । त्रुट छेदने । वाभ्राशेति श्यन्वा त्रुट्यति, त्रुटति । त्रुटिता । तुड तोडने । स्फुर स्फुरणे । स्फुल संचलने, **स्फुरतिस्फुलत्योर्निर्निविभ्यः** । ८ । ३ । ७६ । षत्वं वा स्यात् । निःष्फुरति णू स्तवने । परिणूतगुणोदयः । धू विधूनने । धुवति । गुपुरीषोत्सर्गे जुगुविथ जुगुथ । अगुषीत् । **ह्रस्वादङ्गात्** । अगुताम् । अगुषुः । ध्रु ध्रुव गतिस्थैर्ययोः । आद्यो गुवतिवत् । द्वितीयः सेट् । ध्रूव्यात् । अध्रुवीत् । कुङ् शब्दे । कुता । अकुत । वृत । कुटादयो वृत्ताः । पृङ् व्यायामे । प्रायेण व्याङ्पूर्वः । रिङ् । इयङ् । व्याप्रि-

यते । मृङ् प्राणत्यागे । म्रियतेर्लुङ्लिङोश्च । १।३।६१। लुङ् लिङोः शितश्च प्रकृति-भूतान्मृङस्तङ् नान्यत्र । म्रियते ममार । ममर्थ । मरिष्यति । मृषीष्ट अमृत । अथ परस्मैपदिनः । कॄ विक्षेपे । किरति । चकार । चकरतुः । करिता, करीता । अकारीत् । किरतौ लवने । ६।१।१४० उपात्सुट् । उपस्किरति । अडभ्यासव्यवायेऽपि सुट् कात्पूर्व इति वक्तव्यम् । उपास्किरत् । उपचस्कार । हिंसायां प्रतेश्च । ६।१।१४१। उपात्प्रतेश्च किरतेः सुट् स्याद्धिंसायाम् । उपस्किरति । प्रतिस्किरति गॄ निगरणे । अचि विभाषा । ८।२।२१ गिरतेरेफस्य लत्वं वा स्यादजादौ । गिरति, गिलति । गरिता, गरीता । गलिता, गलीता । दृङ् आदरे । आद्रियते । आदृत । धृङ् अवस्थाने । अथ परस्मैपदिनः । प्रच्छ ज्ञीप्सायाम् । पृच्छति । पप्रच्छिथ, पप्रष्ठ । अप्राक्षीत् । वृत् । किरादयो वृत्ताः । सृज विसर्गे । सृजति । ससर्जिथ, सस्रष्ठ । सृजिदृशोर्झल्यमकितीत्यमागमः । अस्राक्षीत् । टुमस्जो शुद्धौ । मज्जति । मस्जिनशोर्झलीति नुम् । मस्जेरन्त्यात्पूर्वो नुम्वाच्यः । संयोगादिलोपः । ममङ्क्थ, ममज्जिथ । मङ्क्ष्यति अमाङ्क्षीत् । रुजो भङ्गे । अरौक्षीत् । भुजो कौटिल्ये । छुप स्पर्शे । अच्छौप्सीत् । स्पृश संस्पर्शने । स्प्रष्टा, स्पर्ष्टा । अस्प्राक्षीत्, अस्पार्क्षीत्, अस्पृक्षत् । विच्छ गतौ । गुपूधूपेत्यायः । विच्छायति विश प्रवेशने । विशति । मृश आमर्शने । अम्राक्षीत्, अमार्क्षीत्, अमृक्षत् । अथ स्वरितेतः । मुच्लृ मोक्षणे । शे मुचादीनाम्, ७ १ ५९ नुम् स्यात् । मुञ्चति । मुञ्चते । अमुचत् । अमुक्त । लुप्लृ छेदने । अलुपत् । विद्लृ लाभे । व्याघ्रभूत्यादिमते वेत्ता । भाष्यादिमते वेत्ता । लिप उपदेहे । लिम्पति । लिम्पते । अङ् । अलिपत् । तङि तु वा । अलिपत, अलिप्त । षिच क्षरणे । सिञ्चति । सिञ्चते । अभ्यषिञ्चत । अभ्यषिञ्चत् । अभिषिषेक । अथ परस्मैपदिनः । कृती छेदने । खिद परिघाते । पिश अवयवे । पिंशति । इति तुदादयः ।

रुधिर आवरणे । अथ स्वरितेतः । रुधादिभ्यः श्नम् । । ३।१।७८। शपोऽपवादः । रुणद्धि । श्नसोरल्लोपः । रुन्धः । रुन्धन्ति । रुन्धे रुन्धि । रुणधानि । रुणधै । अरुणत् अरुन्धात् । अरुणत्, अरुणः । रोद्धा । रोत्स्यति । रोत्स्यते । अरुधत्, अरौत्सीत् । अरुद्ध । भिदिर् विदारणे । अभिनत्, अभिनः । अभिदत् अभैत्सात्, । अभित्त । छिदिर द्वैधीकरणे । रिचिर् विरेचने । रिणक्ति । रिङ्क्ते । विचिर पृथग्भावे । क्षुदिर संपेषणे । युजिर योगे । उच्छृदिर् दीप्तिदेवनयोः । छृणत्ति । छृन्ते । सेऽसिचीति वेट् । चच्छृदिषे, चच्छृत्से । अच्छृदत्, अच्छर्दीत् । अच्छर्दिष्ट । अथात्मनेपदिनः ञिइन्धी दीप्तौ । श्नान्न लोपः । ६।४।२३। श्नसोरल्लोपः । इन्धे । ऐन्ध । ऐन्धाः । खिद दैन्ये । विद विचारणे । अथ परस्मैपदिनः । शिष्लृ विशेषणे । शिनष्टि । शिष्टः । हेधिः । जश्त्वम् । झरो झरीति वा डलोपः । अनुस्वारपरसवर्णौ । शिण्ढ । शिण्ड्ढ । अशिनट् । शिशेषिथ । शेष्टा । शेक्ष्यति । लृदित्त्वादङ् । अशिषत् । पिष्लृ संचूर्णने । भञ्जो आमर्दने । बभञ्जिथ, बभङ्क्थ । भङ्क्ता । भुज पालनाभ्यवहारयोः । तृह हिसि हिंसायाम् । तृणह इम् । ७ । ३ । ९२ । तृहः श्नमि कृते इमागमः स्याद्धलादौ

पिंति । तृणेढि । तृण्ढः । अतृणेट् । उन्दी क्लेदने । उनत्ति औनत् । औन्ताम् । औन्दन् औनः औनत् । अञ्जू व्यक्तिम्रक्षणकान्तिगतिषु । अनक्ति । अङ्ग्धि । अनजानि आनक् । आनञ्ज । आनञ्जिथ, आनङ्क्थ । अञ्जिता, अङ्क्ता अञ्जेः सिचि ।७।२।७१। अञ्जे सिचो नित्यमिट् स्यात् । आञ्जीत् । तञ्चू संकोचने । ओविजी भयचलनयोः । विज इडिति ङित्वम् । अविजीत् । वृजी वर्जने । पृचि संपर्के । पृणक्ति । इति रुधादयः ।

तनु विस्तारे । अथ स्वरितेतः । तनादिकृञ्भ्य उः । ५ । तनोति । तनुते तनु । अतनीत् । तनादिभ्यस्तथासोः ।२।४।७९। तनादेः सिचो वा लुक् स्यात्तथासोः । थासा साहचर्यादेकवचनं तशब्दो गृह्यते । अनुदात्तोपदेशेत्यनुनासिकलोपः । अतत, अतनिष्ट अतथाः, अतनिष्ठाः । षणु दाने । ये विभाषा । सायात्, सन्यात् । जनसनेत्यात्वम् । असात, । असनिष्ट । क्षणु हिंसायाम् । ह्म्यन्तक्षणेति न वृद्धिः । अक्षणीत् । क्षिणु च । उ प्रत्ययनिमित्तो लघूपधगुणः । संज्ञापूर्वको विधिरनित्य इति गुणो न भवतीत्यात्रेयादयः भवत्येवेत्यन्ये । क्षिणोति, क्षेणोति । अक्षित अक्षेणिष्ट । मनु अवबोधने । अनुदात्तेत् । मनुते । डुकृञ् करणे करोति अत उत्सार्वधातुके । कुरुतः । न भकुर्छुरामिति न दीर्घः । कुर्वन्ति । नित्यं करोतेः ।६।४।१०८। प्रत्ययोकारस्य नित्यं लोपः स्यात् वमोः परयोः । कुर्वः । कुर्मः । ये च ।६।४।१०९। कृञ उलोपः स्याद्यादौ प्रत्यये परे । कुर्यात् चकर्थ । चकृव कर्ता । करिष्यति । क्रियात् । कृषीष्ट । अकार्षीत् । तनादिभ्य इति लुकाऽभावे, ह्रस्वादङ्गादिति सिचो लुक् । अकृत अकृथाः । संपरिभ्यां करोतौ भूषणे ।६।१।१३७। समवाये च ६।१।१३८। सुट् स्यात् भूषणे, संघाते चार्थे संस्करोति । अलंकरोतीत्यर्थः । संस्कुर्वन्ति संघीभवन्तीत्यर्थः । सम्पूर्वस्य क्वचिदभूषणेऽपि सुट् । परिनिविभ्य इति षत्वम् । परिष्करोति । सिवादीनां वा पर्यष्कार्षीत्, पर्यस्कार्षीत् उपात्प्रतियत्नवैकृतवाक्याध्याहारेषु च ।६।१।१३९। उपात्कृञः सुट् स्यादेष्वर्थेषु । चात्प्रागुक्तयोरर्थयोः । उपस्कृता कन्या, अलङ्कृतेत्यर्थः । उपस्कृता ब्राह्मणाः । समुदिता इत्यर्थः । एधोदकस्योपस्कुरुते । उपस्कृत ब्रूते । सुट् कात्पूर्वः ।६।१।१३५। अडभ्यासव्यवायेऽपीत्युक्तम् । सचस्कार । सुटि । द्वित्वे ऋतश्च संयोगादेर्गुणे सचस्करतुः । कृसृभृ इति सूत्रे ऋतो भारद्वाजस्येति सूत्रच । कृञोऽसुट इति वक्तव्यम् । तेन ससुट्कात्परस्यट् । संचस्करिथ । संचस्करिव नित्यमितानुवृत्तेः, नित्य य संयोगादिस्तस्येत्यर्थात्सुटि गुणो न । संस्क्रियात् । उपदेशे यः संयोगादिरिति व्याख्यानात् ऋतश्च संयोगादेरिति लिङ् सिचोर्नेट् । संस्कृषीष्ट । समस्कृत समस्कृषाताम् । इति तनादयः ।

डुक्रीञ् द्रव्यविनिमये । क्र्यादिभ्यः श्ना ।३।१।८१। क्रीणाति । ईहल्यघोः । क्रीणीतः । इत्त्वात्पूर्वं परत्वान्नित्यत्वादन्तरङ्गत्वाच्च झेरन्तादेशः । एवं श्नस्यान्द्वावेऽपि ततः श्नाभ्यस्तयोरात इत्यल्लोपः । क्रीणन्ति । क्रीणीते । क्रीणाते । क्रीणते । चिक्रयिथ, चिक्रेथ । चिक्रियिषे । क्रीयात् । क्रेषीष्ट । अक्रैषीत् । अक्रैष्ट । प्रीञ्

तर्पणे, कान्तौ च। श्रीञ् पाके। प्रीञ् हिंसायाम्। हिनुमीना। प्रमीणाति। प्रमीणीतः। मीनातिमिनोतीत्येज्विषये आत्वम्। ममौ। मिम्यतुः। मीयात्। मासीष्ट। अमासीत्, अमासिष्टाम्। अमास्त। स्कुञ् आप्रवणे। स्तम्भुस्तुम्भुस्कम्भुस्कुम्भुस्कुञ्भ्यः श्नुश्च। ३।१।८२ चात् श्ना। स्कुनोति। स्कुनुते। स्कुनाति। स्कुनीते। अस्कौषीत्। अस्कोष्ट। स्तम्भ्वादयश्चत्वारः सौत्राः। सर्वे रोधनार्थाः। सर्वे परस्मैपदिनः। नलोपः। विष्टभ्नोति। विष्टभ्नाति। अवष्टभ्नोति। जृ स्तम्भित्यङ् वा व्यष्टभत्। व्यष्टम्भीत्। वेः स्कभ्नातेर्नित्यम्। ८।३।७७ वेःपरस्य स्कभ्नातेः सस्य षः स्यात्। विष्कभ्नोति। विष्कभ्नाति। हलः श्नः शानज्झौ। ३।१।८३ स्तभान। स्तुभान। स्कभान। स्कुभान। पक्षे स्तभ्नुहीत्यादि। युञ् बन्धने। युनाति। पूञ् पवने। प्वादीनां ह्रस्वः।७।३।८० पुनाति। पुनीते। पविता। लुञ् छेदने। स्तृञ् आच्छादने। स्तृणाति। स्तृणीते। तस्तार तस्तरतुः। स्तरिता, स्तरीता। स्तीर्यात्। लिङ्सिचोरिति वेट्। न लिङि ७।२।३९। वृत इटो लिङि दीर्घो न स्यात्। स्तरिषीष्ट। उश्चेति कित्वम् स्तीर्षीष्ट। सिचि च परस्मैपदेष्विति न दीर्घः। अस्तारिष्टाम्। अस्तारिष्ट। अस्तीर्ष्ट। वृञ्, वरणे। वृणाति। वृणीते। वरिता। वरीता उदोष्ठ्यपूर्वस्य। वूर्यात्। वरिषीष्ट। वूर्षीष्ट। अवारीत्। अवरीष्ट अवरिष्ट, अवूर्ष्ट। धूञ् कम्पने। धुनाति। धुनीते। अथ परस्मैपदिनः। *। शॄ हिंसायाम् शॄ दॄप्रां ह्रस्वो वेति ह्रस्वपक्षे यण्। अन्यदा ऋच्छत्यृतामिति गुणः शश्रतुः। शशरतुः श्रुकः कितीति निषेधं बाधित्वा क्रादिनियमादिट्। ह्रस्वः शश्रिव। शशरिव। शरिता शरीता। शीर्यात्। पॄपालनपूरणयोः। पृणाति। पूर्यात्। वॄ वरणे। वृणाति। दॄ विदारणे। ददरतुः। दद्रुः। ज्या वयोहानौ। ग्रहिज्येतिसंप्रसारणम्। हलः।६।४।२ अङ्गावयवाद्धलःपरं यत्संप्रसारणं तदन्ताङ्गस्य दीर्घः स्यात्। इति दीर्घे कृते, प्वादीनां ह्रस्वः। जिनाति। जिज्यौ, जिज्यतुः। लीश्लेषणे। लिनाति। विभाषा लीयते। ललौ। लिलाय। ल्वादयो वृत्ताः, प्वादयोऽपीत्येके। व्री वरणे। भ्री भये। क्षीष् हिंसायाम्। एषां त्रयाणां न ह्रस्व इति केचित्। प्वादयो वृत्ताः। ज्ञा अवबोधने। ज्ञाजनोर्जा। जानाति। बन्ध बन्धने। बध्नाति। बधान। बन्धा। भन्त्स्यति। अभांत्सीत्। अबन्धाम्। अभान्त्सुः। वृङ संभक्तौ। वृणीते। ववृषे। ववृढ्वे। वरिता वरीता। अवरिष्ट। अवारिष्ट अवृत। अथ परस्मैपदिनः। श्रन्थ विमोचनप्रतिहर्षयोः। श्रथ्नाति। श्रन्थग्रन्थीत्यादिना कित्वप ? एत्वाभ्यासलोपावप्यत्र वक्तव्यौ। श्रेथतुः। श्रेथुः। इदं कित्वं पिदवित्साधारणमिति सुधाकरमते। श्रेथ श्रेथिथ। मन्थ विलोडने। कुथकुन्थ संश्लेषणे। कुथ्नाति। मृदक्षोदे। मृद्नाति। मृदान। कुष् कोषे। कुष्णाति। निरः कुषः।७।२।४३। निरः कुषो वलादेरार्धधातुकस्येड् वा स्यात्। निष्कोषिता, निष्कोष्टा। निरकोषीत्, निरकुक्षत्। क्षुभसंचलने क्षुभ्नादिषु च।८।४।३०। णत्वं न। क्षुभ्नाति। क्षुभान। क्लिशू विबाधने। क्लिश्नाति। क्लेशिता, क्लेष्टा। इष आभीक्ष्ण्ये। इष्णाति। इषेस्तकारे श्यन्प्रत्ययात्प्रतिषेधो वाच्यः। इति दैवादिकस्यैव निषेधात्। तीषसहेतिवेट्।

एषिता, एष्टा । पुष पुष्टौ । मुष स्तेये । मुष्णाति । मोषिता । खच भूतप्रादुर्भावे । खच्याति । वान्तोऽयमित्येके । **च्छ्वोः शूडनुनासिके च** । ६ । ४ । १९ सतुक्कस्य छस्य वस्य च क्रमाच्छ ऊठ् एतावादेशौ स्तोऽनुनासिके क्वौ झलादौ चक्ङिति । खौनाति । चखाव । शानचः परत्वादूठि कृते हलन्तत्वाभावान्न शानच् खौनीहि । ग्रह उपादाने । स्वरितेत् । ग्रहिज्येति सम्प्रसारणम् । गृह्णाति । गृह्णीते । **ग्रहोऽलिटि दीर्घः** । ७ । २ । ३७ । एकाचो ग्रहेर्विहितस्येटो दीर्घः स्यान्नतु लिटि । ग्रहीता । लिटि तु । जग्रहिथ । गृह्यात् । ग्रहिषीष्ट । ह्म्यन्तेतिन वृद्धिः । अग्रहीष्टाम् । अग्रहीषुः । अग्रहीष्ट । अग्रहीषाताम् । अग्रहीषत इति क्र्यादयः ।

चुर स्तेये । **सत्यापपाशरूपवीणातूलश्लोकसेनालोमत्वचवर्मवर्णचूर्णचुरादिभ्यो णिच्** । ३ । १ । २५ एभ्यो णिच् स्यात् । चूर्णान्तेभ्यः प्रातिपदिकाद्धात्वर्थ इत्येव सिद्धे तेषामिह ग्रहणं प्रपञ्चार्थम् । चुरादिभ्यस्तु स्वार्थे । पुगन्तेति गुणः । धातुत्वम् । तिपृशबादि । गुणायादेशौ । चोरयति । **णिचश्च** । १ । ३ । ७४ । आत्मनेपदं स्यात्कर्तृगामिनि क्रियाफले । चोरयते चोर्यात् । चोरयिषीष्ट । णिश्रीति चङ्, णौ चङीति ह्रस्वः । द्वित्वम् । दीर्घोलघोरित्यभ्यासदीर्घः । अचूचुरत् अचुचूरत । चिति स्मृत्याम् । चिन्तयति । अचिचिन्तत् । इदित्करणं णिचः पाक्षिकत्वे लिङ्गम् । चिन्तति । चिन्तेत् । यन्त्रि संकोचे । यन्त्रयति । यन्त्रेति पठितुं शक्यम् । स्फुडिपरिहासे । स्फुण्डयति स्फुण्डति । लड उपसेवायाम् । लाडयति । पीड अवगाहने । पीडयति । **भ्राजभासभाषदीपजीवमीलपीडामन्यतरस्याम्** । ७ । ४ । ३ एषामुपधाया ह्रस्वो वा स्याच्चङ्परे णौ । अपीपिडत् अपिपीडत् । नाट अवस्यन्दने । अवस्यन्दनं नाट्यम् । बध संयमने । बाधयति । पॄ पूरणे । दीर्घोच्चारणं णिचः पाक्षिकत्वे लिङ्गम् । पारयति । परति । वर्ण वर्णने । प्रथ प्रख्याने । प्राथयति । नान्ये मितोऽहेताविति वक्ष्यमाणान्नास्य मित्वम् । **अत्स्मृदृत्वरप्रथम्रदस्तृस्पृशाम्** । ७ । ४ । ७ । एषामभ्यासस्याकारोऽन्तादेशः स्याच्चङ्परे णौ । इत्वपवादः । अपप्रथत् । पृथ प्रक्षेपे । **उर्ऋत्** । ७ । ४ । ७ उपधाया ऋवर्णस्य स्थाने ऋत्स्याद्वा चङ्परे णौ । इररारामपवादः । अपीपृथत् अपपर्थत् । भक्ष अदने । कुट्ट छेदनभर्त्सनयोः कुट्टयति । लुण्ठ स्तेये । लुण्ठयति । षान्त्व सामप्रयोगे । पथि गतौ । छदि संवरणे । श्रणदाने । प्रायेणायं विपूर्वः विश्राणयति । तड आघाते ताडयति खण्डि खण्डने । कटिवडिविभाजने । मडि भूषायां हर्षे च । छर्द वमने । चुद संचोदने । क्षल शौचकर्मणि क्षालयति । तल प्रतिष्ठायाम् । तुलउन्माने । तोलयति । मूल रोहणे । बिलभेदने तिलस्नेहने । पाल रक्षणे । चपिगत्याम् । चम्पयति चम्पति । ज्ञप मिच्च । अयं ज्ञाने ज्ञापने च । **मितां ह्रस्वः** ६।४।९२। मितामुपधाया ह्रस्वः स्याण्णौ परे । ज्ञपयति । यम च परिवेषणे चान्मित् । यमयति । चन्द्रम परिवेष्टते इत्यर्थः । चह परिकल्कने । चहयति । अचीचहत कथादौ अचचहत् चप इत्येके । रह त्यागे । बल प्राणने । बलयति । चिञ् चयने चिस्फुरोर्णौ

।६।१।५४। आत्वं स्यात् । **अर्तिह्रीव्लीरीक्नूयीक्ष्माय्यातां पुग्णौ** ७।३।३६ चपयति, चययति । चित्करणसामर्थ्याद्दस्य णिज्विकल्पः । चयते प्रणिचयति प्रनिचयति । नान्ये मितोऽहेतौ । अहेतौ स्वार्थे णिचि ज्ञपादिभ्योऽन्ये मितो न स्युः । शमादीनाममन्तत्व-प्रयुक्तं मित्वं न । घट्ट चलने । पुल पूर्ण संघाते । चूर्ण संकोचने । पूज पूजायाम् । अर्क स्तवनतपनयोः । कृत संशब्दने । **उपधायाश्च** ।७।१।१०१। धातोरुपधाभूतस्य ॠत इत्स्यात् । रपरत्वम् । उपधायां चेति दीर्घः कीर्तयति । उर्ऋत् । अचीकृतत् अचिकीर्तत् । रुष रोषे । रोषयति आकुस्मादात्मनेपदिनः । चित संचेतने चेतयते अचीचितत मन्त्रि गुप्त-परिभाषणे । शमलक्ष आलोचने । नान्ये मितोऽहेताविति मित्वनिषेधः । शामयति वृष शक्तिबन्धने । वर्षयते । विद चेतनाख्याननिवासेषु वेदयते कुस्मनाम्नो वा । कुस्मेति धातुः कुस्मितस्मयने वर्तते । कुस्मयते अचुकुस्मत अथवा कुस्मेति प्रातिपदिकं ततो धात्वर्थे णिच् अथ परस्मैपदिनः । चर्च अध्ययने कण निमीलने काण्यादीनां वेति विकल्प्यते अचीकणत् अचकाणत् । हन्त्यर्थाश्च । नवगणपामुक्ता अपि हन्त्यर्थाः स्वार्थे णिचं लभन्ते । घुषिर विशब्दने । घोषयति घुषिरविशब्दने इति सूत्रे अविशब्दन इति निषेधाल्लिङ्गादनित्योऽस्य णिच् घोषति इरित्वादङ् वा अघुषत् अघोषीत् ण्यन्तस्य अजूघुषत् । आङः क्रन्दसातत्ये । आङ्पूर्वोऽयं णिचं लभते सातत्ये । आस्कन्दति ज्ञानियोगे आज्ञापयति । मुदसंसर्गे । मोदयति सक्तून् घृतेन । भुवो अवकल्कने चिन्तने इत्येके । भावयति । आस्वदः सकर्मकात् स्वदमभिव्याप्य संभवत्कर्मभ्य एव णिच् ग्रस ग्रहणे ग्रासयति फलम् । गुपधूपविच्छलोकृलोचृवृतुवृधु भाषार्थाः । गोपयति, धूपयति । लोकयति । **नाग्लोपिशास्वृदिताम्** ७।४।२। णिच्यग्लोपिनः शास्तेॠदितां च उपधाया ह्रस्वो न स्याच्चङ्परे णौ । अलुलोकत् । अलुलोचत् । वर्तयन्ति । उदित्वाद् वर्तति । पूरी आप्यायने । ईदित्वं निष्ठाया मिणिनिषेधाय । अत एव णिज्विकल्पः । पूरयति, पूरति ॥ आधृषाद्वा ॥ × ॥ इतऊर्ध्वं धृषधातुमभिव्याप्य वा णिच् युजपृच संयमने । योजयति, योजति । अयौक्षीत् । वृजी वर्जने । वृज, आवरणे । वारयति, वरन्ति । वरते । वरित्वा, वरीता । शिषअसर्वोपयोगे । शेषयति, शेषति । अयं विपूर्वोऽतिशये । तप दाहे । तृप तृप्तौ । ग्रन्थ बन्धने अर्द हिंसायाम् । आङः षद पद्यर्थे । आसादयति । असात्सीत् । धूञ् कम्पने । णावित्यधिकृत्य धूञ्प्रीञोर्नुग्वक्तव्यः × धूनयति, धवति । धवते । प्रीञ् तर्पणे । प्रीणयति । तनुश्रद्धोप-करणयोः । उपसर्गाच्च दैर्घ्ये । वितानयति । मान पूजायाम् । माnयति । मानति । विचा-रणे तु भौवादिको नित्यसन्नन्तः । स्तम्भे तु मानयते । भू प्राप्तावात्मनेपदी । भावयते, भवते । णिचसन्नियोगेनैव आत्मनेपदमित्येके । भवति । धृष प्रहसने । धर्षयति, धर्षति । इत्याधृषीयाः ॥ अथादन्ताः ॥ × ॥ कथ वाक्यप्रबन्धे । अल्लोपस्य स्थानिवद्भावान्न वृद्धिः । कथयति । अग्लोपित्वान्न दीर्घसन्वद्भावौ । अचकथत् । गणसंख्याने । गणयति **ई च गणः** ।७।४।९७। गणेरभ्यासस्य ईत्स्याच्चङ्परे णौ । चादत् । अजीगणत् अजगणत् रह त्यागे । अररहत् । स्तन गदी देवशब्दे । पतगतौ वा । वा णिजन्तः, वा अदन्त इत्यके । आद्ये पतयति । पततिे । अपतीत् । द्वितीये । पातयति । अपीपतत् ।

कल गतौ संख्याने च । चह परिकल्कने । परिकल्कनं दम्भः, शाठ्यं च । मह पूजायाम् महयति । सूच पैशुन्ये । सूचयति, असूसुचत् । गोम उपलेपने । अजुगोमत् । शील उपधारणे । उपधारणमभ्यासः । साम सान्त्वप्रयोगे अससामत् । गवेष मार्गणे । अजगवेषत् । सभाजप्रीतिसेवनयोः । सभाजयति । ऊनपरिहाणे । ऊनयति । णिचि अच आदेशो न स्याद् द्वित्वे कर्तव्ये, इति नशब्दस्य द्वित्वम्, तत उत्तरखण्डे, अल्लोपः औननत्, माभवानूननत् । ध्वनशब्दे अदध्वनत् । स्तेन चौर्ये । अतिस्तेनत् ॥ × ॥ अथात्मनेपदिनः॥ मृग अन्वेषणे मृगयते । मृग्यतीति कण्ड्वादिः । कुह विस्मापने । शूरवीर विक्रान्तौ । अर्थ उपयाच्ञायाम । अर्थयते । आर्तथत् । गर्व माने । इत्यात्मनेपदिनः । सूत्र वेष्टने सूत्रयति । असुसूत्रत् । मूत्र प्रस्रवणे । रूक्ष पारुष्ये पार तीर कर्मसमाप्तौ । अपपारत् । अतितीरत् ॥ प्रातिपदिकाद्धात्वर्थे बहुलमिष्ठवच्च । प्रातिपदिकाद्धात्वर्थे णिच्स्यात् । इष्ठे यथा प्रातिपदिकस्य पुंवद्भावरभावटिलोपविन्मतुब्लोपयणादिलोपप्रस्थस्फाद्यादेशभसंज्ञास्तद्वण्णावपि स्युः । पटुमाचष्टे । पटयति । परत्वाद्वृद्धौ सत्यां टिलोपः । अपीपटत् । वृद्धेर्लोपो बलीयाऽनिति आप्यमते । अपपटत् ॥ तत्करोति तदाचष्टे ॥ पूर्वस्यैव प्रपञ्चः । तत्करोत्याचष्टे इति धात्वर्थमात्र णिजर्थः । लडर्थस्त्वविवक्षितः ॥ तेनातिक्रामति ॥ अश्वेनातिक्रामति अश्वयति । हस्तिनातिक्रामति हस्तयति ॥ धातुरूपंच ॥ णिच्प्रकृतिर्धातुरूपं प्रतिपद्यते । चशब्दोऽनुक्तसमुच्चयार्थः । तथा च वार्तिकम् । आख्यानात्कृतस्तदाचष्टे कृल्लुक्प्रकृतिप्रत्यापत्तिः । प्रकृतिवच्च कारकमिति, ॥ कंसवधमाचष्टे कंसं घातयति । इह कंसं हन् णिच् इति स्थिते । हनस्तोऽचिण्णलोः ७।३।३२। हन्तेस्तकारोऽन्तादेशः स्याच्चिण्णल्वर्जे ञ्णिति णिति । प्रकृतिवच्चेति चकारग्रहणात्, हेतुमण्णिचः प्रकृतेर्हन्यादेर्हेतुमण्णौ यादृशं कारकं धातावनन्तर्भूतं द्वितीयान्तं, यादृशं च कार्यं कुत्वतत्वादि तदिहापी त्यर्थः कंसमजीघतत् । कर्तृकरणाद्धात्वर्थे ॥ कर्तव्योपादार्थं यत्करणं नतु चक्षुरादिमात्रम । असिना हन्ति असयति । चित्र चित्रीकरणे । कदाचिद् दर्शने । चित्रेत्ययमद्भुत दर्शने णिचां लभते । चित्रयति । वट विभाजने लजप्रकाशने । वटि लजि इत्येके । अदन्तेषु पाठबलाददन्तत्वे वृद्धिरित्यन्ये । वण्टापयति, लञ्जापयति शाकटायनस्तु कथादीनां सर्वेषां पुकमाह । कथापयति । गणापयति । संग्राम युद्धे । अससंग्रामत् । अन्ध दृष्ट्युपघाते आन्दधत् । सुखदुःखतत्क्रियायाम् । रूप रूपक्रियायाम छेद द्वैधीकरणे । अचिच्छेदत् । वर्ण वर्णक्रियाविस्तारगुणवचनेषु । सुवर्णं वर्णयति । कथां वर्णयति हरिं वर्णयति ॥ बहुलमेतन्निदर्शनम् अदन्तधातुनिदर्शनमित्यर्थः । बाहुलकादन्येऽपि बोध्याः । यथा पर्ण हरितभावे । अपपर्णत् । वस निवासे । एवमान्दोलयति, विडम्बयति, अवधीरयतीत्यादि । अन्ये तु दशगणीपाठो बहुलमित्याहुः । तेन अपठिता अपि सौत्रलौकिकवैदिका बोध्याः । अपरे तु नवगणी पाठो बहुलमित्याहुः । तेन अपठितेभ्योऽपि क्वचित्स्वार्थे णिच् । रामो राज्यमचीकरदित्यादि । चुरादिभ्यो बहुलं णिजित्यर्थ इत्यन्ये ॥ णिङङ्गान्निरसने ॥*॥ हस्तौ निरस्यति हस्तयते । पादयते । श्वेताश्वाश्वतरगालोडिताह्वरकाणामश्वतरेतकलोपश्च ॥*॥ श्वेताश्वादीनां चतुर्णामश्वादयो

लुप्यन्ते। णिङ् च धात्वर्थे। श्वेताश्वमाचष्टे तेनातिक्रामति वा श्वेतयते। अश्वतरमाचष्टे अश्वयते गालोडितं वाचा विमर्शः। तत्करोति गालोडयते। आह्वरयते। केचित्तु णिचमेवात्रानुवर्तयन्ति। तन्मते परस्मैपदमपि। पुच्छादिषु धात्वर्थ इत्येव सिद्धम्। आत्मनेपदं च बहुलवचनादस्तु। सिद्धशब्दो ग्रन्थान्ते मङ्गलार्थः। इति चुरादयः।

तत्प्रयोजको हेतुश्च। १।४।५५ चात्कर्तृसंज्ञश्च स्यात्। **हेतुमति च**। ३।१।२६। प्रयोजकव्यापारे प्रेषणादौ च वाच्ये धातोर्णिच् स्यात्। भवन्तं प्रेरयति। भावयते। **ओः पुयण्ज्यपरे** ।७।४।८०। सनि परे यदङ्गं तदवयवाभ्यासोकारस्येत्वं स्यात्पवर्गयणजकारेष्ववर्णपरेषु परतः। अबीभवत्। अपीपवत्। अमीमवत्। अयीयवत्। अरीरवत् अलीलवत्। अजीजवत्। **स्रवतिशृणोतिद्रवतिप्रवतिप्लवतिच्यवतीनां वा** ।७।४।८१। एषामभ्यासोकारस्येत्वं वा स्यात्सन्यवर्णपरे धात्वक्षरे परे। असिस्रवत् असुस्रवत् नाग्लोपीति ह्रस्वनिषेधः। अशशासत् अडुढौकत्। अचीचकासत् मतान्तरे। अचचकासत् ण्यन्तािण्णच्। पूर्वविप्रतिषेधादपवादत्वाद्वा वृद्धिं बाधित्वा णिलोपः। चोरयति। अचूचुरत् **णौ च संश्चङोः** ।६।१।३१। श्वयतेः संप्रसारणं वा स्यात्। संप्रसारणं तदाश्रयं च कार्यं बलवदिति वचनात्संप्रसारणं पूर्वरूपम्। अशूशवत्, अलघुत्वान्न दीर्घः। अशिश्वयत्। **स्तम्भुसिवुसहां चङि** ।८।३।११६। उपसर्गनिमित्तं एषां सस्य षो न स्याच्चङि। अवातस्तम्भत् पर्यसीषवत्। न्यसीषहत्। उपधाह्रस्वे, द्वित्वे। आटिटत्। आशिशत्। मा भवानिटिटत्। नन्द्रा इति नदराणां न द्वित्वम्। औन्दिदत्। आड्डिडत्। आर्चिचत्। उब्ज आर्जवे। औब्जिजत्। अजादेरित्येव नेह अदिद्रवत्। **रभेरशब्लिटोः** ।७।१।६३। नुम् न स्यादचि, नतु शब्लिटोः। **लभेश्च** ।७।१।६४। अररम्भत्। अललम्भत्। हेरचङीत्यत्र अचङीत्युक्तेः कुत्वं न। अजीहयत्। अत्स्मृदृत्वर प्रथम्रदस्तॄस्पशाम्। असस्मरत् अददरत्। तपरत्वसामर्थ्यात्लघोर्दीर्घः। **विभाषा वेष्टिचेष्ट्योः** ।७।४।९६। अभ्यासस्यात्वं वा स्याच्चङ्परे णौ। अववेष्टत्। अववेष्टत्, अचिचेष्टत्। भ्राजभासेत्यादिना वोपधाह्रस्वः। अबिभ्रजत्, अबभ्राजत्। काण्यादीनां वेति वक्तव्यम्। अचीकणत्, अचकाणत्। **स्वापेश्चङि** ।६।१।१८। ण्यन्तस्य स्वापेश्चङि संप्रसारणं स्यात्। असूषुपत्। **शाच्छासाह्वाव्यावेपां युक्** ।७।३।३७। णौ। शाययति। ह्वाययति। **ह्वः संप्रसारणम्** ।६।१।३२। सन्परे चङ्परे णौ ह्वः संप्रसारणं स्यात्। अजूहवत्, अजुहावत्। **लोपः पिबतेरीच्चाभ्यासस्य**। ।४।४। चङ्परे णौ। अपीप्यत्। अर्तिह्रीति, पुक्। अर्पयति। ह्रेपयति। व्लेपयति। रेपयति। यलोपः। क्नोपयति। क्ष्मापयति स्थापयति। **तिष्ठतेरित्** ७।४।५। उपधाया इदादेशः स्याच्चङ्परे णौ। अतिष्ठिपत्। **जिघ्रतेर्वा** ।७।४।६। अजिघ्रिपत् अजिघ्रपत्। उऋत्। अचीकृतत् अचिकीर्तत् अवीवृतत्, अववर्तत्। अमीमृजत्, अममार्जत्। पातेर्णौ लुग्वक्तव्यः ॥*॥ पालयति। **वो विधूनने जुक्** ।७।३।३८। वाजयति। विभाषा लीयतेः **लीलोर्नुग्लुकावन्यतरस्यां स्नेहविपातने** ।७।३।३९। लीयते लतिश्च क्रमान्नुग्लुकावागमौ वा स्तो णौ स्नेहद्रवे। विलीनयति, विलापयति, विलाययति।

विलालयति, विलापयति वा घृतम् । प्रलम्भनाभिभवपूजासु लियो नित्यमात्वमशिति वाच्यम् ॥*॥ लियः संमाननशालीनीकरणयोश्च १।३।७०। लीङ् लियोर्ण्यन्तयोरात्मनेपदं स्यादकर्तृगेऽपि फले, पूजाभिभवयोः प्रलम्भने चार्थे । जटाभिर्लापयते । पूजामधिगच्छतीत्यर्थः । श्येनो वर्त्तिकामुल्लापयते, अभिभवतीत्यर्थः । बालमुल्लापयते, वञ्चयतीत्यर्थः । बिभीतेर्हेतुभये ।६।१।५६ आत्वं वा स्यात् । भीस्म्योर्हेतुभये ।१।३।६८। ण्यन्ताभ्यामाभ्यामात्मनेपदं स्यात्, हेतोश्चेद् भयस्मयौ । मुण्डो भापयते । भियो हेतुभये षुक् ।७।३।४०। भीषयते । नित्यं स्मयतेः ।६।१।५७। स्मयतेरेचो नित्यमात्वं स्याण्णौ, हेतोः स्मये । जटिलो विस्मापयते । हेतोश्चेद् भयस्मयावित्युक्तेर्नेह । कुञ्चिकयैनं भाययति, विस्माययति । स्फायो वः ।७।३।४१। णौ स्फावयति । शदेरगतौ तः ।७।३।४२। शातयति । रुहः पोऽन्यतरस्याम् ।७।३।४३। णौ । रोपयति । रोहयति । क्रीङ्जीनां णौ ।६।१।४८ ।एषामेच आत्वं स्याण्णौ । क्रापयति, अध्यापयति । जापयति । णौ च संश्चङोः ।२।४।५१। सन्परे चङ्परे च णौ इङो गाङ् वा स्यात् अध्यजीगपत्, अध्यापिपत् सिध्यतेरपारलौकिके ।६।१।४९। ऐहलौकिकेऽर्थे विद्यमानस्य सिध्यतेरेच आत्वं स्याण्णौ । अन्नं साधयति । निष्पादयतीत्यर्थः । प्रजने वीयतेः ।६।१।५५। अस्यैच एत्वं वा स्याण्णौ प्रजनेऽर्थे । वापयति, वाययति वा गाः पुरोवातः । ऊदुपधाया गोहः ।६।४।८९। गूहयति । दोषो णौ ।६।४।९० । उपधाया ऊत्स्याण्णौ । दूषयति । वा चित्तविरागे ।६।४।९१। चित्तं दूषयति, दोषयति वा कामः । मितां ह्रस्वः घटयति । जनीजॄष् । जनयति । जरयति । जृणातेस्तु । जारयति । रञ्जेर्णौ मृगरमणे नलोपो वक्तव्यः ॥*॥ रजयति मृगान् । चिस्फुरोर्णौ । चपयति । चययतीत्युक्तम् । चिनोतेस्तु चापयति । चाययति स्फारयति, स्फोरयति । उभौ साभ्यासस्य । ८।४।२१। अभ्यासस्यानितरुभौ नकारौ णत्वं प्राप्नुतो निमित्ते सति । प्राणिणत् । णौ गमिरबोधने । २।४।४६। इणो गमिस्याण्णौ । गमयति । बोधने तु प्रत्याययति इणवदिकः । अधिगमयति । हनस्तोऽचिण्णलोः । घातयति । ईर्ष्यतेस्तृतीयस्येति वक्तव्यम् ।*। तृतीयव्यञ्जनस्य तृतीयैकाच इति वाऽर्थः । ऐर्ष्यियत्, ऐर्षिष्यत् । निवृत्तप्रेषणाद्धातोर्हेतुमण्णौ शुद्धेन तुल्योऽर्थः । तेन प्रार्थयन्ति शयनोत्थितं प्रिया इत्यादि सिद्धम् । एवं सकर्मकेषु सर्वेपूह्यम् । इतिण्यन्त प्रक्रिया ॥

धातोःकर्मणःसमानकर्तृकादिच्छायां वा । ३ । १ । ७ इषि कर्मणः इषिणैककर्तृकाद्धतोः सन्प्रत्ययो वा स्यादिच्छायाम् । पठितुमिच्छति पिपठिषति । वाग्रहणात्पक्षे वाक्यमपि । अत्तुमिच्छति । लुङ्सनोर्घस्लृ । एकाच उपदेशे इति नेट् । सस्य तः । जिघत्सति । ईर्ष्यतेस्तृतीयस्येति यिसनोर्द्वित्वम् । ईर्ष्यियिषति ईर्ष्यिषिषति । रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः संश्च । १ । २ । ८ । एभ्यः संश्च त्वा च कितौ स्तः । रुरुदिषति । विविदिषति । मुमुषिषति । सनिग्रहगुहोश्च । ७ । २ । १२ । ग्रहेर्गुहेरुगन्ताच्च सन इण् न स्यात् ।

ग्रहिज्येति संप्रसारणम्। सनः षत्वस्यासिद्धत्वाद् भषभावः। जिघृक्षति। बुभुप्सति। किरश्च पञ्चभ्यः।७।२।७५। कॄ गॄ दृङ् धृङ् प्रच्छ एभ्यः सन इट् स्यात्। पिपृच्छिषति चिकरिषति। जिगरिषति, जिगलिषति। अत्रेटो दीर्घो नेष्टः। ×। दिदरिषते। दिधरिषते। इको झल् ।१।२।९। इगन्ताज्झलादिः सन् कित्स्यात्। बुभूषति। दीङ् दिदीषति। हलन्ताच्च ।१।२।१०। इक्समीपाद्धलः परो झलादिः सन् कित्स्यात्। जुघुक्षति। बिभित्सति। हलग्रहणं जातिपरम्। तृन्हू - तितृक्षति, तितृंहिषति। अज्झनगमां सनि ।६।४।१६। एषां दीर्घः स्याज्झलादौ सनि। सन्लिटोर्जेः। जिगीषति। विभाषा चेः। चिकीषति, चिचीषति। जिघांसति। सनि च २।४।४७। इणो गमि स्यात्सनि न तु बोधने। जिगमिषति। बोधने तु, प्रतीषिषति। इण्वदिकः। अधिजिगमिषति। कर्मणि तङ् परस्मैपदेष्विस्युक्तेर्नेट्। झलादौ सनीति। दीर्घः। जिगांस्यते, अधिजिगांस्यते। अजादेशस्येत्युक्तेर्गच्छतेर्न दीर्घः। जिगंस्यते। संजिगंस्यते। इङश्च ।२।४।४८। इङो गमिः स्यात्सनि अधिजिगांस्यते। रलो व्युपधाद्धलादेः संश्च ।१।२।२६। उकारोपधादिकारोपधाद् हलादे रलन्तात्परौ क्त्वासनौ सेटौ वा कितौ स्तः। द्युतिस्वाप्योः संप्रसारणम्। दिद्युतिषते दिद्योतिषते। रुरुचिषते, रुरोचिषते। लिलिखिषति, लिलेखिषति सनीवन्तर्धभ्रस्जदम्भुश्रिस्वृयूर्णुभरज्ञपिसनाम् ।७।२।४९। इवन्तेभ्य ऋधादिभ्यश्च सन इड् वा स्यात्। दिदेविषति, इडभावे। हलन्ताच्चेति कित्त्वम्। च्छ्वोरिति वस्य ऊठ् यण् द्वित्वम् दुद्यूषति स्तौतिण्योरेवेति वक्ष्यमाणनियमान्न षः सिसेविषति, सुस्यूषति। आप्ज्ञप्यृधामीत् ।७।४।५५ एषा मच ईत्स्यात्सादौ सनि। अत्र लोपोऽभ्यासस्य ।७।४।५८। सनि मीमेत्यारभ्य यदुक्तं तत्राभ्यासस्य लोपः स्यात्। आप्तुमिच्छति ईप्सति। अर्जितुमिच्छति ईर्त्सति। अर्दिधिषति। बिभ्रज्जिषति, बिभर्जिषति। बिभ्रक्षति, बिभर्क्षति। दम्भ इच्च ।७।४।५६। दम्भेरच इत्स्यात् ईच्च सादौ सनि। धिप्सति धीप्सति, दिदम्भिषति। शिश्रीषति, शिश्रयिषति। उदोष्ठ्यपूर्वस्य। सुस्वूर्षति, सिस्वरिषति। युयूषति युयविषति। ऊर्णुनूषति, ऊर्णुनुविषति, ऊर्णनविषति। बुभूर्षति, बिभरिषति। ज्ञपिः पुगन्तो मित्संज्ञकः, पकारान्तश्च। इकोझलिति कित्वान्न गुणः। अज्झनेति दीर्घः परत्वाण्णिलोपेन बाध्यते। आप्ज्ञपीति ईत्, ज्ञीप्सति, जिज्ञपयिषति। अमितश्च जिज्ञापयिषति। जनसनेत्यात्वम्। सिषासति, सिसनिषति तनिपतिदरिद्रातिभ्यः सनो वा इड् वाच्यः। *

तनोतेर्विभाषा।६।४।१७। अस्योपधाया दीर्घो वा स्यात् झलादौ सनि। तितांसति, तितंसति, तितनिषति। आशङ्कायां सन् वक्तव्यः। श्वा मुमूर्षति। कूलं पिपतिषति। सनि मीमाघुरभलभशकपतपदामच इस्।७।४।५४। एषामच इस् स्यात्सादौ सनि अभ्यासलोपः। स्कोरिति सलोपः। पित्सति। दिदरिद्रिषति, दिदरिद्रासति। मित्सति ममानेमित्सति। दित्सति। धित्सति। रिप्सति। लिप्सति। शिक्षति। पित्सते। राधो हिंसायां सनीस् वाच्यः। रित्सति। मुचोऽकर्म-

कस्य गुणो वा ।७।४।५७। सादौ सनि । मोक्षते, मुमुक्षते वा वत्सः स्वयमेव । न वृद्भ्यश्चतुर्भ्यः । विवृत्सति । तङि तु । विवर्तिषते । सेऽसिचीति वेट् । निनर्तिषति, निनृत्सति । **इट् सनि वा** ।७।२।४१। वृङ् वृञ्भ्यामॄदन्ताच्च सन इड् वा स्यात् । तितरिषति, तितरीषति, तितीर्षति । विवरिषति, विवरीषति, वुवूर्षति । वृङ् वुवूर्षते, विवरिषते । ध्वृ कौटिल्ये । दुध्वूर्षति । **स्मिपूङ्रञ्ज्वशां सनि** ।७।२।७४। सिस्मयिषते । पिपविषते । अरिरिषति । इह रिस्शब्दस्य द्वित्वम् । अञ्जिजिषति । अशिशिषते । उभौ साभ्यासस्य । प्राणिणिषति । उच्छेस्तुक चुत्वम् । पूर्वत्रासिद्धीयमद्वित्वे' इति चछाभ्यां सहितस्येटो द्वित्वम् । हलादि शेषः उचिच्छिषति । इङो गाङ् । अधिजिगापयिषति, अध्यापिपयिषति । श्वयतेः संप्रसारणम् शुशावयिषति, शिश्वाययिषति । ह्वः संप्रसारणम् । जुहावयिषति । णौ द्वित्वात्प्रागच आदेशो नेत्युक्तत्वादुकारस्य द्वित्वम् । पुस्फारयिषति । चुच्चावयिषति । ओः पुयण्ज्यपरे । पिपावयिषति । बिभावयिषति । बिभावयिषति । रिरावयिषति । लिलावयिषति । जिजावयिषति । स्रवतीत्यादीनां वा सिस्रावयिषति, सुस्रावयिषति । **स्तौतिण्योरेव षण्यभ्यासात्** ।८।३।६१। अभ्यासेणः परस्य स्तौतिण्यन्तयोरेव सस्य षः स्यात् षभूते सनि नान्यस्य । तुष्टूषति । सुष्वापयिषति सिषाधयिषति । उपसर्गात्तु स्थादिष्वभ्यासेनेति षत्वम् । परिषिषिक्षति । इण् प्रतीषिषति । इक् अधीषिषति । **सः स्विदिस्वदिसहीनां च** ।८।३।६२। अभ्यासेणः परस्य ण्यन्तानामेषां सस्य स एव न तु षः षणिपरे सिस्वेदयिषति । सिस्वादयिषति । सिसादयिषति । स्थादिष्वभ्यासस्येति नियमान्नेह । असुसूषति ।

शैषिकान्मतुबर्थीयाच्छैषिको मतुबर्थिकः ।
सरूपः प्रत्ययो नेष्टः सन्नन्तान्न सनिष्यते ।

इह सादृश्यमर्थद्वारा तेन इच्छासन्नन्तादिच्छासन्न । स्वार्थसन्नन्तात्तु स्यादेव । जुगुप्सिषते मीमांसिषते । इति सन्प्रक्रिया । **धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिहारे यङ्** ।३।१।२२। पौनःपुन्यं भृशार्थो वा क्रियासमभिहारः । **गुणो यङ्लुकोः** ।७।४।८२। सनाद्यन्ता धातव इति धातुत्वाल्लडादयः । पुनःपुनरतिशयेन वा भवति बोभूयते । बोभूयांचक्रे । अबोभूयिष्ट । भृशं शोभते, रोचते इत्यत्र यङ् नेति भाष्यम् । पौनःपुन्ये तु स्यादेव । रोरूच्यते । शोशुभ्यते । सूत्रिसूत्रिमूत्र्यट्यर्त्यशूर्णोतिभ्यो यङ् वाच्यः । सोसूच्यते । सोसूत्र्यते । मोमूत्र्यते **यस्य हलः** ।६।४।४९। आदेः परस्य । अतो लोपः । सोसूचांचक्रे । सोसूचिता । **दीर्घोऽकितः** ।७।४।८४। अकितोऽभ्यासस्य दीर्घः स्यात्, यङि यङ्लुकि च । अटाट्यते । **यङि च** ।७।४।३०। अर्तेः संयोगादेश्च ऋतो गुणः स्याद् यङि यिकारपररेफस्य न द्वित्वनिषेधः, अरार्यते इति भाष्योदाहरणात् । अरारिता । ऊर्णोनूयते नेभिद्यते । अल्लोपस्य स्था-

निवृत्त्वान्नोपधागुणः । वेभिदिता । **नित्यं कौटिल्ये गतौ** ।३।१।२३। कुटिलं व्रजति वाव्रज्यते । **लुपसदचरजपजभदहदशगृभ्यो भावगर्हायाम्** ।३।१।२४। एभ्यो धात्वर्थगर्हायामेव यङ् स्यात् । गर्हितं लुम्पति, लोलुप्यते । सासद्यते । **चरफलोश्च** ।७।४।८७। अनयोरभ्यासस्यातो नुक् स्याद् यङ्यङ्लुकोः । नुगित्यनेनानुस्वारो लक्ष्यते स च पदान्तवद्वाच्यः ।*। तेन वा पदान्तस्येति विकल्पः । **उत्परस्यातः** ।७।४।८८। हलिचेति दीर्घः । चञ्चूर्यते, चंचूर्यते । पम्फुल्यते, पंफुल्यते । **जपजभदहदशभञ्जपशां च** ।७।४।८६। एषामभ्यासस्य नुक् स्याद् यङ्यङ्लुकोः । गर्हितं जपति जंजप्यते, जञ्जप्यते इत्यादि । **ग्रो यङि** ।८।२।२०। गिरते रेफस्य लत्वं स्याद् यङि । जेगिल्यते । घुमास्थेतीत्वम् । देदीयते पेपीयते । सेषीयते । विभाषाश्वेः । शोशूयते, शेश्वीयते । यङि च । सास्मर्यते । रीङ् ऋतः । चेक्रीयते । सुट् । संचेस्क्रीयते । **सिचो यङि** ।८।३।११२। सिचः परस्य षो न स्याद् यङि । सेसिच्यते । **न कवतेर्यङि** ।७।४।६३। अस्याभ्यासस्य चुत्वं न स्याद्यङि । कोकूयते । कौतिकुवत्योस्तु चोकूयते । **नीग्वञ्चुस्रंसुध्वंसुभ्रंसुकसपतपदस्कन्दाम्** ।७।४।८४। अकित इत्युक्तेर्न दीर्घः । वनीवच्यते सनीस्रस्यते । लुगतोऽनुनासिकान्तस्य । यंयम्यते, यंयम्यते । तपरकरणाद् भूतपूर्वदीर्घस्य । भाम क्रोधे । बाभाम्यते । ये विभाषा । जाजायते, जाजन्यते । हन्तेर्हिंसायां यङि घ्नीभावो वाच्यः ।*। जेघ्नीयते । **रीगृदुपधस्य च** ।७।४।६०। वरीवृत्यते क्षुभ्नादित्वान्न णः । नरीनृत्यते । जरीगृह्यते । चलीक्लृप्यते । रीगृत्वत इति वक्तव्यम् ।*।वरीवृश्च्यते । परीपृच्छ्यते । **स्वपिस्यमिव्येञां यङि** ।६।१।१६। संप्रसारणं स्याद्यङि । सोषुप्यते । सेसिम्यते । वेवीयते । **न वशः** ।६।१।२०। वावश्यते । **चायः की** ।६।१।२१। चेकीयते । **ई घ्राध्मोः** ।७।४।३१। जेघ्रीयते । देध्मीयते । **अयङ्यि क्ङिति** ।७।४।२२। शीङोऽयङादेशः स्यादादौ क्ङिति परे । शाशय्यते । ह्रस्वे, गुणे ढोढौक्यते । तोत्रौक्यते । इतियङन्तप्रक्रिया ।

यङोऽचि च ।२।४।७४। लुक् स्यात् । चकारात् तं विनाऽपि बहुलं लुक् स्यात् । अनैमित्तिकोऽयम् । अन्तरङ्गत्वादादौ भवति ततः प्रत्ययलक्षणेन यङन्तत्वाद् द्वित्वम् । अभ्यासकार्यम् धातुत्वाल्लडादयः शेषात्कर्तरि परस्मैपदम् । शप् । चर्करीतं चेत्यदादौ पाठाच्छपो लुक् । **यङो वा** ।७।३।९४। यङन्तात्परस्य हलादेः पितः सार्वधातुकस्य ईड् वा स्यात् गुणायादेशौ बोभवीति, बोभोति । बोभूतः । बोभुवति । अबोभवीत् । अबोभोत् अबोभूताम् अबोभवुः । बोभूयात् । बोभवांचकार बोभविता लुङिगातिस्थेति सिचो लुक् नङो वेतीट् पक्षे गुणं बाधित्वा नित्यत्वाद्वुक् । अबोभूवीत्, अबोभोत् अबोभूताम् । अभ्यस्ताश्रयो जुस नित्यत्वाद वुक् । अबोभुवुः । पास्पर्धीति, पास्पर्धि । पास्पर्धः । पास्पर्धति । हुझल्भ्यो हेर्धिः । पास्पर्धि । लङ् । अपास्पर्त्, अपास्पर्द् । सिपि दश्चेति रुत्वपक्षे । रोरि । अपास्पाः । जागाद्धि । जाघास्ति । अजाघात् । सिपि रुत्वपक्षे । अजाघाः दध-दादद्धि । अदाधत् । सिपि । अदाधत्, अदाधः । लुङि - अदादाधीत् अदादधीत् । मोमुदीति, मोमोत्ति । अमोमोत् अमोमोः । लुङि – गुणः । अमोमोदीत् ।। जंगमीति,

जंगन्ति । अनुनासिकलोपः । जंगतः । जङ्गमति । म्वोश्च । जङ्गन्मि । जङ्गन्वः अनुनासिकलोपस्याभीयत्वेनासिद्धत्वाद् हेर्न लुक् । जङ्गहि । मोनो धातोः । अजङ्गन् । एकाज्ग्रहणे क्त्वान्ने ण्निषेधः जङ्गमिता । अनबन्धनिर्देशान्न च्लेरङ् । ह्म्यन्तेति न वृद्धिः अजङ्गमीत् । हन्तेर्यङ् लुक् । अभ्यासाच्चेति कुत्वम् । यद्यपि हो हन्तेरित्यतो हन्तेरित्यनुवर्त्य विहितं तथापि यङ्लुक् भवत्येवेति न्यासकारः । श्तिपा शपेति निषेधस्त्वनित्यः । गुणो यङ्लुकोरिति सामान्यापेक्षज्ञापकात् जङ्घनीति, जङ्घन्ति । जङ्घतः । जङ्घनति । श्तिपा निर्देशाज्जादेशो न । जङ्घहि । अजङ्घनीत् । जङ्घन्यात् आशिषि वध्यात् अवधीत् अवधिष्टाम् । वधादेशस्य द्वित्वं न स्थानिवत्त्वेन अनभ्यासस्येति निषेधात् । चञ्चुरीति चञ्चूर्ति । अचञ्चुरीत् । अचञ्चुः । चंखनीति, चंखन्ति जनसनेत्यात्वम् , चंखातः चंखनति चंखाहि । ये विभाषा । चंखायात् । चंखन्यात् । अचंखनीत्, अचंखानीत् जाहेति, जाहाति । ईहल्यघोः । जाहीतः, जाहति । इह जहातेश्च, आच हौ, लोपो यि, घुमास्था, एर्लिङीत्येते पञ्चापि विधयो न भवन्ति, श्तिपा निर्देशात् । जाहीयात्, आशिषि जाहायात् । अजाहासीत् । अजाहासिष्टाम् । सास्वपीति, सास्वप्ति । गणनिर्देशात् रुदादिभ्य इतीण् न । रुग्रिकौ च लुकि ।७।४।९१। रिदुपधस्य धातोरभ्यासस्य रुक् रिक् रीक् एते आगमाः स्युर्यङ्लुकि । ऋतश्च ।७।४.९२। ऋदन्त धातोरपि तथा वर्वृतीति, वरिवृतीति, वरीवृतीति । वर्वर्ति, वरिवर्त्ति, वरीवर्ति । वर्वृतः लङि- अवर्वृतीत् ।३। अवर्वत् ।३। सिपि दश्चेति रुत्वपक्षे रोरि । अवर्वाः ।३। गणनिर्दिष्टत्वान्न वृद्भ्यश्चतुभ्य इति न । वर्वर्तिष्यति ।३। अवर्तीत् । चर्करीति, चरिकरीति, चरीकरीति । चर्कर्ति, चरिकर्ति, चरीकर्ति । चर्कृतः ३। अचर्करीत् ३। अचर्कः ३। आशिषि, रिङ् । चर्क्रियात् । अचर्कारीत् । ऋतश्चेति तपरत्वान्नेह । कॄ विक्षेपे । चाकर्ति । तातर्ति । गृह ग्रहणे । जर्गृहीति ३। जर्गर्ढि ३। जर्गृढः ३। अजर्घट् ३। गृह्णातेस्तु । जाग्रहीति । जाग्राढि । तसादौ क्ङिन्निमित्तं संप्रसारणम् । तस्य । बहिरङ्गत्वेनासिद्धत्वान्न रुगादयः । जागृढः । जागृहति । जाग्रहिषि, जाग्रह्वि लुटि । जाग्रहिता । ग्रहोऽलिटीति दीर्घस्तु न तत्रैकाच इत्यनुवृत्तेः । माधवस्तु दीर्घमाह, तद्भाष्यविरुद्धम् । जर्गृथीति ३। जर्गर्द्धि ३। जर्गृद्धः ३। जर्घर्त्सि ३। अजर्गृधीत् ३। इडभावे गुणः । हल्ङ्यादिलोपः । भष्भावः । जश्त्वचर्त्वे । अजर्घत् ३। अजर्गृद्धाम् । सिपि दश्चेति पक्षे रुत्वम् । अजर्घाः ।३। अजर्गर्धीन् ३। यकारवकारान्तानां तूठभाविनां यङ्लुङ् नास्तीति छ्वोरिति सूत्रे भाष्ये ध्वनितम् । कैयटेन स्पष्टीकृतम् । इदं छ्वोरिति यत्रोठत्तद्विषयकम् । ज्वरत्वरेत्यूठ्भाविनीः स्त्रिमव्योस्तु यङ्लुगस्त्येव । ज्ञापकस्य विशेषापेक्षत्वात् माधवादिसंमतं चैतत् । मव्य बन्धने । अयं यान्तः ऊठ्भावी । तेवृदेवृ देवने इत्यादयो वान्ताः । हय गतौ । जाहयीति, जाहति । जाहतः । जाहयति । वलि लोपे यञादौ दीर्घः । जाहामि, जाहावः । जाहामः । मव बन्धने । ज्वरत्वरस्त्रिव्यविमवामुपधायाश्च ६।४।२०

ज्वरादीनामुपधावकारयोरूठ् स्यात्, क्वौ झलादावनुनासिकादौ च प्रत्यये । अत्र क्ङितीति नानुवर्तते । अवतेस्तुनि ओतुः, मनि ओमिति दर्शनात् । मामवीति, मामोति । मामूतः । मामवति । मामूहि । अमामोत् अमामोः । तुर्वी थुर्वी दुर्वी धुर्वी हिंसार्थाः । तोतूर्वीति । राल्लोपः ।६।४।२१। रेफात्परयोश्छ्वोर्लोपः स्यात्, क्वौ झलादावनुनासिकादौ च प्रत्यये । वलोपः । लघूपधगुणः । न धातुलोप आर्धधातुके ।१।१।४। इको गुणवृद्धी न स्तः । इति नेह निषेधः । तिबादीनामनार्धधातुकत्वात् । तोतूर्ति । हलिचेति दीर्घः, तोतूर्तः । तोतूर्वति । तोथोर्ति दोदूर्ति । दोधूर्ति । मुर्च्छा- मोमूर्ति । यङि अजेर्वी । वेवीयते । अस्य यङ्लुग्नास्ति लुकापहारे विषयत्वासंभवेन वीभावस्याप्रवृत्तेः ॥ इति यङ्लुगन्तप्रक्रिया ॥

सुप आत्मनः क्यच् ।३।१।८। स्वस्मै यदिष्यते कर्मकारकं तद्वृत्तेः सुबन्तादिच्छायां क्यच् वा स्यात् । धात्ववयवत्वात्सुब्लुक् । क्यचि च ।७।३।३३। अस्य ईः स्यात् । आत्मनः पुत्रमिच्छति पुत्रीयति । वान्तो यि प्रत्यये । गव्यति, नाव्यति नः क्ये ।१।४।१५। क्यचि क्यङि च नान्तमेव पदं स्यान्नान्यत् । तेन यलोपो न । गव्यिता, नाव्यिता । राजीयति । प्रत्ययोत्तरपदयोश्च । त्वद्यति, मद्यति । युष्मद्यति, अस्मद्यति हलिच । गीर्यति । पूर्यति । अदस्यति । रीङृतः । कर्त्रीयति क्यच्व्योश्च ।६।४।१५२। गार्गीयति । वाच्यति । कवीयति क्यस्य विभाषा ।६।४।५०। हलः परयोः क्यच् क्यङोर्लोपो वा स्यादार्धधातुके । आदेः परस्य । अतो लोपः । समिधिता, समिध्यिता । मान्तप्रकृतिकसुबन्तादव्ययाच्च क्यच् न । * । किमिच्छति । इदमिच्छति । स्वरिच्छति । अशनायोदन्यधनाया बुभुक्षापिपासागर्धेषु ।७।४।३४। अशनायति । उदन्यति, धनायति । अन्यत्र । अशनीयति । उदकीयति । धनीयति । अश्वक्षीरवृषलवणानामात्मप्रीतौ क्यचि ।७।१।५१। एषां क्यचि असुगागमः स्यात् । अश्ववृषयोर्मैथुनेच्छायाम् । * । अश्वस्यति वडवा । वृषस्यति गौः । क्षीरलवणयोर्लालसायाम् । * । क्षीरस्यति, लवणस्यति । सर्वप्रातिपदिकानां क्यचि लालसायां सुगसुकौ । * । दधिस्यति दध्यस्यति । मधुस्यति, मध्वस्यति । काम्यच्च ।३।१।९। पूर्ववत् । पुत्रकाम्यति । यशस्काम्यति । सर्पिष्काम्यति । मान्ताव्ययेभ्योऽप्ययं स्यादेव । किंकाम्यति स्वः काम्यति । उपमानादाचारे ।३।१।१०। उपमानात्कर्मणः सुबन्तादाचारेऽर्थे क्यच् स्यात् । पुत्रीयति छात्रम् । विष्णूयति द्विजम् । अधिकरणाच्चेति वक्तव्यम् । * प्रासादीयति कुट्याम् । कुटीयति प्रासादे । कर्तुः क्यङ् सलोपश्च ।३।१।११। उपमानात्कर्तुः सुबन्तादाचारे क्यङ् वा स्यात् । सान्तस्य तु कर्तृवाचकस्य लोपो वा स्यात् । पक्षे वावधम् । सान्तस्य लोपस्तु क्यङ्सन्नियोगशिष्टः, स च व्यवस्थितः । ओजसोऽप्सरसो नित्यमितरेषां विभाषया । * । कृष्ण इवाचरति कृष्णायते । ओजायते । अप्सरायते । यशायते यशस्यते । विद्वायते, विद्वस्यते, त्वद्यते । मद्यते । अनेकार्थत्वे तु युष्मद्यते । अस्मद्यते । क्यङ्मानिनोश्च । कुमारीवाचरति । कुमारायते । हरिणीवाऽचरति हरितायते गुरूयते । सपत्नीयते, सपत्नीयते । युवतिरिव युवायते । पट्वीमृद्व्याविव पट्वीमृदूयते

नकोपधायाः । पाचिकायते । आचारेऽवगल्भक्लीबहोडेभ्यः क्विब्वा । * । वाग्रहणात् क्यङपि अवगल्भादयः पचाद्यजन्ताः । क्विप्सन्नियोगेनानुदात्तत्वमनुनासिकत्वं चाच्प्रत्ययस्य प्रतिज्ञायते । तेन तङ् । अवगल्भते । क्लीबते । होडते । भूतपूर्वादप्यनेकाच् आम् । अवगल्भांचक्रे । क्लीबांचक्रे । होडांचक्रे । वार्तिकेऽवेत्युपसर्गविशिष्टस्य पाठात्केवलादुपसर्गान्तरविशिष्टाच्च क्यङ्वेति माधवादयः तङ्नेतितूचितम् । सर्वप्रातिपदिकेभ्यः क्विब्वा वक्तव्यः । * । कृष्ण इवाचरति कृष्णति । अ इवाचरति अति । अनेकाच इत्युक्तेर्नाम् औ अतुः उः । मालेवाचरति मालाति । लङि अमालात् । ङीसाहचर्यादापोऽपि सोरेव लोपविधानात् । इट्सकौ । अमालासीत् । कविरिवाचरति + कवयति । कवीयात् । अकवयीत् । पक्षान्तरे अकवायीत् । विरिव वयति विव्यतुः । शिश्रियतुः । आशिपि रिङ पित्रियात् । भूरिव अभावीत् । द्रुरिव अद्रावीत् । **अनुनासिकस्य क्विझलोः क्ङिति** । ६ । ४ । १५ । अनुनासिकान्तस्योपधाया दीर्घः स्यात् क्वौ झलादौ च क्ङिति । इदमिवाचरति इदामति । राजानति । पथीनति । मथीनति द्यौरिव देवतीति माधवः । ऊठि द्यवतीत्युचितम् । क इव कति । चकाविति हरदत्तः । माधवस्तु ण्यल्लोपाविति वचनात् णलि वृद्धिं बाधित्वातोऽलोपात् चक इति रूपमाह **भृशादिभ्यो भुव्यच्वेर्लोपश्च हलः** । ३।१ । १२ । अभूततद्भावविषयेभ्यो भृशादिभ्यो भवत्यर्थे क्यङ् स्यात् हलन्तानामेषां लोपश्च । अभृशो भृशो भवति भृशायते । सुमनस् । अस्य सलोपः । सुमनायते । उपसर्गसमानाकारं पूर्वपदं धातुसंज्ञाप्रयोजके प्रत्यये चिकीर्षिते पृथक् क्रियते इति तेन मनःशब्दात्प्रागट् स्वमनायत । उन्मनायते । उदमनायत । एवं च अवागल्भत. अवागल्भिष्टेत्यादावपि बोध्यम् । यत्रोपसर्गस्वरूपं सकलं श्रूयते नत्वादेशेनापहृतम् तत्रैव पृथक्कृतिः, तेनेह न ओढायित्वा ज्ञापकस्य विशेषविषयत्वे षाष्ठवार्तिकं तद्भाष्यं च प्रमाणम् । तथाहि उस्योमाङ्क्ष्वाटः प्रतिषेधः ।*। एब्वोटः पररूपं न । उस्रामैच्छत्औस्रीयत् । औङ्कारीयत् । ओढीयत् । आटश्चेति चशब्देन पुनर्वृद्धिविधानादिदं सिद्धमिति षाष्ठे स्थितम् । **लोहितादिडाज्भ्यः क्यष्** ।३।१।१३। भवत्यर्थे क्यष् स्यात् वा । **क्यषः** ।१।३।९०। परस्मैपदं वा स्यात् । अत्राच्वेरित्यनुवृत्त्या अभूततद्भवविषयत्वं लब्धम् । तच्च लोहितशब्दस्यैव विशेषणम् । लोहितायति लोहितायते । श्यामादिभ्यः क्यङेव । श्यामायते दुःखादयोवृत्तिमात्रे तद्वति वर्तन्ते । लिङ्गविशिष्टपरिभाषयालोहिनीशब्दादपि क्यष् । लोहिनीयति, लोहिनीयते । **कष्टाय क्रमणे** ।३।१।१४। चतुर्थ्यन्तात्कष्टशब्दात्साहेऽर्थे क्यङ् स्यात् कष्टायते । पापं कर्तुमुत्सहते । सत्रकक्षकष्टकृच्छ्रगहनेभ्यः । कण्वचिकीर्षायामिति वक्तव्यम् ।*। कण्वं पापं चिकीर्षतीत्यस्पदविग्रहः । सत्रायते कक्षायते । **कर्मणो रोमन्थतपोभ्यां वर्तिचरोः** ।३।१।१५। रोमन्थतपोभ्यां कर्मभ्यां क्रमेण वर्तनायाञ्चरणे चार्थे क्यङ् स्यात् । रोमन्थं वर्तयति रोमन्थायते । हनुचलन इति वक्तव्यम् ।*। नेह कीटो रोमन्थं वर्तयति । तपसः परस्मैपदं च ।*। तपश्चरति तपस्यति । **बाष्पोष्मभ्यामुद्वमने** ।३।१।१६ बाष्पमुद्वमति बाष्पायते । ऊष्मायते । फेनाच्चेति वक्तव्यम् ।*। फेनायते ।

शब्दवैरकलहाभ्रकण्वमेघेभ्यः करणे ।३।१।१७। एभ्यः कर्मभ्यः करोत्यर्थे क्यङ् स्यात् । शब्दं करोति शब्दायते । पक्षे णिजपि । शब्दयति । सुदिनदुर्दिननीहारेभ्यश्च ।*। सुदिनायते । सुखादिभ्यः कर्तृवेदनायाम् । सुखादिभ्यः कर्मभ्यो वेदनायामर्थे क्यङ् स्यात्, वेदानकर्तुरेव चेत्सुखादीनि स्युः । सुखं वेदयते सुखायते नमोवरिवश्चित्रङः क्यच् ।३।१।१९। पूजापरिचर्याश्चर्यातिमकक्रियासु क्यच् । नमस्यति। देवान्, पूजयतीत्यर्थः । वरिवस्यति गुरून् । शुश्रूषत इत्यर्थः । चित्रीयते विस्मयते, विस्मापयते वा । पुच्छभाण्डचीवराण्णिच् ।३।१।२०। पुच्छादुदसने व्यसने पर्यसने च ।*। उत्पुच्छयते, विपुच्छयते, परिपुच्छयते । भाण्डात्समाचयने ।*। संभाण्डयते । समबभाण्डत । चीवरादर्जने परिधाने च ।*। संचीवरयते ।

मुण्डमिश्रश्लक्ष्णलवणव्रतवस्त्रहलकलकृततूस्तेभ्यो णिच् ।३।१।२१। कृत्रर्थे । मुण्डयति । व्रताद्भोजनतन्निवृत्त्योः ।*। पयः शूद्रान्नं वा व्रतयति । वस्त्रात्समाच्छादने । संवस्त्रयति । हल्यादिभ्यो ग्रहणे ।*। हलिकल्योरदन्तत्वं च निपात्यते । हलिं कलिं वा गृह्णाति हलयति कलयति अजहलत्, अचकलत् । कृतं गृह्णाति कृतयति । तूस्तानि विहन्ति वितूस्तयति सत्यापयति । अर्थवेदयोरापुग्वक्तव्यः ।*। अर्थापयति, वेदापयति । श्लोकैरुपस्तौति उपश्लोकयति । सेनया अभियाति अभिषेणयति । उपसर्गात्सुनोतीति षत्वम् । प्राक्सितादिति षत्वे अभ्यषेणयत् । अभिषिषेणयिषति । स्थादिष्वभ्यासेनचेतिषः । लोमान्यनुमार्ष्टि अनुलोमयति । इष्ठवदित्यतिदेशात्पुंवद्भावादयः एनीमाचष्टे एतयति । दरदमाचष्टे दारदयति । पृथुं प्रथयति । वृद्धौ सत्यां पूर्वं वा टिलोपः । अपिप्रथत् अपप्रथत् । एवं म्रदयति । अमिम्रदत्, अमम्रदत् इत्यादि । ऊढमाख्यत् औजिढत् । ढत्वादीनामसिद्धत्वाद् ढ इति शब्दस्य द्वित्वम् । पूर्वत्रासिद्धीयमद्वित्वे इति त्वानित्यम् । ढि इत्यस्य द्वित्वमित्यन्ये । औडिढत् । प्रकृत्यैकाच् । वृद्धिप्रुकौ । स्वापयति । त्वां मां वा आचष्टे । त्वापयति, मापयति । त्वादयति, मादयति वा । युवामावां वा युष्मयति अस्मयति । श्वानमाचष्टे । शावयति । शुनयतीत्यन्ये । विद्वांसमाचष्टे विद्वयति । अङ्गवृत्तपरिभाषया संप्रसारणं नेत्येके । संप्रसारणे वृद्धावावादेशे च विदावयतीत्यन्ये । नित्यत्वाट्टिलोपात्प्राक्संप्रसारणम् । अन्तरङ्गत्वात्पूर्वरूपम्, टिलोपः । विदयतीत्यपरे । उदञ्चमाचष्टे उदीचयति । उदैचिचत् । तिर्यञ्चमाचष्टे तिरायति । अतितिरायत् । आददद्रक्षायत् । आददमुआयत् आमुमुमुआयत् । गावम् अजूगवत् । रायम् अरीरयत्, नावम् अनूनवत् । स्वश्वम् स्वाशश्वत् । स्वः । अव्ययानां भमात्रे टिलोपः । स्वयति । असस्वयत् असिस्वयत् । बहून् भावयति, बहयतीत्यन्ये । श्रीमतीं श्रीमन्तं वा श्रययति, अशिश्रयत् स्थूलं स्थवयति । दूरं दवयति । गुरुं गरयति । तृपं त्रपयति । दीर्घं द्राघयति । वृन्दारकं वृन्दयति ॥ इति नामधातुप्रक्रिया ॥

कण्ड्वादिभ्यो यक् ।३।१।२७। एभ्यो धातुभ्यो नित्यं यक् स्यात् स्वार्थे । द्विधा हि कण्ड्वादयः । धातवः प्रातिपदिकानि च । कण्डूञ् गात्रविघर्षणे । कण्डूयति कण्डूयते । मन्तु अपराधे । मन्तूयति । चन्द्रस्तु मितमाह । मन्तूयते ।

वल्गु पूजामाधुर्ययोः । असु उपतापे । अस् असूञ् इत्येके । लेट् लोट् धौर्त्ये, पूर्वभावे' स्वप्ने च । दीप्तावित्येके । लेट्यति । लोट्यति । उषस् प्रभाते मेधा आशुग्रहणे । मेधायति । सुख दुःख तत्क्रियायाम् । सुख्यति । दुःख्यति । सुखं दुःखं चानुभवतीत्यर्थः । अरर आराकर्मणि । भिषज् चिकित्सायाम् । भिषज्यति । इषुध शरधारणे । चुरण चौर्ये । गद्गद वाक्स्खलने । एला केला खेला विलासे । लिट अल्पकुत्सनयोः । लिट्यति । ह्रणीङ् रोषणे लज्जायां च हृणीयते । महीङ् पूजायाम् । महीयते । पूजां लभत इत्यर्थः । तिरस् अन्तर्धौ । अगद नीरोगत्वे । उरस् बलार्थः । उरस्यति बलवान् भवतीत्यर्थः । आकृतिगणोऽयम् । इति कण्ड्वादयः ।

कण्डूयतेः सन् । सन्यङोरिति प्रथमस्यैकाचो द्वित्वे प्राप्ते । कण्ड्वादेस्तृतीयस्येति वाच्यम् ।*। कण्डूयियिषति । क्यजन्तात्सन् । यथेष्टं नामधातुषु ।*। आद्यानां त्रयाणामन्यतमस्य द्वित्वमित्यर्थः । अजादेस्त्वाद्येतरस्य । पुपुत्रीयिषति, पुतित्रीयिषति, पुत्रीयियिषति । अशिश्वीयिषति, अश्वीयियिषति । नदराणां संयुक्तानामचः परस्यैव द्वित्वनिषेधः । इन्द्रीयतेः सन् द्रीशब्द-यिशब्दयोरन्यतरस्य द्वित्वम् । इन्दिद्रीयिषति, इन्द्रीयियिषति, । चिचन्द्रीयिषति, चान्दद्रीयिषति, चन्द्रीयियिषति । प्रियमाख्यातुमाचक्षाणं प्रेरयितुं वेच्छति । पिप्राययिषति, प्रापिपयिषति, प्रापियिषति उष्ट्रं विवारयिषति, वारिरयिषति, वारयियिषति । बाढं सिसाधयिषतीत्यादि । यङ् सन् नयन्तात्सन् । बोभूयिषयिषति, यङ् णिच् सन्नन्ताण्णिच् । बोभूयियषयतीत्यादि । इतिप्रत्ययमाला ।

अनुदात्तङित आत्मनेपदम् । एधते, शेते । भावकर्मणोः ।१।३।१३। भूयते, अनुभूयते । कर्तरिकर्मव्यतिहारे १।३।१४। व्यतिलुनीते । श्नसोरल्लोपः । व्यतिस्ते । व्यतिषाते, व्यतिषते । तासस्त्योरिति सलोपः । व्यतिसे । धि च । व्यतिध्वे । ह्एति । व्यतिहे । व्यत्यास्त । व्यतिराते ३। न गतिहिंसार्थेभ्यः । व्यतिगच्छन्ति । व्यतिघ्नन्ति । प्रतिषेधे हसादीनामुपसंख्यानम् ।*। हसादयः शब्दप्रकाराः । व्यतिहसन्ति । व्यतिजल्पन्ति । हरतेरप्रतिषेधः ।*। संप्रहरन्ते राजानः । इतरेतरान्योन्योपपदाच्च ।१।३।१६। परस्परोपपदाच्चेति वक्तव्यम् ।*। इतरेतरस्यान्योन्यस्यपरस्परस्य वा व्यतिलुनन्ति । नेर्विशः ।१।३।१७। निविशते । परिव्यवेभ्यः क्रियः ।१।३।१८। परिक्रीणीते, विक्रीणीते । विपराभ्यां जेः ।१।३।१९। विजयते । पराजयते । आङो दोऽनास्यविहरणे ।१।३।२०। विद्यामादत्ते । आस्यग्रहणमविवक्षितम् । क्रीडोऽनुसंपरिभ्यश्च ।१।३।२१। चादाङः । अनुक्रीडते, संक्रीडते । समोऽकूजने ।*। संक्रीडते । नेह । संक्रीडति चक्रम् । आगमेः क्षमायाम् ।*। आगमयस्व तावत्, मा त्वरिष्ठाः । शिक्षेर्जिज्ञासायाम् ।*। धनुषि शिक्षते । आशिषि नाथः ।*। सर्पिषो नाथते । सर्पिर्मे स्यादित्याशास्ते । हरतेर्गत ताच्छील्ये

गतंप्रकारः। पैतृकमश्वा अनुहरन्ते। मातृकं गावः। किरतेर्हर्षजीविकाकुलायकरणेष्विति वाच्यम्।*। तत्र हर्षो विक्षेपस्य कारणम्। इतरे फले। **अपाच्चतुष्पाच्छकुनिष्वालेखने** ।६।१।१४२। अपात्किरतेः सुट् स्यात्। सुडपि हर्षादिष्वेव वक्तव्यः।*। अपस्किरते वृषो हृष्टः। कुक्कुटो भक्षार्थी, श्वा आश्रयार्थी च। आङि नुप्रच्छ्योः।*। आनुते, आपृच्छते। शप उपालम्भे।*। शपथरूपेर्थे आत्मनेपदं वक्तव्यमित्यर्थः। कृष्णाय शपते **समवप्रविभ्यः स्थः**।१।३।२२ संतिष्ठते। समस्थित। अवतिष्ठते, प्रतिष्ठते, वितिष्ठते। आङः प्रतिज्ञायामुपसंख्यानम्।*। शब्दं नित्यमातिष्ठते। **प्रकाशनस्थेयाख्ययोश्च** ।१।३।२३ गोपी कृष्णाय तिष्ठते। संशय्य कर्णादिषु तिष्ठते यः। कर्णादीन्निर्णेतृत्वेनाश्रयतीत्यर्थः **उदोऽनूर्ध्वकर्मणि** ।१।३।२४ मुक्तावुत्तिष्ठते। ईहायामेव।*। नेह ग्रामाच्छतमुत्तिष्ठति **उपान्मन्त्रकरणे** ।१।३।२५। आग्नेय्यामाग्नीध्रमुपतिष्ठते। उपाद्देवपूजासङ्गतिकरणमित्रकरणपथिष्विति वाच्यम्।*। आदित्यमुपतिष्ठते। गङ्गायमुनामुपतिष्ठते। रथिकानुपतिष्ठते। मित्रीकरोतीत्यर्थः पन्थाः स्रुघ्नमुपतिष्ठते। वा लिप्सायामिति वक्तव्यम्।*। भिक्षुकः प्रभुमुपतिष्ठते **उद्विभ्यां तपः** ।१।३।२७। उत्तपते वितपते दीप्यते इत्यर्थः। स्वाङ्गकर्मकाच्चेति वक्तव्यम्।*। उत्तपते, वितपते वा पाणिम्। नेह चैत्रो मैत्रस्य पाणिमुत्तपति **आङो यमहनः** ।१।३।२८। आयच्छते आहते अकर्मकात्स्वाङ्गकर्मकादित्येव नेह। परस्य शिर आहन्ति। **आत्मनेपदेष्वन्यतरस्याम्** ।२।४।४४। हनो वधादेशो वा स्यात् लुङि आत्मनेपदेषु परेषु आवधिष्ट। आवधिषाताम्। **हनः सिच्** ।१।२।१४। कित्स्यात्। आहत आहसाताम्। आहसत। **समो गन्ध्यने** ।१।२।२५। सिच् कित्स्यात्। उदायत। **समो गम्यृच्छिभ्याम्** ।१।३।२९। अकर्मकाभ्यामित्येव। संगच्छते **वा गमः** ।१।२।१३। गमः परो झलादी लिङ्सिचौ वा कितौ स्तः। संगसीष्ट, संगंसीष्ट। समगत समगंस्त समृच्छिष्यते विदिप्रच्छिस्वरतीनामुपसंख्यानम्। वेत्तेरेव ग्रहणम्। संविद्रे, संविदते। **वेत्तेर्विभाषा** ।७।१।७। वेत्तेः परस्य झादेशस्यातो रुडागमो वा स्यात्। संविदते। सपृच्छते संस्वरते अर्तिश्रुदृशिभ्यश्चेति वक्तव्यम्।*। अर्तीति द्वयोर्ग्रहणम्। अङ्विधौ रियर्तेरेवत्युक्तम्। मा समृत मा समृषाताम्। समार्त, समार्षातामिति भ्वादेः। इयर्तेस्तु। मा समरत मा समरेताम्। माङोऽभावे समारत समारेताम्। संशृणुते, संपश्यते। उपसर्गादस्यत्यूह्योर्वेति वाच्यम्।*। बन्धं निरस्यति, निरस्यते समूहति समूहते। **उपसर्गाद्ध्रस्व ऊहतेः** ७।४।२३। यादौ क्ङिति। ब्रह्म समुह्यात् अग्निं समुह्य। **निसमुपविभ्यो ह्वः** ।१।३।३०। निह्वयते, संह्वयते। **स्पर्धायामाङः** ।१।३।३१। कृष्णश्चाणूरमाह्वयते। नेह पुत्रमाह्वयति। **गन्धनावक्षेपणसेवनसाहसिक्यप्रतियत्नप्रकथनोपयोगेषु कृञः** ।१।३।३२। उत्कुरुते। सूचयतीत्यर्थः। श्येनो वर्तिकामुदाकुरुते। भर्त्सयतीत्यर्थः। हरिमुपकुरुते सेवते। परदारान्प्रकुरुते तेषु सहसा प्रवर्तते। एधोदकस्यो

परकुरुते। गाथाः प्रकुरुते। शतं प्रकुरुते, धर्मार्थं विनियुङ्क्ते। अधेः प्रसहने ।१।३।३३ शत्रुमधिकुरुते। क्षमते अभिभवति वा। वेः शब्दकर्मणः ।१।३।३४। स्वरान्विकुरुते उच्चारयतीत्यर्थः। अकर्मकाच्च ।१।३।३५। वेः कुञ इत्येव। छाया विकुर्वते। संमाननोत्सञ्जनाचार्यकरणज्ञानभृतिविगणनव्ययेषु नियः ।१।३।३६। शास्त्रे नयते शास्त्रप्रापणेन शिष्यसंमाननम्। दण्डमुन्नयते उत्क्षिपतीत्यर्थः। माणवकमुपनयते। तत्त्वं नयते, निश्चिनोतीत्यर्थः। कर्मकरानुपनयते करं विनयते। राज्ञे देयं भागं परिशोधयतीत्यर्थः। शतं विनयते। कर्तृस्थे चाशरीरे कर्मणि ।१।३।३७। नियः कर्तृस्थे कर्मणि यदात्मनेपदं प्राप्तं तच्छरीरावयवभिन्ने एव स्यात्। क्रोधं विनयते। कर्तृगामित्वविवक्षायां परस्मैपदमपि। वृत्तिसर्गतायनेषु क्रमः। १। ३८। ऋचि क्रमते बुद्धिः अध्ययनाय क्रमते उत्सहते। क्रमन्ते शास्त्राणि, स्फीतानि भवन्ति। उपपराभ्याम् ।१।३।३९ वृत्यादिष्वाभ्यामेव क्रमेर्नतूपसर्गान्तरपूर्वात्। उपक्रमते, पराक्रमते आङ उद्गमने।१।३।४०। आक्रमते सूर्यः। ज्योतिरुद्गम इति वाच्यम्। *। नेह आक्रमति धूमः। वेः पादविहरणे ।१।३।४१। साधु विक्रमते वाजी। प्रोपाभ्यां समर्थाभ्याम् ।१।३।४२। प्रक्रमते, उपक्रमते। अनुपसर्गाद्वा ।१।३।४३। क्रामति, क्रमते। अपह्नवे ज्ञः ।१।३।४४। शतमपजानीते। अकर्मकाच्च ।१।३।४५। सर्पिषो जानीते। संप्रतिभ्यामनाध्याने ।१।३।४६। संजानीते, प्रतिजानीते अनाध्यान इति योगो विभज्यते। तस्यामर्थ्यादकर्मकाच्चेति प्राप्तिरपि वार्यते। मातरं संजानाति। भासनोपसंभाषाज्ञानयत्नविमत्युपमन्त्रणेषु वदः ।१।३।४७। शास्त्रे वदते। भासमानो ब्रवीति। भृत्यानुपवदते, ज्ञाने शास्त्रे वदते। यत्ने क्षेत्रे वदते। क्षेत्रे विवदन्ते। उपवदते-प्रार्थयत इत्यर्थः। व्यक्तवाचां समुच्चारणे ।१।३।४८। सम्प्रवदन्ते ब्राह्मणाः। अनोरकर्मकात् ।१।३।४९। व्यक्तवाग्विषयाद् वदेरेव। अनुवदते कठः कलापस्य। विभाषा विप्रलापे ।१।३।५०। विरुद्धोक्तिरूपे उक्तं व स्यात्। विप्रवदन्ते, विप्रवदन्ति वा वैद्याः। अवाद्ग्रः ।१।३।५१। अवगिरते। समः प्रतिज्ञाने ।१।३।५२। शब्दं नित्यं संगिरन्ते। उदश्चरः सकर्मकात् १।३।५३। धर्ममुच्चरते। समस्तृतीयायुक्तात् ।१।३।५४ रथेन संचरते। समुदाचरते। दाणश्च सा चेच्चतुर्थ्यर्थे ।१।३।५५। सपूर्वात्तृतीयान्तेन युक्ताद्दाणः उक्तं स्यात् तृतीया चेच्चतुर्थ्यर्थे। दास्या संयच्छते। दास्या सम्प्रयच्छते। उपाद्यमः स्वकरणे ।१।३।५६। भार्यामुपयच्छते। विभाषोपयमने। १।२।१६। यमः सिच् किद् वा स्याद् विवाहे। रामः सीतामुपायत, उपायंस्त वा। गन्धनाङ्गे उपयमे तु पूर्वविप्रतिषेधान्नित्यं कित्वम्। ज्ञाश्रुस्मृदृशां सनः १।३।५७। धर्मं जिज्ञासते, शुश्रूषते, सुस्मूर्षते, दिदृक्षते। नानोर्ज्ञः। ।१।३।५८। पुत्रमनुजिज्ञासति। सर्पिषोऽनुजिज्ञासते। अकर्मकाच्चेति तङ्। प्रत्याङ्भ्यां श्रुवः ।१।३।५९। सन्नन्ताच्छ्रुव उक्तं न स्यात्। प्रतिशुश्रूषति, आशुश्रूषति कर्मप्रवच-

नीयात्स्यादेव । देवदत्तं प्रतिशुश्रूषते । शदेः शितः ।१।३।६०। म्रियतेर्लुङ्लिङोश्च ।१।३।६१। पूर्वं व्याख्याते पूर्ववत्सनः ।१।३।६२। एदिधिषते । शिशधिषते । निविविद्गते । शदेः शित इत्यादिसूत्रद्वये सनो नेत्यनुवर्त्य वाक्यभेदेन व्याख्येयम् । तेनेह न शिशत्सति, मुमूर्षति । आम्प्रत्ययवत्कृञोऽनुप्रयोगस्य ।१।३।६३ एधांचक्रे । प्रोपाभ्यां युजेरयज्ञपात्रेषु ।१।३।६४। प्रयुङ्क्ते, उपयुङ्क्ते । स्वराद्यन्तोपसर्गादिति वक्तव्यम् ।*। उद्युङ्क्ते । नियुङ्क्ते । समः क्ष्णुवः ।१।३।६५। संक्ष्णुते शस्त्रम् । भुजोऽनवने ।१।३।६६। ओदनं भुङ्क्ते । बुभुजे पृथिवीं राजा वृद्धो जनो दुःखशतानि भुङ्क्ते । इहोपभोगो भुजेरर्थः । णेरणौ यत्कर्म णौ चेत्स कर्ताऽनाध्याने १।३।६७। ण्यन्तादात्मनेपदं स्यादणौ या क्रिया सैव चेत् ण्यन्तेनोच्यते । अणौ यत्कर्मकारकं स चेण्णौ कर्तास्यान्नत्वाध्याने । णिचश्चेति सिद्धे अकर्त्रभिप्रायार्थमिदम् । कर्त्रभिप्रायेतु विभाषोपपदेनेति विकल्पे, अणावकर्मकारकादिति परस्मैपदे च परत्वात्प्राप्ते पूर्वविप्रतिषेधेनेदमेवेष्यते ।*। कर्तृस्था भावकाः कर्तृस्थक्रियाश्चोदाहरणम् तथा हि पश्यन्ति भवं भक्ताः, प्रेरणांशत्यागे पश्यति भवः। ततो हेतुमण्णिच् ३ दर्शयन्ति भवं भक्ताः । पश्यन्तीत्यर्थः । पुनर्ण्यर्थस्याविवक्षायाम् दर्शयते भवः । इह प्रथमतृतीययोर्द्वितीयचतुर्थयोश्च तुल्योऽर्थः । तृतीयकक्षायां न तङ् । अणौ कर्मकारकस्य भवस्य णौ कर्तृत्वाभावात् । चतुर्थ्यां तु तङ् । द्वितीयकक्षामादाय क्रियासाम्यात् प्रथमायां कर्मणो भवस्य इह कर्तृत्वाच्च एवमारोहयते हस्तीत्यप्युदाहरणम् । अरोहन्ति हस्तिनं हस्तिपकाः । न्यग्भावयन्तीत्यर्थः । तत आरोहति हस्ती । न्यग्भवति । ततोणिच् । आरोहयन्ति । पुनः आरोहयते इत्युदाहरणम । यद्वा पश्यन्ति, आरोहन्तीति प्रथमकक्षा प्राग्वत् । ततः कर्मण एव हेतुत्वारोपाण्णिच् । दर्शयति भवः, आरोहयति हस्ती पश्यत आरोहतश्च प्रेरयतीत्यर्थः । ततो णिज्भ्यां तत्प्रकृतिभ्यां च उपात्तयो द्वयोरपि प्रेषणयोस्त्यागे । दर्शयते, आरोहयते इत्युदाहरणम । अर्थः प्राग्वत् । अस्मिन्पक्षे द्वितीयकक्षायां न तङ् समानक्रियत्वाभावात् णिजर्थस्याधिक्यात् । भीस्म्योर्हेतुभये ।१।३।६८। व्याख्यातम् । गृधिवञ्च्योः प्रलम्भने ।१।३।६९। गर्धयते, वञ्चयते वा माणवकम् । लियः संमाननशालीनीकरणयोश्च ।१।३।७०। मिथ्योपपदात्कृञोऽभ्यासे ।१।३।७१। णेरेव । पदं मिथ्या कारयते । स्वरितञितः कर्त्रभिप्राये क्रियाफले ।१।३।७२। यजते, सुनुते । अपाद्वदः ।१।३।७३। णिचश्च अपवदते ।१।३।७४। कारयते । समुदाङ्भ्यो यमोऽग्रन्थे ।१।३।७५। व्रीहीन्संयच्छते । भारमुद्यच्छते वस्त्रमायच्छते । कर्त्रभिप्राये इत्येव । अनुपसर्गाज्ज्ञः ।१।३।७६। गां जानीते । विभाषोपपदेन प्रतीयमाने ।१।३।७७। स्वंयज्ञं यजति, यजतेवा । स्वं कटं करोति, कुरुते । स्वं पुत्रमपवदति, अपवदते वा । स्वं यज्ञं कारयति, कारयते वा । स्वं व्रीहिंसंयच्छति; संयच्छते वा । स्वां गां जानीति, जानीते । इत्यात्मनेपदप्रक्रिया ।

शेषात्कर्तरि परस्मैपदम्।१।३।७८। अस्ति, भवति। **अनुपराभ्यां कृञः**।१।३।७९ कर्तरीत्येव। कर्तृगेऽपि फले गन्धनादौ च परस्मैपदार्थम्। अनुकरोति, पराकरोति। **अभिप्रत्यतिभ्यः क्षिपः**।१।३।८०। अभिक्षिपति। **प्राद्वहः**।१।३।८१। प्रवहति। **परेर्मृषः**।१।३।८२। परिमृष्यति। परिवहतीत्यपीति केचित्। **व्याङ्परिभ्यो रमः**। ।१।३।८३। विरमति, आरमति, परिरमति। **उपाच्च**।१।३।८४। यज्ञदत्तमुपरमति **विभाषाऽकर्मकात्** १।३।८५। उपादित्येव। उपरमति, उपरमते। **बुधयुधनशजनेङ्प्रुद्रुस्रुभ्यो णेः** १।३।८६। णिचश्चेत्यस्यापवादः। बोधयति पद्मम्, योधयति काष्ठानि। नाशयति दुःखम्। जनयति सुखम्। अध्यापयति वेदम्। प्रावयति, द्रावयति स्रावयति जलम्। **निगरणचलनार्थेभ्यश्च**।१।३।८७। निगारयति आशयति। चलयति, कम्पयति। **अदेः प्रतिषेधः**।✱। आदिखाद्योर्नेति न कर्मत्वम्। आदयते देवदत्तेन। निगरणचलनेति सूत्रस्यैवायं निषेधः। कर्त्रभिप्रायेपरस्मैपदं स्यादेव। आदयत्यन्नं बटुना। **अणावकर्मकाच्चित्तवत्कर्तृकात्**।१।३।८८। गोपी कृष्णं शाययति। **न पादम्याङ्यमाङ्यस परिमुहरुचिनृतिवदवसः**।१।३।८९। पाययते, दमयते, आयामयते, आयासयते इत्यादि। धेट उपसंख्यानम्।✱। धापयेते शिशुम्। अकर्त्रभिप्राये परस्मैपदमेव। दमयन्ती कमनीयतामदम्। भिक्षां वासयति। **वा क्यषः**।१।३।९०। लोहितायति, लोहितायते। **द्युद्भ्यो लुङि**। अद्युतत् अद्योतिष्ट। **वृद्भ्यः स्यसनोः**। वर्त्स्यति वर्तिष्यते। विवृत्सति विवर्तिषते। **लुटि च क्लृपः**। कल्प्तासि, कल्पितासे। कल्प्स्यति, कल्पिष्यते कल्प्स्यते। चिक्लृप्सति। चिकल्पिषते, चिक्लृप्सते। इति पदव्यवस्था समाप्ता।

लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः इति भावकर्मणोर्लडादयः। **भावकर्मणो**रिति तङ्। **सार्वधातुके यक्**।३।१।६७। भावेकर्मणि च यक् स्यात्। सार्वधातुके परे। भावे प्रथमपुरुषैकवचनमेव त्वया मया अन्यैश्च भूयते भूयताम् अभूयत भूयेत स्यसिच् सीयुट् तासिषु भावकर्मणोरुपदेशेऽज्झनग्रहदृशां वा चिण्वदिट् च।६।४।६२। एषां चिण्वदङ्गकार्यं वा स्यात्स्यादिष्विडागमश्च। अयमिट चिण्वद्भावसंनियोगशिष्टत्वात्तदभावे न। भाविता भविता। भाविष्यते, भविष्यते। भाविषीष्ट, भविषीष्ट। **चिण् भावकर्मणोः**।३।१।६६ च्लेश्चिण् स्याद्भावकर्मवाचिनि तशब्दे परे। अभावि। अनुभूयते आनन्दश्चैत्रेण, त्वया, मया च। अनुभूयेते अनुभूयन्ते। अनुभूयसे इत्यादि। अन्वभावि। अन्वभाविषाताम्, अन्वभविषाताम्। णिलोपः। भाव्यते। भावयांचक्रे। भाविता। चिण्वदिटः आभीयत्वेनासिद्धत्वाण्णिलोपः। पक्षे भावयिता। भाविषीष्ट, भावयिषीष्ट। अभावि। अभाविषाताम्, अभावयिषाताम्। बुभूष्यते। बुभूषिता। बोभूयते। यङ्लुगन्तात्तु। बोभूयते। बोभाविता, बोभविता। स्तूयते। स्ताविता, स्तोता। अस्तावि। अस्ताविषाताम् अस्तोषाताम्। गुणोऽर्तीति गुणः। अर्यते, स्मर्यते। उपदेशेऽजन्तत्वाच्चिण्वदिट्। आरिता, अर्ता। नित्यसंयोगादित्वाभावान्न गुणः। संस्क्रियते। स्रस्यते। इदितस्तु। नन्द्यते।

अयङ् यि क्ङिति ।७।४।२२। शय्यते । तनोतेर्यकि ।६।४।४४। आत्वं वा तायते, तन्यते, ये विभाषा । जायते, जन्यते । तपोऽनुतापे च । ३। १। ६५ । तपेश्च्लेश्चिण् न स्यात्कर्मकर्तर्यनुतापे च । अन्वतप्त पापेन । पापेन पुंसा कर्त्रा अशोचीत्यर्थः । दीयते । धीयते । जग्ले । आतो युक् चिण् कृतोः ।७।३।३३। ञ्णिति णिति कृतीत्यर्थः । दायिता, दाता । दायिषीष्ट दासीष्ट । अदायि अदायिषाताम्, अदिषाताम् । अग्लायिषाताम्, अग्लासाताम् । हन्यते । हो हन्तेरिति कुत्वम् । घानिता, हन्ता । घानिष्यते, हनिष्यते । आशीर्लिङि वधादेशस्यापवादश्चिण्वद्भावः । आर्धधातुके सीयुटीति विशेषविहितत्वात् । घानिषीष्ट, पक्षे वधिषीष्ट । अघानि । अघानिषाताम् अहसाताम् । पक्षे वधादेशः । अवधि, अवधिषाताम् । गृह्यते । चिण्वदिटो न दीर्घत्वम् । प्रकृतस्य वलादिलक्षणस्यैव इटो ग्रहोऽलिटि दीर्घ इत्यनेन दीर्घविधानात् । ग्राहिता, ग्रहीता । दृश्यते । अदर्शि । अदर्शिषाताम् सिचः कित्वादम् न । अदृक्षाताम् । गीर्यते, अगारिढ्वम्, अगरीढ्वम् अगरिढ्वम् अगार्ढ्वम् । हेतुमण्ण्यन्तात्कर्मणि लः, यक् णिलोपः । शम्यते मोहो मुकुन्देन । चिण्णमुलोर्दीर्घोऽन्यतरस्याम् ।६।४।९३। चिण्परे णमुल्परे च णौ मितामुपधाया दीर्घो वा स्यात् । शामिता शमिता, शमयिता । यङन्ताण्णिच् । शंशम्यते । शंशामिता, शंशमिता शंशमयिता । भाष्यमतेतु यङन्ताच्चिण्वदिटि दीर्घो नास्तीति विशेषः । ण्यन्तत्वाभावे-शम्यते मुनिना नोदात्तोपदेशस्यमान्तस्यानाचमेः ।७।३।३४। उपधाया दीर्घो न स्याच्चिणि ञिति णिति कृति च । अशमि । अदमि । अनाचमिकमिवमीनामिति-वक्तव्यम् ।*। चिणि आयादय इति णिङभावे । अकामि । अवामि । जनिवध्यो-रिति न वृद्धिः । अवधि । जाग्रोऽविचिण्णल्ङित्स्वित्युक्तेर्न गुणः । अजागारि । भञ्जेश्च चिणि ।६।४।३३। नलोपो वा स्यात् । अभाजि, अभञ्जि । विभाषा चिण्णमुलोः ।७।१।६९। लभेर्नुमागमो वा स्यात् । अलम्भि । अलाभि । व्यवस्थितविकल्पत्वात्प्रादेर्नित्यं नुम् । प्रालम्भि । द्विकर्मकाणां तु । गौणे कर्मणि दुह्यादेः प्रधाने नीहृकृष्वहाम् । बुद्धिभक्षार्थयोः शब्दकर्मणां च निजेच्छया ॥ १॥ प्रयोज्यकर्मण्यन्येषां ण्यन्तानां लादयो मताः ॥ गौर्दुह्यते पयः । अजा ग्रामं नीयते इत्यादि । माणवकं धर्मो बोध्यते माणवको धर्ममिति वा भोज्यते माणवकमोदनः, माणवक ओदनमिति वा रिणा विधिर्वेदमध्याप्यते, वेदो विधिमिति वा । देवदत्तो ग्रामं गम्यते । अकर्मकाणां कालादिकर्मकाणां कर्मणि भावे च लकार इष्यते । मासो मासं वा आस्यते देवदत्तेन । णिजन्तात्तु प्रयोज्ये प्रत्ययः । मासमास्यते माणवकः ॥ इति भावकर्मप्रक्रिया ॥

यदा सौकर्यातिशयं द्योतयितुं कर्तृव्यापारो न विवक्ष्यते तदा कारकान्तराण्यपि कर्तृसंज्ञां लभन्ते । स्वव्यापारे स्वतन्त्रत्वात् तेन पूर्वं करणत्वादिसत्त्वेऽपि संप्रति कर्तृत्वात्कर्तरि लकारः । साध्वसिश्छिनत्ति, काष्ठानि पचन्ति, स्थाली पचति । अत्राकर्मकत्वाद्भावे कर्तरि च लकाराः । पच्यते ओदनेन, भिद्यते काष्ठेन । कर्तरि तु । कर्मवत्कर्मणा तुल्यक्रियः । ३ । १ । ८७ । कर्मस्थया क्रियया तुल्यक्रियः कर्ता कर्मवत्स्यात् । कार्यातिदेशोऽयम् । तेन यगात्मनेपदचिण्चिण्वदिटः स्युः । कर्तुरभि-

हितत्वात्प्रथमा। पच्यते ओदनः। भिद्यते काष्ठम्। अपाचि, अभेदि सकर्मकाणां प्रतिषेधो वक्तव्यः। *। अन्योन्यं स्पृशतः, अजाग्रामं नयति। दुहिपच्योर्बहुलं सकर्मकयोरिति वाच्यम। *। न दुहस्नुनमां यक्चिणौ ।३।१।८९। एषां कर्मकर्तरि यक्चिणौ न स्तः। दुहेरनेन यक एव निषेधः। चिण्तु विकल्पिष्यते। शब्लुकौ। गौः पयो दुग्धे। अचः कर्मकर्तरि।३।१।६२। च्लेश्चिण्वा स्यात्तशब्दे परे। अकारि, अकृत। दुहश्च ।३।१।६३। अदोहि पक्षे क्सः, लुग्वेति पक्षे लुक। अदुग्ध, अधुक्षत। उदुम्बरः फलं पच्यते। सृजियुज्योः श्यंस्तु। *। अनयोः सकर्मकयोः कर्ता बहुलं कर्मवत् यगपवादश्च श्यन् वाच्य इत्यर्थः। सृजेः श्रद्धोपपन्ने कर्तर्येवेति वाच्यम। *। सृज्यते स्रजं भक्तः। असर्जि। युज्यते ब्रह्मचारी योगम। भूषाकर्मकिरादिसनां चान्यत्रात्मनेपदात। *। एषां यक्चिणौ:चिण्वदिट् च नेत्यर्थः। अलंकुरुते कन्या। अलमकृत। अवकिरते हस्ती। अवाकीर्ष्ट। गिरते। अगीर्ष्ट। आद्रियते। आदृत। चिकीर्षते कटः। अचिकीर्षिष्ट। नरुधः।३।१।६४। अवारुद्ध गौः। कर्मकर्तरीत्येव। अवारोधि गौर्गोपेन। तपस्तपःकर्मकस्यैव। ३।१।८८। कर्ता कर्मवत्स्यात्। तप्यते तपस्तापसः। अर्जयतीत्यर्थः। तपोऽनुतापे चेति चिण्निषेधात्सिच्। अतप्त। तपः कर्मकत्वाभावे तु न। उत्तपति सुवर्णं सुवर्णकारः। न दुहस्नुनमांयक्चिणौ।३।१।८९। प्रस्नुते गास्नावि। प्रास्नोष्ट। नमते दण्डः। यक्चिणोः प्रतिषेधे-हेतुमण्णिश्रिब्रूञामुपसंख्यानम्। *। कारयते अचीकरत। उच्छ्रयते दण्डः। उदशिश्रियत। चिण्वदिट् तु स्यादेव। कारिष्यते उच्छायिष्यते। ब्रूते कथा। अवोचत। भारद्वाजीयाः। णिश्रन्थिग्रन्थिब्रूञात्मनेपदाकर्मकाणामुपसंख्यानम। *। पुच्छमुदस्यति उत्पुच्छयते गौः अन्तर्भाविनण्यर्थतायाम, उत्पुच्छयते गाम। पुनः कर्तृत्वविवक्षायाम् उत्पुच्छयते गौः। उदपुपुच्छत। यक्चिणोः प्रतिषेधाच्च शपचङौ। ग्रन्थति ग्रन्थम्। श्रन्थति मेखलां देवदत्तः। ग्रन्थते ग्रन्थः, अजग्रन्थिष्ट। क्रैयादिकयोस्तु ग्रथ्नीते, श्रथ्नीते। विकुर्वते सैन्धवाः। वलगन्तीत्यर्थः। वेः शब्दकर्मणोऽकर्मकाच्चेति तङ्। अन्तर्भावितण्यर्थस्य पुनः प्रेषणात्यागे, विकुर्वते सैन्धवाः। व्यकारिष्ट। व्यकारिषाताम्, व्यकारिषत। व्यकृत, व्यकृषाताम्, व्यकृषत। कुषिरजोः प्राचां श्यन्परस्मैपदं च।३।१।९०। कर्मकर्तरि न यक। कुष्यति, कुष्यते पादः। रज्यति, रज्यते वस्त्रम्। यगविषये तु नास्य प्रवृत्तिः। कोषिषीष्ट। रंक्षीष्ट। इति कर्मकर्तृप्रक्रिया।

अभिज्ञावचनेलृट् ३।२।११२। स्मरसि कृष्ण? गोकुले वत्स्यामः। एवं बुध्यसे चेतयसे इत्यादियोगेऽपि। न यदि।३।२ ११३। अभिजानासि कृष्ण! यद्वने अभुञ्ज्महि। विभाषा साकाङ्क्षे।३।२।११४ स्मरसि कृष्ण! वने वत्स्यामस्तत्र गाश्चारयिष्यामः। यच्छब्दयोगेऽपि परत्वाद्विकल्पः। परोक्षे लिट्।चकार। उत्तमपुरुषे चित्तविक्षेपादिना पारोक्ष्यम। सुप्तोऽहं किल विललाप। बहु जगद पुरस्तात्तस्य मत्ताः किलाहम। अत्यन्तापह्नवे लिड्वक्तव्यः। *। कलिङ्गेष्ववात्सीः। नाहं कलिङ्गान् जगाम। हशश्वतोर्लङ्च।३।२।११६

चाल्लिट्। इतिहाकरोत्, चकार वा शश्वदकरोच्चकार वा। प्रश्ने चासन्नकाले।३।२।११७। प्रष्टव्यार्थे आसन्नकाले सति लिङ् विषये लङ्लिटौ स्तः। ।अगच्छत् किम्, जगाम किम् लट् स्मे।३।२।११८। यजति स्म युधिष्ठिरः। अपरोक्षेच।३।२।११९। एवं स्म पिता ब्रवीति। ननौ पृष्टप्रतिवचने।३।२।१२०। परोक्ष इति निवृत्तम्। भूते लट् स्यात्। अकार्षीः किम्, न करोमि भोः नन्वोर्विभाषा।३।२।१२१। अकार्षीः किम्, न करोमि, नाकार्षम्। पुरि लुङ् चास्मे।३।२।१२२। पुरा शब्दयोगे भूतानद्यतने विभाषा लुङ चाल्लट्। न तु स्मयोगे। वसन्तीह पुरा छात्राः, अवात्सुः, अवसन्, ऊषुर्वा। स्मयोगे यजति स्मपुरा इत्येव। भविष्यतीत्यनुवर्तते। यावत्पुरानिपातयोर्लट्।३।३।४। यावद् भुङ्क्ते पुरा भुङ्क्ते। विभाषा कदाकर्ह्योः।३।३।५। कदा कर्हि वा भुङ्क्ते, भोक्ष्यते,भोक्ता वा। किंवृत्ते लिप्सायाम्।३।३।६। कं कतरं कतमं वा भोजयसि भोजयितासि भोजयिष्यासि वा लिप्स्यमानसिद्धौ च।३।३।७। योऽन्नं ददाति दास्यति दाता वा स स्वर्गं याति यास्यति याता वा। लोडर्थलक्षणे च।३।३।८ लोडर्थः प्रैष्यादिर्लक्ष्यते येन तस्मिन्नर्थे वर्तमानाद्धातोर्भविष्यति लड्वा स्यात्। कृष्णश्चेद्भुङ्क्ते त्वं गाश्चारय। पक्षे लुङ्लटौ। लिङ् चोर्ध्वमौहूर्तिके।३।३।९। ऊर्ध्वंमौहूर्तिके भविष्यति लोडर्थलक्षणे वर्तमानाद्धातोर्लिङ् लटौ वा स्तः पक्षेलृट्लुटौ। मुहूर्तादुपरि उपाध्यायश्चेदागच्छेत् आगच्छति आगमिष्यति आगन्ता वा त्वं। छन्दोऽधीष्व। वर्तमानसामीप्ये वर्तमानवद्वा।३।३।१३१। भूते भविष्यतीत्यर्थः। कदा आगतोऽसि। अयमागच्छामि आगम वा। कदा गमिष्यसि ? एष गच्छामि गमिष्यामि वा। आशंसायां भूतवच्च।३।३।१३२ चाद्वर्तमानवत् पक्षे लट्। देवश्चेदवर्षीत्, वर्षति वर्षिष्यति वा धान्यमवाप्स्म वपाम, वप्स्यामो वा। क्षिप्रवचने लृट्।३।३।१३३। वृष्टिश्चेदाशु क्षिप्रं त्वरितं वा यास्यति शीघ्रं वप्स्यामः। नेति वक्तव्ये लङ्ग्रहणं लुटोऽपि विषये यथा स्यात्। श्वः शीघ्रं वप्स्यामः। आशंसावचने लिङ्।३।३।१३४। गुरुश्चेदुपेयात् आशंसे अधीयीय। आशंसे क्षिप्रमधीयीय। नानद्यतनवत्क्रियाप्रबन्धसामीप्ययो।३।३।१३५। लङ् लुटौ न। यावज्जीवमन्नमदात् दास्यति वा। सामीप्यं तुल्यजातीयेनाव्यवधानम्। येयं पौर्णमास्यतिक्रान्ता तस्यामग्नीनाधित, सोमेनायष्ट। येयममावास्यागामिनी तस्यामग्नीनाधास्यते, सोमेन यक्ष्यते। भविष्यति मर्यादावचनेऽवरस्मिन् ३।३।१३६। अत्रानद्यतनवन्न स्यात्। योऽयमध्वागन्तव्य आपाटलिपुत्रात् तस्य यदवरं कौशाम्ब्यास्तत्र सक्तून्पास्यामः। कालविभागे चानहोरात्राणाम्।३।३।१३७। पूर्वसूत्रं सर्वमनुवर्तते। अहोरात्रसंबन्धिनि विभागे प्रतिषेधार्थमिदं वचनम्। योऽयं वत्सर आगामी तस्य यदवरमाग्रहायण्यास्तत्र युक्ता अध्येष्यामहे। परस्मिन्विभाषा।३।३।१३८। अवरस्मिन् वर्ज्यं पूर्वसूत्रद्वयमनुवर्तते। योऽयं संवत्सर आगामी तस्य यत्परमाग्रहायण्यास्तत्राध्येष्यामहे। अध्येतास्महे वा। लिङ् निमित्ते लङ्

क्रियातिपत्तौ । भविष्यत्येव । सुवृष्टिश्चेदभविष्यत्तदा सुभिक्षमभविष्यत् । **भूते च** । ३ । ३ । १४० । पूर्वसूत्रमनुवर्तते । **वोताप्योः** । ३ । ३ । १४१ । वा आ उताप्योः उताप्योरित्यतः प्राग्भूते लिङ् निमित्ते लृङ् चेत्यधिक्रियते । **विभाषा कथमि लिङ् च** । ३ । ३ । १४३ । गर्हायामित्येव । चाल्लट् । कथं धर्मं त्यजेः, त्यजसि वा । अत्र भविष्यति नित्यं लङ् भूते वा । कथं नाम तत्रभवान् धर्मं त्यक्ष्यत् **किंवृत्ते लिङ्लृटौ** । ३ । ३ । १४४ । कः कतरः कतमो वा हरिं निन्देत्, निन्दिष्यति वा । **अनवक्लृप्त्यमर्षयोरकिंवृत्तेऽपि** । ३।३। १४५ । न संभावयामि, नमर्षये वा भवान् हरिं निन्देत्, निन्दिष्यति वा । लङ् प्रागवत् । **किंकिलास्त्यर्थेषु लृट्** । ३ । ३ । १४६ । अनवक्लृप्त्यमर्षयोरित्येतद्गर्हायां चेति यावत् । न श्रद्दधे, न मर्षये वा किंकिल त्वं शूद्रान्नं भोक्ष्यसे । अस्ति, भवति, विद्यते वा शूद्रां गमिष्यसि । अत्र लृङ् न । **जातुयदोर्लिङ्** । ३ । ३ । १४७ । यदायद्योरुपसंख्यानम् । * । जातु यद् यदा यदि वा त्वादृशो हरिं निन्देत्, नावकल्पयामि न मर्षयामि । लङ् प्रागवत् । **यच्चयत्रयोः** । ३ । ३ । १४८ । यच्च यत्र वा त्वमेवं कुर्याः न श्रद्दधे, न मर्षयामि । **गर्हायां च** । ३ । ३ । १४९ । यच्चयत्रयोर्योगे गर्हायां लिङेव स्यात् । यच्च यत्र वा त्वं शूद्रं याजयेः, अन्याय्यं तत् । **चित्रीकरणे च** । ३ । ३ । १५० । यच्च यत्र वा त्वं शूद्रं याजयेः आश्चर्यमेतत् । **शेषे लृडयदौ** । ३ । ३ १५१ । यच्च यत्राभ्यामन्यस्मिन्नुपपदे चित्रीकरणे गम्ये धातोर्लृट् स्यात् । आश्चर्यमन्धो नाम कृष्णं द्रक्ष्यति । **उताप्योः समर्थयोर्लिङ्** । ३ । ३ । १५२ । उत अपि वा हन्यादघं हरिः । **कामप्रवेदनेऽकच्चिति** । ३ । ३ । १५३ । कामो मे भुञ्जीत भवान् । **संभावनेऽलमिति चेत्सिद्धाप्रयोगे** । ३ । ३ । १५४ संभावनेऽर्थे लिङ् स्यात्, तच्चेत्संभावनमलमिति सिद्धाप्रयोगे सति । अपि गिरिं शिरसा भिन्द्यात् । **विभाषा धातौ संभावनवचनेऽयदि** । ३ । ३ । १५५ । संभावयामि भुञ्जीत, भोक्ष्यते वा भवान् । **हेतुहेतुमतोर्लिङ्** । ३ । ३ । १५६ । वा स्यात् । कृष्णं नमेच्चेत्सुखं यायात् । नंस्यति, यास्यति वा । भविष्यत्येवेष्यते । * । नेह । हन्तीति । पलायते । **इच्छार्थेषु लिङ्लोटौ** । ३ । ३ । १५७ । इच्छामि भुञ्जीत, भुङ्क्तां वा भवान् । कामप्रवेदने इति वक्तव्यम् । * । नेह । इच्छन् करोति । **लिङ् च** । ३ । ३ । १५९ । समानकर्तृकेषु इच्छार्थेषु लिङ् । भुञ्जीयेतीच्छति । **इच्छार्थेभ्यो विभाषा वर्तमाने** । ३ । ३ । १६० । लिङ् स्यात्पक्षे लट् । इच्छेत्, इच्छति । कामयेत, कामयते वा, विधिनिमन्त्रणेति लिङ् । विधौ-यजेत । निमन्त्रणे-इह भुञ्जीत भवान् । आमन्त्रणे-इहासीत । अधीष्टे-पुत्रमध्यापयेद् भवान् । संप्रश्ने-किं भो वेदमधीयीय, उत तर्कम् । प्रार्थने भो भोजनं लभेय । एवं लोट् । **प्रैषातिसर्गप्राप्तकालेषु कृत्याश्च** । ३ । ३ । १६१ । चकारेण लोटोऽनुकर्षणं प्राप्तकालार्थम्, लिङ् चोर्ध्वमौ-

हूर्तिके । ३ । ३ । १६४ । मुहूर्तादूर्ध्वं यजेत, यजताम्, यष्टव्यम् । स्मेलोट् । ३ । ३ । १६५ । ऊर्ध्वं मुहूर्ताद् यजतां स्म । अधीष्टे च । ३ । ३ । १६६ । लोट् स्यात् । त्वं स्म अध्यापय । लिङ्यदि । ३ । ३ । १६८ । यच्छब्दे उपपदे कालसमयवेलासु च लिङ् स्यात् । कालः समयो वेला वा यद्भुञ्जीत भवान् । अर्हेकृत्यतृचश्च ३।३।१६९ चाल्लिङ् । त्वं कन्यां वहेः । शकि लिङ् च । ३ । ३ । १७२ । चात्कृत्याः त्वं भारं वहेः । माङि लुङ् । माकार्षीः । मा भवतु इत्यादौ माशब्दः, नतु माङ् । धातुसंबन्धे प्रत्ययाः । ३ । ४ । १ । धात्वर्थानां संबन्धे यत्र काले प्रत्यया उक्तास्ततोऽन्यत्रापि स्युः । तिङ् वाच्यक्रियायाः प्राधान्यात्तदनुरोधेन गुणभूतक्रियावाचिभ्यः प्रत्ययाः । वसन् ददर्श । भूते लट् । सोमयाज्यस्य पुत्रो भविता । क्रियासमभिहारे लोट् लोटो हिस्वौ वा चतध्वमोः । ३ । ४ । २ । तौ च हिस्वौ तिङ्संज्ञौ स्तः । तध्वमोर्विषये तु तौ वा स्तः । पुरुषैकवचनसंज्ञे तु नानयोरतिदिश्येते हिस्वविधानसामर्थ्यात् । तेन सकलपुरुषवचनविषये परस्मैपदिभ्यो हिः कर्तरि । आत्मनेपदिभ्यः स्वो भावकर्मकर्तृषु । समुच्चयेऽन्यतरस्याम् । ३ । ४ । ३ । प्रागुक्तं वा स्यात् । यथाविध्यनुप्रयोगः पूर्वस्मिन् । ३ । ४ । ४ । आद्ये लोड्विधाने लोट् प्रकृतिभूत एव धातुरनुप्रयोक्तव्यः । समुच्चये सामान्यवचनस्य । ३ । ४ । ५ समुच्चये लोड्विधौ सामान्यार्थस्य धातोरनुप्रयोगः स्यात् । अनुप्रयोगाद्यथायथं लडादयस्तिबादयश्च । ततः संख्याकालयोः पुरुषविशेषार्थस्य चाभिव्यक्तिः । क्रियासमभिहारे तु वाच्ये । * । याहि याहीति याति । एवं यातः यान्तीत्यादि । याहि याहीति यात यातेति वा यूयं यात, याहि याहीत्ययासीत् । अधीष्वाधीष्वेत्यधीते अधीष्वाधीष्वेति वा अधीध्वमधीध्वमिति वा यूयमधीध्वे । समुच्चये तु सक्तून् पिब धानाः खादेत्यभ्यवहरति । अन्नं भुङ्क्ष्व, दाधिकमास्वादयस्वेत्यभ्यवहरते । तध्वमोस्तु पिबत खादतेत्यभ्यवहरथ । भुङ्ध्वमास्वादध्वमित्यभ्यवहरध्वे । पक्षे हिस्वौ । अत्र समुच्चीयमानविशेषाणामनुप्रयोगार्थेन सामान्येन अभेदान्वयः । पक्षे सक्तून् पिबति, धानाः खादति, अन्नं भुङ्क्ते, दाधिकमास्वदते । एवं च पुरीमवस्कन्द लुनीहि नन्दनं मुषाण रत्नानि हरामराङ्गनाः । विगृह्य चक्रे नमुचिद्विषा बली य इत्थमस्वास्थ्यमहर्दिवं दिवः " इत्यादि व्याख्यातम् । इति लकारार्थप्रक्रिया ।

इति श्री सर्वतन्त्रस्वतन्त्र विद्यावारिधि महामहोपाध्याय पं० मथुराप्रसाददीक्षितकृतायां पाणिनीयसिद्धान्तकौमुद्यामुत्तरार्धे तिङन्तं समाप्तम् ।

धातोः । ३ । १ । ९१ । अधिकारोऽयम् । तत्रोपपदं सप्तमीस्थम् । ३ । १ । ९२ । कृदतिङ् । ३ । १ । ९३ । स्पष्टम् । वाऽसरूपोऽस्त्रियाम् । ३ । १ । ९४ । उत्सर्गस्य बाधकः स्यात् । कृत्याः । ३ । ९५ । अधिकारोऽयम् । कर्तरि कृत् । ३ । ४ । ६७ तयोरेव कृत्यक्तखलर्थाः । ३ । ४ । ७० । एते भावकर्मणोरेव स्युः । तव्यत्तव्यानीयरः । ३ । १ । ९६ । एधितव्यम्, एधनीयं त्वया । भावे औत्सर्गिकमेकवचनं क्लीबत्वं

च। चेतव्यश्चयनीयो वा धर्मस्त्वया। वसेस्तव्यत्कर्तरि णिच्च। ❀। वसतीति कर्मणि वास्तव्यः। केलिमर उपसंख्यानम्। ❀। पचेलिमा माषाः, पक्तव्या इत्यर्थः। भिदेलिमाः सरलाः। प्रत्ययाः। कृत्यचः। ८।४।२०। उपसर्गस्थान्निमित्तात्परस्य अच उत्तरस्य कृत्स्थस्य नस्य णत्वं स्यात्। प्रयाणीयम्। निर्विण्णस्योपसंख्यानम्। ❀। परस्य णत्वं पूर्वस्य ष्टुत्वम्। निर्विण्णः। णेर्विभाषा। ८।४।३०। ण्यन्ताद्विहितस्य कृन्नस्य णो वा स्यात्। प्रयापणीयम्, प्रयापनीयम्। विहितविशेषणाद् यका व्यवधानेऽपि। प्रयाप्यमाणं पश्य। दुर उपसर्गत्वाभावान्नेह। दुर्यानम्, दुर्यापनम्। हलश्चेजुपधात्। ८।४।३१। हलादेरिजुपधादपि वा स्यात्। प्रकोपणीयम्, प्रकोपनीयम्। इजादेः सनुमः। ८।४।३२। सनुमश्चद्भवति तर्हि इजादेर्हलन्ताद्विहितस्य कृत्स्थस्यैव नस्य णः। प्रेङ्खणीयम्। इजादित्वाभावान्नेह प्रमङ्गनीयम्। नुम् ग्रहणमनुस्वारोपलक्षणम्। तेनेह न प्रेन्वनम्। इह तु स्यादेव। प्रोम्भणम्। वा निंसनिक्षनिन्दाम्।८।४।३३। कृति परे। प्रणिंसितव्यम् प्रनिंसितव्यम्। न भाभूपूकमिगमिप्यायीवेपाम्।८।४।३४। प्रभानीयम्, प्रभवनीयम्। पूञएवेह ग्रहणमिष्यते। ❀। पूङस्तु प्रपवणीयः सोमः। ण्यन्तभादानामुपसंख्यानम्। ❀। प्रभापनीयम्। यत्वस्यासिद्धत्वान्नेह प्रख्यानीयम्। कृत्यल्युटोबहुलम्। ३।३।११३। स्नान्त्यनेन स्नानीयं चूर्णम्। दीयतेऽस्मै दानीयो विप्रः। अचो यत्। ३।१।९७। चेयम्, जेयम्। ईद्यति। यति परे आत ईत्स्यात्। देयम्, ग्लेयम्। तकिशसिचतियतिजनिभ्यो यद्वाच्यः। ❀। तक्यम्, शस्यम्। जन्यम्। जनेयद्विधिः स्वरार्थः। हनो वा यद्वधश्च वक्तव्यः। ❀। वध्यः। पक्षे घात्यः। पोरदुपधात्। ३।१।९८। यत्स्यात्, ण्यतोऽपवादः। शप्यम्, लभ्यम्। असरूपत्वात्तव्यदादयोऽपि। लब्धव्यम्, लभनीयम्। आङो यि।७।१।६५। आङः परस्य लभनुम् स्याद्, यादौ प्रत्यये विवक्षिते। नुमि कृते अदुपधत्वाभावात् ण्यदेव। आलम्भ्यः। उपात्प्रशंसायाम्। ७।१।६६। उपलम्भ्यः साधुः। शकिसहोश्च। ३।१।९९। शक्यम्, सह्यम्। गदमदचरयमश्चानुपसर्गे।३।१।१००। गद्यम्। मद्यम्। चर्यम्। चरेराङि चागुरौ। ❀। आचर्यो देशः। गुरौ तु आचार्यः। यमेर्नियमार्थम्। सोपसर्गान्माभूत्। प्रयाम्यम्। अवद्यपण्यवर्यागर्ह्यपणितव्यानिरोधेषु। ३।१।१०१ अवद्यम् पापम्। पण्या गौः। पाण्यमन्यत्। स्तुत्यर्हमित्यर्थः। वृङोयत्। शतेन वर्या कन्या, वृत्याऽन्या। वह्यं करणम्।३।१।१०२। वहन्त्यनेनेति वह्यं शकटम्। वाह्यमन्यत्। अर्यःस्वामिवैश्ययोः।३।१।१०३। अर्यः स्वामी वैश्यो वा। उपसर्या काल्या प्रजने।३।१।१०४। गर्भग्रहणे प्राप्तकालाचेदित्यर्थः। उपसर्या गौः। अजर्यं संगतम्।३।१।१०५। नञ्पूर्वाज्जीर्यतेः कर्तरि यत्। संगतं चेद्विशेष्यम्। न जीर्यतीत्यजर्यम्। भावे तु संगतकर्तृकेऽपि ण्यदेव। अजार्यं संगतेन वदः सुपि क्यप् च। ३।१।१०६। वदेर्भावे क्यप् स्याद् यत् अनुपसर्गे सुप्युपपदे।

ब्रह्मोद्यम्, ब्रह्मवद्यम् ब्रह्मवेदः, तस्य वदनमित्यर्थः। कर्मणि प्रत्ययाविस्येके। उपसर्गे तु ण्यदेव। अनुवाद्यम्, अपवाद्यम्। **भुवोभावे** । ३।१।१०७। क्यप्स्यात्। ब्रह्मभूयम्। सुपीत्येव भूयम्। अनुपसर्गे एव प्रभव्यम् **हनस्त च** । ३।१।१०८। भावे क्यप्, तकारश्चान्तादेशः। ब्रह्मणो हननं ब्रह्महत्या। **एतिस्तुशास्वृदृजुषः क्यप्**। ३।१।१०९। ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्। इत्यः स्तुत्यः शिष्यः। वृ इति वृञो ग्रहणं न वृङः। वृत्यः। वृङ्स्तु वार्या ऋत्विजः। आदृत्यः, जुष्यः। पुनः क्यबुक्तिः परस्यापि ण्यतो बाधनार्था। अवश्यस्तुत्यः। शंसिदुहिगुहिभ्यो वेति काशिका। × । शस्यम्, शंस्यम्। दुह्यम, दोह्यम्। गुह्यम्, गोह्यम्, । आङ्पूर्वादञ्जेः संज्ञायामुपसंख्यानम्। * । बाहुलकात्करणे क्यप। आज्यम्। **ऋदुपधाच्चाक्लृपि चृतेः** । ३।१।११०। वृत्यम्, वृध्यम्। कृपिचृत्योस्तु कल्प्यम्। चर्त्यम्। **ई च खनः** ।३।१।१११। चाद्यत्। आद्गुणः। खेयम्। **भृञो संज्ञायाम्** । ३।१।११२। भृत्याः कर्मकराः। समश्च बहुलम्। * । संभृत्याः, संभार्याः। मृजेर्विभाषा । ३।१।११३। पक्षे ण्यत्। मृज्यः। **चजोः कुघिण्यतोः** । ७।३।५२। स्पष्टम्। मृजेर्वृद्धिः। मार्ग्यः। **न्यङ्क्वादीनां च** । ७।३।५३। कुत्वं स्यात्, न्यङ्कुः। **राजसूयसूर्यमृषोद्यरुच्यकुप्यकृष्टपच्याव्यथ्याः**। ३।१।११४। एते क्यबन्ता निपात्यन्ते। लतात्मकः सोमो राजा। ससूयते कण्ड्यतेऽत्रेत्यधिकरणे क्यप्। निपातनाद्दीर्घः। राजसूयः। राजसूयम्। अर्धर्चादिः। सरति आकाशे इति सूर्यः। कर्तरि क्यप्, निपातनाद् ऊत्वम्। मृषोपपदाद् वदेः कर्मणि नित्यं क्यप्। मृषोद्यम्। विशेष्यनिघ्नोऽयम्। मृषोद्या। रोचते रुच्यः। गुपेरादेः कुत्वं च संज्ञायाम् सुवर्णरजतमिश्रं धनं कुप्यम्, गोप्यमन्यत्। कृष्टे स्वयमेव पच्यन्ते इति कृष्टपच्याः। कर्मकर्तरि। शुद्धे तु कर्मणि कृष्टपाक्याः। न व्यथते इति अव्यथ्यः। **भिद्योद्ध्यौ नदे** ।३।१।११५ भिदेरुज्झेश्च क्यप्, उज्झेर्धत्वं च। भिद्यः, उद्ध्यः नदः। **पुष्यसिध्यौ नक्षत्रे** ३।१।११६। अधिकरणे क्यब्निपात्यते। पुष्यः, सिध्यः। **विपूयविनीयजित्यामुञ्जकल्कहलिषु** ।३।१।११७। पूङ् नीजिभ्यः क्यप्। विपूयो मुञ्जः। विनीयः कल्कः, जित्यो हलिः। अन्यत्तु विपव्यम्, विनेयम्, जेयम्। **प्रत्यपिभ्यां ग्रहेः** ।३।१।११८ छन्दसीति वक्तव्यम् । * । प्रतिगृह्यम् अपिगृह्यम्। लोके तु प्रतिग्राह्यम् अपिग्राह्यम्। **पदास्वैरिबाह्यापक्ष्येषु च** ।३।१।११९। एष्वर्थेषु ग्रहेःक्यप्। अवगृह्यम् प्रगृह्यम्। पदम्। अस्वैरी गृह्यकाः शुकाः। ग्रामगृह्या सेना। ग्रामबहिर्भूतेत्यर्थः। आर्यगृह्यः, तत्पक्षाश्रित इत्यर्थः। **विभाषा कृवृषोः** । ३।१।१२० क्यप्स्यात्। कृत्यम, वृष्यम्। पक्षे। **ऋहलोर्ण्यत्** ।३।१।१२४। कार्यम् वर्ष्यम् **युग्यं च पत्रे** ।३।१।१२१ युग्यो गौः।अत्र क्यप् कुत्वं च निपात्यते। **अमावस्यदन्यतरस्याम्** ३।१।१२२। अमोपपदाद्वसेरधिकरणे ण्यत्। वृद्धौ सत्यां, पाक्षिको ह्रस्वश्च निपात्यते। अमा– सह वसतोऽस्यां चन्द्रार्कावित्यमावस्या, अमावास्या। ऋहलोर्ण्यत्। चजोरिति कुत्वम् पाक्यम्। पाणौ सृजेर्ण्यद्वाच्यः। * । पाणिभ्यां सृज्यते पाणिसर्ग्या रज्जुः। समव-

पूर्वाच ।*। समवसर्ग्या । नक्रादेः ।७।३।५६। कवर्गादेर्धातोः कुत्वं न । गर्ज्यम् । अजिव्र-ज्योश्च ।७।३।६०। समाजः, परिव्राजः । भुजन्युब्जौ पाण्युपतापयोः ।७।३।६१। भुज्यतेऽनेनेति भुजः पाणिः । हलश्चेतिघञ् न्युब्जन्त्यस्मिन्निति न्युब्जः । उपतापो रोगः। प्रयाजानुयाजौ यज्ञाङ्गे ।७।३।६२ पञ्च प्रयाजाः, त्रयोऽनुयागाः । अन्यत्र । प्रयागः अनुयागः । वञ्चेर्गतौ ।७।३।६३। वञ्च्यम् । ओक उचः के ।७।३।६४। उचेर्गुणकुत्वे निपात्येते के परे । ओकः । शकुन्तवृषलौ । ण्यआवश्यके ।७।३।६५। कुत्वं न अवश्यवाच्यम् । यजयाचरुचप्रवचर्चश्च ।७।३।६६। ण्ये कुत्वं न । याज्यम्, याच्यम् । रोच्यम्, प्रवाच्यम् । ऋच् अर्च्यम् । ऋदुपधत्वेऽपि अत एव ण्यत् । त्यजेश्च ।*। त्याज्यम् । वचोऽशब्दसंज्ञायाम् ।७।३।६७ वाच्यम् वाक्यमन्यत्र । प्रयोज्यनियोज्यौ शक्यार्थे ।७।३।६७। प्रयोक्तुं नियोक्तुं शक्य इत्यर्थः । भोज्यं भक्ष्ये ।७।३।६९। भोग्यमन्यत् । ण्यत्प्रकरणे लपिदभिभ्यांचेति वक्तव्यम् ।*। लाप्यः । दभिरनुदिष्टोऽपि वार्तिकबलात् स्वीकार्यः । दाभ्यः। ओरावश्यके । ३।१।१२५। लाव्यम्, पाव्यम् । आसुयुवपिरपित्रपिचमश्च । ३।१।१२६। आसाव्यम् । याव्यम्, वाप्यम् चाम्यम् । आनाय्योऽनित्ये ।३।१।१२७। दक्षिणाग्नि-विशेष एवेदम् ।*। आनाय्यो दाक्षिणाग्निरनित्यश्च । आनेयोऽन्यः । प्रणाय्योऽसंमतौ ।३।१।१२८। प्रणाय्यश्चोरः । प्रीत्यनर्हं इत्यर्थः । प्रणेयोऽन्यः । पाय्यसान्नाय्यनिकाय्य-धाय्या मानहविर्निवाससामिधेनीषु ।३।१।१२९। मीयतेऽनेन पाय्यं मानम् । सम्यङ्नीयतेहोमार्थं प्रतीतिसान्नाय्यं हविर्विशेषः । निचीयते धान्यादि-कमस्मिन्निति निकाय्यो निवासः । धीयतेऽनया समिदिति, धाय्या ऋक् । क्रतौ कुण्डपाय्यसंचाय्यौ ।३।१।१३०। कुण्डेन पीयतेऽस्मिन् सोमः इति कुण्डपाय्यः, संचीयतेऽसौ संचाय्यः क्रतुः । अग्नौ परिचाय्योपचाय्य समूह्याः ।३।१।१३१। अग्निधारणेऽर्थे स्थलविशेषे एते साधवः । अन्यत्र, परिचेयम् उपचेयम्, संवाह्यम् । चित्याग्निचित्ये च ।३।१।१३२। चित्योऽग्निः अग्नेश्चयनमग्निचित्या। प्रैषातिसर्गप्राप्तकालेषु कृत्याश्च ।३।३।१६३। त्वया गन्तव्यम्, गमनीयम्, गम्यम् । अर्हे कृत्यतृचश्च ।३।३।१६९। स्तुत्यः, स्तोता, स्तुतिकर्ता । भव्यगेयप्रवचनीयोपस्थानीयज-न्याप्लाव्यापात्या वा ।३।४।६८। एते कृत्यन्ताः कर्तरि वा निपात्यन्ते । पक्षे तयोरेति सकर्मकात्कर्मणि, अकर्मकात्तु भावे ज्ञेयाः । भवतीति भव्यः, भव्यमनेनेति वा । गेयः साम्नामयम् । गेयं साम अनेन वा । शकिलिङ्च ।३।३।१७२। चात्कृत्याः । वोढुं शक्यो वोढव्यः, वहनीयो वाह्यः । इति कृत्यप्रक्रिया ।

ण्वुल्तृचौ ।३।१।१३३। धातोरेतौ स्तः, कर्तरि कृदिति कर्त्रर्थे । कारकः, कर्ता । कारिका कर्त्री । कुटिता कोटकः विजइट । विजिता । दायकः । घातकः । नोदा·

तोपदेशस्येति न वृद्धिः । शमकः, दमकः । अनिटस्तु नियामकः । जनकः, वधकः । रधकः । जम्भकः । नेट्यलिटि रधेः । रधिता, रद्धा, । मस्जिनशोरिति नुम् । मङ्क्ता, नशिता नंष्टा । एषिता, एष्टा । सहिता, सोढा । पादाभ्यां ह्रियते पादहारकः । क्रमेः कर्तर्यात्मनेपदविषयात्कृत इडिनिषेधो वाच्यः, । * । प्रक्रान्ता । अनन्यभावो विषयशब्दः । तेन अनुपसर्गाद्वेति विकल्पार्हस्य न निषेधः । क्रमिता । तदर्हत्वमेव तद्विषयत्वम् । तेन क्रन्तेत्यपि केचित् । संजिगमिषिता, यङन्तात् ण्वुल् । अल्लोपस्य स्थानिवत्वान्न वृद्धिः । पापचकः । यङ्लुगन्तात्तु पापाचकः । **नन्दिग्रहिपचादिभ्यो ल्युणिन्यचः** ।३।१।१३४। नन्द्यादेर्ल्युः, ग्रहादेर्णिनिः, पचादेरचः । नन्दनः । जनार्दनः, मधुसूदनः, विभीषणः । लवणः । नन्द्यादिगणे निपातनाण्णत्वम् । ग्राही, स्थायी । विशयी । वृद्ध्यभावो निपातनात् । विषयी । षत्वमपि तथा परिभावी । परिभवी । पाक्षिको वृद्ध्यभावो निपात्यते । पचादिराकृतिगणः । पचः नदट् चोरट देवट् इत्यादयष्टितः । नदी, चोरी देवी । जारभरा, श्वपचा । अनयोः कर्मण्यण्प्राप्तः । न्यङ्क्वादिषु पाठात् श्वपाकोऽपि । चेक्रियः, नेन्यः । मरीमृजः । चरिचलिपतिवदीनां वा द्वित्वमच्याक्चाभ्यासस्येति वक्तव्यम् । * । चराचरः, चलाचलः, । पतापतः, । हन्तेर्घत्वं च । * । घत्वमभ्यासस्य, उत्तरस्य त्वभ्यासाच्चेति कुत्वम् । घनाघनः । पाटेर्णिलुक् चोक्च दीर्घश्चाभ्यासस्य । * । पाटूपटः । पक्षे । चरः, चलः । पतः, घनः, पाटः इत्यादि । रात्रेः कृतीति वा नुम् । रात्रिंचरः, रात्रिचरः । **इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः** ।३।१।१३५। क्षिपः, बुधः, कृशः । ज्ञः प्रियः । किरः । वासरूपविधिना ण्वुल्तृचावपि । क्षेपकः, क्षेप्ता । **आतश्चोपसर्गे** ।३।१।१३७। णस्यापवादः । सुग्लः, प्रज्ञः । **पाघ्राध्माधेट्दृशः शः** ।३।१।१३७। पिबः, जिघ्रः, धमः, धयः । पश्यः । घ्रः संज्ञायां न । * । व्याघ्रः । **अनुपसर्गाल्लिम्पविन्दधारिपारिवेद्युदेजिचेतिसातिसाहिभ्यश्च** ।३।१।१३८। शः स्यात् । लिम्पः, विन्दः । सातिः सुखार्थः सौत्रो हेतुमण्ण्यन्तः । सातयः । क्विपि । सात् परमात्मा । नौ लिम्पेर्वाच्यः । * । निलिम्पा देवाः । गवादिषु विन्देः संज्ञायाम् । * । गोविन्दः । अरविन्दम् । **ददातिदधात्योर्विभाषा** ।३।१।१३९। ददः दधः । पक्षे वक्ष्यमाणो णः । दायः धायः । अनुपसर्गादेव । प्रदः, प्रधः । **ज्वलतिकसन्तेभ्यो णः** ।३।१।१४०। ज्वलादिभ्यः कसन्तेभ्यश्च णः स्यात्, पक्षेऽच् । ज्वालः ज्वलः चालः चलः सोपसर्गात्तु । उज्ज्वलः । तनोतेरुपसंख्यानम् । * । अवतनोतीत्यवतानः । **श्याद्व्यधास्रुसंस्र्वतीणवसावहृलिहश्लिषश्वसश्च** ।३।१।१४१। एभ्यो नित्यं णः स्यात् । अवश्यायः । प्रतिश्यायः । दायः, धायः । व्याधः । आस्रावः, संस्रावः । अत्यायः । अवसायः, अवहारः । लेहः, श्लेषः, श्वासः । **दुन्योरनुपसर्गे** ।३।१।१४२। दुनोतीति दावः । दवतेस्तु पचाद्यच् । दवः । नायः । सोपसर्गे । प्रदवः, प्रणयः । **विभाषा ग्रहः** ।३।१।१४३। व्यवस्थितविभाषेयम् । तेन । जलचरे ग्राहः ।

ज्योतिषि ग्रहः । अवतेश्चेति काशिका । आवो अवः । **गेहे कः** । ३ । १ । १४४ । गृह्णाति धान्यादिकमिति गृहम् । **शिल्पिनि ष्वुन्** । ३ । १ । १४५ । नृतिखनिरञ्जिभ्य एव । * । नर्तकः, नर्तकी । खनकः, खनकी । असि अके अने च रञ्जेर्नलोपो वाच्यः । * । रजकः रजकी । भाष्यमते । ष्वुन् । टाप् । रजिका पुंयोगे रजकी । **गस्थकन्** । ३ । १ । १४६ । गाथकः । **ण्युट् च** । ३ । १ । १४७ । गायनः, गायनी । **हश्च व्रीहिकालयोः** । ३ । १ । १४८ । जहात्युदकमिति हायनो व्रीहिः । जहाति, जिहीते वा भावानिति हायनो वर्षम् । **प्रुसृल्वः समभिहारे वुन्** । ३ । १ । १४९ । प्रवकः, सरकः, लवकः । **आशिषि च** । ३ । १ । १५० । जीवतादिति जीवकः । नन्दतादिति नन्दकः । **कर्मण्यण्** । ३ । २ । १ । कर्मण्युपपदे धातोरण् स्यात्, उपपदसमासः । कुम्भं करोतीति कुम्भकारः । शीलिकामिभक्ष्याचरिभ्यो णः । * । मांसशीला, मांसकामा, मांसभक्षा । कल्याणाचारा । ईक्षिक्षमिभ्यां च । * । सुखप्रतीक्षा बहुक्षामा । शेषत्वविवक्षायां गङ्गाधरः भूधरः **ह्वावामश्च** । ३ । २ । २ । अण् स्यात् । स्वर्गह्वायः, तन्तुवायः । धान्यमायः । **आतोऽनुपसर्गे कः** । ३ । २ । ३ । कर्मण्युपपदे कः स्यात्, अणोऽपवादः । गोदः, पार्ष्णित्रम् । कविधौ सर्वत्र संप्रसारणिभ्यो डः । * । ब्रह्म जिनातीति ब्रह्मज्यः सर्वत्र ग्रहणादातश्चोपसर्गे ड एव । आह्वः, प्रह्वः । **सुपि स्थः** । ३ । २ । ४ । सुपीति योगो विभज्यते । सुप्युपपदे आदन्तात्कः स्यात् । द्विपः, समस्थः, विषमस्थः । सुपि तिष्ठतेः कः स्यात् । भावे सामर्थ्याद्भावे । आखूनामुत्थानम् । आखूत्थः । **प्रष्ठोऽग्रगामिनि** । ८ । ३ । ९२ प्रष्ठो गौः । **अम्बाम्बगोभूमिसव्यापद्वित्रिकुशेकुशङ्क्वङ्गुमञ्जिपुञ्जिपरमेबर्हिर्दिव्यग्निभ्यः स्थः** । ८ । ३ । ९७ एभ्यः स्थस्य सस्य षः स्यात् । द्विष्ठः, त्रिष्ठः । **तुन्दशोकयोः परिमृजापनुदोः** । ३ । २ । ५ । कः स्यात् । आलस्यसुखाहरणयोरिति वक्तव्यम् । * । तुन्दं परिमार्ष्टीति तुन्दपरिमृजोऽलसः । शोकापनुदः, सुखस्याहर्ता । अन्यत्र तुन्दपरिमार्जः, शोकापनोदः । कप्रकरणे मूलविभुजादिभ्य उपसंख्यानम् । * । मूलविभुजो रथः । आकृतिगणोऽयम् । महीध्रः, कुध्रः गिलः । **प्रे दाज्ञः** । ३ । २ । ६ । प्रोपसृष्टात्कर्मण्युपपदे आभ्यां कः स्यादणोऽपवादः । सर्वप्रदः, पथिप्रज्ञः । **समि ख्यः** । ३ । २ । ७ । गोसंख्यः । **गापोष्टक्** । ३ । २ । ८ । आभ्यां टक् स्यात्कर्मण्युपपदे । सामगः, सामगी । पिबतेः सुराशीध्वोरिति वाच्यम् । * । सुरापी, शीधुपी । रक्षणे पाधातोः सुरापा **हरतेरनुद्यमनेऽच्** ।३।२।९। अंशहरः । शक्तिलाङ्गलाङ्कुशतोमरयष्टिघटघटीधनुष्षु ग्रहेरुपसंख्यानम् । * । शक्तिग्रहः, लाङ्गलग्रहः । सूत्रे च धार्येऽर्थे सूत्रग्रहः । अन्यत्र सूत्रग्राहः । **वयसि च** । ३ । २ । १० । कवचहरः कुमारः । **आङि ताच्छील्ये** । ३ । २ । ११ । पुष्पाहरः । **अर्हः** ।३।२।१२।

अर्हतेरच् स्यात्कर्मण्युपपदे । अणोऽपवादः । पूजार्हा ब्राह्मणी । **स्तम्बकर्णयोरमिजपोः** ।३।२।१३। हस्तिसूचकयोरिति वक्तव्यम् । * । स्तम्बेरमो हस्ती । कर्णेजपः सूचकः । **शमिधातोः संज्ञायाम्** ।३।२।१४। शम्भवः । शंवदः । बाधकबाधनार्थं धातुग्रहणम् तेन कृञो हेत्वादिषु टो न भवति । शङ्करा परिव्राजिका । तच्छीला । **अधिकरणे शेतेः** ।३।२।१५। खशयः । पार्श्वादिषूपसंख्यानम् । * । पार्श्वशयः । पृष्ठशयः । उदरशयः । उत्तानादिषु कर्तृषु । * । उत्तानः शेते उत्तानशयः । अवमूर्धशयः । गिरौडश्छन्दसि । * । गिरिशः । **चरेष्टः** ।३।२।१६ कुरुचरः, कुरुचरी । **भिक्षासेनादायेषु च** ।३।२।१७। भिक्षां चरतीति भिक्षाचरः, सेनाचरः । आदायचरः । **पुरोऽग्रतोऽग्रेषु सर्तेः** ।३।२।१८। पुरस्सरः । अग्रतः सरः । अग्रम् अग्रेण अग्रे वा सरतीति अग्रेसरः । एदन्तत्वमपि निपात्यते । **पूर्वे कर्तरि** ३।२।१०। सर्तेष्टः स्यात् । पूर्वः सरतीति पूर्वसरः । अन्यत्र पूवसारः । **कृञो हेतुताच्छील्यानुलोम्येषु** । ३।२।२० एषु द्योत्येषु करोतेष्टः स्यात् । अतः कृक-मीति सः । यशस्करी विद्या । वचनकरः । श्राद्धकरः । **दिवाविभानिशाप्रभाभास्करान्तानन्तादिबहुनान्दीकिंलिपिलिबिबलिभक्तिकर्तृचित्रक्षेत्रसंख्याजङ्घाबाह्वहर्यत्तद्धनुररुष्षु** ।३।२।२१। एषु कृञष्टः स्याद् अहेत्वादावपि । दिवाकरः, बिभाकरः, निशाकरः । करका-दित्वात्सः । भास्करः अहस्करः । बहुशब्दो वैपुल्यार्थः । संख्यायाः पृथग्ग्रहणात् संख्या-एककरः । द्विकरः नित्यं समासेऽनुत्तरपदस्थस्येति षत्वम् । धनुष्करः । अरुष्करः । किंयत्तद्बहुषु कृञोऽज्विधानम् । * । किंकरा । यत्करा । हेत्वादौ टं बाधित्वा परत्वादच् पुंयोगे ङीष् किंकरी । **कर्मणि भृतौ** ।३।२।२२। कर्मकरो भृतकः कर्मकारोऽन्यः । **न शब्दश्लोककलहगाथावैरचाटुसूत्रमन्त्रपदेषु** ।३।२।२३ एषु कृञष्टो न । हेत्वादिषु प्राप्तः स प्रतिषिध्यते । शब्दकारः । इत्यादि । **स्तम्बशकृतोरिन्** ३।२।२४। व्रीहिवत्सयोरिति वक्तव्यम् । * । स्तम्बकरिर्व्रीहिः । शकृत्करिर्वत्सः । **हरतेर्दृतिनाथयोः पशौ** । ।३।२।२५। दृतिहरिः नाथहरिः । **फलेग्रहिरात्मम्भरिश्च** ।३।२।२६। फलेग्रहिः । एदन्तत्वमिन् प्रत्ययश्च निपात्यते आत्मम्भरिः । भृञ इन् । आत्मनो मुडागमश्च । चान्द्रास्तु आत्मोदरकुक्षिष्विति पेठुः । 'ज्योत्स्नाकरम्भमुदरम्भरयश्चकोराः,' इति मुरारिः । **एजेः खश्** ३।२।२८। **अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम्** । ।६।३।६७। एभ्यो मुम् स्यात्, खिदन्ते उत्तरपदे न त्वव्ययस्य । शित्वाच्छबादि जनमेजयः । वातशुनीतिलशर्धेष्वजधेट्तुद्जहातिभ्यः खश उपसंख्यानम् । * । वातमजा मृगाः । **खित्यनव्ययस्य** ।६।३।६६। खिदन्ते परे पूर्वपदस्य ह्रस्वः स्यान्नत्वव्ययस्य ततो मुम् । शुनिन्धयः तिलन्तुदः । शर्धञ्जहा माषाः । **नासिकास्तनयोर्ध्माधेटोः** ।३।२।२९। स्तने धेटो नासिकायां ध्मश्चेति वाच्यम् । * । स्तनन्धयः, धेटष्टित्वात्, स्तनन्धयी । नासिकन्धमः । चाद्धेटः । नासिकन्धयः । **नाडीमुष्ट्योश्च** ।३।२।३०। ध्माधेटोः खश् । यथासंख्यं नेष्यते । नाडिन्धमः, नाडिन्धयः । मुष्टिन्धमः, मुष्टिन्धयः । घटीखारीखरीषूपसंख्यानम् । * । घटिन्धमः, घटिन्धयः । इत्यादि । **उदि कूले रुजिवहोः** ३।२।३१

कूलमुद्रुजः, कूलमुद्वहः। वहाभ्रे लिहः ।३।२।३२। वहंलिहो गौः। अभ्रंलिहो वायुः। परिमाणे पचः ३।२।३३। प्रस्थम्पचः, खारिम्पचः। मितनखे च ३।२।३४। मितम्पचा, नखम्पचा यवागूः। पचिरत्र तापवाची। विध्वरुषोस्तुदः ३।२।३५। विधुन्तुदः, अरुन्तुदः असूर्यललाटयोर्दृशितपोः ३।२।३६। असूर्यमित्यसमर्थसमासः। दृशिना नञः संबन्धात्। सूर्यं न पश्यन्तीति असूर्यंपश्या राजदाराः। ललाटंतपः सूर्यः। उग्रम्पश्येरम्मदपाणिन्धमाश्च ।३।२।३७ एते निपात्यन्ते, उग्रम्पश्यः। इरा उदकं तेन माद्यति दीप्यते अविन्धनत्वादिति इरम्मदो मेघज्योतिः। पाणयो ध्मायन्तेऽस्मिन्निति पाणिन्धमोऽध्वा। अन्धकाराद्यावृत इत्यर्थः,। प्रियवशे वदः खच् ३।२।३८। प्रियंवदः, वशंवदः। गमेः सुपि वाच्यः।*। मितङ्गमो हस्ती। विहायसो विह इति वाच्यम्।*। खच डिद्वा वाच्यः।*। विहङ्गः, विहङ्गमः। भुजङ्गः, भुजङ्गमः। द्विषत्परयोस्तापेः ।३।२।३९। खचि ह्रस्वः।६।४।९४। खच्परेणौ उपधाया ह्रस्वः स्यात्। द्विषन्तं तापयतीति द्विषंतपः। परन्तपः। घटघटीग्रहणाल्लिङ्गविशिष्टपरिभाषाया अनित्यत्वान्नेह। द्विषतीतापः। वाचि यमो व्रते।३।२।४०। वाचंयमपुरन्दरौ च।६।३।६९। अनयोरमन्तत्वं निपात्यते। वाचंयमो मौनव्रती। अन्यत्र वाग्यामी। पूःसर्वयोर्दारिसहोः।३।२।४१। पुरंदरः। सर्वंसहः। भगे च दारेरिति काशिका।*। भगन्दरः। सर्वकूलाभ्रकरीषेषु कषः।३।२।४२। सर्वंकषः, खलः, कूलंकषा। अभ्रंकषः, करीषंकषा। मेघर्तिभयेषु कृञः।३।२।४३। मेघंकरः, ऋतिंकरः, भयंकरः। तदन्तविधिः, अभयंकरः। क्षेमप्रियमद्रेऽण् च।३।२।४४। चात् खच्। क्षेमङ्करः, क्षेमकारः,। प्रियंकरः, प्रियकारः। मद्रङ्करः, मद्रकारः। 'अल्पारम्भाः क्षेमकराः,' इत्यादौ कर्मणः शेषत्वविवक्षायां पचाद्यच्। आशिते भुवः करणभावयोः।३।२।४५। आशितो भवत्यनेनेति आशितम्भवः, आशितस्य भवनं आशितंभवः। संज्ञायां भृतॄवृजिधारिसहितपिदमः।३।२।४६। विश्वम्भरः, विश्वम्भरा। रथन्तरं साम। पतिंवरा कन्या। शत्रुञ्जयो हस्ती। युगन्धरः पर्वतः। शत्रुंसहः, शत्रुंतपः। शत्रुंदमः। गमश्च।३।२।४७। सुतंगमः। अन्तात्यन्ताध्वदूरपारसर्वानन्तेषु डः।३।२।४८। अन्तं गच्छतीति अन्तगः। इत्यादि। सर्वत्रपन्नयोरुपसंख्यानम्।*। सर्वत्रगः, पन्नगः। उरसो लोपश्च।*। उरगः। सुदुरोरधिकरणे।*। सुगः, दुर्गः। अन्यत्रापि दृश्यते इति वक्तव्यम्।*। ग्रामगः। डे च विहायसो विहादेशो वक्तव्यः।*। विहगः। आशिषि हनः।३।२।४९। शत्रुं वध्यात् शत्रुहः। अन्यत्र शत्रुघातः। दाराबाहनोऽणन्तस्य च टः संज्ञायाम्।*। दार्वाघाटः चारौ। वा।*। चार्वाघाटः,। कर्मणि समि च।*। वर्णान् संहन्तीति वर्णसंघाटः, वर्णसंघातः।

पदसंघाटः, पदसंघातः । अपे क्लेशतमसोः ।३।२।५०। अपपूर्वाद् हन्तेर्डः स्यात् । अनाशीरर्थमिदम् । क्लेशापहः पुत्रः। तमोपहः सूर्यः । कुमारशीर्षयोर्णिनिः ।३।२।५१। कुमारघाती, शीर्षघाती, । लक्षणे जायापत्योष्टक् ।३।२।५२। हन्तेष्टक् स्याल्लक्षणवति कर्तरि । जायाघ्नो ना । पतिघ्नी स्त्री । अमनुष्यकर्तृके च ।३।२।५३। जायाघ्नस्तिलकालकः । पतिघ्नी पाणिरेखा । पित्तघ्नं घृतम् । शक्तौ हस्तिकपाटयोः ।३।२।५४। मनुष्यकर्तृकार्थमिदम् । हस्तिघ्नो ना, कपाटघ्नश्चोरः । पाणिघताडघौ शिल्पिनि ।३।२।५५। हन्तेष्टक् टिलोपो घत्वं च निपात्यते । पाणिताडयोरुपपदयोः, पाणिघः, ताडघः । राजघ उपसंख्यानम् ।*। राजघः । आढ्यसुभगस्थूलपलितनग्नान्धप्रियेषु च्व्यर्थेष्वच्वौ कृञः करणे ख्युन् ।३।२।५६। अनाढ्यमाढ्यं कुर्वन्ति अनेनेति आढ्यंकरणम् । च्व्यन्ते कर्मणि तु । आढ्यीकुर्वन्त्यनेनेत्येव । कर्तरि भुवः खिष्णुच्खुकञौ ।३।२।५७। आढ्यादिषु च्व्यर्थेष्वच्व्यन्तेषु भवतेरेतौ स्तः । अनाढ्य आढ्यो भवतीति आढ्यम्भविष्णुः आढ्यंभावुकः । स्पृशोनुदके क्विन् । घृतस्पृक् । मन्त्रस्पृक् । त्यदादिषु दृशोऽनालोचने कञ् च । समानान्ययोश्चेति वाच्यम् ।*। सदृक्, सदृशः अन्यादृक्, अन्यादृशः । क्सोऽपि वाच्यः ।*। तादृक्षः, सदृक्षः, अन्यादृक्षः । सत्सूद्विषद्रुहदुहयुजविदभिदच्छिदजनीराजामुपसर्गेऽपि क्विप् ।३।२।६१। एभ्यः क्विप्स्यादुपसर्गे सत्यसति सुप्युपपदे । द्युषत्, उपनिषद् । अण्डसूः, प्रसूः गोधुक्, प्रधुक् । वेदविद्, निविदित्यादि । अग्रग्रामाभ्यां नयतेर्णो वाच्यः ।*। अग्रणीः । ग्रामणीः । भजो ण्विः ।३।२।६२। अंशभाक्, प्रभाक् । अदोऽनन्ने ।३।२।६८। विट् स्यात् । आममत्ति आमात्, स स्यात् । क्रव्ये च ।३।२।६९। क्रव्यात् । दुहः कब्घश्च ।३।२।७०। कामदुघा । अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते।३।२।७५। मनिन् क्वनिप् वनिप् विच् एते प्रत्यया धातोः स्युः । नेड्वशि कृति ।३।२।८। शृ-सुशर्मा । प्रातरित्वा । विड्वनोरनुनासिकस्यात्।६।४।४१। विजावा। ओणृ अवावा । विच् सुगण् क्विप्च।३।२।७६। उखास्रत्, पर्णध्वत्, वाहभ्रट्। अन्तः।८।४।२०। पदान्तस्यानितेर्नस्य णत्वं स्यादुपसर्गस्थान्निमित्तात्परश्चेत्। हेप्राण। शास इदित्तीत्वम् । मित्राणि शास्तीति मित्रशीः। आशासः क्वौ उपधाया इत्वं वाच्यम्।*। आशीः। इत्वोत्वे। गीः, पूः। इस्मन्त्रन् क्विषु च।६।४।९७। एषु छादेर्ह्रस्वं स्यात्। तनुच्छत्। अनुनासिकस्य दीर्घः। मोनो धातोः। प्रतान्। प्रशान्। छ्वोरित्यूठ्। अक्षद्यूः, ज्वरत्वरेत्यूठ्। जूः। जूरौ, जूरः तूः, स्रूः। जनानवतीति। जनौः, जनावौ। मूर्च्छा-मूः। धुर्वी-धूः। गमः क्वौ।६।४।४०। अनुनासिकलोपः स्यात्। अङ्गगत्। गमादीनामिति वक्तव्यम्।*। परीतत्। संयत्।

सुनुत् । ऊङ् च गमादीनामिति वक्तव्यम् । लोपः अग्रेगूः, अग्रेभ्रूः । स्थः क च ३।२।७७। चात् क्विप् । शंस्थः, शंस्थाः । सुप्यजातौ णिनिस्ताच्छील्ये । ३ । २ । ७८ । उष्णभोजी, । शीतभोजी । साधुकारिण्युपसंख्यानम् । * । ब्रह्मणि वदः । * । अताच्छील्यार्थम् । साधुदायी । ब्रह्मवादी । कर्तर्युपमाने । ३ । २ । ७९ । णिनिः स्यात् । उपपदार्थः कर्ता प्रत्ययार्थस्य कर्तुरुपमानम् । उष्ट्र इव क्रोशतीति उष्ट्रक्रोशी । ध्वाङ्क्षरावी । अताच्छील्यार्थं जात्यर्थं च सूत्रम् । व्रते । ३ । २ । ८० । स्थण्डिलशायी । बहुलमाभीक्ष्ण्ये । ३ । २ । ८१ । क्षीरपायिण उशीनराः । मनः । ३ । २ । ८२ । दर्शनीयमानी आत्ममाने खश्च । ३।२।८३। स्वकर्मके मनने वर्तमानान्मन्यतेः सुपि खश् स्याच्चाण्णिनिः पण्डितमात्मानं मन्यते इति पण्डितम्मन्यः, पण्डितमानी । इच एकाचोऽम्प्रत्ययवच्च । ६ । ३ । ६८ । इजन्तादेकाचोऽम् स्यात्, स च स्वाद्यम्वत्खिदन्ते परे । औतोऽम्शसोः । गाम्मन्यः । वाम्शसोः । स्त्रियम्मन्यः, स्त्रीम्मन्यः । नरम्मन्यः, भुवम्मन्यः । श्रीमन्यं कुलम् । भाष्यमते श्रीशब्दस्य ह्रस्वो मुममोरभावश्च । भूते । ३ । २ । ८४ । अधिकारोऽयम् । करणे यजः । ३ । २ । ८५ । करणे उपपदे भूतार्थाद्यजेर्णिनिः स्यात् कर्तरि । सोमेनेष्टवान् सोमयाजी । अग्निष्टोमयाजी । कर्मणि हनः । ३।२।८६। पितृव्यघाती ब्रह्मभ्रूणवृत्रेषु क्विप् । ३।२।८७। ब्रह्महा, भ्रूणहा, वृत्रहा । सुकर्मपापमन्त्रपुण्येषु कृञः ३।२।८९। सुकृत् । कर्मकृदित्यादि । क्विबेव, कृञ एव भूत एवेति त्रिविधो नियम इति काशिका । सोमे सुञः । ३ । २ । ९० । सोमसुत् । अग्नौ चेः । ३ । २ । ९१ । अग्निचित् कर्मण्यग्न्याख्यायाम् । ३।२।९२। कर्मण्युपपदे कर्मण्येव कारके चिनोतेः क्विप्स्यात् अग्न्याधारस्थलविशेषस्याख्यायाम् । श्येन इव चितः । श्येनचित् । कर्मणीनिविक्रियः ३।२।९३। कर्मण्युपपदे विपूर्वात् णावेरिनिः । कुत्सितग्रहणं कर्तव्यम् । * । सोमविक्रयी । घृतविक्रयी । दृशेः क्वनिप् । ३।२।९४। पारं दृष्टवान्, पारदृश्वा राजनि युधि कृञः । ३।२ । ९५ । राजयुध्वा, राजकृत्वा । सहे च । ३ । २ । ९६ । सहयुध्वा, सहकृत्वा । सप्तम्यां जनेर्डः । ३ । २ । ९७ । सरसिजम् । मन्दुरायां जातो मन्दुरजः । ङ्याप्योरिति ह्रस्वः । पञ्चम्यामजातौ । ३।२।९८। संस्कारजः । अदृष्टजः । उपसर्गे च संज्ञायाम् । ३।२।९९। प्रजा स्यात्सन्ततौ जने । अनौ कर्मणि । ३।२।१००। अनुपूर्वाज्जनेः कर्मण्युपपदे डः स्यात् । पुमनुजा । अन्येष्वपि दृश्यते । ३।२।१०१। जनेर्डः स्यात् । अजः । द्विजः । ब्राह्मणजः । अपिशब्दः सर्वोपाधिव्यभिचारार्थः । तेन धात्वन्तरादपि, कारकान्तरेऽप्यपि क्वचित् । परितः खाता परिखा । क्तक्तवतू निष्ठा । १।१।२६। एतौ निष्ठासंज्ञौ स्तः । निष्ठा । ३।२।१०२। भूतार्थवृत्तेर्धातोर्निष्ठा स्यात् । तत्र तयोरेवेति भावकर्मणोः क्तः कर्तरि क्तवतुः । उकावितौ । स्नातं मया स्तुतस्त्वया विष्णुः । विष्णुर्विश्वं कृतवान् । निष्ठायामण्यदर्थे । ६।४।६०। ण्यदर्थो भावकर्मणी ततोऽन्यत्र नि-

ष्ठायां क्षियो दीर्घः स्यात् । क्षियो दीर्घात् । ८ । २ । ४६ । दीर्घात्क्षियो निष्ठातस्य नः स्यात् । क्षीणवान् । भावकर्मणोस्तु क्षितः कामो मया । श्र्युकः क्किति । श्रितः, श्रितवान् । ऊर्णोतेर्गुणवद्भावो वाच्यः । * । ऊर्णुतः । नुतः । वृतः । रदाभ्यांनिष्ठातो नः पूर्वस्य च दः । ८ । २ । ४२ । शॄ ऋत इत् । रपरः । णत्वम् । शीर्णः । बहिरङ्गत्वेन वृद्धेरसिद्धत्वान्नेह, कीर्तिः । छिन्नः, भिन्नः, त्वा । संयोगादेरातो धातोर्यण्वतः । ८ । २ । ४३ । निष्ठातस्य नः स्यात् । द्राणः । स्त्यानः । ग्लानः । ल्वादिभ्यश्च । ८ । २ । ४४ । प्राग्वत् । लूनः । ज्या–ग्रहिज्या । जीनः । दुग्वोर्दीर्घश्च । * । दूनः गूनः । पूञो विनाशे । * । पूना यवाः । पूतमन्यत् सिनोतेर्ग्रासकर्मकर्तृकस्य । * । सिनो ग्रासः । ओदितश्च । ८ । २ । ४५ । भुग्नः । टुओश्वि उच्छूनः । प्रहीणः स्वादय ओदित इत्युक्तम् । सूनः, सूनवान् । उड्डीनः । द्रवमूर्तिस्पर्शयोः श्यः । ६ । १ । २४ । द्रवस्य मूर्तौ–काठिन्ये, स्पर्शे चार्थे श्यैङः संप्रसारणं स्यान्निष्ठायाम् । श्योऽस्पर्शे । ८ । २ । ४७ । निष्ठातस्य नः स्यात् । हल इति दीर्घः । घृतम् । संश्यानो वृश्चिकः अत्र नत्वमेव । प्राग्वाद्यभावान्न संप्रसारणम् । प्रतेश्च । ६ । १ । २५ प्रतिपूर्वस्य श्यः संप्रसारणं स्यान्निष्ठायाम् । प्रतिशीनः । विभाषाऽभ्यवपूर्वस्य । ६ । १ । २६ । अभिशीनम् अभिश्यानम् । अवशीनोऽवश्यानो वा वृश्चिकः । व्यवस्थितविभाषाश्रयणान्नेह । समवश्यानः । अञ्चोऽनपादाने । ८ । २ । ४८ । तस्य नः स्यात् । यस्य विभाषा । ७ । २ । १५ । यस्य क्वचिद्विभाषयेड् विहितस्ततो निष्ठया इण् न स्यात् । समक्नः । नत्वस्यासिद्धत्वाद्व्रश्चेति षत्वे प्राप्ते । निष्ठादेशः षत्वस्वरप्रत्ययेड्विधिषु सिद्धो वाच्यः । * । वृक्णः । वृक्णवान् । परिस्पन्दः प्राच्यभरतेषु । ८ । ३ । ७५ । परिस्कन्दः । अन्यत्र परिष्कन्दः, परिस्कन्दः । स्तम्भेरितिषत्वे प्राप्ते । प्रतिस्तब्धनिस्तब्धौ च । ८ । २ । ११४ । दिवोऽविजिगीषायाम् । ८ । २ । ४९ । दिवो निष्ठातस्य न स्यादविजिगीषायाम् । द्यूनः द्यूतमन्यत् । निर्वाणोऽवाते । ८ । २ । ५० । निर्वाणोऽग्निर्मुनिर्वा । वातेतु । निर्वातो वातः । शुषः कः । ८ । २ । ५१ शुष्कः पचोवः । ८ । २ । ५२ । पक्वः । क्षायो मः । ८ । २ । ५३ । स्त्यः प्रपूर्वस्य । ६ । २ । २३ । प्रात्स्त्यः संप्रसारणं स्यान्निष्ठायाम् । प्रस्त्योऽन्यतरस्याम् । ८ । २ । ५४ । निष्ठातस्य मो वा स्यात् । प्रस्तीमः, प्रस्तीतः । अनुपसर्गात्फुल्लक्षीवकृशोल्लाघाः । ८।२।५५। निष्ठातस्य लत्वं निपात्यते । ञिफला फुल्लः । क्तवत्वेकदेशस्यापीदं निपातनमिष्यते फुल्लवान् । क्षीबादिषु तु क्तप्रत्ययस्यैव तलोपः । तस्यासिद्धत्वात्प्राप्तस्येटोऽभावश्च निपात्यते । क्षीबो मत्तः । कृशस्तनुः । उल्लाघो नीरोगः । सोपसर्गे तु । ओदितश्च । ७ । २ । १४ । आकारेतो निष्ठाया इण्न स्यात् । ति च । ७ । ४ । ८९ । चरफलोरत उत्स्यात् तादौ किति । प्रफुल्तः । प्रक्षीबितः प्रकृशितः प्रोल्लाघितः ।

उत्फुल्लसंफुल्लयोरुपसंख्यानम् । * । नुदविदोन्दत्राघ्राह्रीभ्योऽन्यतरस्याम् । ८ । २ । ५७ । एभ्यो निष्ठातस्य नो वा स्यात् । नुन्नः, नुत्तः । उन्दिना साहचर्यात् रौधादिकस्यैव विदो-ग्रहणम् । विन्नः, वित्तः । वेत्तेस्तु विदितः । विद्यतेर्विन्नः । श्वीदितो निष्ठायाम् । ७ । २ । १४ । इण्न स्यात् उन्नः, उत्तः । त्राणः, त्रातः । घ्राणः, घ्रातः । ह्रीणः, ह्रीतः । नध्याख्यापॄमूर्छिमदाम् । ८ । २ । ५७ । नत्वं न स्यात् ध्यातः ख्यातः । पूर्तः । मूर्तः । मत्तः । वित्तो भोगप्रत्यययोः । ८ । २ । ५८ । विन्दतेर्निष्ठान्तस्य निपातोऽयम् । वित्तं धनम् । वित्तः पुरुषः । भित्तं शकलम् । ८ । २ । ५९ । भिन्नमन्यत् । ऋणमाधमर्ण्ये । ८ । २ । ६० । ऋतमन्यत् । स्फायः स्फी निष्ठायाम् । ६ । १ । २२ । स्फीतः । इण् निष्ठायाम् । ७ । २ । ४७ । निरः कुषो निष्ठाया इट स्यात् । यस्य विभाषेति निषेधे प्राप्ते पुनर्विधिः । निष्कुषितः । वसतिक्षुधोरिट् ७ । २ । ५२ । क्त्वानिष्ठयोर्नित्यमिट् । उषितः । क्षुधितः । अञ्चेः पूजायाम् । ७।२।५३। पूर्ववत् । अञ्चितः । गतौ तु । अक्तः । लुभोऽविमोहने । ७ । २ । ५४ । लुभितः । गार्ध्ये तु लुब्धः । क्लिशः क्त्वानिष्ठयोः । ७ । २ । ५० । इड् वा स्यात् । क्लिशितः क्लिष्टः, । पूङश्च । ७ । २ । ५१ । पूङः क्त्वा च । १ । २ । २२ । पूङः क्त्वा निष्ठा च सेट् किन्न स्यात् । पवितः, पूतः । निष्ठा शीङ् स्विदिमिदि क्ष्विदिधृषः । १ । २ । १९ । एभ्यः सेण्निष्ठा किन्न स्यात् । शयितः, शयितवान् । सानुबन्धत्वाद् यङ्लुकि न । शेशियतः, शेशियतवान् । आदिकर्मणि निष्ठा वक्तव्या । * । आदिकर्मणि क्तः कर्तरि च । ३ । ४ । ७१ । चाद्भावकर्मणोः । विभाषा भावादिकर्मणोः । ७ । २ । १७ । भावे आदिकर्मणि चादितो निष्ठाया इड् वा स्यात् प्रस्वेदितश्चैत्रः । पक्षे प्रस्विन्नः । प्रस्वेदितम्, प्रस्विन्नं तेन । प्रमेदितः, प्रमेदितवान् । प्रक्ष्वेदितः । प्रधर्षितः । धर्षितं तेन । मृषस्तितिक्षायाम् । १ । २ । २० । मर्षितः, मर्षितवान् । अन्यत्र अपमृषितं वाक्यम् । अविस्पष्टमित्यर्थः । उदुपधाद् भावादिकर्मणोरन्यतरस्याम् । १ । २ । २१ । सेण्निष्ठा वा किन्न स्यात् । द्युतितम्, द्योतितम् । मुदितम्, मोदितम् । प्रद्युतितम्, प्रद्योतितम् । शब्विकरणेभ्य एवेष्यते । * । नेह-गुध्यतेर्गुधितम् । निष्ठायां सेटि । ६ । ४ । ५२ । णेर्लोपः स्यात् । भावितः, भावितवान् । श्वीदित इति नेट् । संप्रसारणम् । शूनः । गुहू गूढः । वनु—वतः तनु—ततः । पतेः सनि वेट् क्रत्वादिडभावे प्राप्ते द्वितीयाश्रितेति सूत्रे निपातनादिट् । पतितः । यस्य विभाषेत्यत्र एकाच इत्येव । दरिद्रितः । क्षुब्धस्वान्तध्वान्तलग्नम्लिष्टविरिब्धफाण्टबाढानि मन्थमनस्तमःसक्ताविस्पष्टस्वरानायासभृशेषु । ७ । २ । १८ । क्षुब्धादीन्यष्टावनिट्कानि निपात्यन्ते समुदायेन मन्थादिषु वाच्येषु । मन्थो मन्थनदण्डः । क्षुब्धो मन्थश्चेत् । स्वान्तं मनः । ध्वान्तं तमः । लग्नं

सक्तम् । निष्ठानत्वमपि निपातनात् । म्लिष्टम् अविस्पष्टम् । विरिब्धः स्वरः । म्लेच्छरेभृ अनयोरुपधाया इत्वमपि निपात्यते। फाण्टमनायाससाध्यः कषायविशेषः बाढं भृशम् । अन्यत्र क्षुभितम्, ध्वनितमित्यादि धृषिशसी वैयात्ये । ७ । २ । १९ । एतौ निष्ठायामविनये एवानिटौ स्तः । धृष्टो विशस्तः । अन्यत्र धर्षितः । विशसितः । माधवस्तु भावादिकर्मणोरवैयात्ये विकल्पमाह । (धृष्टम्, धर्षितम्, दृढः स्थूल बलयोः । ७ । २ । २० । दृह दृहि वृद्धौ । क्तस्येडभावः, ढत्वम्, हस्य लोपः । इदितो नलोपश्च निपात्यते । अन्यत्र । दृहितः, दृंहितः । प्रभौ परिवृढः । ७ । २ । २१ । प्राग्वत् । परिवृहितः, परिवृंहितोऽन्यः । कृच्छ्रगहनयोः कषः । ७ । २ । २२ । इण् न स्यात् । कष्टम्—दुःखं, तत्कारणं च । कष्टो मोहः, कष्टं शास्त्रम् । कषितमन्यत् । घुषिरविशब्दने । ७ । २ । २३ । प्राग्वत् । घुष्टा रज्जुः । अन्यत्र, घुषितं वाक्यम् अर्देः संनिविभ्यः । ७ । २ । २४ । निष्ठाया इण्न स्यात् । समर्णः । न्यर्णः । व्यर्णः । अर्दितोऽन्यः । अभेश्चाविदूर्ये । ७ । २ । २५ । अभ्यर्णम्—आसन्नम् । अभ्यर्दितमन्यत् णेरध्ययने वृत्तम् । ७ । २ । २६ । ण्यन्तादृवृतेः क्तस्येडभावो णिलुक् चाधीयमानेऽर्थे । वृत्तम्–छन्दः छात्रेण संपादितम् । अन्यत्र वर्तिता रज्जुः । शृतं पाके । ६ । १ । २७ । श्रातिश्रपयत्योः क्ते शृभावो निपात्यते । क्षीरहविषोः पाके । शृतं क्षीरम् । स्वयमेव विक्लिन्नं पक्वं वा । अन्यत्र श्राणं श्रपितं वा । वा दान्तशान्तपूर्णदस्तस्पष्टच्छन्नज्ञप्ताः । २ । २७ । एते ण्यिचि निष्ठान्ता वा निपात्यन्ते । पक्षे दमितः, शमितः, छादितः इत्यादि । रुष्यमत्वरसंघुषाऽऽस्वनाम् । ७ । २ । २८ । एभ्यो निष्ठायामिड्वा स्यात् । रुषितः, रुष्टः । अमितः, आन्तः । त्वरितः, तूर्णः । हृषेर्लोमसु । ७ । २ । २९ । हृषितं, हृष्टं लोम । विस्मित प्रतिघातयोश्च । * । हृषितो हृष्टो वा मैत्रः । अपचितश्च । ७।२।३० । चायतेर्वा निपातोऽयम् । अपचितः, अपचायितः । प्यायः पी । ६ । १ । २८ वा स्यान्निष्ठायाम् । व्यवस्थितविभाषेयम् । तेन स्वाङ्गे नित्यम् । पीनं मुखम् । अन्यत्र प्यानः, पीनः । स्वेदः । सोपसर्गस्य न । प्रप्यानः । आङ् पूर्वस्यान्धूधसोः स्यादेव । आपीनोऽन्धुः । आपीनमूधः ह्लादो निष्ठायाम् । ६ । ४ । ९५ । ह्रस्वः स्यात् । प्रह्लन्नः । द्यतिस्यतिमास्थामित्ति किति । ७ । ४ । ४० । दितः, सितः । मितः । स्थितः । शाच्छोरन्यतरस्याम् ७ । ४ । ४१ । शितः, शातः । छितः, छातः । व्यवस्थितविभाषाश्रयणाद् व्रतविषये नित्यम् । संशितं व्रतम् । संशितो ब्राह्मणः । दधातेर्हिः । ७ । ४ । ४२ । अभिहितम्, निहितम् । दो दद्घोः । ७ । ४ । ४६ । अच उपसर्गात्तः । ७ । ४ । ४७ । प्रत्तः, अवत्तः । अवदत्तं विदत्तं च, प्रदत्तं चादिकर्मणि । सुदत्तमनुदत्तं च, निदत्तमिति चेष्यते चशब्दाद्यथाप्राप्तम् । दस्ति । ६ । ३ । १२४ । इगन्तोपसर्गस्य दीर्घः

स्यात् दादेशो यस्तकारस्तदादावुत्तरपदे । नीत्तम् । सूत्तम् । घुमास्थेतीत्वम घेट्-धीतम्, गीतम् पीतम् । जनसनेत्यात्वम् । जातम्, सातम्, खातम् । **अदो जग्धिर्ल्यप्ति किति** । २ । ४ । ३६ । धत्वम् । जग्धः **आदिकर्मणि क्तः कर्तरि च** । ३।४।७१। प्रकृतः कटं सः । कटस्तेन प्रकृतः । दीर्घे णत्वं च प्रक्षीणः । **वाक्रोशदैन्ययोः** ६ । ४ । ६१ । क्षियो निष्ठायां दीर्घो वा स्यादाक्रोशे दैन्ये च । क्षीणायुः क्षितायुर्वा अव क्षीणः, क्षितो वा तपस्वी । **निनदीभ्यां स्नातेः कौशले** । ८ । ३ । ८९ । षत्वं स्यात् । निष्णातः शास्त्रेषु नदीष्णः । **सूत्रं प्रतिष्णातम्** । ८ । ३ । ९० । प्रतिष्णातम्—सूत्रम् । शुद्धमित्यर्थः **कपिष्ठलो गोत्रे** । ८ । ३ । ९१ । कपिष्ठलिः । **विकुशमिपरिभ्यः स्थलम्** । ८ । ३ । ९६ । विष्ठलम्, कुष्ठलम्, शमिष्ठलम् पारिष्ठलम् । **गत्यर्थाकर्मकश्लिषशीङ्स्थासवसजनरुहजीर्यतिभ्यश्च** । ३ । ४ । ७२ । एभ्यः कर्तरि क्तः स्यात्, भावकर्मणोश्च गङ्गां गतः, गङ्गां प्राप्तः । ग्लानः सः । लक्ष्मीमाश्लिष्टो हरिः । शेषमधिशयितः, अधिष्ठितः, उपासितः, उपोषितः, अनुजातः अनुरूढः अनुजीर्णः । पक्षे प्राप्ता गङ्गा येनेत्यादि । **क्तोऽधिकरणे च ध्रौव्यगतिप्रत्यवसानार्थेभ्यः** । ३ । ४ । ७६ । चाद् यथाप्राप्तम् ध्रौव्यम्, स्थैर्यम् । मुकुन्दस्यासितमिद—मिदं यातं रमापतेः भुक्तमेतदनन्तस्येत्यूचुर्गोप्यो दिदृक्षवः १ । पक्षे—आसेरकर्मकात्कर्तरि भावे च आसितो मुकुन्दः, आसितं तेन । गत्यर्थेभ्यः कर्तरि कर्मणि च रमापतिरिदं यातः तेनेदं यातम् । भुजेः कर्मणि अनन्तेनेदं भुक्तम् । भुक्ता ब्राह्मणाः । इत्यादौ मत्वर्थीयोऽच् वर्तमाने इत्यधिकृत्य । **ञीतः क्तः** । ३ । २ । १८७ । क्ष्विण्णः, इद्धः । **मतिबुद्धिपूजार्थेभ्यश्च** । ३ । ५ । १८८ । मतिरिहेच्छा । राज्ञां मतः—इष्टः । बुद्धः, विदितः । पूजितः अर्चितः । चकारात् शीलितः, रक्षितः, धाक्रुष्टः, जुष्टः इत्यादि । **नपुंसके भावे क्तः** । ३ । २ । ११४ । कालसामान्ये क्तः स्यात् । जल्पितम्, शयितम्, हसितम् । **सुयजोर्ङ्वनिप्** । ३ । २ । १०३ । भूतेऽर्थे सुत्वा, यज्वा । **जीर्यतेरतृन्** ३।२।१०४ प्राग्वत् । जरन् । वासरूपन्यायेन निष्ठापि । जीर्णः, जीर्णवान् । **छन्दसि लिट्** ।३।२।१०५। **लिटः कानज् वा** ३।२।१०६। **क्वसुश्च** ।३।२।१०७। भूतसामान्ये लिट् । तस्य कुसुकानचौ स्तः । छन्दसीति त्रिमुनिमतम् । कवयस्तु बहुलं प्रयुञ्जते । तं तस्थिवांसम् अधिजग्मुषः इत्यादि । **वस्वेकाजाद्घसाम्** ७।२।६७। । कृतद्विर्वचनानामेकाचामादन्तानां घसेश्च वसोरिट् स्यात् नान्येषाम् । एकाच् आदिवान् । आत् ददिवान् । जक्षिवान् । नेह बभूवान् । **भाषायां सदवसश्रुवः** ।३।२।१०८। एभ्यो भूतसामान्ये लिड्वा स्यात् तस्य नित्यं कसुः । निषेदिवान् अध्युषु षस्तामसरञ्जनस्य । शुश्रुवान् । **उपेयिवाननाश्वाननूचानश्च** ।३।२।१०९। एते निपात्यन्ते । उपेयिवान् । उपेयुषी । ईयिवान् । अनाश्वान् वेदस्यानुवचनं कृतवाननूचानः । **विभाषा गमहनविदविशाम्** ।८।२।६८। इड्वा स्यात् जग्मिवान्, जगन्वान् । जघ्निवान्, जघन्वान् इत्यादि । विशिना साहचर्याद्विन्दतेव

ग्रहणम् । वेत्तेस्तु विविद्वान् । नेड्वशि कृतीतीण्निषेधः । वशेश्च । * । ददृश्वान् दद्दशिवान् । लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे ।३।२।१२४। शबादि । पचन्तं चैत्रं पश्य । आने मुक् ।७।२।८२। अङ्गस्यातो मुमागमः स्यादाने परतः । पचमानं चैत्रं पश्य । प्रथमासामानाधिकरण्येऽपि क्वचित् । सन् ब्राह्मणः । माङ्याक्रोशे इति वाच्यम् । * । मा जीवन् यः परावज्ञादुःखदग्धोऽपि जीवति । संबोधने च ।३।२।१२५। हेपचन् । हेपचमान । लक्षणहेत्वोः क्रियायाः ।३।२।१२६। क्रियायाः परिचायके हेतौ चार्थे वर्तमानाद् धातोर्लटः शतृशानचौ स्तः । शयाना भुञ्जते यवनाः । अर्जयन् वसति । हरिं पश्यन्मुच्यते । कृत्यचः ।८।४।२९। प्रपीयमाणः सोमः । ईदासः ।७।२।८३। आसीनः । विदेः शतुर्वसुः ।७।१।३६। विदन्, विद्वान् । विदुषी । तौ सत् ।३।२।१२७। तौ शतृशानचौ सत्संज्ञौ स्तः । लृटः सद्वा ३।३।१४। व्यवस्थितविभाषेयम् । तेन अप्रथमासामानाधिकरण्ये प्रत्ययोत्तरपदयोः संबोधने लक्षणहेत्वोश्च नित्यम् । करिष्यन्तं करिष्यमाणं पश्य । करिष्यतोऽपत्यं कारिष्यतः । करिष्यद्भक्तिः, हेकरिष्यन् । अर्जयिष्यन् वसति । करिष्यतीति करिष्यन् । पूङ्यजोः शानन् ।३।२।१२८। पवमानः, यजमानः । ताच्छील्यवयोवचनशक्तिषु चानश् ।३।२।१२९। एषु द्योत्येषु कर्तरि चानश् । भोगं भुञ्जानः । कवचं बिभ्राणः । शत्रुं निघ्नानः । इङ्धार्योः शत्रकृच्छ्रिणि ।३।२।१३०। अधीयन्, धारयन् । द्विषोऽमित्रे ३।२।१३१। द्विषन् शत्रुः । सुञो यज्ञसंयोगे ।३।२।१३२। सर्वे सुन्वन्तः । सर्वे यजमानाः सत्रिणः । अर्हः प्रशंसायाम् ।३।२।१३३। अर्हन् । आक्वेस्तच्छीलतद्धर्मतत्साधुकारिषु ।३।२।१३४। वक्ष्यमाणाः प्रत्यया एषु कर्तृषु बोध्याः । तृन् ।३।२।१३५। कर्ता कटम् । अलंकृञ्निराकृञ्प्रजनोत्पचोत्पतोन्मदरुच्यपत्रपवृतुवृधुसहचर इष्णुच् ।३।२।१३६। अलंकरिष्णुः । निराकरिष्णुः । अपत्रपिष्णुः । चरिष्णुः । णेश्छन्दसि ।३।२।१३७। वीरुधः पारयिष्णवः । भुवश्च ।३।२।१३८। भविष्णुः । चकारोऽनुक्तसमुच्चयार्थः । तेन भ्राजिष्णुः । क्षयिष्णुः । ग्लाजिस्थश्च ग्स्नुः ।३।२।१३९। गिदयं न तु कित् । तेन स्थ ईत्वं न । ग्लास्नुः गित्वान्न गुणः । जिष्णुः । स्थास्नुः । चाद्भुवः । श्र्युकः कितीत्यत्र गकारप्रश्लेषान्नेट् । भूष्णुः । दंशेश्छन्दस्युपसंख्यानम् । * । दंक्ष्णवः पशवः । त्रसिगृधिधृषिक्षिपेः क्नुः । ३।२।१४०। त्रस्नुः, गृध्नुः, धृष्णुः, क्षिप्नुः । शमित्यष्टाभ्यो घिनुण् ।३।२।१४१। नोदात्तोपदेशस्येति वृद्धिनिषेधः । शमी, तमीत्यादि । अलंकृञादिसूत्रेण इष्णुजुक्तो वासरूपविधिना घिनुणपि । उन्मादी । संपृचानुरुधाङ्यमाङ्यसपरिसृसंसृजपरिदेविसंज्वरपरिक्षिपपरिरटपरिवदपरिदहपरिमुहदुषद्विषद्रुहदुहयुजाक्रीडविविचत्यजरजभजातिचरापचरामुषाभ्याहनश्च ।३।२।१४२। घिनुण् स्यात् । संपर्की, अनुरोधी, आयामी परिसारीत्यादि । वौ कषलसकत्थस्रम्भः ।३।२।१४३। विकाषी, विस्रम्भी । अपे च लषः ।३।२।१४४।

चाद् वौ । अपलाषी, विलाषी । प्रे लपसृद्रुमथवदवसः ।३।२।१४५। प्रलापी, प्रवासी
निन्दहिंसक्लिशखादविनाशपरिक्षिपपरिरटपरिवादिव्याभाषासूयो वुञ् । ३ । २ १४६ । एभ्यो वुञ् स्यात् । निन्दकः, हिंसकः । इत्यादि । ण्वुला सिद्धे वुञ्वचनं ज्ञापयति तच्छीलादिषु वासरूपन्यायेन तृजादयो नेति । देविक्रुशोश्चोपसर्गे । ३ । २ । १४७ । आदेवकः, आक्रोशकः । चलनशब्दार्थादकर्मकाद्युच् ।३।२।१४८। आभ्यामकर्मकाभ्यां युच् स्यात् । चलनः, कम्पनः । शब्दनः, रवणः । अनुदात्तेतश्च हलादेः ।३।२।१४९। अकर्मकाद् युच् स्यात् । वर्तनः, वर्धनः । जुचङ्क्रम्यदन्द्रम्यसृगृधिज्वलशुचलषपतपदः ३।२।१५०। जवनः । चङ्क्रमणः, दन्द्रमणः ।सरणः । क्रुधमण्डार्थेभ्यश्च ।३। २ । १५१ । क्रोधनः, रोषणः । मण्डनः, भूषणः । न यः ।३।२।१५२। युच् न स्यात् । क्नूयिता क्ष्मायिता । सूददीपदीक्षश्च ।३।२।१५३। युच् न स्यात् । सूदिता, दीपिता, दीक्षिता । लषपतपदस्थाभूवृषहनकमगमशॄभ्य उकञ् । ३ । २ । १५४ । लापुकः, पातुक इत्यादि । जल्पभिक्षकुट्टलुण्टवृङः षाकन् । ३ । २ । १५५ । जल्पाकः, लुण्टाकः, कुट्टाकः, वराकः । प्रजोरिनिः । ३ । २ । १५६ । प्रजवी । जिदृक्षिविश्रीण्वमाव्यथाभ्यमपरिभूप्रसूभ्यश्च । ३ । २ । १५७ । जयी, क्षयी, वमी, अव्ययी, परिभवी । प्रसवी । स्पृहिगृहिपतिदयिनिद्रातन्द्राश्रद्धाभ्य आलुच् । ३ । २ । १५८ । स्पृहयालुः, दयालुः, निद्रालुः । तदोनान्तत्वं निपात्यते । तन्द्रालुः । शीङो वाच्यः । * । शयालुः । दाधेट्सिशदसदो रुः । ३ । २ । १५९ । दारुः, धारुः, सेरुः । सृघस्यदः क्मरच् । ३ । २ । १६० । सृमरः, घस्मरः, अद्मरः । भञ्जभासमिदो घुरच् । ३ । २ । १६१ । भङ्गुरः, भासुरः । मेदुरः । विदिभिदिच्छिदेः कुरच् । ३ । २ । १६२ । विदुरः, भिदुरम्, छिदुरम् । इण्नशजिसर्तिभ्यः क्वरप् । ३ । २ । १६३ । इत्वरः, नश्वरः, जित्वरः, सृत्वरः । गत्वरश्च । ३ । २ । १६४ गत्वरः, गत्वरी । जागरूकः । ३ । २ । १६५ । जागरूकः । यजजपदशां यङः । ३ । २ । १६६ । यायजूकः, जञ्जपूकः दंदशूकः । नमिकम्पिस्म्यजसकमहिंसदीपो रः । ३ । २ । १६७ । नम्रः, कम्प्रः । जसिर्नञ्पूर्वः । अजस्रम् । दीप्रः । सनाशंसभिक्ष उः । ३ । २ । १६८ । चिकीर्षुः आशंसुः, भिक्षुः । विन्दुरिच्छुः । ३ २ । १६९ । वेत्तेर्नुम्, इषेश्छत्वं च निपात्यते । वेत्ति तच्छीलो विन्दुः । इच्छुः । क्याच्छन्दसि । ३ । २ । १७० । देवाञ्जिगाति सुम्नयुः । आदृगमहनजनः किकिनौ लिट् च ।३।२।१७१। आदन्तादृदन्ताद्गमादिभ्यश्च किकिनौ स्तश्छन्दसि । तौ च लिड्वत् । पपिः सोमम्, ददिर्गाः । बभ्रिर्वज्रम् । जग्मिर्युवा । जघ्निर्वृत्रम् । जज्ञिः । भाषायां धाञ्कृसृगमिजनिनमिभ्यः । * । दधिः, जग्मिः, नेमिः । सासहिवावहिचाचलिपापतीनामुपसंख्यानम् । * । यङन्तेभ्यः

सहेत्यादिभ्यः क्विकिनौ पतेर्नीगभावश्च निपात्यते । स्वपितृषोर्जनिङ् । ३ । २ । १७२ । स्वप्नक्, तृष्णक् । तृष्णजौ, तृष्णजः । धृषेश्चेति वाच्यमिति काशिकादौ । धृष्णक् । शॄवन्द्योरारुः । ३ । २ । १७३ शरारुः, वन्दारुः । भियः क्रुक्लुकनौ । ३ । २ । १७४ । भीरुः, भीलुकः । क्रुकन्नपि वाच्यः । * । भीरुकः । स्थेशभासपिसकसो वरच् । ३ । २ । १७५ । स्थावरः, ईश्वरः, भास्वरः । यश्च यङः । ३ । २ । १७६ । यातेर्यङन्ताद्वरच् । अतो लोपः । लोपो व्योरिति यलोपः । यायावरः । भ्राजभासधुर्विद्युतोर्जिपॄजुग्रावस्तुवः क्विप् । ३ । २ । १७७ । विभ्राट् । भाः, धूः, विद्युत् ऊर्क्, पूः । दृषिग्रहणस्यापकर्षाज्जवतेर्दीर्घः । जूः । ग्रावशब्दस्य धातुना समासः सूत्रे निपात्यते । ग्रावस्तुत् । अन्येभ्योऽपि दृश्यते । ३ । २ । १७८ । क्विप् । छित्, भिद् । क्विब्वचिप्रच्छ्यायतस्तु कटप्रुजुश्रीणां दीर्घोऽसंप्रसारणं च । * । वक्तीतिवाक्, प्राट् । आयतस्तूः । कटप्रूः । जुः । श्रीः । द्युतिगमिजुहोतीनां द्वे च । * । दिद्युत्, जगत् । जुहोतेर्दीर्घश्च । * । जुहूः । दॄभये । अस्य ह्रस्वश्च । ददृत् । ध्यायतेः संप्रसारणं च । * । धीः । भुवः संज्ञान्तरयोः । ३ २ । १७९ । मित्रभूः, नाम कश्चित् धनिकाधमर्णयोरन्तरे यो विश्वासार्थं तिष्ठति स प्रतिभूः । विप्रसंभ्यो ड्वसंज्ञायाम् । ३ २ । १८० । विभुः, प्रभुः । संभुर्जनिता । मितद्र्वादिभ्य उपसंख्यानम् । * । मितद्रुः शतद्रुः, शम्भुः । धः कर्मणि ष्ट्रन् । ३ । २ । १८१ । धेट्टो धाञ्श्चष्ट्रन् । धात्री । दाम्नीशसयुयुजस्तुतुदसिसिचमिहपतदशनहः करणे । ३ । २ । १८२ । दान्त्यनेनेति दात्रम् । नेत्रम् । तितुत्रतथसिसुसरकसेषु च । ७ । २ । ९ । कृत्प्रत्ययानामेषामिण्न स्यात् । शस्त्रम् । योत्रम्, योक्त्रम् । स्तोत्रम् । तोत्रम् । मेढ्रम्, दंष्ट्रा, नद्ध्री । हलसूकरयोः पुवः । ३ । २ । १८३ । पूङ्पूञोः करणे ष्ट्रन् स्यात्, तच्चेत्करणं हलसूकरयोरवयवः स्यात् । हलस्य सूकरस्य वा मुखं पोत्रम् । अर्तिलूधूसूखनसहचर इत्रः । ३ । २ । १८४ । अरित्रम, लवित्रम् , खनित्रम् , चरित्रम्, सहित्रम् । पुवः संज्ञायाम् ३ । २ । १८५ । पवित्रम् । येनाज्यमुत्पूयते । यच्चानामिकावेष्टनम् । कर्तरि चर्षिदेवतयोः । ३ । २ । १८६ । पुव इत्रः स्यात् । ऋषौ करणे देवतायां कर्तरि । ऋषिर्वेदमन्त्रः । तदुक्तमृषिणेति दर्शनात् । पूयतेऽनेनेति पवित्रम् देवतायांतु अग्निः पवित्रं समा पुनातु । इति पूर्वकृदन्तं समाप्तम् । इति श्रीसर्वतन्त्रस्वतन्त्र-विद्यावारिधि-महामहोपाध्याय पं०-मथुराप्रसाद-दीक्षितकृतौ पूर्वकृदन्तं समाप्तम् ।

उणादयः कल्पनया स्वतः साधनीयाः ।

अथोत्तरकृदन्तम्—

उणादयो बहुलम् । ३।३।१। एते वर्तमाने संज्ञायां च बहुलं स्युः । केचिदविहिता अप्यूह्याः । संज्ञासु धातुरूपाणि प्रत्ययाश्च ततः परे । कार्याद्विद्यादनूबन्धमेतच्छा-

कमुणादिषु । भूतेऽपि दृश्यन्ते । ३ । ३ । २ । पूर्वस्यायं प्रपञ्चः । भविष्यति गम्यादयः ।३।३।३। ग्रामङ्गमी । ग्रामं गमिष्यन्नित्यर्थः । दाशगोघ्नौ संप्रदाने ।३।४।७३। दाशो ब्राह्मणः । गोघ्नोऽतिथिः । भीमादयोऽपादाने ।३।४।७४। भीमः । भीष्मः, मूर्खः, खलतिः ताभ्यामन्यत्रोणादयः ।३।४।७५। ताभ्यां संप्रदानापादानाभ्यामित्यर्थः । ततोऽसौ भवतीति तन्तुः । वृत्तं वर्त्म । चरितं चर्म। तुमुन्ण्वुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम् ।३।३।१०। भविष्यदर्थे धातोरेतौ स्तः । कृष्णं द्रष्टुं दर्शको वा याति । अत्र वासरूपेण तृजादयो न, पुनर्ण्वुलुक्तेः । समानकर्तृकेषु तुमुन् । ३ । ३ । १५८ । अक्रियोपपदार्थमिदम् । इच्छार्थेष्वेककर्तृकेषूपपदेषु धातोस्तुमुन् स्यात् । इच्छति, वाञ्छति वा भोक्तुम् । शकधृषज्ञाग्लाघटरभलभक्रमसहार्हास्त्यर्थेषु तुमुन् । ३ । ४ । ६५ । शक्नोति भोक्तुम् । एवं धृष्णोतीत्यादि । अर्थग्रहणमस्तिनैव संबध्यते, अनन्तरत्वात् । अस्ति भवति विद्यते वा भोक्तुम् । पर्याप्तिवचनेष्वलमर्थेषु । ३ । ४ । ६६ । पर्याप्तिः पूर्णता । तद्वाचिषु सामर्थ्यवचनेषूपपदेषु तुमुन् स्यात् । पर्याप्तो भोक्तुं प्रवीणः कुशलः पटुरित्यादि । अलमर्थग्रहणान्नेह–पर्याप्तं भुङ्क्ते । प्रभूतमिह गम्यते, नतु भोक्तुः सामर्थ्यम् । कालसमयवेलासु तुमुन् । ३ । ३ । १६७ । पर्यायग्रहणमर्थोपलक्षणार्थम् । कालः समयो वेला अनेहा वा भोक्तुम् । भाववचनाश्च । ३ । ३ । ११ । यागाय याति । अण् कर्मणि च । ३ । ३ । १२ । ण्वुलोऽपवादः । काण्डलावो व्रजति । परत्वादयं कादीन् बाधते । कम्बलदायो व्रजति । पदरुजविशस्पृशो घञ् । ३ । ३ । १६ । भविष्यतीति निवृत्तम् । पद्यतेऽसौ पादः । रोगः, पेशः, स्पर्शः । सृ स्थिरे । ३ । ३ । १७ । सारः । व्याधिमत्स्यबलेषु चेति वाच्यम् । * । अतीसारो व्याधिः । विसारो मत्स्यः । सारो बले, स्थिरांशे च । भावे । ३ । ३ । १८ । सिद्धावस्थापन्ने धात्वर्थे वाच्ये धातोर्घञ् स्यात् । पाकः, पाकौ । स्फुरतिस्फुलत्योर्घञि । ६ । १ । ४७ । अनयोरेच आत्वं स्याद् घञि । स्फारः, स्फालः । उपसर्गस्य घञीति दीर्घः । परीहारः । इकः काशे । ६ । ३ । १२३ । नीकाशः, अनूकाशः । इगन्तस्यैवेत्युक्तेर्नेह प्रकाशः । नोदात्तोपदेशेति न वृद्धिः । शमः । अनाचमिकमित्युक्तेर्नेह । आचामः, कामः । स्यदो जवे । ६ । ४ । २८ । स्यदो वेगः । अन्यत्र स्यन्दः । अवोदैधौद्मप्रश्रथहिमश्रथाः । ६ । ४ । २९ । अवोदः अवक्लेदनम् । एधः इन्धनम् । ओद्म उन्दनम् । श्रन्थेर्नलोपो वृद्ध्यभावश्च । अकर्तरि च कारके संज्ञायाम् । ३ । ३ । १९ । घञ् स्यात् । घञि च भावकरणयोः । ६ । ४ । २७ । रञ्जेर्नलोपः स्यात् । रागः । प्रास्यते इति प्रासः । संज्ञायामिति प्रायिकम् । को भवता लाभो लब्धः । परिमाणाख्यायां सर्वेभ्यः । ३ । ३ । २० । घञ् स्यात् । एकस्तण्डुलनिचायः । द्वौ शूर्पनिष्पावौ । द्वौ कारौ । दारजारौ कर्तरि णिलुक् च

। * । दाराः, जाराः । इङश्च । ३ । ३ । २१ । घञ् । उपेत्य अस्मादधीयते इति उपाध्यायः । अपादाने स्त्रियामुपसंख्यानं तदन्ताच्च वा ङीष् । * । उपाध्याया, उपाध्यायी । शॄवायुवर्णनिवृत्तेषु । * । शारो वायुः । करणे घञ्। सारो वर्णः । चित्रीकरणमिह धात्वर्थः। निवृतम् आवरणम् गौरिवाकृत-नीशारः प्रायेण शिशिरे कृशः। अकृतप्रावरण इत्यर्थः। उपसर्गे रुवः। ३।३।२२। संरावः अभिनिसः स्तनः शब्दसंज्ञायाम् ।८।३।८६। सस्य मूर्धन्यः स्यात्। अभिनिष्टानो वर्णः। समियुद्रुदुवः ।३।३।२३। संयावः पिष्टविकारः । संद्रावः, संदावः । श्रिणीभुवोऽनुपसर्गे । ३ । ३ । २४ । श्रायः, नायः भावः । वौ क्षुश्रुवः । ३ । ३ । २५ । विक्षावः विश्रावः, अवोदोर्नियः ।३।३।२६। अवनायः । अधोनयनम् उन्नायः–ऊर्ध्वनयनम्। प्रे द्रुस्तुस्रुवः । ३ । ३ । २७ । प्रद्रावः, प्रस्तावः, प्रस्रावः । निरभ्योः पूल्वोः । ३ । ३ । २८ । निष्पूयते शूर्पादिभिरिति निष्पावो धान्यविशेषः । अभिलावः । उन्न्योर्ग्रः । ३ । ३ । २९ । उद्गारः, निगारः । कॄ धान्ये । ३ । ३ । ३० । उन्न्योः परस्यैव । उत्कारः, निकारः । धान्यस्य विक्षेप इत्यर्थः । यज्ञे समि स्तुवः। ३ । ३ । ३१ । संस्तावो देशः । प्रे स्त्रोऽयज्ञे । ३ । ३ । ३२ । प्रस्तारः । अन्यत्र बर्हिषः प्रस्तरः । प्रथने वावशब्दे । ३ । ३ । ३३ । स्तृणातेर्घञ् स्यात्। पटस्य विस्तारः । छन्दोनाम्नि च । ३ । ३ । ३४ । वा इत्यनुवर्तते । अधिकरणे घञ् । छन्दो नाम्नि च । ८ । ३ ९४ । विपूर्वात्तृणातेर्घञन्तस्य सस्य षत्वं स्याच्छन्दोनाम्नि । विष्टारपङ्क्तिश्छन्दः । उदि ग्रहः । ३ । ३ । ३५ । उद्ग्राहः । समि मुष्टौ । ३ । ३ । ३६ । मल्लस्य संग्राहः परिन्योर्नीणोर्द्यूताभ्रेषयोः । ३ । ३ । ३७ । परिपूर्वान्नयतेर्निपूर्वादिणश्च घञ् स्यात् क्रमेण द्यूतेऽभ्रेषे च विषये । परिणायेन शारान् हन्ति । समन्तान्नयनेनेत्यर्थः । एषोऽत्र न्यायः । परावनुपात्यय इणः । ३ । ३ । ३८ । क्रमप्राप्तस्य अनतिपातोऽनुपात्ययः तव पर्यायः । व्युपयोः शेतेः पर्याये । ३ । ३ । ३९ । तव विशायः । तव राजो-पशायः । हस्तादाने चेरस्तेये । ३ । ३ । ४० । पुष्पप्रचायः । निवासचितिशरीरोपस-माधानेष्वादेश्च कः । ३ । ३ । ४१ । एषु चिनोतेर्घञ् । आदेश्च ककारः । निवासे काशीनिकायः । चितौ-आकायमग्निं चिन्वीत । शरीरे कायः । समूहे-गोमयनिकायः । चः क इति वक्तव्ये आदेरित्युक्तिर्यङ्लुगन्तादेरेव यथा स्यात् । गोमयानां निकेचायः । संघे चानौत्तराधर्ये । ३ । ३ । ४२ । चेर्घञ्, आदेश्च कः । भिक्षुनिकायः । कर्मव्यतिहारे णच् स्त्रियाम् । ३ । ३ । ४३ । भावे णच् । णचः स्त्रियामञ् । ५।४।१४। न कर्मव्यतिहारे । ७ । ३ । ६ । ऐच् न स्यात् । व्यावक्रोशी । व्यावहासी । अभिवि-धौ भाव इनुण् । ३ । ३ ४४ । अणिनुणः । ५ । ४ । १५ । इनण्यनपत्ये स्वभावतः पुंलिङ्गे । सांराविणं वर्तते । आक्रोशेऽवन्योर्ग्रहः । ३ । ३ । ४५ । अवग्राहो निग्राहो

वा ते भूयात्। प्रे लिप्सायाम् । ३ । ३ । ४६ । पात्रप्राहेण चरति भिक्षुः । परौ यज्ञे । ३ । ३ । ४७ । परिग्राहः । नैवृधान्ये । ३ । ३ । ४८ । नीवारः । अन्यत्र निवरा कन्या । क्तिन् विषयेऽपि बाहुलकादप् । प्रवरा सेना । प्रवरा गौरितिवत् । उदि श्रयतियौतिपूद्रुवः । ३ । ३ । ४९ । उच्छ्रायः । उद्यावः । बाहुलकात्समुच्छ्रया इति विभाषाऽऽङि रुप्लुवोः । ३ । ३ । ५० । आरावः आरवः । आप्लावः । अवेग्रहोवर्षप्रतिबन्धे । ३ । ३ । ५१ । अवग्राहः, अवग्रहः । प्रे वणिजाम् । ३ । ३ । ५२ । प्र प्रहेर्घञ् वा वणिजां सम्बन्धी चेत्प्रत्ययार्थः । तुलासूत्रमिति यावत् । तुलाप्रग्राहेण, तुलाप्रग्रहेण वा चरति । रश्मौ च । ३ । ३ । ५३ । प्रग्राहः, प्रग्रहः । वृणोतेराच्छादने । ३ । ३ । ५४ । प्र इत्येव । प्रावारः, प्रवरः । परौ भुवोऽवज्ञाने । ३ । ३ । ५५ । परिभावः, परिभवः एरच् । ३ । ३ ५६ । चयः, जयः । भयादीनामुपसंख्यानं नपुंसके क्तादिनिवृत्यर्थम् । * । भयम्, वर्षम् ऋदोरप् । ३ । ३ । ५७ । करः, गरः । यवः, लवः, स्तवः । वृक्षासनयोर्विष्टरः । ८ । ३ । ९३ । वः षत्वं निपात्यते । विष्टरो वृक्ष आसनं च । ग्रहवृदृनिश्चिगमश्च । ३ । ३ । ५८ । अप् स्यात् । घञचोरपवादः । ग्रहः, वरः, दरः, निश्चयः, गमः, । वशिरण्योरुपसंख्यानम् । * । वशः, रणः । घञर्थे क विधानम् । * । प्रस्थः, विघ्नः । द्वित्वप्रकरणे के कृञादीनामिति वक्तव्यम् । * । चक्रम्, चिक्लिदम् । चक्नसः । उपसर्गेऽदः । ३ । ३ । ५९ । अप् स्यात् । घञपोश्च । २ । ४ । ३८ । अदेर्घस्ल स्याद् घञि अपि च । प्रघसः, विघसः । नौ ण च । ३ । ३ । ६० । चादच् । न्यादः, निघसः । व्यधजपोरनुपसर्गे । ३ । ३ । ६१ । अप् स्यात् । व्यधः, जपः । स्वनहसोर्वा । ३ । ३ । ६२ । पक्षे घञ् । स्वनः, स्वानः । हसः, हासः । यमः समुपनिविषु च । ३ । ३ । ६३ । एषु अनुपसर्गे च यमेरप् वा । संयमः, संयामः । उपयमः, उपयामः । यमः, यामः । नौ गदनदपठस्वनः । ३ । ३ । ६४ । निगदः, निगादः । निनदः, निनादः । निस्वनः, निस्वानः । क्वणो वीणायां च । ३ । ३ । ६५ । नावनुपसर्गे च वीणाविषयाच्च क्वणतेरप् वा स्यात् । निक्वणः, निक्वाणः । क्वणः, क्वाणः । वीणाग्रहणं प्राद्यर्थम् । प्रक्वणः, प्रक्वाणः । नित्यं पणः परिमाणे । ३ । ३ । ६६ । मूलकपणः । शाकपणः । मदोऽनुपसर्गे । ३ । ३ । ६७ । धनमदः । अन्यत्र उन्मादः । प्रमदसंमदौ हर्षे । ३ । ३ । ६८ । अन्यत्र प्रमादः, संमादः । समुदोरजः पशुषु । ३ । ३ । ६९ । संपूर्वोऽजिः समुदाये, उत्पूर्वश्च प्रेरणेऽर्थे वर्तते तस्मात्पशुविषयकादप् स्यात् । समजः, पशूनां संघः । उदजः । पशूनां प्रेरणम् । अक्षेषु ग्लहः । ३ । ३ । ७० । अक्षस्य ग्लहः । प्रजने सर्तेः । ३ । ३ । ७१ । प्रजनं प्रथम गर्भग्रहणम् । गवामुपसरः । ह्वः संप्रसारणं च न्यभ्युपविषु । ३ । ३ । ७२ । निहवः, अभिहवः, उपहवः, विहवः । आङि युद्धे ।

३ । ३ । ७३ । आहवः । **निपानमाहावः** । ३ । ३ । ७४ । आङ्पूर्वस्य ह्वयतेः संप्रसारणमप् वृद्धिश्च उदकाधारश्चेद्वाच्यः । आहावस्तु निपानं स्यादुपकूपजलाशये । **भावेऽनुपसर्गस्य** । ३ । ३ । ७५ । संप्रसारणमप च । हवः । **हनश्च वधः** । ३ । ३ । ७६ । वधः । चाद् घञ् । घातः **मूर्तौ घनः** । ३ । ३ । ७७ । हन्तेरप् घनादेशश्च । अभ्रघनः । **अन्तर्घनो देशे** । ३ । ३ । ७८ । वाहीकग्रामविशेषस्य संज्ञेयम् । **अगारैकदेशे प्रघणः प्रघाणश्च** । ३ । ३ । ७९ । प्रविशद्भिर्जनैः पादैः प्रकर्षेण हन्यते इति प्रघणः, प्रघाणः । कर्मण्यप् पक्षे वृद्धिः । **उद्घनोऽत्याधानम्** । ३ । ३ । ८०। यस्मिन् काष्ठे स्थापयित्वा अन्यानि काष्ठानि तक्ष्यन्ते तद्घनः । अधिकरणेऽप् । **अपघनोऽङ्गम्** । ३ । ३ । ८१ । अपघनः पाणिः पादो वा करणेऽप् अपघातोऽन्यः । **करणेऽयोविद्रुषु** । ३ । ३ । ८२ । अप् घनादेशश्च । अयो हन्यतेऽनेनेत्ययोघनः । विघनः । द्रुघनः, द्रुघण इत्येके । **स्तम्बे क च** । ३ । ३ । ८३ । चात् पक्षे अप् घनादेशश्च । स्तम्बघ्नः, स्तम्बघनः । करणे एव । नेह स्तम्बघातः । **परौ घः** । ३ । ३ । ८४ । अप् घादेशश्च । परिघः । **परेश्च घाङ्कयोः** । ८ । २ । २२। परे रेफस्य लो वा स्यात् घशब्दे अङ्कशब्दे च परे । पलिघः, परिघः । पल्यङ्कः, पर्यङ्कः । **उपघ्न आश्रये** । ३ । ३ । ८५ । पर्वतेन उपहन्यते सामीप्येन गम्यते इति पर्वतोपघ्नः । **सङ्घोद्घौ गणप्रशंसयोः** । ३ । ३ । ८६ । संहननं संघः । भावे अप् । उद्हन्यते उत्कृष्टो ज्ञायते इत्युद्घः । कर्मण्यप् । **निघो निमितम्** । ३ । ३ । ८७ । निघा वृक्षाः । **ड्वितः क्त्रिः** । ३ । ३ । ८८ । अयं भाव एव स्वभावात् । क्त्रेर्मम् नित्यम्, नित्यग्रहणात् क्त्रिर्मन्विषयः । पाकेन निर्वृत्तम्–पक्त्रिमम् उप्त्रिमम् । **ट्वितोऽथुच्** । ३ । ३ । ८९ । भाव एव । वेपथुः श्वयथुः । **यजयाचयतविच्छप्रच्छरक्षो नङ्** । ३ । ३ । ९० । यज्ञः, याच्ञा । यत्नः, विश्नः, प्रश्नः । रक्ष्णः । **स्वपो नन्** । ३ । ३ । ९१ स्वप्नः । **उपसर्गे घोः किः** । ३ । ३ । ९२ । प्रधिः, अन्तर्धिः । उपधिः । **कर्मण्यधिकरणे च** । ३ । ३ । ९३ । कर्मण्युपपदे घोः किः स्यादधिकरणेऽर्थे । जलधिः । **स्त्रियां क्तिन्** । ३ । ३ । ९४ । घञोऽपवादः । अजपौ तु परत्वाद् बाधते । कृतिः, चितिः, स्तुतिः, स्फातिः । श्रुयजीषिस्तुभ्यः करणे । *। श्रूयतेऽनयेति श्रुतिः । यजेऽरिषेश्च । इष्टिः । स्तुतिः । ऋल्वादिभ्य क्तिन्निष्ठावद्वाच्यः । * । नत्वम । कीर्णिः, गीर्णिः । लूनिः, धूनिः । पूनिः । ह्लाद इति योगविभागात् क्तिनि ह्रस्वः । प्रह्लत्तिः । तिच । चूर्तिः, फुल्तिः । चावतेः क्तिनि चिभावो वाच्यः । * । अपचितिः । संपदादिभ्यः क्विप् । * । संपत् । विपत् । प्रतिपत् । क्तिन्नपीष्यते । * । संपत्तिः । विपत्तिः । **स्थागापापचो भावे** । ३ । ३ । ९५ । क्तिन् स्यात्, अङोऽपवादः । प्रस्थितिः । उपस्थितिः । संगीतिः ।

पक्तिः । ऊतियूतिजूतिसातिहेतिकीर्तयश्च ।३।३।९७। ऊतिः । यूतिः जूतिः । स्यतेः सातिः । हन्तेर्हिनोतेर्वा हेतिः । कीर्तिः । व्रजयजोर्भावे क्यप् ।३।३।९८। व्रज्या । इज्या । संज्ञायां समजनिषदनिपतमनविदषुञ्शीङ्भृञिणः ।३।३।९९। समजादिभ्यः स्त्रियां भावादौ क्यप्स्यात्, स चोदात्तः संज्ञायाम् । अजेः क्यपि वीभावो नेति वाच्यम् ।*। समजन्ति अस्यामिति समज्या सभा । निषद्या आपणभूमिः । निपत्या पिच्छिला भूमिः । मान्यतेऽनयेति मन्या गलपार्श्वशिरा । विद्या, सुत्या । शय्या । भृत्या । इत्या-शिबिका । कृञः श च ।३।३।१००। कृत्या, क्रिया । चात् क्तिन् । कृतः । इच्छा ।३।३।१०१। इषेर्भावे शो यगभावश्च निपात्यते । इच्छा । परिचर्या परिसर्यामृगयाटाट्यानामुपसंख्यानम् ।*। शो यक् च निपात्यते । परिचर्या-पूजा । परिसर्या-परिसरणम् । अत्र गुणोऽपि । मृग-अन्वेषणे । शे यकि णिलोपोऽल्लोपाभावश्च निपात्यते । मृगया । अटाट्या । जागर्तेरकारो वा ।*। पक्षे शः । जागरा । जागर्या । अप्रत्ययात् ।३।३।१०२ चिकीर्षा । पुत्रकाम्या । गुरोश्च हलः ।३।३।१०३। ईहा । ऊहा । निष्ठायां सेट इति वक्तव्यम् ।*। नेह आप्तिः । तितुत्रेति नेट् । दीप्तिः । तितुत्रेष्वग्रहादीनामिति वाच्यम् ।*। निगृहीतिः । षिद्भिदादिभ्योऽङ् ।३।३।१०४। एभ्यः स्त्रियामङ् स्यात् । जृष्-ऋदृशोऽङि-गुणः । जरा । त्रपूष त्रपा भिदा । विदारण एवायम् । भित्तिरन्या । छिदा । मृजा । कृपेः संप्रसारणंच । कृपा । चिन्तिपूजिकथिकुम्बिचर्चश्च ।३।३। १०५। अङ् स्याद् । युचोऽपवादः । चिन्ता । पूजा । कथा । चर्चा । आतश्चोपसर्गे ।३।३।१०६। प्रदा । उपदा । श्रदन्तरोरुपसर्गवद्वृत्तिः । श्रद्धा । अन्तर्द्धा । उपसर्गे घोः किरिति किः । अन्तर्धिः । ण्यासश्रन्थो युच् ।३।३।१०७। अकारस्यापवादः । कारणा । हारणा । आसना । श्रन्थना । घट्टिवन्दिविदिभ्यश्चेति वाच्यम् ।*। घट्टना वन्दना । वेदना । इषेरनिच्छार्थस्य ।*। अन्वेषणा । परेर्वा ।*। पर्येषणा, परीष्टिः । रोगाख्यायां ण्वुल्बहुलम् ।३।३।१०८। प्रच्छर्दिका, प्रवाहिका । विचर्चिका । कचिन्न । शिरोऽर्तिः । धात्वर्थनिर्देशे ण्वुल्वक्तव्यः ।*। आसिका । शायिका । इक्श्तिपौ धातुनिर्देशे ।*। पचिः, पचतिः । वर्णात्कारः ।*। अकारः, ककारः रादिफः ।*। रेफः । मत्वर्थाच्छः ।*। बहुलवचनादकारलोपः । मत्वर्थीयः । इणजादिभ्यः ।*। आजिः, आतिः । इञ् वपादिभ्यः ।*। वापिः, वासिः । इक्कृष्यादिभ्यः ।*। कृषिः । गिरिः । संज्ञायाम् ।३।३। १०९ धातोर्ण्वुल् । उद्दालकपुष्पभञ्जिका । विभाषाऽऽख्यानपरिप्रश्नयोरिञ्च ।३।३११०। चात् ण्वुल् । विभाषोक्तेर्यथाप्राप्तमन्येऽपि । कां त्वं कारिं कारिकां क्रियां कृत्यां कृतिं वा कार्षीः । एवं गणिं गणिकां गणनाम् । पाचिं पाचिकां पचां पक्तिम् पर्यायार्हर्णोत्पत्तिषु ण्वुच् ।३।३

१११। ण्वुच् वा स्यात्पक्षे यथाप्राप्तम्। भवत आसिका, शायिका, अग्रगामिका। भवानिक्षुभक्षिकामर्हति। ऋणे इक्षुभक्षिकां मे धारयति। इक्षुभक्षिका। उदपादिका। **आक्रोशे नञ्यनिः**। ३।३।११२। नञि उपपदे अनिः स्यात्। आक्रोशे। अजीवनिस्ते भूयात्। अप्रयाणिः। **कृत्यल्युटो बहुलम्**।३।३।११३। राजभोजनाः शालयः। **नपुंसके भावे क्तः**।।३।११४। **ल्युट् च**।३।३।११५। हसितम्, हसनम्। **कर्मणि च येन संस्पर्शात्कर्तुः शरीरसुखम्**।३।३।११६। येन स्पृश्यमानस्य कर्तुः शरीरसुखमुत्पद्यते तस्मिन् कर्मण्युपपदे ल्युट् स्यात्। पयःपानं सुखम्। **वा यौ**।२।४।५७। अजेर्वी वा स्याद् यौ। प्रवयणम्, प्राजनम्। **करणाधिकरणयोश्च**।३।३।११७। ल्युट् स्यात्। इध्मप्रव्रश्चनः। गोदोहनी। **अन्तरदेशे**।८।४।२४। हन्तेर्नस्य णः स्यात्। अन्तर्हणनम्। देशे तु अन्तर्हनः। अत्पूर्वस्येत्येव। नेह अन्तर्घ्नन्ति। अन्तर्घानि। **अयनं च**।८।४।२५। अन्तरयणम्। अदेश इत्येव। नेह-अन्तरयनो देशः। **पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण**। ३।३। ११८ **छादेर्घेऽद्व्युपसर्गस्य**।६।४।९६। द्विप्रभृत्युपसर्गहीनस्य छादेर्ह्रस्वः स्याद्घे परे। दन्ताश्छाद्यन्तेऽनेन दन्तच्छदः। आकुर्वन्त्यस्मिन्नित्याकरः। **गोचरसंचरवहव्रजव्यजापणनिगमाश्च**।३।३।११९। घान्ता निपात्यन्ते। घञोऽपवादः। गोचरो देशः संचरन्त्येऽनेनेति संचरो मार्गः। वहः स्कन्धः व्यजस्तालवृन्तम्। निपातनाद् वीभावो न। आपणः। निगमश्छन्दः। चात्कषः। निकषः। **अवे तॄस्त्रोर्घञ्**।३।३।१२०। अवतारः कूपादेः। अवस्तारो जवनिका। **हलश्च**।३।३।१२१। घञ् स्यात्। घापवादः रामः। अपामार्गः। विमार्गः। **अध्यायन्यायोद्यावसंहाराश्च**।३।३।१२२। अध्यायः। न्यायः। इत्यादि अवहाराधारावायानामुपसंख्यानम्। *। **उदङ्कोऽनुदके**।३।३।१२३। घृतमुदच्यते उद्ध्रियतेऽस्मिन्निति घृतोदङ्कः। चर्ममयं भाण्डम्। **जालमानायः**।३।३।१२४। अन्यत्र आनयः। **खनो घच**।३।३।१२५। चाद्घञ् आखनः, आखानः। घित्करणादन्यतोऽप्ययम्, तेन भगः। पदम्। खनेर्डडरेकेकवका वाच्याः।*। आखः। आखरः। आखनिकः। आखनिकवकः। **ईषद्दुःसुषु कृच्छ्राकृच्छ्रार्थेषु खल्**।३।३।१२६। तयोरेवेति भावे कर्मणि च। दुष्करः कटो भवता। ईषत्करः सुकरः। निमिमीलियां खलचोरात्वं नेति वाच्यम्। *। ईषन्निमयः। दुष्प्रमयः। सुविलयः। निमयः। मयः। लयः। **उपसर्गात्खल्घञोः**।७।१।६७। उपसर्गादेव लभेर्नुम् स्यात्। दुष्प्रलम्भः। सुप्रलम्भः। उपालम्भः। **नसुदुर्भ्यां केवलाभ्याम्**।७।१।६८। आभ्यां लभेर्नुम् न स्यात् खल्घञोः। सुलभम्। दुर्लभम्। उपसर्गान्तरसहिते तु। सुप्रलम्भः। अतिदुर्लम्भः। **कर्तृकर्मणोश्च भूकृञोः**।३।३।१२७। कर्तृकर्मणोरीषदादिषु च उपपदेषु भूधातोः खल् स्यात्

यथासंख्यं नेष्यते । कर्तृकर्मणोश्च्व्यर्थयोरिति वाच्यम् । * । खित्वान्मुम् । अनाढ्येन आढ्येन दुःखेन भूयते दुराढ्यंभवम् । ईषदाढ्यंभवम् । स्वाढ्यम्भवम् । एवं स्वाढ्यंकरः इत्यादि । आतो युच् ।३।३।१२८। ईषत्पानः सोमो भवता, दुष्पानः। सुपानः । भाषायां शासियुधिदृशिधृषिमृषिभ्यो युज्वाच्यः । * । दुःशासनः। दुर्योधनः । षात्पदान्तात् ।८।४।३५। नस्य णो न । निष्पानम् । सर्पिष्पानम् । पदे अन्तः पदान्तः, इति सप्तमीसमासान्नेह । सुसर्पिष्केण । आवश्यकाधमर्ण्ययोर्णिनिः ।३।३।१७०। अवश्यकारी, शतदायी । कृत्याश्च ।३।३।१७१। अवश्यं हरिः सेव्यः । शतं देयम्। क्तिच्क्तौ च संज्ञायाम् । ।३।१७४। धातोः क्तिच् क्तश्च स्यादाशिषि सञ्ज्ञायाम् । भवतात् भूतः । तितुत्रेति नेट् । न क्तिचि दीर्घश्च । ६।४।३९। अनिटां वनतितनोत्यादीनां च दीर्घानुनासिकलोपौ न स्तः क्तिचि परे । यन्तिः, रन्तिः । नन्तिः । सनः क्तिचि लोपश्चास्यान्यतरस्याम् ।६।४।४५। सनोतेः क्तिचि आत्वं वा स्याल्लोपश्च वा सातिः, सतिः, । सन्तिः । देवा एनं देयासुर्देवदत्तः । अलंखल्वोः प्रतिषेधयोः प्राचां क्त्वा । ३।४।१८। अमैवाव्ययेनेति नियमान्नोपपदसमासः । दो दद् घोः । अलं दत्त्वा । घुमास्थेतीत्वम् । पीत्वा खलु । उदीचां माङो व्यतीहारे ।३।४।१९। व्यतीहारेऽर्थे माङः क्त्वा स्यात् । अपूर्वकालार्थमिदम् । मयतेरिदन्यतरस्याम् ।६।४।७०। मेङ इकारोऽन्तादेशः स्याद्वा ल्यपि । अपमित्य, अपमाय वा याचते । उदीचां ग्रहणाद् यथाप्राप्तमपि, याचित्वा अपमयते । परावरयोगे च । ३।४।२० क्त्वा स्यात् । अप्राप्य नदीं पर्वतः परनदीयोगोऽत्र पर्वतस्य । अतिक्रम्य पर्वतं स्थिता नदी । अपरपर्वतयोगोऽत्र नद्याः । समानकर्तृकयोः पूर्वकाले ।३।३।२१। क्त्वा स्यात् । भुक्त्वा व्रजति । द्वित्वमतन्त्रम् । स्नात्वा भुक्त्वा पीत्वा व्रजति । अनुदात्तेत्यनुनासिकलोपः । नत्वा स्तौति । स्वरत्यादेः श्र्युकः कितीति नित्यमिडभावः । स्मृत्वा, सूत्वा, धूत्वा । क्त्वि स्कन्दिस्यन्दोः ।६।४।३। एतयोर्नलोपो न स्यात् क्त्वि परे स्कन्त्वा । ऊदित्त्वादिड् वा स्यन्दित्वा, स्यन्त्वा। न क्त्वा सेट् ।१।२।१८। सेट् क्त्वा किन्न स्यात् । शयित्वा । मृडमृदगुधकुषक्लिशवदवसः क्त्वा ।२।२।७। एभ्यः सेट् क्त्वा कित् । मृडित्वा । क्लिशः क्त्वेति वेट् । क्लिशित्वा क्लिष्ट्वा । उदित्वा, उषित्वा । रुदविदेति कित्वम् । रुदित्वा, विदित्वा। मुषित्वा । गृहीत्वा । नोपधात्थफान्ताद्वा ।१।२।२३। सेट् क्त्वा किद्वा स्यात् । श्रथित्वा, श्रन्थित्वा । गुफित्वा, गुम्फित्वा । वञ्चिलुञ्च्यृतश्च ।१।२।२४। वचित्वा, वञ्चित्वा । लुचित्वा, लुञ्चित्वा । ऋतित्वा, अर्तित्वा । तृषिमृषिकृशेः काश्यपस्य ।१।२।२५। प्राग्वत् । तृषित्वा, तर्षित्वा । मृषित्वा, मर्षित्वा । कृशित्वा, कर्शित्वा,

रलोव्युपधादिति वा किंत्वम्। द्युतित्वा, द्योतित्वा। लिखित्वा, लेखित्वा। वसति क्षुधोरिट्। उषित्वा। क्षुधित्वा, क्षोधित्वा,। अञ्चित्वा। गतौ तु अक्त्वेत्यपि। लुभित्वा, लोभित्वा। लुभोऽविमोहने इति। विमोहने तु लुब्ध्वा। जॄव्रश्च्योः क्त्वि ७।२।५५ इट् स्यात्। जरित्वा, जरीत्वा। व्रश्चित्वा। उदितो वा ।७।२।५६। क्त्वा इड् वा स्यात्। शमित्वा, शान्त्वा। देवित्वा, द्यूत्वा। क्रमश्च क्त्वि ।६।४।१८ क्रम उपधाया वा दीर्घः स्यात्, झलादौ क्त्वि परे। क्रमित्वा, क्रान्त्वा, क्रन्त्वा। पूङश्चेति वेट्। पवित्वा, पूत्वा। जान्तनशां विभाषा।६।४।३२। जान्तानां नशेश्च नलोपो वा स्यात् क्त्वि परे। भक्त्वा, भङ्क्त्वा। रक्त्वा, रङ्क्त्वा। मस्जिनशोरिति नुम्। तस्य पक्षे लोपः। नष्ट्वा, नंष्ट्वा। रधादिभ्यश्चेतीट्पक्षे। नशित्वा। झलादाविति वाच्यम्। *। नेह-अञ्जित्वा। ऊदित्वाद्वेट्। पक्षे-अक्त्वा, अङ्क्त्वा। जनसनेत्यात्वम्। खात्वा, खनित्वा। इत्वम् दित्वा, सित्वा मित्वा। स्थित्वा, दधातेर्हिः। हित्वा। जहातेश्च क्त्वि ।७।४।४३। हित्वा। हाङस्तु। हात्वा। अदो जग्धिः। जग्ध्वा। समासेऽनञ्पूर्वे क्त्वो ल्यप् ।७।१।३७। तुक् प्रकृत्य। अव्ययपूर्वपदे एव। नेह। परमकृत्वा। षत्वतुकोरसिद्धः।६।१।८६। षत्वे तुकि च कर्तव्ये एकादेशशास्त्रमसिद्धं स्यात्। कोऽसिचत्। इह षत्वं न। अधीत्य प्रेत्य। ह्रस्वस्येति तुक्। वा ल्यपि ।६।४।३८। अनुदात्तोपदेशानां वनतितनोत्यादीनामनुनासिकलोपो वा स्याल्ल्यपि। व्यवस्थितविभाषेयम्। तेन मान्तानिटां वा, नान्तानिटां वनादीनां च नित्यम्। आगत्य, आगम्य। प्रणत्य, प्रणम्य। प्रहत्य, प्रमत्य। प्रणत्य। वितत्य। विधाय, प्रदाय। प्रखन्य, प्रस्थाय, प्रक्रम्य, आपृच्छ्य प्रदीव्य। न ल्यपि ।६।४।६९। घुमास्थेतीत्वं न। प्रधाय। प्रमाय प्रपाय। प्रसाय। मीनातिमिनोतीत्यात्वम्। प्रमाय, निमाय, उपदाय। विभाषा लीयतेः। विलाय, विलीय। णिलोपः। उत्तार्य। विचार्य। ल्यपि लघुपूर्वात् ।६।४।५६। लघुपूर्वात्परस्य णेरयादेशः स्यात् ल्यपि। विगणय्य, प्रणमय्य। विभाषाऽऽपः। ६।४।५७। प्रापय्य, प्राप्य। क्षियः ।६।४।५९। क्षियो ल्यपि दीर्घः स्यात्। प्रक्षीय। ल्यपि च ।६।१।४१। वेञो ल्यपि संप्रसारणं न स्यात्। प्रवाय। ज्यश्च ।६।१४२। प्रज्याय। व्यश्च ।६।१।४३। उपव्याय। विभाषा परेः ६।१।४४। परेर्व्येञो वा संप्रसारणं स्याल्ल्यपि। तुकं बाधित्वा परत्वाद् हल इति दीर्घः। परिवीय, परिव्याय। आभीक्ष्ण्ये णमुल् च ।३।४।२२। पौनः पुन्ये द्योत्ये पूर्वविषये णमुल् स्यात् क्त्वा च। द्वित्वम्। स्मारं स्मारं नमति।

स्मृत्वा स्मृत्वा । पायं पायम् । श्रावं श्रावमित्यादि । णिविषये चिण्णमुलोरिति वा दीर्घः । गामं गामम् । गमं गमम् । विभाषा चिण्णमुलोरिति नुम् वा । लम्भं लम्भम् । लाभं लाभम् । व्यवस्थितविभाषया उपसृष्टस्य नित्यं नुम् । प्रलम्भं, प्रलम्भम् । जागरं जागरम् । **न यद्यनाकाङ्क्षे** ।३।४।२३। पूर्वकाले यत्प्राप्तं तन्न । यदयं भुङ्क्ते ततः पठति । इह क्त्वाणमुलौ न । **विभाषाऽग्रेप्रथमपूर्वेषु** ।३।४।२४। क्त्वाणमुलौ वा स्तः । अग्रेभोजं व्रजति, अग्रे भुक्त्वा वा । प्रथमं भोजम्, प्रथमं भुक्त्वा । पूर्वंभोजं, पूर्वंभुक्त्वा । पक्षे लडादयः । पूर्वं भुङ्क्ते ततो व्रजति । आभीक्ष्ण्ये तु पूर्वविप्रतिषेधेन नित्यमेव । अग्रे भोजं भोजं, भुक्त्वा भुक्त्वा वा व्रजति । **कर्मण्याक्रोशे कृञः खमुञ्** ।३।४।२५। चौरङ्कारमाक्रोशति । **स्वादुमि णमुल्** ।३।४।२६। स्वाद्वर्थेषु कृञो णमुल् स्यादेककर्तृकयोः पूर्वकाले । पूर्वपदस्य मान्तत्वं निपात्यते । अस्वादुं स्वादुं कृत्वा भुङ्क्ते इति स्वादुङ्कारं भुङ्क्ते । एवं सम्पन्नं कारम्, लवणंकारम् । संपन्नलवणशब्दौ स्वादुपर्यायौ । वा सरूपेण क्त्वाऽपि । स्वादुं कृत्वा भुङ्क्ते । **अन्यथैवं कथमित्थंसुसिद्धाप्रयोगश्चेत्** ।३।४।२७। एषु कृञो णमुल् स्यात् । अन्यथाकारम् एवंकारम्, कथंकारम्, इत्थंकारं भुङ्क्ते । इत्थं भुङ्क्ते इत्यर्थः । **यथातथयोरसूयाप्रतिवचने** ।३।४।२८। कृञ: सिद्धाप्रयोगे एव । यथाकारमहं भोक्ष्ये तथाकारं भोक्ष्ये किं तवानेन । **कर्मणि दृशिविदोः साकल्ये** ।३।४।२९। कन्यादर्शं वरयति । ब्राह्मणवेदं भोजयति । **यावति विन्दजीवोः** ।३।४।३०। यावद्वेदं भुङ्क्ते । यावल्लभते तावद्भुङ्क्ते इत्यर्थः । यावज्जीवमधीते विप्रः । **चर्मोदरयोः पूरेः** ।३।४।३१। चर्मपूरं स्तृणाति । उदरपूरं भुङ्क्ते । **वर्षप्रमाण ऊलोपश्चास्यान्यतरस्याम्** ३।४।३२। कर्मण्युपपदे पूरेर्णमुल् स्यादूकारलोपश्च वा समुदायेन वर्षप्रमाणे गम्ये । गोष्पदपूरं, गोष्पदप्रं वा वृष्टो देवः । **चेले क्नोपेः** ।३।४।३३। प्राग्वत् । चेलक्नोपं, वस्त्रक्नोपम्, वसनक्नोपम् । वा वृष्टो देवः । **निमूलसमूलयोः कषः** । ३।४।३४। कर्मणीत्येव । **कषादिषु यथाविध्यनुप्रयोगः** ।३।४।४६। यस्माण्णमुलुक्तः स एवानुप्रयोक्तव्य इत्यर्थः । निमूलकाषं, समूलकाषं वा कषति । निमूलं समूलं वा कषतीत्यर्थः । **शुष्कचूर्णरूक्षेषु पिषः** ।३।४।३५। शुष्कपेषं चूर्णपेषं रूक्षपेषं पिनष्टि। **समूलाकृतजीवेषु हन्कृञ्ग्रहः** ।३।४।३६। समूलघातं हन्ति । अकृतकारं करोति । जीवग्राहं गृह्णाति ॥ **करणे हनः** ।३।४।३७। पादघातं हन्ति । पादेन हन्तीत्यर्थः **स्नेहने पिषः** ।३।४।३८। स्निह्यते येन तस्मिन् करणे पिषेर्णमुल् । उदपेषं पिनष्टि।

हस्तेन पिनष्टीत्यर्थः। **हस्ते वर्तिग्रहोः** ।३।४।३९। हस्तवर्तं वर्तयति करवर्तं वा। हस्तेन गुलिकां करोतीत्यर्थः। हस्तग्राहं गृह्णाति। पाणिग्राहं, करग्राहं वा। **स्वे पुषः** ।३।४।४०। स्वरूपे पर्याये विशेषे च णमुल्। स्वपोषं पुष्णाति, धनपोषं गोपोषम् **अधिकरणे बन्धः** ।३।४।४। चक्रबन्धं बध्नाति। चक्रे बध्नातीत्यर्थः। **संज्ञायाम्** ।३।४।४२। क्रौञ्चबन्धं बद्धः मयूरिकाबन्धम्· अट्टालिकाबन्धम। **कर्त्रोर्जीवपुरुषयोर्नशिवहोः** ।३।४।४३। जीवनाशं नश्यति। पुरुषवाहं वहति। **ऊर्ध्वे शुषिपूरोः** ।३।४।३४। ऊर्ध्वे कर्तरि। ऊर्ध्वशोषं शुष्यति ऊर्ध्वपूरं पूर्यते। **उपमाने कर्मणि च** ।३।४।४५। चात्कर्तरि। घृतनिधायं निहितं जलम् अजकनाशं नष्टः। अजक इव नष्ट इत्यर्थः। **उपदंशस्तृतीयायाम्** ।३।४।४७। इतः प्रभृति पूर्वकाल इति सम्बध्यते। मूलकोपदंशं मूलकेनोपदंशं वा भुङ्क्ते। **हिंसायां च समानकर्मकाणाम्** ।३।४।४८। तृतीयान्ते उपपदे अनुप्रयोगधातुना समानकर्मकाद् हिंसार्थायां णमुल् स्यात्। दण्डोपघातं गाः कालयति। दण्डोपघातम्—दण्डताडनम्। समकर्मकत्वाभावान्नेह दण्डेन चोरमाहत्य गाः कालयति। **सप्तम्यां चोपपीडरुधकर्षः** ।३।४।४९। उपपूर्वेभ्यः पीडादिभ्यः सप्तम्यन्ते तृतीयान्ते चोपपदे णमुल् स्यात्। पार्श्वोपपीडं शेते। पार्श्वयोरुपपीडम्, पार्श्वाभ्यामुपपीडं वा। एवं व्रजोपरोधं गाः स्थापयति। पाण्युपकर्षं धानाः संगृह्णाति। **समासत्तौ** ।३।४।५०। सन्निकर्षे गम्यमाने णमुल्। केशग्राहं युध्यन्ते। केशेषु गृहीत्वा। **प्रमाणे च** ।३।४।५१। द्व्यङ्गुलोत्कर्षं खण्डिकां छिनत्ति। द्व्यङ्गुले न, द्व्यङ्गुलेन उत्कर्षम्। **अपादाने परीप्सायाम्** ।३।४।५२। परीप्सा–त्वरा। शय्योत्थायं धावति। **द्वितीयायां च** ।३।४।५३। परीप्सायामेव। यष्टिग्राहं, लोष्टग्राहं वा युध्यन्ते। **अपगुरो णमुलि** ।३।१।३। गुरी उद्यमने अपपूर्वस्यास्यैचो वा आत्स्यात् णमुलि। अस्यपगारम्। अस्यपगोरम् वा युध्यन्ते। **स्वाङ्गेऽध्रुवे** ।३।४।५४। अध्रुवे स्वाङ्गे द्वितीयान्ते धातोर्णमुल् भ्रूविक्षेपं कथयति। येन विना न जीवनं तद् ध्रुवम्। नेह शिर उत्क्षिप्य कथयति। **परिक्लिश्यमाने च** ३।४।५५। स्वाङ्गे एव। उरः प्रतिपेष युध्यन्ते। कृत्स्नमुरः पीडयन्त इत्यर्थः। उरोविदारं प्रतिचस्करे नखैः। ध्रुवार्थमिदम्। **विशिपतिपदिस्कन्दां व्याप्यमानासेव्यमानयोः** ।३।४।५६। द्वितीयान्ते उपपदे एव। गेहानुप्रवेशमास्ते। गेहं गेहमनुप्रवेशम्। गेहमनुप्रवेशमनुप्रवेशम्। एवम् गेहानुप्रपातम्। गेहानुप्रपादम्। गेहानुस्कन्दम्। असमासेतु गेहस्य णमुलन्तस्य च पर्यायेण द्वित्वम्। **अस्यतितृषोः क्रियान्तरे कालेषु** ।३।४।५७। क्रियाव्यवधायके धात्वर्थे. वर्तमानादस्यतेस्तृष्यतेश्च कालवाचिषु द्वितीयान्ते षूपपदेषु णमुल् स्यात्। द्व्यहात्यासं गाः पालयति। द्व्यहमत्यासं वा द्व्यहतर्षम् द्व्यहं तर्षम्। अत्यसनेन तर्षणेन च गवां पालनक्रिया व्यवधीयते। अद्य पाययित्वा द्व्यहमतीत्य पुनः पाययतीत्यर्थः। **नाम्न्यादिशिग्रहोः** ।३।४।५८। द्वितीयायामित्येव। नामादेशमाचष्टे नामग्राहमाह्वयति। **अव्ययेऽयथाभिप्रेता-**

ख्याने कृञः क्त्वाणमुलौ ।३।४।५९। अयथाभिप्रेताख्यानं नाम अप्रियस्य उच्चैः, प्रियस्य नीचैः कथनम् । उच्चैःकृत्वा, उच्चैःकारम् अप्रियमाचष्टे । एवं नीचैःकृत्य, नीचैः कृत्वा, नीचैःकारं प्रियं ब्रूते । **तिर्यच्यपवर्गे** ।३।४।६०। तिर्यक् शब्दे उपपदे कृञः क्त्वाणमुलौ स्तः, समाप्तौ गम्यायाम् । तिर्यक्कृत्य तिर्यक्कारं गतः । समाप्य गत इत्यर्थः । **स्वाङ्गे तस्प्रत्यये कृभ्वोः** ।३।४।६१। मुखतः कृत्य, मुखतः कृत्वा, मुखतःकारं गतः । एवं मुखतोभूय, मुखतोभूत्वा, मुखतोभावम् । **नाधार्थप्रत्यये च्व्यर्थे** ।३।४।६२। नाधार्थप्रत्ययान्ते च्व्यर्थविषये उपपदे कृभ्वोः क्त्वाणमुलौ स्तः । अनाना नानाकृत्य, नानाकृत्वा, नानाकारम्, विनाकृत्य, विनाकृत्वा, विनाकारम् । एवम् नानाभूय, नानाभूत्वा, नानाभावम् । अनेकं द्रव्यमेकं भूत्वा एकधाभूय एकधाभूत्वा एकधाभावम् । तथा एकधाकृत्य एकधाकृत्वा, एकधाकारम् । प्रत्ययग्रहणान्नेह हिरुक् कृत्वा, पृथग्भूत्वा । **तूष्णीमि भुवः** ३।४।६३। तूष्णींभूय, तूष्णीभूत्वा तूष्णींभावम् । **अन्वच्यानुलोम्ये** ३।४।६४। अन्वक्शब्दे उपपदे भुवः क्त्वाणमुलौ स्तः आनुकूल्ये गम्यमाने । अन्वग्भूय, अन्वग्भूत्वा अन्वग्भावं वा आस्ते । अग्रतः पार्श्वतः पृष्ठतो वाऽनुकूलो भूत्वा आस्त इत्यर्थः अन्यत्र अन्वग्भूत्वा तिष्ठति । पृष्ठतो भूत्वेत्यर्थः **अ अ** ।८।४।६८। विवृतोऽयमकारः संवृतः स्यात् । अस्य सम्पूर्णामष्टाध्यायीं प्रत्यसिद्धत्वात्साधुत्वे विवृतत्वमेव ।

इति श्री सर्वतन्त्रस्वतन्त्र विद्यावारिधि महामहोपाध्याय पं० मथुराप्रसाद
दीक्षितकृतायां पाणिनीयसिद्धान्तकौमुद्यां उत्तरकृदन्तप्रकरणं
समाप्तम्



अमरवाणी यन्त्रालय, अगस्तकुण्डा, काशीमें मुद्रित

॥ पाणिनीयसिद्धान्तकौमुदी ॥

॥ अथ वैदिकप्रकरणम् ॥

॥ प्रथमोऽध्यायः ॥

छन्दसि पुनर्वस्वोरेकवचनम् ॥१।२।६१॥ वा स्यात्। पुनर्वसु नक्षत्रं पुनर्वसू वा। विशाखयोश्च ॥१।२।६२॥ विशाखा नक्षत्रं विशाखे वा। षष्ठीयुक्तश्छन्दसि वा ॥१।४।९॥ पतिशब्दो घिसंज्ञो वा स्यात्। क्षेत्रस्य पतिना वयम्। इह वेति योगं विभज्य छन्दसीत्यनुवर्त्य सर्वे विधयो वैकल्पिकाः। बहुलं छन्दसि इत्यादिरस्यैव प्रपञ्चः। यच्चि भम्। नमोऽङ्गिरोमनुषां वत्युपसंख्यानम् ॥। नभसा तुल्यं नभस्वत्। अङ्गिरस्वदङ्गिरः। मनुष्वदग्ने। वृषण्वस्वश्वयोः ॥। वृषन् वर्षुकं वसु यस्य स वृषण्वसुः। वृषा अश्वो यस्यासौ वृषणश्वः। अयस्मयादीनि च्छन्दसि ॥१।४।२०॥ उभयसंज्ञान्यपीति वक्तव्यमिति॥। स सुष्टुभा स ऋक्वता गणेन। नैनं हिन्वन्त्यपि वाजिनेषु। ते प्राग्धातोः। छन्दसि परेऽपि ॥१।४।८१॥ व्यवहिताश्च ॥१।४।८२॥ हरिभ्यां याह्योक आ। आ मन्द्रैरिन्द्र हरिभिर्याहि। इन्धिभवतिभ्यां च ॥१।२।६॥ अपिल्लिट् कित् स्यात्। समीधे दस्युहन्तमम्। पुत्र ईधे अथर्वणः। बभूव। इदं प्रत्याख्यातम्। इन्धेश्छन्दोविषयत्वाद्भुवो वुको नित्यत्वात्ताभ्यां लिटः किद्वचनानर्थक्यमिति ॥—॥

॥ द्वितीयोऽध्यायः ॥

तृतीया च होश्छन्दसि ॥२।३।३॥ यवाग्वाऽग्निहोत्रं जुहोति। द्वितीया ब्राह्मणे ॥२।३।६०॥ दिवस्तदर्थस्य कर्मणि द्वितीया स्यात्। गामस्य तदहः सभायां दीव्येयुः। चतुर्थ्यर्थे बहुलं छन्दसि। ॥२।३।६२॥ षष्ठी स्यात्। पुरुषमृगश्चन्द्रमसः। गोधाकालकादार्वाघाटस्ते वनस्पतीनाम्। षष्ठ्यर्थे चतुर्थीति वाच्यम् ॥। या खर्वेण पिबति तस्यै खर्वः। यजेश्च करणे ॥२।३।६३॥ घृतस्य घृतेन वा यजते। बहुलं छन्दसि ॥२।४।३९॥ अदो घस्लादेशः। घस्तान्नूनम्। सग्धिश्च मे। हेमन्तशिशिरावहोरात्रे च छन्दसि ॥२।४।२८॥ द्वन्द्वः पूर्ववल्लिङ्गः। हेमन्तशिशिरौ। अहोरात्रे। बहुलं छन्दसि ॥२।४।७३॥ शपो लुक् स्यात्। वृत्रं हनति वृत्रहा। अहिः शयत उपपृक्पृथिव्याः। अदादिभिन्नेष्वपि क्वचिल्लुक्। त्राध्वं नो देवाः। बहुलं छन्दसि ॥२।४।७६॥ श्लुः स्यात्। दाति प्रियाणि चिद्वसु। पूर्णां विवष्टि। मन्त्रे घसह्वरणशवृदहाद्वृच्कृगमिजनिभ्यो लेः। ॥२।४।८०॥ लुक् स्यात्। अक्षन्नमीमदन्त हि। माह्वर्मित्रस्य। धूर्तिः प्रणङ्मर्त्यस्य। सुरुचो वेन आवः। मा न आ धक्। आप्रा द्यावापृथिवी। परावर्ग्भारभृद्यथा। अक्रन्नुषासः। त्वे रयिं

जागृवांसो अनुग्मन्। मन्त्रग्रहणं ब्राह्मणस्याप्युपलक्षणम्। अज्ञत वा अस्य दन्ताः। विभाषानुवृत्तेर्नेह न ता अगृभ्णन्नजनिष्ट हि षः ॥—॥

॥ तृतीयोऽध्यायः ॥

अभ्युत्सादयां प्रजनयां चिकयां रमयामकः पावयांक्रियाद्विदामक्रन्निति छन्दसि। ॥३।१।४२॥ आद्येषु चतुर्षु लुङि आम् अक इत्यनुप्रयोगश्च। अभ्युत्सादयामकः। प्रजनयामकः। चिकयामकः। रमयामकः। पावयांक्रियात्। विदामक्रन्। **गुपेश्छन्दसि** ॥३।१।५०॥ च्लेश्चङ् वा गृहानजूगुपतं युवम्। **नो नयतिध्वनयत्येलयत्यर्दयतिभ्यः** ॥३।१।५१॥ मा त्वायतो जरितुः काममूनयीः। मा त्वाग्निर्ध्वनयीत्। **कृमृदृरुहिभ्यश्छन्दसि** ॥३।१।५९॥ च्लेश्चङ् वा। इदं तेभ्योऽकरं नमः। अमरत्। अदरत्। यत्सानोः सानुमारुहत्। **छन्दसि निष्टर्क्यदेवहूयप्रणीयोन्नीयोच्छिष्यमर्यस्तर्याध्वर्यखन्यखान्यदेवयज्याप्रच्छ्यप्रतिषीव्यब्रह्मवाद्यभाव्यस्ताव्योपचाय्यपृडानि** ॥३।१।१२३॥ कृन्ततेर्निसपूर्वाण्ण्यत्। विपर्यासश्च। निष्टर्क्यं चिन्वीत पशुकामः। स्पर्धन्ते वा उ देवहूये। प्रणीयः। उन्नीयः। उच्छिष्यः। यत्-मर्यः। स्तर्या। ध्वर्यः। खन्यः। खान्यः। शुन्धध्वं दैव्याय कर्मणे देवयज्यायै। आपृच्छ्यं धरुणं वाज्यर्षति। प्रतिषीव्यः। ब्रह्मवाद्यम्। भाव्यः। स्ताव्यः। उपचाय्यपृडम्। हिरण्य इति वक्तव्यम् ॐ। उपचेयपृडमन्यत्। **छन्दसि वनसनरक्षिमथाम्** ॥३।२।२७॥ कर्मण्युपपदे इन् स्यात्। ब्रह्मवनिं त्वा क्षत्रवनिम्। उत नो गोषणिं धियम्। ये पथां पथिरक्षयः। चतुरक्षौ पथिरक्षी। हविर्मथीनामभि। **छन्दसि सहः** ॥३।२।६३॥ ण्विः स्यात्। पृतनाषाट्। **वहश्च** ॥३।२।६४॥ दित्यवाट्। **कव्यपुरीषपुरीष्येषु ञ्युट्** ॥३।२।६५॥ कव्यवाहनः। पुरीषवाहनः। पुरीष्यवाहनः। **हव्येऽनन्तः पादम्** ॥३।२।६६॥ अग्निश्च हव्यवाहनः। **जनसनखनक्रमगमो विट्** ॥३।२।६७॥ अब्जाः। गोजाः। गोषा इन्दो नृषा असि। इयं शुष्मेभिर्बिसखा इवारुजत्। आ दधिक्राः शवसा पञ्च कृष्टीः। अग्रेगाः। **मन्त्रे श्वेतवहोक्थशस्पुरोडाशो ण्विन्** ॥३।२।७१॥ श्वेतवहादीनां डस्पदस्येति वक्तव्यम् ॐ। श्वेतवाः। श्वेतवाहौ। श्वेतवाहः। उक्थशा यजमानः। उक्थशासौ। उक्थशासः। पुरोडाः। **अवे यजः** ॥३।२।७२॥ अवयाः। अवयाजौ। अवयाजः। **अवयाः श्वेतवाः पुरोडाश्च** ॥८।२।६७॥ सम्बुद्धौ दीर्घा निपात्यन्ते। चादुक्थशाः। **विजुपे छन्दसि** ॥३।२।७३॥ उपयट्। **आतो मनिन्क्वनिब्वनिपश्च** ॥३।२।७४॥ सुदामा। सुधीवा। सुपीवा। भूरिदावा। घृतपावा। कीलालपाः। **बहुलं छन्दसि** ॥३।२।८८॥ क्विप् स्यात्। मातृहा। पितृहा। छन्दसि लिट् ॐ। भूतसामान्ये। अहं द्यावापृथिवी आ ततान। लिटः कानज् वा ॐ क्वसुश्च ॐ। चक्राणा वृष्णि। यो नो अग्ने अररिवाँ अघायुः। णेश्छन्दसि ॐ। इष्णुच्। वीरुधः। पारयिष्णवः। भुवश्च ॐ भविष्णुः। छन्दसि परेच्छायां क्यच उपसंख्यानम् ॐ क्याच्छन्दसि। ॐ। अघायुः। एरजधिकारे जवसवौ छन्दसि वाच्यौ ॐ। जवे याभिर्यूनः। ऊर्वोर्मे जवः। देवस्य सवितुः सवे। **मन्त्रे वृषेषपचमनविदभूवीरा उदात्तः** ॥३।३।९६॥ क्तिन् स्यात्। वृष्टिं दिवः। सुम्नमिष्टये। पचात्पक्तीरुत। इयं ते नव्यसी मतिः। वित्तिः। भूतिः। अग्न आ याहि वीतये। रातौ स्यामोभयासः। **छन्दसि गत्यर्थेभ्यः** ॥३।३।१२९॥ युच्। सूपसदनोऽग्निः। **अन्येभ्योऽपि दृश्यते** ॥३।३।१३०॥ सुवेदनामकृणो-

ब्राह्मणे गाम्। छन्दसि लुङ्लङ्लिटः ॥३।४।६॥ सर्वकालेष्वेते वा स्युः। देवो देवेभिरागमत्। लोडर्थे लुङ्। इदं तेभ्योऽकरं नमः। अग्निमद्य होतारमवृणीतायं यजमानः। अद्या ममार। लिङर्थे लेट् ॥३।४।७॥ सिब्बहुलं लेटि ॥३।४।३४॥ इतश्च लोपः परस्मैपदेषु ॥३।४।९७॥ लेटोऽडाटौ ॥३।४।९४॥ तौ च पितौ। सिब्बहुलं णिद्वक्तव्यः ॐ। प्र ण आयूंषि तारिषत्। सुपेशसस्करति जोषिषद्धि। आ साविषदर्शसानाय। पताति दिद्युत्। प्रियः सूर्ये। प्रियो अग्ना भवाति। स उत्तमस्य ॥३।४।९८॥ वा सलोपः। करवाव। करवावः। आत ऐ ॥३।४।९४॥ सुतेभिः सुप्रयसा मादयैते। यो यजाति यजात इत्। वैतोऽन्यत्र ॥३।४।९६॥ पशूनामीशै। ग्रहा गृह्यान्तै। उपसंवादाशङ्कयोश्च ॥३।४।८॥ अहमेव पशूनामीशै। नेज्जिह्मायन्तो नरकं पताम। छन्दसि शायजपि ॥३।१।८४॥ हृग्रहोर्भश्छन्दसि ॐ। गृभाय जिह्वया मधु। बधान देव सवितः। गृभ्णामि ते। मध्वा जभार। व्यत्ययो बहुलम् ॥३।१।८५॥ विकरणानाम्। आण्डा शुष्मस्य भेदति। जरसा मरते पतिः। इन्द्रो वस्तेन नेषतु। इन्द्रेण युजा तरुषेम वृत्रम्। त्रयो विकरणाः। सुप्तिङुपग्रहलिङ्गनराणां कालहलच्स्वरकर्तृयङां च ॥ व्यत्ययमिच्छति शास्त्रकृदेषां सोऽपि च सिद्ध्यति बाहुलकेन ॥१॥ धुरि दक्षिणायाः। चषालं ये अश्वयूपाय तक्षति। ब्रह्मचारिणमिच्छते। प्रतीपमन्य ऊर्मिर्युध्यति, मधोस्तृप्ता इवासते। नरः पुरुषः। अधा स वीरैर्दशभिर्वियूयाः। श्वोऽग्नीनाधास्यमानेन। तमसो गा अदुक्षत्। मित्र वयं च सूरयः। अन्नादाय। यङ् प्रत्याहारः। लिङ्याशिष्यङ् ॥३।१।८६॥ मन्त्रं वोचेमाग्नये। दृशेरग् वक्तव्यःॐ। पितरं च दृशेयं मातरं च। छन्दस्युभयथा ॥३।४।११७॥ धात्वधिकारे प्रत्ययः सार्वधातुकार्धधातुकसंज्ञः स्यात्। वर्धन्तु त्वा सुष्टुतयः। विशृण्विरे। वव्रिर्वज्रम्। पपिः सोमम्। ददिर्गाः। जग्मिर्युवा। जघ्निर्वृत्रममित्रियम्। ततुरिः। जगुरिः। तुमर्थे सेसेनसेअसेन्क्सेकसेनध्यैअध्यैन्कध्यैकध्यैन्शध्यैशध्यैन्तवैतवेङ्तवेनः ॥३।४।९॥ वक्षे रायः। ता वामेषे। शरदो जीवसे धाः। प्रेषे। गवामिव श्रियसे। जठरं पृणध्यै। आहुवध्यै। राधसः सह मादयध्यै। वायवे पिबध्यै। दातवा उ। सूतवे। कर्तवे। प्रयै रोहिष्यै अव्यथिष्यै ॥३।४।१०॥ तुमर्थे निपात्यन्ते। दृशे विख्ये च ॥३।४।११॥ शकि णमुल्कमुलौ ॥३।४।१२॥ विभाजं नाशकत्। अपलुपं नाशकत्। ईश्वरे तोसुन्कसुनौ ॥३।४।१३॥ ईश्वरो विचरितोः। ईश्वरो विलिखः। कृत्यार्थे तवैकेन्केन्यत्वनः ॥३।४।१४॥ न म्लेच्छितवै। अवगाहे। दिदृक्षेण्यः। भूर्यस्पष्ट कर्त्वम्। अवचक्षे च ॥३।४।१५॥ रिपुणा नावचक्षे। भावलक्षणे स्थेण्कृञ्वदिचरिहुतमिजनिभ्यस्तोसुन् ॥३।४।१६॥ आसंस्थातोः सीदन्ति। उदेतोः। अपकर्तोः। प्रवदितोः। प्रचरितोः। होतोः। आतमितोः। काममाविजनितोः संभवामः। सृपितृदोः कसुन् ॥३।१।१७॥ पुरा क्रूरस्य विसृपो विरप्शिन्। पुरा जत्रुभ्य आतृदः ॥

॥ चतुर्थोऽध्यायः ॥

रात्रेश्चाजसौ ॥४।१।३१॥ ङीप्स्यात्। रात्री व्यख्यदायती। नित्यं छन्दसि ॥४।१।४६॥ ङीष्। बह्वीषु हि त्वा। भुवश्च ॥४।१।४७॥ विभ्वी। प्रभ्वी। मुद्गलाच्छन्दसि लिच्चॐ। रथीरभून्मुद्गलानी।

दीर्घजीह्वी च छन्दसि ॥४।१।५९। आसुरी वै दीर्घजिह्वी देवानां यज्ञवाट्। **कद्रुकमण्डल्वोश्छन्दसि** ॥४।१।७१॥ ऊङ् स्यात्। कद्रूश्च वै। कमण्डलूः। गुग्गुलुमधुजतुपतयालूनामिति वक्तव्यम्॥। गुग्गुलूः। मधूः। जतूः। पतयालूः। आविष्ट्यस्योपसंख्यानं छन्दसि॥। आविष्ट्यो वर्धते। **छन्दसि ठञ्** ॥४।३।१९॥ वार्षिकम्। **वसन्ताच्च** ॥४।३।२०॥ वासन्तिकम्। **हेमन्ताच्च** ॥४।३।२१॥ हैमन्तिकम्। शौनकादिभ्यश्छन्दसि॥। शौनकिनः। वाजसनेयिनः। **द्व्यचश्छन्दसि** ॥४।३।१५०॥ मयट्। शरमयं बर्हिः। यस्य पर्णमयी जुहूः। **नोत्वद्वर्ध्रबिल्वात्** ॥४।३।१५१॥ मौञ्जं शिक्यम्। वार्ध्री रज्जुः। बैल्वो यूपः। **ढश्छन्दसि** ॥४।४।१०६॥ सभेयो युवा। **भवे छन्दसि** ॥४।४।११०॥ सप्तम्यन्ताद्यत्। मेध्याय च विद्युत्याय च। पक्षे यथायथं शैषिकाः। मौञ्जवतः। सोमस्येव मौञ्जवतस्य भक्षः। आ चतुर्थसमाप्तेश्छन्दोऽधिकारः। **पाथोनदीभ्यां ड्यण्** ॥४।४।१११॥ तमु त्वा पाथ्यो वृषा। चनो दधीत नाद्यो गिरो मे। **वेशन्तहिमवद्भ्यामण्** ॥४।४।११२॥ वैशन्तीभ्यः स्वाहा। हैमवतीभ्यः स्वाहा। **स्रोतसो विभाषा ड्यड्ड्यौ** ॥४।४।११३॥ स्रोत्यः। स्रोतस्यः। **सगर्भसयूथसनुताद्यन्** ॥४।४।११४॥ अनुभ्राता सगर्भ्यः। अनुसखा सयूथ्यः। यो नः सनुत्य उतवा जिघत्नु। **तुग्राद्घन्** ॥४।४।११५॥ आ वः शमं वृषभं तुग्र्यासु। तुग्रियास्विति शाखान्तरे। **अग्राद्यत्** ॥४।४।११६॥ **घच्छौ च** ॥४।४।११७॥ अग्र्यः। अग्रियः। अग्रीयः। **समुद्राभ्राद्घः** ॥४।४।११८॥ समुद्रिया अप्सरसो मनीषिणम्। नानदतो अभ्रियस्येव घोषाः। **बर्हिषि दत्तम्** ॥४।४।११९॥ बर्हिष्येषु निधिषु प्रियेषु। **दूतस्य भागकर्मणी** ॥४।४।१२०॥ दूत्यम्। **रक्षोयातूनां हननी** ॥४।४।१२१॥ या ते अग्ने रक्षस्या तनूः। **रेवतीजगतीहविष्याभ्यः प्रशस्ये** ॥४।४।१२२॥ रेवत्यम्। जगत्यम्। हविष्यम्। **असुरस्य स्वम्** ॥४।४।१२३॥ असुर्यं देवेभिर्धायि विश्वम्। **मायायामण्** ॥४।४।१२४॥ आसुरी माया। **तद्वानासामुपधानो मन्त्र इतीष्टकासु लुक् च मतोः** ॥४।४।१२५॥ वर्चस्याः। ऋतव्याः। **अश्विमानण्** ॥४।४।१२६॥ आश्विनीरुपदधाति। **वयस्यासु मूर्ध्नो मतुप्** ॥४।४।१२७॥ प्रथमस्य मतोर्लुक् च। मूर्धन्वतीरुपदधाति। **मत्वर्थे मासतन्वोः** ॥४।४।१२८॥ यत् स्यात्। नभस्यो मासः। ओजस्या तनूः। **मधोर्ञ च** ॥४।४।१२९॥ माधवः। मधव्यः। **ओजसोऽहनि यत्खौ** ॥४।४।१३०॥ ओजस्यमहः। ओजसीनं वा। **वेशोयशआदेर्भगाद्यल्** ॥४।४।१३१॥ वेशोभग्यः। वेशोभगीनः। यशोभग्यः। यशोभगीनः। **ख च** ॥४।४।१३२॥ **पूर्वैः कृतमिनयौ च** ॥४।४।१३३॥ गम्भीरेभिः पथिभिः पूर्विणेभिः। ये ते पन्थाः सवितः पूर्व्यासः। **अद्भिः संस्कृतम्** ॥४।४।१३४॥ यस्येदमप्यं हविः। **सहस्रेण सम्मितौ घः** ॥४।४।१३५॥ सहस्रियासो अपां नोर्मयः। **मतौ च** ॥४।४।१३६॥ सहस्रियः। **सोममर्हति यः** ॥४।४।१३७॥ सोम्यो ब्राह्मणः। **मये च** ॥४।४।१३८॥ सोम्यं मधु। **मधोः** ॥४।४।१३९॥ मधव्यः। **वसोः समूहे च** ॥४।४।१४०॥ वसव्यः। अक्षरसमूहे छन्दस उपसंख्यानम्॥। छान्दस्यः। **नक्षत्राद्घः** ॥४।४।१४१॥ नक्षत्रियेभ्यः स्वाहा। **सर्वदेवात्तातिल्** ॥४।४।१४२॥ सर्वतातिम्। देवतातिम्। **शिवशमरिष्टस्य करे** ॥४।४।१४३॥ शिवतातिः। याभिः शन्ताती भवथो ददाशुषे। अथो अरिष्टतातये। **भावे च** ॥४।४।१४४। शिवतातिः। शन्तातिः। अरिष्टतातिः॥ — ॥

॥ पञ्चमोऽध्यायः ॥

सप्तनोऽञ्छन्दसि ॥५।१।६१॥ सप्त साप्तानि असृजत् । शन्शतोर्डिनिश्छन्दसि तदस्य परिमाणमित्यर्थे वाच्यः॥ । पञ्चदशिनोऽर्धमासाः । त्रिंशिनो मासाः । विंशतेश्चेति वाच्यम्॥ । विंशिनोऽङ्गिरसः । युष्मदस्मदोः सादृश्ये वतुब्वाच्यः॥ । त्वावतः पुरुवसो । न त्वावाँ अन्यः । यज्ञं विप्रस्य मावतः । **छन्दसि च** ॥५।१।६७॥ सादन्यं विदथ्यम् । **वत्सरान्ताच्छश्छन्दसि** ॥५।१।९१॥ इद्वत्सरीयः । **संपरिपूर्वात्ख च** ॥५।१।९२॥ संवत्सरीणः । संवत्सरीयः । परिवत्सरीणः । परिवत्सरीयः । **छन्दसि घस्** ॥५।१।१०६॥ भाग ऋत्वियः । **उपसर्गाच्छन्दसि धात्वर्थे** ॥५।१।११८॥ स्वार्थे वतिः स्यात् । यदुद्वतो निवतः । **थट् च छन्दसि** ॥५।३।५०॥ पञ्चथम् । पञ्चमम् । छन्दसि परिपन्थिपरिपरिणौ पर्यवस्थातरि । अपत्यं परिपन्थिनम् । मात्वा परिपरिणो विदन् । **बहुलं छन्दसि** ॥५।२।१२२॥ छन्दोविन्प्रकरणेऽष्ट्रामेखलाद्वयोभयरुजाहृदयानां दीर्घश्चेति वक्तव्यम्॥ । मंहिष्ठमुभयाविनम् । शुनमष्ट्रा व्यचरत् । छन्दसीवनिपौ च वक्तव्यौ॥ । रथीरभूत् । सुमङ्गलीरियं वधूः । मघवानमीमहे । **तयोर्दार्हिलौ च छन्दसि** ॥५।३।२०॥ इदा हि व उपस्तुतिम् । तर्हि । **था हेतौ च छन्दसि** ॥५।३।२६॥ कथा ग्रामं न पृच्छसि । कथा दाशेम । **पश्च पश्चा च छन्दसि** ॥५।३।३३॥ अवरस्यास्तात्यर्थे । पश्च हि सः । नो ते पश्चा । तुश्छन्दसि । आसुतिं करिष्ठः । दोहीयसी धेनुः । **प्रत्नपूर्वविश्वेमात्थाल् छन्दसि** ॥५।३।१११॥ इवार्थे । तं प्रत्नथा पूर्वथा विश्वथेमथा । **अमु च छन्दसि** ॥५।४।१२॥ प्रतं नय प्रतरम् । **वृकज्येष्ठाभ्यां तिल्तातिलौ च छन्दसि** ॥५।४।४०१॥ स्वार्थे । यो नो दुरेवो वृकतिः । ज्येष्ठतातिं बर्हिषदम् । **अनसन्तान्नपुंसकाच्छन्दसि** ॥५।४।१०३॥ तत्पुरुषाट् टच् । ब्रह्मसामं भवति । देवच्छन्दसानि । **बहुप्रजाश्छन्दसि** ॥५।४।१२३॥ बहुप्रजा निर्ऋतिमाविवेश । **छन्दसि च** ॥५।४।१४२॥ दन्तस्य दतृः स्यात् । उभयतोदतः प्रतिगृह्णाति । **ऋतश्छन्दसि** ॥५।४।१५८॥ कब्न । हतमाता ॥

॥ षष्ठोऽध्यायः ॥

एकाचो द्वे प्रथमस्य । छन्दसि वेति वक्तव्यम्॥ । यो जागार । दाति प्रियाणि । **तुजादीनां दीर्घोऽभ्यासस्य** ।६।१।७। प्रभरा तूतुजानः । सूर्यं मामहानम् । दाधार यः पृथिवीम् । स तूताव । **बहुलं छन्दसि** ।६।१।३४। ह्वः संप्रसारणं स्यात् । इन्द्रमाहुव ऊतये । ऋचि त्रेरुत्तरपदादिलोपश्च छन्दसि॥ । तृचं सूक्तम् । रयेर्मतौ बहुलम्॥ । रेवान् । रयिमान्पुष्टिवर्धनः । **चायः की** ।६।१।३५। न्य न्यं चिक्युर्न निचिक्युरन्यम् । **अपस्पृधेथामानृचुरानृहुश्चिच्युषेतित्याजश्राताश्रितमाशीराशीर्ताः** ॥ ६ । १ । ३६ ॥ एते निपात्यन्ते । इन्द्रश्च विष्णो यदपस्पृधेथाम् । अर्कमानृचुः । वसून्यानृहुः । चिच्युषे । यस्तित्याज । श्रातास्त इन्द्र सोमाः । श्रिता नो ग्रहाः । आशीरं दुहे । मध्यत अशीर्तः । **खिदेश्छन्दसि** ॥ ६। १ । ५२ ॥ एच आद्वा । चिखाद । चिखेद । **शीर्षश्छन्दसि** ॥ ६ । १ । ६० ॥ शीर्ष्णः शीर्ष्णो जगतः । **वा छन्दसि** ॥ ६ । १ । १०६ ॥ पूर्वसवर्णदीर्घः । वाराही । वाराह्यौ । मानुषीरीलते विशः । अमि पूर्वः । संप्रसारणाच्च । इत्यत्रापि वा संबध्यते । शमीं च शम्यं च । सूर्यं

सुषिरामिव । इज्यमानः । यज्यमानः । **शेश्छन्दसि बहुलम्** ॥६।१।७०॥ लोपः स्यात् । या ते गात्राणाम् । ता ता पिण्डानाम् । एमन्नादिषु छन्दसि पररूपं वाच्यम् ✽ । अपां त्वेमन् । अपां त्वोद्मन् । **भय्यप्रवय्ये च छन्दसि** ॥ ६ । १ । ८३ ॥ भय्यः । प्रवय्या । हृदय्या उपसंख्यानम् ✽ । हृदय्या आपः । **प्रकृत्यान्तःपादमव्यपरे** ॥६।१।११५॥ एङ् प्रकृत्या स्यादति परे । उपप्रयन्तो अध्वरम् । सुजाते अश्वसूनृते । **अव्यादवद्यादवक्रमुरव्रतायमवन्त्ववस्युषु च** ॥ ६ । १ । ११६ ॥ वसुभिर्नो अव्यात् । मित्रमहो अवद्यात् । मा शिवासो अवक्रमुः । ते नो अव्रत । शतधारो अयं मणिः । ते नो अवन्तु[1] । कुशिकासो अवस्यवः । **यजुष्युरः** ॥६।१।११७॥ उरो अन्तरिक्षम् । **आपो जुषाणो वृष्णो वर्षिष्ठेऽम्बेऽम्बालेऽम्बिके पूर्वे** ॥६।१।११८। आपो अस्मान्मातरः । जुषाणो अग्निराज्यस्य । वृष्णो अंशुभ्याम् । वर्षिष्ठे अधिनाके । अम्बे अम्बाले अम्बिके । **अङ्ग इत्यादौ च** ॥६।१।११९॥ प्राणो अङ्गे अङ्गे अदीध्यत् । **अनुदात्ते च कुधपरे** ॥६।१।१२०॥ अयं सो अग्निः । अयं सो अध्वरः । **अवपथासि च** ॥६।१।१२१। त्रीरुद्रेभ्यो अवपथाः । **आङोऽनुनासिकश्छन्दसि** ॥६।१।१२६। अभ्र आँ अपः, गभीर आँ उग्रपुत्रे । ईषाअक्षादीनां छन्दसि प्रकृतिभावो वक्तव्यः ✽ । ईषा अक्षो हिरण्ययः । ज्या इयम् । पूषा अविष्टु । **स्यश्छन्दसि बहुलम्** ॥६।१।१३३॥ सोर्लोपः । एष स्य भानुः । **ह्रस्वाच्चन्द्रोत्तरपदे मन्त्रे** ॥६।१।१५१॥ सुडागमः स्यात् । हरिश्चन्द्रो मरुद्गणः । सुश्चन्द्र दस्म । **पितरामातरा च छन्दसि** ॥६।३।३३॥ द्वन्द्वे निपातः । आ मा गन्तां पितरामातरा च । चाद्विपरीतमपि । न मातरापितरा नू चिदिष्टौ । समानस्येति सादेशः । सगर्भ्यः । छन्दसि स्त्रियां बहुलम् ✽ । विश्वाची च घृताची च । देवद्रीचीं नयत देवयन्तः । कद्रीची । **सधमादस्थयोश्छन्दसि** ॥६।३।९६॥ इन्द्र त्वास्मिन्सधमादे । सोमः सधस्तम् । **पथि च छन्दसि** ॥६।३।१०८॥ कवपथः । कापथः । कुपथः । **साढ्यै साढ्वा साढेति निगमे** ॥६।३।११३॥ निपात्यन्ते । मरुद्भिरुग्रः पृतनासु साल्हा[2] । **छन्दसि च** ॥६।३।१२६। आत्वं स्यात् । अष्टापदी । **मन्त्रे सोमाश्वेन्द्रियविश्वदेव्यस्य मतौ** ॥६।३।१३१॥ अश्वावतीं सोमावतीम् । इन्द्रियावान् मदिन्तमः । विश्वकर्मणा विश्वदेव्यावता । **ओषधेश्च विभक्तावप्रथमायाम्** ॥६।३।१३२॥ यदोषधीभ्यः । अदधात्योषधीषु । **ऋचि तुनुघमक्षुतङ्कुत्रोरुष्याणाम्** ॥६।३।१३३॥ आतू न इन्द्र । नू मर्तः । उत वा घा स्यालात् । मक्षू गोमन्तमीमहे । भरता जातवेदसम् । कूमनाः । अत्रा ते भद्रा । यत्रा नश्चक्रा । उरुष्याणः । **इकः सुञि** ॥६।३।१३४॥ अभीषुणः सखीनाम् । **द्व्यचोऽतस्तिङः** ॥६।३।१३५॥ विद्मा हि चक्रा जरसम् । **निपातस्य च** ॥६।३।१३६ । एवा हि ते । **अन्येषामपि दृश्यते** ।६।३।१३७। पूरुषः । दण्डादण्डि । **छन्दस्युभयथा** ॥६।४।५ । नामि दीर्घो वा । धातॄणाम् । धातृणाम् । **वा षपूर्वस्य निगमे** ॥६।४।९। वा दीर्घोऽसंबुद्धौ सर्वनामस्थाने । ऋभुक्षाणम् ऋभुक्षणम् । **जनिता मन्त्रे** ॥६।४।५३॥ णिलोपः । यो नः पिता जनिता । **शसिता यज्ञे** ॥६।४।५४।

---

(१) तेनोऽवन्तु, इत्यादौ प्रकृतिभावाभावो बाहुलकात्समाधेयः । प्रातिशाख्ये तु वाचनिक एवायमर्थः ।

(२) अचोर्मध्यस्थस्य डस्य लः, ढस्य ल्हश्च प्रातिशाख्ये विहितः ।

युप्लुवोर्दीर्घश्छन्दसि ॥६।४।५८॥ वियूय, विप्लूय। छन्दस्यपि दृश्यते ॥६।४।७३॥ अनजादीनामाट्। आनट्। आवः। बहुलं छन्दस्यमाङ्योगेऽपि ॥६।४।७५। जनिष्ठा उग्रः सहसे तुराय। मा वः क्षेत्रे परबीजान्यवाप्सुः। इरयो रे ॥६।४।७६॥ प्रथमं दध्र आपः। छन्दस्युभयथा ॥६।४।८६॥ यणियङुवङौ। वनेषु चित्रं विभ्वम् विभुवं वा। सुध्यो ३ हव्यमग्ने सुधियो वा। तन्वादीनां छन्दसि बहुलम्॥। तन्वं पुषेम तनुवं वा। त्र्यम्बकम्। त्रियम्बकम्। तनिपत्योश्छन्दसि ॥६।४।९९॥ उपधालोपः क्ङिति। वितत्निरे कवयः। शकुना इव पप्तिम। घसिभसोर्हलि च ॥६।४।१००॥ सग्धिश्च मे। बब्धां ते हरी धानाः। श्रुशृणुपॄकृवृभ्यश्छन्दसि ॥६।४।१०२॥ हेधिः। श्रुधी हवम्। शृणुधी गिरः। रायस्पूर्धि। उरुणस्कृधि। वा छन्दसि ॥३।४।८८॥ हिरपिद्धा। अङ्कितश्च ॥६।४।१०३॥ रारन्धि। अस्मे प्रयन्धि। युयोधि जातवेदः। मन्त्रेष्वाङ्यादेरात्मनः ॥६।४।१४१॥ आदेर्लोपः। त्मना देवेषु। विभाषर्जोश्छन्दसि ॥६।४।१६२॥ रः स्याद्वा। त्वं रजिष्ठमनुनेषि। ऋजिष्ठं वा। ऋत्व्यवास्त्व्यवास्त्वमाध्वीहिरण्ययानि छन्दसि ॥६।४।१७५॥ ऋतौ भवमृत्व्यम्। वास्तुनि भवं वास्त्व्यम्, वास्त्वं च। माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः। हिरण्ययेन सविता रथेन ॥—॥

॥ सप्तमोऽध्यायः ॥

बहुलं छन्दसि ॥७।१।८॥ रुडागमः। धेनवो दुह्रे। घृतं दुह्रते। अदृश्रमस्य। बहुलं छन्दसि ॥७।१।१०॥ अग्निर्देवेभिः। नेतराच्छन्दसि ॥७।१।२६॥ स्वमोरद्ड् न। वार्त्रघ्नमितरम्। क्त्वापि छन्दसि ॥७।१।३८॥ यजमानं परिधापयित्वा। सुपां सुलुक् पूर्वसवर्णाच्छेयाडाड्यायाजालः ॥७।१।३९। ऋजवः सन्तु पन्थाः[1]। परमे व्योमन्[2]। धीती[3] मती। सुष्टुती। या सुरथा[4] रथीतमोभा देवा दिविस्पृशा। अश्विना। नताद्[5] ब्राह्मणम्। या[6] देव विद्म ता त्वा। न युष्मे[7] वाजबन्धवः। अस्मे[8] इन्द्रा बृहस्पती। उरुया[9]। धृष्णुया। नाभा[10] पृथिव्याः। ता अनु[11] ष्ठ्योच्यावयतात्। साधुया[12]। वसन्ता[13] यजेत। इयाडियाजीकाराणामुपसंख्यानम्॥। उर्विया। दार्विया। सुक्षेत्रिया। दृतिं न शुष्कं सरसी[14] शयानम्। आङ्याजयारामुपसंख्यानम्॥। प्र बाहवा[15] सिसृतम्। स्वप्नया। स नः सिन्धुमिव नावया। अमो मश् ॥७।१।४०॥ वधीं[16] वृत्रम्। लोपस्त आत्मनेपदेषु ॥७।१।४१॥ देवा अदुह्र। दक्षिणतः शये। ध्वमो ध्वात् ॥७।१।४२॥ अन्तरेवोष्माणं वारयध्वात्। यजध्वैनमिति च ॥७।१।४३॥ यजध्वैनं प्रियमेधाः। तस्य तात् ॥७।१।४४। गात्रमस्या नूनं कृणुतात्[17]। सूर्यं चक्षुर्गमयतात्। तप्तनप्तनथनाश्च ॥७।१।४५। शृणोत[18] ग्रावाणः। सुनोतन पचत ब्रह्मवाहसे। दधातन द्रविणं चित्रमस्मे। मरुतस्तज्जुजुष्टन। विश्वेदेवासो मरुतो यतिष्ठन। इदन्तो मसि[19] ॥७।१।४६॥ नमो

---

(१) पन्थान इति प्राप्ते। २ ङेर्लुक्। ३ टाविभक्तौ पूर्वसवर्णदीर्घः। ४ यावित्यादि प्राप्ते आ भवति। ५ नतमिति प्राप्ते आत्। ६ यमिति प्राप्ते। ७ युष्मासु प्राप्ते शे। ८ अस्मभ्यं प्राप्ते शे। ९ उरुणा प्राप्ते या १० नाभाविति प्राप्ते डा। ११ आङो ड्या। १२ साध्विति प्राप्ते। १३ वसन्ते इति प्राप्ते। १४ ङेरीकारः। १५ बाहुनेत्यादि प्राप्ते। १६ अवधिषमिति प्राप्ते। १७ कृणुतेति प्राप्ते। १८ शृणुतेति प्राप्ते। १९ मस इगागमोऽन्ते।

भरन्त एमसि।—। त्वमस्माकं तव स्मसि। क्त्वो यक् ।७।१।४७। दिवं सुपर्णो गत्वाय। इष्ट्वीनमिति च ।७।१।४८। इष्ट्वीनं देवान्। स्नात्व्यादयश्च ।७।१।४९। स्विन्नः स्नात्वी मलादिव। पीत्वी सोमस्य वावृधे। आज्जसेरसुक् ।७।१।५०। देवासः। ब्राह्मणासः। श्रीग्रामण्योश्छन्दसि ।७।१।५६। आमो नुट्। श्रीणामुदारो धरुणो रयीणाम्। सूत ग्रामणीनाम्। गोः पादान्ते ।७।१।५७। विद्मा हि त्वा गोपतिं शूर गोनाम्। छन्दस्यपि दृश्यते ।७।१।७६ अस्थ्यादीनामनङ्। इन्द्रो दधीचो अस्थभिः। ई च द्विवचने ।७।१।७७। अक्षीभ्यां ते नासिकाभ्याम्। दृक्स्ववस्स्वतवसां छन्दसि ।७।१।८३। नुम् स्यात् सौ। कीदृङ्ङिन्द्रः। स्ववान्। स्वतवान्। बहुलं छन्दसि ।७।१।१०३। ततुरिः। जगुरिः पराचैः। हु ह्वरेश्छन्दसि ।७।२।३१। अह्रुतमसि हविर्धानम्। अपरिह्वृताश्च ।७।२।३२। ह्वादेशो न। अपरिह्वृता सनुयाम वाजम्। सोमे ह्वरितः ।७।२।३३। इड्गुणौ निपात्येते। मा नः सोमो ह्वरितः। ग्रसितस्कभितस्तभितोत्तभितचत्तविकस्ताविशस्तृशंस्तृशास्तृतरुतृतरूतृवरुतृवरूतृवरूत्रीरुज्ज्वलितिक्षरितिवमित्यमितीति च ।७।२।३४। अष्टादश निपात्यन्ते। युवं शाचीभिर्ग्रसितामसुञ्चतम्[1]। विष्कभिते अजरे। येन स्वः स्तभितम्। सत्येनोत्तभिता[2]भूमिः। चत्तो[3] इतश्चत्तामुतः। त्रिधा ह श्यावमश्विना विकस्तम्। उत्तानाया हृदयं यद्विकस्तम्। एकस्त्वष्टुरश्वस्याविशस्ता[4]। ग्रावग्राभ उत शंस्ता। प्रशास्ता पोता। तरु[5]तारं रथानाम्। तरूतारम्। वरुतारम्, वरूतारम्। वरूत्रीभिः सुशरणो नो अस्तु। बभूथाततन्थजगृभ्मववर्थेति निगमे। विद्मा तमुत्सं यत आबभूथ[6]। येनान्तरिक्षमुर्वाततन्थ। जगृभ्मा ते दक्षिणमिन्द्र हस्तम्। त्वं ज्योतिषा वितमो ववर्थ। सनिंससनिवांसम् ।७।२।६९। अग्निंत्वाग्ने सनिंस[7]सनिवांसम्। पावकादीनां छन्दसि प्रत्ययस्थात् कादित्वं नेति वाच्यम्॥ हिरण्यवर्णाः शुचयः पावकाः। घोर्लोपो लेटि वा ।७।३।७०। दधद्रत्नानि दाशुषे। सोमो ददद् गन्धर्वाय। यदग्निरग्नये ददात्। मीनातेर्निगमे ।७।३।८९। शिति ह्रस्वः। प्रमिणन्ति व्रतानि। बहुलं छन्दसि ।७।३।९७। सर्वमा[8] इदम्। गोभिरक्षाः[9]। जसादिषु छन्दसि वावचनं प्राङ्णौ चङ्युपधायाः॥ अधा शतक्रत्वो यूयम्। पश्वे नृभ्यो यथा गवे। नाभ्यस्तस्याचि इति निषेधे बहुलं छन्दसीति वक्तव्यम्॥ अनुषग्जुजोषत्। नित्यं छन्दसि ।७।४।८। चङ्युपधाया ऋवर्णस्य ऋन्नित्यम्। अवीवृधत्। न छन्दस्यपुत्रस्य ।७।४।३५। क्यचि ईत्वदीर्घौ न। मित्रयुः। अपुत्रादीनामिति वाच्यम्॥ जनीयन्तोऽन्वग्रवः। दुरस्युर्द्रविणस्युर्वृषण्यतिरिषण्यति ।७।४।३६। क्यचि निपात्यन्ते। दुष्टीयति। द्रविणीयति। वृषीयति। रिष्टीयति। अश्वाघस्यात्

---

(१) आद्येषु त्रिषु निष्ठायामिट्प्रतिषेधे प्राप्त इट् निपात्यते। (२) स्तभितेत्येव सिद्धे उत्पूर्वस्य पुनर्निपातनमन्योपसर्गस्य मा भूत्। (३) चते याचने—कस गतौ अभ्यां क्तस्येडभावः। (४) शसु शंसु शासु एभ्यस्तृच इडभावः। (५) तरतेर्वृङ्वृञोश्च तृच उट् ऊट् आगमौ। (६) बभूथादिषु इडभावो निपात्यते। (७) सनिं पूर्वात् सनतेः सनोतेर्वा क्वसोरिट्-एत्वाभ्यासलोपाभावश्च निपात्यते। (८) अस्तेर्लङ् तिप इडभावोऽपृक्तत्वाद्धल्ङ्यादिलोपे रुत्वविसर्गौ। (९) सिच इडभावोऽट् च। शेषं पूर्ववत्।

।७।४।३७। अश्वायन्तो मघवन्। मा त्वा वृका अघायवः। देवसुम्नयोर्यजुषि काठके ।७।४।३८। देवायन्तो यजमानाः। सुम्नायन्तो हवामहे। कव्यध्वरपृतनस्यर्चि लोपः ।७।४।३९। सपूर्वया निविदा कव्यतायोः। अध्वर्युं वा मधुपाणिम्। दमयन्तं पृतन्युम् हवामहे। विभाषा छन्दसि ।७।४।४४। हित्वा शरीरम्। हीत्वा वा। सुधित वसुधित नेमधित धिष्व धिषीय च ।७।४।४५।। गर्भं माता सुधितं वक्षणासु। वसुधितमग्नौ। नेमधिता न पौंस्या। क्विन्यपि दृश्यते। उत श्वेतं वसुधितिं निरेके। धिष्व वज्रं दक्षिण इन्द्रहस्ते। सुरेता रेता धिषीय। मासश्छन्दसीति वक्तव्यम् ॐ। माद्भिः। शरद्भिः। स्ववः स्वतवसोरुषसश्चेष्यते ॐ। स्ववद्भिः। स्वतवद्भिः। समुषद्भिरजायथाः। कृपेश्छन्दसि ।७।४।६४। यङ्यभ्यासचुत्वन्न। करीकृष्यते। दाधर्ति दर्धर्ति[1] दर्धर्षि बोभूतु[2] तेतिक्ते[3]ऽलर्ष्यापनीफणत्सं-सनिष्यदत्करिक्रत्कनिक्रदद्भरिभ्रद्दविध्वतोदविद्युतत्तरित्रतः[4] सरीसृपतं वरीवृजन्मर्मृज्याऽऽगनीगन्तीति च ।७।४।६५। एतेऽष्टादश निपात्यन्ते। अलर्षि[1] युध्म खजकृत्पुरन्दर। अलर्ति दक्ष उत। अन्वापनीफणत्[5]। कनिक्रदज्जनुषम्[7]। वि यो भरिभ्रदोषधीषु[3]। दविध्वतो[8] रश्मयः सूर्यस्य। दविद्युतद्दीद्यच्छोशुचानः[9]। सहोर्जा रित्रतः[10]। वक्ष्यन्ती वेदाऽऽगनीगन्ति[11] कर्णम्। ससूवेति निगमे। ।७।४।७४। गृष्टिः ससूव स्थविरम्। बहुलं छन्दसि ।७।४।४८। अभ्यासस्येकारः। पूर्णां विवष्टि ॥—॥

ॐ ॥ अष्टमोऽध्यायः ॥ ॐ

प्रसमुपोदः पादपूरणे ।८।१।६। द्वे स्तः। प्रप्रायमग्निः। संसमिद्युवसे। उपोप मे परामृश। किं नोदुदु हर्षसे। छन्दसीरः ।८।२।१५। मतोर्मस्य वः। हरिवते हर्यश्वाय। गीर्वान्। अनो नुट् ।८।२।१६। अक्षण्वन्तः कर्णवन्तः। अस्थन्वन्तं यदनस्था। नाद्घस्य ।८।२।१७। सुपथिन्तरः। भूरिदाव्नस्तुड् वाच्यः ॐ। भूरिदावत्तरो जनः। ईद्रथिनः ॐ। रथीतरः। रथीतमं रथीनाम्। नसत्तनिषत्तानुत्तप्रतूर्तसूर्तगूर्तानि छन्दसि ।८।२।६१। नसत्तमञ्जसा[12]। निषत्तमस्य चरतः। अनुत्तम्[13]। प्रतूर्तम्[14]। सूर्तम्[15]। गूर्तम्[16]। अम्नरूधरवरित्युभयथा छन्दसि ।८।२।७०। रुर्वा रेफो वा। अम्न एव। अम्नरेव। ऊध एव। ऊधरेव। अव एव। अवरेव। भुवश्च महाव्याहृतेः ।८।२।७१। भुव इति। भुवरिति। ओमभ्यादाने ।८।२।८७। प्लुतः स्यात्। ओ३म्-अग्निमीले पुरोहितम्। ये यज्ञकर्मणि

---

१ आद्याच्चयो धृङो धारयतेर्वा। २ गुणाभावः। ३ तिजेर्यङ्लुगन्तात्तङ्। ४ इयर्तेर्लटि इकादिः शेषात्परादो रेफस्य लत्वमित्वाभावश्च निपात्यते ॥ ५ यङ्लुगन्ताच्छतर्यभ्यासस्य नीगागमः। ६ क्रन्देर्लुङि च्लेरङ् द्विर्वचनमभ्यासस्य चुत्वाभावो निगागमश्च। ७ बिभर्तेरभ्यासस्य जस्त्वाभावः। ८ ध्वरतेर्यङ्लुगन्तस्य शतर्यभ्यासस्य विगागमो धातोर्ऋकारस्य लोपश्च। ९ द्युतेरभ्यासस्य संप्रसारणाभावोऽत्वं विगागमश्च। १० तरतेः शतरि श्लावभ्यासस्य रिगागमः। ११ गमेराङ्पूर्वस्य लटि श्लावभ्यासस्य चुत्वाभावो नीगागमश्च। १२ सदेर्नञ्पूर्वान्निरूर्वाच्च निष्ठायां नत्वाभावो निपात्यते। १३ उन्देर्नञ्पूर्वात्। १४ त्वरते स्तुर्वीत्यस्य वा। १५ सृ इत्यस्मात्। १६ गूरी, इत्यस्मात्।

।८।२।८८। ये ३ यजामहे । **प्रणवष्टेः** ।८।२।८९। टेरोमित्यादेशः स्यात् । अपां रेतांसि जिन्वतो ३म् । **याज्यान्तः** ।८।२।९०। टेः प्लुतः स्यात् । जिह्वामग्ने चकृषे हव्यवाहा३म् । **ब्रूहिप्रेष्यश्रौषड्वौषडावहानामादेः** ।८।२।९१। अग्नये ऽनुब्रू३हि । अग्नये गोमयानि प्रे३ष्य । अस्तु श्रौ३षट् । सोमस्याग्ने वीही वौ३षट् । अग्निमा ३वह । **अग्नीत्प्रेषणे परस्य च** ।८।२।९२। ओ३श्रा३वय । **विभाषा पृष्टप्रतिवचने हेः** ।८।२।९३। अकार्षीः कटम् । अकार्षं हि३ । **निगृह्यानुयोगे च** ।८।२।९४। अद्यामावास्येत्यात्थ३ । **आम्रेडितं भर्त्सने** ।८।२।९५। दस्यो३दस्यो[1]३घातयिष्यामि त्वाम् । चौर३चौर३ । **अङ्गयुक्तं तिङाकाङ्क्षम्** ।८।२।९६। अङ्ग कूज३इदानीं ज्ञास्यसि जाल्म । **विचार्यमाणानाम्** ।८।२।९७। होतव्यं दीक्षितस्य गृहा३इ । न होतव्य३मिति । **पूर्वं तु भाषायाम्** ।८।२।९८। अहिर्नु३ रज्जुर्नु । **प्रतिश्रवणे च** ।८।२।९९। गां मे देहि भोः । हन्त ते ददामि३ । नित्यः शब्दो भवितुमर्हति । दत्त किमात्थ३ । **अनुदात्तं प्रश्नान्ताभिपूजितयोः** ।८।२।१००। अग्निभूत३इ । पट३उ । शोभनः खल्वसि माणवक३ । **चिदिति चोपमार्थे प्रयुज्यमाने** ।८।२।१०१। अग्निचिद्भाया३त् । **उपरिस्विदासीदिति च** ।८।२।१०२। उपरिस्विदासी३त् । **स्वरितमाम्रेडितेऽसूयासंमतिकोपकुत्सनेषु** ।८।२।१०३। अभिरूपक३ अभिरूपक रिक्तं ते आभिरूप्यम् । अभिरूपक३ अभिरूपक शोभनोऽसि । अविनीतक३ अविनीतक इदानीं ज्ञास्यसि जाल्म । शाक्तीक ३ शाक्तीक रिक्ता ते शक्तिः । **क्षियाशीःप्रैषेषु तिङाकाङ्क्षम्** ।८।२।१०४। स्वयं ह रथेन याति३ उपाध्यायं पदातिं गमयति, पुत्रांश्च लप्सीष्ट३ धनं च तात । कटं कुरु३ ग्रामं गच्छ । **अनन्त्यस्यापि प्रश्नाख्यानयोः** ।८।२।१०४। अगमः३ पूर्वा३न् ग्रामा३न् । अगम३म् पूर्वा३न् ग्रामा३न् । **प्लुतावैच इदुतौ** ।८।२।१०६। ऐ३तिकायन । औ३पगव । **एचोऽप्रगृह्यस्यादूराद्धूते पूर्वस्यार्धस्याऽऽदुत्तरस्येदुतौ** ।८।२।१०७। प्रश्नान्ताभिपूजितविचार्यमाणप्रत्यभिवादयाज्यान्तेष्वेव । ❀ । अगमः३ पूर्वा३न् ग्रामा३न् । अग्निभूता३इ । करोषि पटा३उ । होतव्यं दीक्षितस्य गृहा३इ । न होतव्य३मिति । आयुष्मानेधि अग्निभूता३इ । स्तोमैर्विधेमाग्नया३इ । आमन्त्रिते छन्दसि प्लुतविकारोऽयं वक्तव्यः ❀ । अग्ना३इ पत्नी वः । **तयोर्य्वावचि संहितायाम्**[2] ।८।२।१०८ अग्न३याशा । पट३वाशा । अग्न३यिन्द्रम् । पट ३ वुदकम् । **मतुवसो रु संबुद्धौ छन्दसि** ।८।३।१ । इन्द्र मरुत्व इह पाहि सोमम् । हरिवो मेदिनं त्वा । **दाश्वान्साह्वान्मीढ्वांश्च** ।६।१।१२। एते क्वस्वन्ता निपात्यन्ते । मीढ्वस्तोकाय तनयाय । वन उपसंख्यानम् ❀ । यस्त्वायन्तं वसुना प्रातरित्वः । **उभयथर्क्षु** ।८।३।८ अम्परे छवि नकारस्य रुर्वा । पश्चूस्तांश्चक्रे । **दीर्घादटि समानपादे** ।८।३।९। देवाँ अच्छा सुमती । महाँ इन्द्रो य ओजसा । **आतोऽटि नित्यम्** ।८।३।३। रोः पूर्वमनुनासिकः स्यात् । महाँ इन्द्रः । **स्वतवान्पायौ** ।८।३।११। रुर्वा । भुवस्तस्य स्वतवाँः पायुरग्ने । **छन्दसि वाऽप्राम्रेडितयोः** ।८।३।४९। विसर्गस्य सो वा स्यात् कुप्वोः । अग्ने त्रातर्ऋतस्कविः । गिरिर्न विश्वतस्पृथुः । **कः करत्करतिकृधिकृतेष्वनदितेः** ।८।३।५०। प्रदिवो अपस्कः । यथा नो

---

१ आम्रेडितग्रहणं द्विरुक्तोपलक्षणम् । २ अध्यायसमाप्तेरधिकारः ।

वस्यसस्करत् ! सुपेशसस्करति । उरुणस्कृधि । सोमं न चारुं मघवत्सु नस्कृतम् । **पञ्चम्याः परावध्यर्थे** ।८।३।५१। दिवस्परि प्रथमं जज्ञे । **पातौ च बहुलम्** ।८।३।५२। सूर्यो नो दिवस्पातु । **षष्ठ्याः पतिपुत्रपृष्ठपारपदपयस्पोषेषु** ।८।३।५३। वाचस्पतिं विश्वकर्माणम् । दिवस्पुत्राय सूर्याय । दिवस्पृष्ठं भन्दमानः । तमसस्पारमस्य । परिवीत इलस्पदे । दिवस्पयो दिधिषाणाः । रायस्पोषं यजमानेषु । **इडाया वा** ।८।३।५४ । इलायाः पुत्रः । इलायास्पुत्रः । इलायास्पदे । इलायाः पदे । निष्टतं रक्षो निष्टप्ता अरातयः इत्यत्र निसस्तपतावनासेवन इति मूर्धन्यादेशः । **युष्मत्तत्ततक्षुःष्वन्तः पादम्** ।८।३।१०३। सस्य मूर्धन्यः स्यात् । त्रिभिष्ट्वं देवसवितः । तेभिष्ट्वा । आभिष्टे । अप्स्वग्ने सधिष्टव । अग्निष्टद्विश्वम् । द्यावापृथिवी निष्टतक्षुः । **यजुष्येकेषाम्** ८।३।१०४। अर्चिभिष्ट्वम् । अग्निष्टे अग्रम् । अर्चिभिष्टतक्षुः । पक्षे-अर्चिभिस्त्वमित्यादि । **स्तुतस्तोमयोश्छन्दसि** ।८।३।१०५ । नृभिः ष्टुतस्य । नृभिः स्तुतस्य । गोष्टोमम् । गोस्तोमम् । **पूर्वपदात्** ।८।३।१०६। यदिन्द्राग्नी दिविष्ठः । युवं हि स्थः स्वर्पती । **सुञः** ।८।३।१०७ । ऊर्ध्व ऊ षु णः । अभीषुणः । **सनोतेरनः** ।८।३।१०८। गोषा इन्द्रो नृषा असि । **सहेः प्रतनर्ताभ्यां च** ।८।३।१०९। पृतनाषाहम् । ऋताषाहम् । चात्-ऋतीषाहम् । **निव्यभिभ्योऽड्व्यवाये वा छन्दसि** ।८।३।११९। न्यषीदत् । न्यसीदत् । व्यषीदत् । व्यसीदत् । अभ्यष्टौत् । अभ्यस्तौत् । **छन्दस्यृदवग्रहात्** ।८।४।२६। नस्य णः । नृमणाः । पितृयाणम् । **नश्च धातुस्थोरुषुभ्यः** ।८।४।२७ । अग्ने रक्षा णः । शिक्षा णो अस्मिन् । उरु णस्कृधि । अभीषु णः । मो षु णः ॥ इत्यष्टमोऽध्यायः ॥ ॥ इति वैदिकी प्रक्रिया ॥

॥ इति श्री सर्वतन्त्रस्वतन्त्र-विद्यावारिधि-महामहोपाध्याय-पण्डितप्रवर-मथुराप्रसाददीक्षितकृतायां पाणिनीयसिद्धान्तकौमुद्यां वैदिकी प्रक्रिया समाप्ता ॥

॥ अथ स्वरप्रक्रिया ॥

अनुदात्तं पदमेकवर्जम् ।६।१।१५८। परिभाषेयं स्वरविधिविषया । यस्मिन्पदे यस्योदात्तः स्वरितो वा विधीयते तमेकमचं वर्जयित्वा शेषं तत्पदमनुदात्ताच्कं स्यात् । गोपायतं नः । सति शिष्टस्वरबलीयस्त्वमन्यत्र विकरणेभ्य इति वाच्यम्* । **अनुदात्तस्य च यत्रोदात्तलोपः** ।६।१।१६१। यस्मिन्नुदात्त परे उदात्तो लुप्यते तस्योदात्तः स्यात् । देवीं वाचम् । **चौ** ।६।१।१२२। लुप्ताकारेऽञ्चतौ परे पूर्वस्यान्तोदात्तः स्यात् । देवद्रीचीं नयत देवयन्तः । अतद्धित इति वाच्यम्* । दाधीचः । माधूचः । प्रत्ययस्वर एवात्र । **आमन्त्रितस्य च** ।६।१।१९। आदिरुदात्तः । अग्न इन्द्र । वरुण मित्रदेवाः । **आमन्त्रितस्य च** ८।१।१९। पदात्परस्यापादादिस्थितस्यामन्त्रितस्य सर्वस्यानुदात्तः स्यात् । इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति । आमन्त्रितं पूर्वमविद्यमानवत् । अग्न इन्द्र । नामन्त्रिते समानाधिकरणे सामान्यवचनम् । अग्ने तेजस्विन् । अग्ने त्रातः । **सामान्यवचनं विभाषितं विशेषवचने** ।८।१।७४। आमन्त्रितान्ते विशेषणे परे पूर्वं बहुवचनान्तमविद्यमानवद्वा । देवीः षलुर्वीरुरु नः कृणोत । देवाः शरण्याः । **सुबामन्त्रिते पराङ्गवत्स्वरे** ।२।१।२ सुबन्तमामन्त्रिते परे परस्याङ्गवत्स्वरे कर्तव्ये । द्रवत्पाणी शुभस्पती । षष्ठ्यामन्त्रितकारक-

वचनन्ॐ । तेनेह न—अयमग्ने जरिता । एतेनाग्ने ब्रह्मणा । पूर्वाङ्गवच्चेति वक्तव्यम्ॐ । आ ते पितर्मरुताम् । प्रति त्वा दुहितर्दिवः । अव्ययानां न । उच्चैरधीयान । अव्ययीभावस्य त्विष्यतेॐ । उपाग्न्यधीयान । **उदात्तस्वरितयोर्यणः स्वरितोऽनुदात्तस्य** ।८।२।४ उदात्तस्थाने स्वरितस्थाने च यो यण् ततः परस्यानुदात्तस्य स्वरितः स्यात् । अभ्यभि हि । खलप्व्याशा । **एकादेश उदात्तेनोदात्तः** ८।२।५। वो ऽश्वाः । क्वावरं मरुतः । **स्वरितो वाऽनुदात्ते पदादौ** ।८।२।६ अनुदात्ते पदादौ परे उदात्तेन सहैकादेशः स्वरितो वा स्यात् । वीऽदं ज्योतिर्हृदये । अस्य श्लोको दिवीयते । तेऽवदन् । सोऽश्यामागात् । **उदात्तादनुदात्तस्य स्वरितः** ।८।४।६६ अग्निमीळे । तमीशानासः । **नोदात्तस्वरितोदयमगार्ग्यकाश्यपगालवानाम्** ।८।४।६७। उदात्तपरः स्वरितपरश्चानुदात्तः स्वरितो न स्यात् । प्र य आरुः । वोऽश्वाः क्व१भीशवः । **एकश्रुति दूरात्संबुद्धौ** ।१।२।३३। आगच्छ भो माणवक । **यज्ञकर्मण्यजपन्यूङ्खसामसु** ।१।२।३४ । अग्निमूर्धा दिवः ककुत् । **उच्चैस्तरां वा वषट्कारः** १।२।३५। यज्ञकर्मणि वौषट् शब्द उच्चैस्तरां वा स्यादेकश्रुतिर्वा । **विभाषा छन्दसि** ।१।२।३६। **न सुब्रह्मण्यायां स्वरितस्य तूदात्तः** १।२।३७ सुब्रह्मण्योऽम् । असावित्यन्तःॐ । तस्मिन्नेव निगदे प्रथमान्तस्यान्त उदात्तः स्यात् । गार्ग्यो यजते । अमुष्येत्यन्तः । दाक्षेः पिता यजते । स्यान्तस्योपोत्तमं च ॐ । गार्ग्यस्य पिता यजते । वा नामधेयस्य ॐ । देवदत्तस्य पिता यजते । **देवब्रह्मणोरनुदात्तः** ।१।२।३८। स्वरितस्यानुदात्तः स्यात्सुब्रह्मण्यायाम् । देवा ब्रह्माण आगच्छत । **स्वरितात्संहितायामनुदात्तानाम्** ।१।२।३९। एकश्रुतिः स्यात् । इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति । **उदात्तस्वरितपरस्य सन्नतरः** ।१।२।४० अनुदात्तस्यानुदात्ततरः स्यात् । सरस्वति शुतुद्रि । व्यचक्षयत्स्वः । **अनुदात्तं च** ८।१।३। द्विरुक्तस्य परं रूपमनुदात्तं स्यात् । दिवे दिवे ॥ इति साधारणस्वराः ॥

॥ अथ धातुस्वराः ॥

धातोः ॥६।१।१६२॥ अन्त उदात्तः स्यात् । गोपायतं नः । असि सत्यः । **स्वपादिर्हिंसामच्यनिटि** ॥६।१।१८८॥ आदिरुदात्तो वा स्यात् । स्वपन्ति । श्वसन्ति । हिंसन्ति । **अभ्यस्तानामादिः** ॥६।१।१८९॥ ये ददति प्रिया वसु । दधाना इन्द्रे । **अनुदात्ते च** ॥६।१।१९०॥ दधासि रत्नं द्रविणं च दाशुषे । **भीह्रीभृहुमदजनधनदरिद्राजागरां प्रत्ययात्पूर्वं पिति** ॥६।१।१९२॥ योऽग्निहोत्रं जुहोति । ममत्तु नः परिज्मा । माता यद्वीरं दधनत् । जागर्षि त्वम् **लिति** ॥६।१।१९३॥ प्रत्ययात्पूर्वमुदात्तम् । चिकीर्षकः । **आदिर्णमुल्यन्यतरस्याम्** ॥६।१।१९४॥ लोलूयं लोलूयम् । **अचः कर्तृयकि** ॥६।१।१९४॥ उपदेशेऽजन्तानां कर्तृयकि परे आदिरुदात्तो वा स्यात् । लूयते केदारः स्वयमेव । **चङ्यन्यतरस्याम्** ॥२१८॥ चङन्ते धातावुपोत्तममुदात्तं वा । मा हि चीकरताम् ॥ इति धातुस्वराः ॥

॥ अथ प्रत्ययस्वराः ॥

कर्षात्वतो घञोऽन्त उदात्तः ॥६।१।१५९॥ कर्षः ।पाकः । **उञ्छादीनां च** ॥६।१।१६०॥ वैश्वानरः कुशिकेभिर्युगे युगे । अन्यत्र-योगे योगे तव स्तरम् । गावः सोमस्य प्रथमस्य भक्षः उदुत्तमश्चाश्वत्तमावपि

उदुत्तमं वरुण । शश्वत्तममीलते । चतुरः शसि ॥६।१।१६७॥ चतुरः कल्पयन्तः । झल्युपोत्तमम् ॥६।१।१८०॥ षट् चतुर्भ्यो या झलादिर्विभक्तिस्तदन्ते पदे उपोत्तममुदात्तं स्यात् । अध्वर्युः पञ्चभिः नवभिः नवभिर्वाजैर्नवती च । सप्तभ्यो जायमानः । आदशभिर्विवस्वतः । विभाषा भाषायाम् ॥६।१।१८१॥ उक्तविषये । सर्वस्य सुपि ॥६।१।१९१॥ सर्वशब्दस्यादिरुदात्तः । सर्वे नन्दन्ति यशसा । ञ्नित्यादिर्नित्यम् ॥६।१।१९७॥ यस्मिन्विश्वानि पौंस्या । सुते दधिष्व नश्चनः । पथिमथोः सर्वनामस्थाने ॥६।१।१९९॥ अयं पन्थाः । अन्तश्च तवै युगपत् ॥६।१।२००॥ हर्षसे दातवा उ । क्षयो निवासे ॥६।१।२०१॥ स्वे क्षये शुचिव्रत । जयः करणम् ॥६।१।२०२॥ जयत्यनेन जयोऽश्वः । वृषादीनां च ॥६।१।२०३॥ वाजेभिर्वाजिनीवती । इन्द्रं वाणीः । संज्ञायामुपमानम् ॥६।१।२०४॥ चञ्चेव चञ्चा । निष्ठा च द्व्यजनात् ॥६।१।२०५॥ निष्ठान्तस्य द्व्यचः संज्ञायामादिरुदात्तो नत्वाकारः । दत्तः । शुष्कधृष्टौ ॥६।१।२०६॥ असंज्ञायामेतावाद्युदात्तौ । अतसं न शुष्कम् । आशितः कर्ता ॥६।१।२०७॥ कृषन्नित्फाल आशितम् । रिक्ते विभाषा ॥६।१।२०८॥ रिक्तः । जुष्टार्पिते च छन्दसि ॥६।१।२०९॥ नित्यं मन्त्रे ॥६।१।२१०॥ एतत्सूत्रं शक्यमकर्तुम् । जुष्टो दमूनाः । षळर आहुरर्पितमित्यादेः पूर्वेणैव सिद्धेः । युष्मदस्मदोर्ङसि ॥६।१।२११॥ नहिषस्तव नो मम । ङयि च ॥६।१।२१२॥ तुभ्यं हिन्वानः । मह्यं वातः पवताम् । यतोऽनावः ॥६।१।२१३॥ युञ्जन्त्यस्य काम्या । ईडवन्दवृशंसदुहां ण्यतः ॥६।१।२१४॥ ईड्यो नूतनैरुत । आजुह्वान ईड्यो वन्द्यश्च । श्रेष्ठं नो धेहि वार्यम् । उक्थमिन्द्राय शंस्यम् । विभाषा वेण्विन्धानयोः ॥६।१।२१५॥ इन्धानो अग्निम् । त्यागरागहासकुहश्वठक्रथानाम् ॥६।१।२१६॥ आदिरुदात्तो वा । मतोः पूर्वमात्संज्ञायां स्त्रियाम् ॥६।१।२१९॥ उदुम्बरावती । शरावती । अन्तोऽवत्याः ॥६।१।२२०॥ वेत्रवती । ईवत्याः ॥६।१।२२१॥ अहीवती । मुनीवती ॥

इति प्रत्ययस्वराः ॥

॥ अथ फिट्सूत्राणि ॥

॥ प्रथमः पादः ॥

फिषोऽन्त उदात्तः ॥१॥ प्रातिपदिकं फिट् तस्यान्त उदात्तः स्यात् । उच्चैः । पाटलापालङ्काम्बासागरार्थानाम् ॥२॥ पाटला । अपालङ्कः । अम्बा । सागरः । गेहार्थानामस्त्रियाम् ॥३॥ गेहम् । गुदस्य च ॥४॥ गुदम् । ध्यपूर्वस्य स्त्रीविषयस्य ॥५॥ अन्तर्धा । छाया । माया । जाया । खान्तस्याश्मादेः ॥६॥ नखम् । उखा । सुखम् । दुःखम् । बंहिष्ठवत्सरतिशत्थान्तानाम् ॥७॥ बंहिष्ठः । परिवत्सरः । सप्ततिः । अशीतिः । चत्वारिंशत् । अन्त उदात्तः । अभ्यूर्णाना प्रभृथस्यायोः । दक्षिणस्य साधौ । स्वाङ्गाख्यायामादिर्वा ॥९॥ दक्षिणो बाहुः । छन्दसि च ॥१०॥ दक्षिणः । कृष्णस्यामृगाख्या चेत् ॥११॥ कृष्णानां व्रीहीणाम् । नित्यमुदात्तः । वेत्यके कृष्णो नो नाववृषभः । वा नामधेयस्य ॥१२॥ अयं वा कृष्णो अश्विना । कृष्णर्षिः । शुक्लगौरयोरादिः ॥१३॥ अङ्गुष्ठोदकबकवशानां छन्दस्यन्तः ॥१४॥ अङ्गुष्ठम् । पृष्ठस्य च ॥१५॥ पृष्टम् । अर्जुनस्य तृणाख्या चेत् ॥१६॥ अर्यस्य स्वाम्याख्या चेत् ॥१७॥ आशाया आदिगाख्या चेत् ॥१८॥ नक्षत्राणामाब्विषयाणाम् ॥१९॥ न कुपूर्वस्य कृत्तिकाख्या

चेत् ॥२०॥ कृत्तिका नक्षत्रम् । घृतादीनां च ॥२१॥ घृतं मिमिक्षे । ज्येष्ठकनिष्ठयोर्वयसि ॥२२॥ ज्येष्ठ आह चमसा । कनिष्ठ आह चतुरः । बिल्वतिष्ययोः स्वरितो वा ॥२३॥ अन्तः स्वरितः । पक्षे उदात्तः ॥ इति फिट्सूत्रेषु प्रथमः पादः ॥

॥ अथ द्वितीयः पादः ॥

अथादिः प्राक् शकटेः ॥२४॥ अधिकारोऽयम् । ह्रस्वान्तस्य स्त्रीविषयस्य ॥२५॥ आदिरुदात्तः स्यात् । बलिः । तनुः । नब्विषयस्यानिसन्तस्य ॥२६॥ वने न वायः । तृणधान्यानां च द्व्यषाम् ॥२७॥ कुशाः । काशाः । माषाः । तिलाः । त्रः संख्यायाः ॥२८॥ पञ्च । चत्वारः । स्वाङ्गशिटामदन्तानाम् ॥२९॥ कर्णाभ्यां चिबुकादधि । ओष्ठाविव मधु । विश्वो विहायाः । प्राणिनां कुपूर्वम् ॥३०॥ काकः । वृकः । शुकेषु मे । खय्युवर्णं कृत्रिमाख्या चेत् ॥३१॥ कन्दुकः । उनर्वन्नन्तानाम् ॥३२॥ वरुणं वो रिशादसम् । स्वसारं त्वा कृणवै । पीवानं मेषम् । वर्णानां तणतिनितान्तानाम् ॥३३॥ आदिरुदात्तः । एतः । हरिणः । शितिः । पृश्निः । हरित् । ह्रस्वान्तस्य ह्रस्वमनृ त्ताच्छील्ये ॥३४॥ मुनिः । अक्षस्यादेवनस्य ॥३५॥ तस्य नाक्षः । अर्धस्यासमद्योतने ॥३६॥ अर्धो ग्रामस्य । पीतद्र्वर्थानाम् ॥३७॥ पीतद्रुः । सरलः । ग्रामादीनां च ॥३८॥ ग्रामः । सोमः । यामः । लुबन्तस्योपमेयनामधेयस्य ॥३९॥ चञ्चेव चञ्चा । न वृक्षपर्वतविशेषव्याघ्रसिंह-महिषाणाम् ॥४०॥ ताल इव तालः । मेरुरिव मेरुः । व्याघ्रः । सिंहः । महिषः । राजविशेषस्य यमन्वा चेत् ॥४१॥ आङ्गः । लघावन्ते द्वयोश्च बह्वषो गुरुः ॥४२॥ कल्याणः । कोलाहलः । स्त्रीविषयवर्णाक्षुपूर्वाणाम् ॥४३॥ मल्लिका । श्येनी । हरिणी । तरक्षुः । शकुनीनां च लघुपूर्वम् ॥४४॥ कुक्कुटः तित्तिरिः । खञ्जरीटः । नर्तुप्राण्याख्यायाम् ॥४५॥ वसन्तः । कृकलासः । धान्यानां च वृद्धक्षान्तानाम् ॥४६॥ श्यामाकाः । माषाः । जनपदशब्दानामषान्तानाम् ॥४७॥ केकयः । हयादीनामसंयुक्तलान्तानामन्तः पूर्वं वा ॥४८॥ पललम् । शललम् । इगन्तानां च द्व्यषाम् ॥४९॥ कृषिः ॥ इति फिट्सूत्रेषु द्वितीयः पादः ॥

॥ अथ तृतीयः पादः ॥

अथ द्वितीयं प्रागीषात् ॥५०॥ ईषान्तस्य हयादेरित्यतः प्राक् द्वितीयाधिकारः । त्र्यचां प्राङ् मकरात् ॥५१॥ अधिकारोऽयम् । स्वाङ्गानामकुर्वादीनाम् ॥५२॥ त्र्यचां द्वितीयमुदात्तम् । ललाटम् । मादीनां च ॥५३॥ मलयः । मकरः । शादीनां शाकानाम् ॥५४॥ शीतन्या । शतपुष्पा । पान्तानां गुर्वादीनाम् ॥५५॥ पादपः । आतपः । युतान्यण्यन्तानाम् ॥५६॥ अयुतम् । धमनिः । विपणिः । मकरवरूढपारेवतवितस्तेक्ष्वार्जिद्राक्षाकलोमाकाष्ठापेष्ठाकाशीनामादिर्वा ॥५७॥ मकरः । वरूढः । छन्दसि च ॥५८॥ अमकराद्यर्थं आरम्भः । कर्दमादीनां च ॥५९॥ सुगन्धितेजनस्य ते वा ॥६०॥ सुगन्धितेजनाः । नपः फलान्तानाम् ॥६१॥ राजादनफलम् । यान्तस्यान्त्यात्पूर्वम् ॥६२॥ कुलायः । थान्तस्य च नालघुनी ॥६३॥ सनाथा सभा । शिशुमारोदुम्बरबलीवर्दोष्ट्रारपुरूरवसां च ॥६४॥ सांकाश्यकाम्पिल्यनासिक्यदार्वा-घाटानाम् ॥६५॥ ईषान्तस्य हयादेरादिर्वा ॥६६॥ हलीषा । लाङ्गलीषा । उशीरदाशेरकपालपलाल-शैवालश्यामाकशारीरशरावहृदयहिरण्यारण्यापत्यदेवराणाम् ॥६७॥ एषामादिरुदात्तः । महिष्यषाढयोर्जायेष्ट-काख्या चेत् ॥६८॥ महिषी जाया । अषाढा उपदधाति ॥ इति फिट्सूत्रेषु तृतीयः पादः ॥

॥ अथ चतुर्थः पादः ॥

शकटिशकट्योरक्षरमक्षरं पर्यायेण ॥६९॥ उदात्तम्। शकटिः। शकटी। गोष्ठजस्य ब्राह्मणनामधेयस्य ॥७०॥ गोष्ठजो ब्राह्मणः। पारावतस्योपोत्तमवर्जम् ॥७१॥ पारावतः। धूम्रजानुमुञ्जकेशकालवालस्थालीपाकानामधूजलस्थानाम् ॥७२॥ धूम्रजानुः। मुञ्जकेशः। कालवालः। स्थालीपाकः। कपिकेशहरिकेशयोश्छन्दसि ॥७३॥ कपिकेशः। हरिकेशः। न्यङ्स्वरौ स्वरितौ ॥७४॥ व्यङ्ङुत्तानः। व्यचक्षयत्स्वः। न्यर्बुदव्यल्कशयोरादिः ॥७५॥ तिल्यशिक्यकाश्मर्यधान्यकन्याराजमनुष्याणामन्तः ॥७६॥ तिल्यम्। बिल्वभक्ष्यवीर्याणि छन्दसि ॥७७॥ न नो बिल्व उदतिष्ठत्। तत्त्वसमसिमेत्यनुच्चानि ॥७८॥ स्तरीरुत्वत्। उत त्वः पश्यन्। नभन्तामन्यके समे। सिमस्मै। सिमस्याथर्वणेऽन्त उदात्तः ॥७९॥ अथर्वण इति प्रायिकम्। तेन ऋग्वेदेऽपि। तेन वासस्तनुते सिमस्मै। निपाता आद्युदात्ताः ॥८०॥ स्वाहा। उपसर्गाश्चाभिवर्जम् ॥८१॥ एवादीनामन्तः ॥८२॥ एव। एवम्। नूनम्। सह। ते मित्र सूरिभिः सह। वाचादीनामुभावुदात्तौ ॥८३॥ चादयोऽनुदात्ताः ॥८४॥ यथेति पादान्ते ॥८५॥ तन्नेमिमृभवो यथा। प्रकारादिद्विरुक्तौ परस्यान्त उदात्तः ॥८६॥ पटुपटुः। शेषं सर्वमनुदात्तम् ॥८७॥ प्रप्रायम्। दिवे दिवे ॥

॥ इति शान्तनवाचार्यप्रणीतेषु फिट्सूत्रेषु तुरीयः पादः ॥

॥ अथ स्वरप्रकरणशेषः ॥

आद्युदात्तश्च ॥३।१।३॥ प्रत्यय आद्युदात्त एव स्यात्। अग्निः। कर्तव्यम्। **अनुदात्तौ सुप्पितौ** ॥३।१।४॥ यज्ञस्य। न यो युच्छति। **चितः** ॥६।१।६३॥ अन्त उदात्तः स्यात्। चितः सप्रकृतेर्बह्वकजर्थम् *। नभन्ता मन्यके समे। यके सरस्वतीमनु। तकत्सुते। **तद्धितस्य**[1] ॥६।१।१६४॥ कौञ्जायनाः। **कितः** ॥६।१।१६५॥ वदाग्नेयः। **तिसृभ्यो जसः** ॥६।१।१६६॥ तिस्रो द्यावः सवितुः। **सावेकाचस्तृतीयादिर्विभक्तिः** ॥६।१।१६८॥ वाचा विरूपः। **अन्तोदात्तादुत्तरपदादन्यतरस्यामनित्यसमासे** ॥६।१।१६९॥ परमवाचा। **अञ्चेश्छन्दस्यसर्वनाम[2]स्थानम्** ॥६।१।१७०॥ इन्द्रो दधीचः। प्रतीचो बाहून्। **ऊडिदम्पदाद्यप्पुम्रैद्युभ्यः** ॥६।१।१७६॥ प्रष्ठौहः। प्रष्ठौहा। ऊठ्युपधाग्रहणं कर्तव्यम् *। एभि[3]र्नृभिर्नृतमः। पद्भ्यां भूमिः। दद्भिर्न जिह्वा। अहरहर्जायते मासिमासि। मनश्चिन्मे हृद आ। अपां फेनेन। अभ्रातेव पुंसः। राया वयम्। रायो धर्ता विवस्वतः। उप त्वाग्ने दिवे दिवे। **अष्टनो दीर्घात्** ॥६।१।१७२॥ अष्टाभिर्दशभिः। **शतुरनुमो नद्यजादी** ॥६।१।१७३॥ अच्छारवं प्रथमा जानती। कृण्वते। **उदात्तयणो हल्पूर्वात्** ॥६।१।१७४॥ चोदयित्री सूनृतानाम्। एषा नेत्री। ऋतं देवाय कृण्वते। सवित्रे। **नोङ्धात्वोः** ॥६।१।१७५॥ ब्रह्मबन्ध्वा। सेत्पृश्निः सुभ्वेः। **ह्रस्वनुड्भ्यां मतुप्** ॥६।१।१७६॥ यो अब्दिमाँ उदनिमाँ इयर्ति। अक्षण्वन्तः कर्णवन्तः सखायः। रेशब्दाच्च *। रेवाँ इद्रेवतः।

---

(१) पूर्वेण सिद्धे जित्स्वरबाधनार्थमिदम्। (२) तृतीयादिरित्यनुवर्तमानेऽसर्वनामस्थानग्रहणं शस्परिग्रहार्थम्। (३) अन्वादेशे न। अन्तोदात्तादित्यनुवृत्तेः। न च तत्रान्तोदात्ततास्त्यस्तीति वाच्यम्। इदमोऽन्वादेशेऽशनुदात्तस्तृतीयादौ, इति सूत्रेणानुदात्तस्याशो विधानात्।

नामन्यतरस्याम् ।।६।१।१७७।। चेतन्ती सुमतीनाम् । ङ्याश्छन्दसि बहुलम् ।।६।१।१७८।। देवसेनानामभिभञ्जतीनाम् । षट्त्रिचतुर्भ्यो हलादिः ।।६।१।१७९।। अषड्भिर्हूयमानः । त्रिभिष्ट्वं देव। न गोश्वन्साववर्णराडङ्क्रुङ्क्रुद्भ्यः ।६।१।१८२।। गवां शता । गोभ्यो गातुम् । शुनश्चिच्छेपम् । तेभ्यो द्युम्नम् । तेषां पाहि श्रुधी हवम् । दिवो झल् ।।६।१।१८३।। द्युभिरक्तुभिः । नृचान्यतरस्याम्।।६।१।१८४।। नृभिर्येमानः । तित्स्वरितम् ।।६।१।१८५।। क नूनम् । तास्यनुदात्तेन्ङिददुपदेशाल्लसार्वधातुकमनुदात्तमन्ह्विङोः ।।६।१।१८६।। कर्ता । कर्तारौ । कर्तारः । य आस्ते । अभिचष्टे अनृतेभिः । पुरुभुजा जनस्यतम् । वर्धमानं स्वे दमे । विन्दीन्धिखिदिभ्यो नेति वक्तव्यम्* । इन्धे राजा । आदिः सिचोऽन्यतरस्याम् ।।६।१।१६७।। यासिष्टं वर्तिरश्विना । थलि च सेटीडन्तो वा ।।६।१।१९६।। [1]लुलविथ । उपोत्तमं रिति ।।६।१।१९७।। यदा हवनीये ।

॥ इति प्रत्ययस्वराः ॥

॥ अथ समासस्वराः ॥

समासस्य ।६।१।२२३ अन्त उदात्तः स्यात् । यज्ञश्रियम् । बहुव्रीहौ प्रकृत्या पूर्वपदम् ।६।२।१। उदात्तस्वरितयोगि पूर्वपदं प्रकृत्या स्यात् । सत्यश्चित्रश्रवस्तमः । तत्पुरुषे तुल्यार्थतृतीयासप्तम्युपमानाव्ययद्वितीयाकृत्याः ।६।२।२। तुल्यश्वेतः । किरिकाणः । पतयन्मन्दयत्सखम् । शस्त्रीश्यामा । अव्यये नञ्कुनिपातानाम् । * । अयज्ञो वा एषः । वर्णो वर्णेष्वनेते ।६।२।३। कृष्णसारङ्गः । लोहितकल्माषः । गाधलवणयोः [2]प्रमाणे ।६।२।४। अरित्रगाधमुदकम् । गोलवणम् । दायाद्यं दायादे ।६।२।५। धनदा[3]यादः । प्रतिबन्धि चिरकृच्छ्रयोः ।६।२।६। गमनचिरम् । व्याहरणकृच्छ्रम् । पदेऽपदेशे । ६।२।७ मूत्रपदेन प्रस्थितः । उच्चारपदेन । निवाते वातत्राणे ६।२।८। कुटीनिवातम् । कुड्यनिवातम् । [4]शारदेऽनार्तवे ६।२।९। रज्जुशारदमुदकम् । अध्वर्युकषाययोर्जातौ ६।२।१० कठाध्वर्युः । दौवारिककषायम् सदृशप्रतिरूपयोः सादृश्ये ।६।२।११। पितृसदृशः । द्विगौ प्रमाणे ।६।२।१२। प्राच्यसप्तसमः[5] । गन्तव्यपण्यं वाणिजे ।६।२।१३। मद्रवाणिजः । गोवाणिजः । मात्रोपज्ञोपक्रमच्छाये नपुंसके, ।६।२।१४। भिक्षामात्रम् । पाणिन्युपज्ञम् । नन्दोपक्रमम् । इषुच्छायम् । सुखप्रिययोर्हिते ।।६।२।१५।। गमनप्रियम्, गमनसुखम् । प्रीतौ च ।।६।२।१६।। ब्राह्मणसुखं पायसम् । छात्रप्रियो ऽनध्यायः । स्वं स्वामिनि ।।६।२।१७।। गोस्वामी । पत्यावैश्वर्ये ।।६।२।१८।। दमूनागृहपतिर्दमे । न भूवाक्चिद्दिधिषु ।।६।२।१९।। भूपतिः । वाक्पतिः, चित्पतिः दिधिषूपतिः । वा भुवनम् ।।६।२।२०।। आशङ्काऽऽबाधनेदीयस्सु [6]संभावने ।।६।२।२१।। गमनाशङ्कमस्ति । गमनबाधम् । गमननेदीयः । [7]पूर्वे भूतपूर्वे

---

१ आद्यन्तावि‍ट् च पर्यायेणोदात्तः । यदा नैते त्रयस्तदा लितीति प्रत्ययात्पूर्वमुदात्तं स्यात् ।
२ प्रमाणमियत्ता परिच्छेदमात्रं न पुनरायाम एव । ३ धनशब्दः क्युप्रत्ययान्तः प्रत्ययस्वरेणाद्युदात्तः । ४ शारदशब्दो नूतनार्थस्तस्यास्वपदविग्रहः । ५ प्रमाणे ल इति मात्रचो लुक्, प्राच्यशब्द आद्युदात्तः । ६ अस्तित्वाध्यवसायः संभावनम् । ७ पूर्वशब्दो वृत्तिविषये भूतपूर्वे वर्तते ।

६।२।२२ आढ्यो भूतपूर्वं आढ्यपूर्वः । सविधसनीडसमर्यादसवेशसदेशेषु सामीप्ये ॥६।२।२३॥ मद्रसविधम् । गान्धारसनीडम् । काश्मीरसमर्यादम् । मद्रसवेशम् । मद्रसदेशम् । विस्पष्टादीनि गुणवचनेषु ॥६।२।२४॥ विस्पष्टकटुकम् । श्रज्याऽवमकन्पापवत्सु भावे कर्मधारये ॥६।२।२५॥ गमनश्रेष्ठम् । गमनज्यायः । गमनावमम् । गमनकनिष्ठम् । गमनपापिष्ठम् । कुमारश्च ॥६।२।२६॥ कुमारश्रमणा । आदिः प्रत्येनसि ॥६।२।२७॥ [1]कुमारप्रत्येनाः । पूगेष्वन्यतरस्याम् ॥६।२।२८॥ पूगा गणाः । कुमारचातकाः । कुमारजीमूताः । इगन्तकालकपालभगालशरावेषु द्विगौ ॥६।२।२९॥ पञ्चारत्निः । दशमास्यः । पञ्चमास्यः । पञ्चकपालः । पञ्चभगालः । पञ्चशरावः । बह्वन्यतरस्याम् ॥६।२।३०॥ बहुरत्निः । बहुमास्यः । बहुकपालः । दिष्टिवितस्त्योश्च ॥६।२।३१॥ पञ्चदिष्टिः । पञ्चवितस्तिः । सप्तमी सिद्धशुष्कपक्वबन्धेष्वकालात् ॥६।२।३२॥ साङ्काश्यसिद्धः । आतपशुष्कः । भ्राष्ट्रपक्वः । चक्रबन्धः । परिप्रत्युपापा[2] वर्ज्यमानाऽहोरात्रावयवेषु ॥६।२।३३॥ परित्रिगर्तं वृष्टो देवः । प्रतिपूर्वाह्णम् । उपपूर्वाह्णम् । उपपूर्वरात्रम् । अपत्रिगर्तम् । राजन्यबहुवचनद्वन्द्वेऽन्धकवृष्णिषु ॥६।२।३४॥ श्वाफल्कचैत्रकाः । [3]शिनिवासुदेवाः । संख्या ॥६।२।३५॥ द्वादश । [4]त्रयोदश । आचार्योपसर्जनश्चान्तेवासी ॥६।२।३६॥ [5]पाणिनीयरौढीयाः । कार्तकौजपादयश्च ॥६।२।३७॥ कार्तकौजपौ । सावर्णिमाण्डूकेयौ । महान्व्रीह्यपराह्णगृष्टीष्वासजाबालभारभारतहैलिहिलरौरवप्रवृद्धेषु ॥६।२।३८॥ [6]महाव्रीहिः । महापराह्णः । महागृष्टिः । महेष्वासः । महाहैलिहिलः । क्षुल्लकश्च वैश्वदेवे ॥६।२।३९॥ क्षुल्लकवैश्वदेवम् । महावैश्वदेवम् । उष्ट्रः सादिवाम्योः ॥६।२।४०॥ उष्ट्रसादी । उष्ट्रवामी । गौः सादसादिसारथिषु ॥६।२।४१॥ गोसादः । गोसादिः । गोसारथिः । कुरुगार्हपतरिक्तगुर्वसूतजरत्यश्लीलदृढरूपापारेवडवातैतिलकद्रूपण्यकम्बलोदासीभाराणां च ॥६।२।४२॥ कुरूणां गार्हपतं कुरुगार्हपतम् । वृजेरिति वाच्यम् ॥ । वृजिगार्हपतम् । रिक्तो गुरुः रिक्तगुरुः । असूता जरती असूतजरती । अश्लील दृढरूपा अश्लीलदृढरूपा । पारेवडवेव पारेवडवा । तैतिलानां कद्रूः तैतिलकद्रूः । पण्यकम्बलः संज्ञायामिति वक्तव्यम् ॥ । दास्या भारो दासीभारः । देवहूतिः [7] चतुर्थी तदर्थे ॥६।२।४३॥ यूपाय दारु यूपदारु । अर्थे ॥६।२।४४॥ देवार्थम् । क्ते च ॥६।२।४५॥ गोहितम् । कर्मधारयेऽनिष्ठा ॥६।२।४६॥ पूर्वमनिष्ठान्तं प्रकृत्या । श्रेणिकृताः । पूगकृताः । अहीने द्वितीया ॥६।२।४७॥ कष्टश्रितः । ग्रामगतः । अनुपसर्ग इति वक्तव्यम् ॥ । नेह सुखप्राप्तः । तृतीया कर्मणि ॥६।२।४८॥ त्वोतासः ॥ रुद्रहतः । महाराजहतः । गतिरनन्तरः ॥६।२।४९॥ पुरोहितम् । तादौ च निति कृत्यतौ ॥६।२।५०॥

---

१ कुमारशब्दस्याद्युदात्तः । २ उपसर्गा आद्युदात्ताः बहुव्रीहितत्पुरुषयोः सिद्धत्वादव्ययीभावार्थमिदम् । अपपर्योरेव वर्ज्यमानमुत्तरपदम् । तयोरेव वर्ज्यमानार्थत्वात्, अहोरात्रावयवा अपि वर्ज्यमाना एव तयोर्भवन्ति । ३ शिनिराद्युदात्तो लक्षणया तदपत्ये वर्तते । ४ त्रेस्त्रयादेश आद्युदात्तो निपात्यते । ५ छस्वरेण मध्योदात्तावेतौ । आचार्योपसर्जनग्रहणं द्वन्द्वविशेषणम् । ६ महच्छब्दोऽन्तोदात्तः । सन्महदिति प्रतिपदोक्तसमास एवायं स्वरः । ७ उदासीभारादिष्वयम् ।

अग्रे रायो नृतमस्य प्रभूतौ । सङ्गतिं गोः । तवै चान्तश्च युगपत् ॥६।२।५१॥ अन्वेतवा उ । अनिगन्तोऽञ्चतौ वप्रत्यये ॥६।२।५२॥ ये पराञ्चस्तान्। जहि वृष्ण्यानि कृणुहि [1]पराचः। न्यधी च ॥६।२।५३॥ [2]न्यङ्ङुत्तानः । अध्यङ् । ईषदन्यतरस्याम् ॥६।२।५४॥ ईषत्कडारः । हिरण्यपरिमाणं धने ॥६।२।५५॥ द्वे सुवर्णे परिमाणमस्येति द्विसुवर्णम् ,-तदेव धनं द्विसुवर्णधनम् । प्रथमोऽचिरोपसम्पत्तौ ॥६।२।५६॥ प्रथमवैयाकरणः। कतरकतमौ कर्मधारये ॥६।२।५७॥ वा प्रकृत्या । कतरकठः । आर्यो ब्राह्मणकुमारयोः ॥६।२।५८॥ आर्यकुमारः । आर्यब्राह्मणः । [3]राजा च ॥६।२।५९॥ राजब्राह्मणः । राजकुमारः । षष्ठी प्रत्येनसि ॥६।२।६०॥ राजप्रत्येनाः । क्ते नित्यार्थे ॥६।२।६१॥ नित्यप्रहसितः । ग्रामः शिल्पिनि ॥६।२।६२॥ ग्रामनापितः । राजा च प्रशंसायाम् ॥६।२।६३॥ राजनापितः । राजकुलालः । आदिरुदात्तः ॥६।२।६४॥ अधिकारोऽयम् । सप्तमी[4]हारिणौ धर्म्येऽहरणे[5] ॥६।२।६५॥ [6]मुकुटेकार्षापणम् । हलेद्विपदिका । याज्ञिकाश्वः । वैयाकरणहस्ती । युक्ते च ॥६।२।६६॥ [7]गोवल्लवः । विभाषाऽध्यक्षे ॥६।२।६७॥ गवाध्यक्षः । पापं च शिल्पिनि ॥६।२।६८॥ [8]पापनापितः । गोत्रान्तेवासिमाणवब्राह्मणेषु क्षेपे ॥६।२।६९॥ भार्यासौश्रुतः । कुमारीदाक्षाः । ओदनपाणिनीयाः । भिक्षामाणवः । भयब्राह्मणः, । अङ्गानि मैरेये[9] ॥६।२।७०॥ मधुमैरेयः[10] । [11]भक्ताख्यास्तदर्थेषु ॥६।२।७१॥ भिक्षाकंसः । भाजीकंसः । गोबिडालसिंहसैन्धवेषूपमाने ॥६।२।७२॥ धान्यगवः । गोबिडालः । तृणसिंहः । सक्तुसैन्धवः । अके जीविकार्थे ॥६।२।७३॥ दन्तलेखकः । प्राचां क्रीडायाम् ॥६।२।७४॥ उद्दालकपुष्पभञ्जिका । अणि नियुक्ते ॥६।२।७५। छत्रधारः । शिल्पिनि चाऽकृञः ॥६।२।७६॥ तन्तुवायः । संज्ञायां च ॥६।२।७७॥ तन्तुवायो नामकृमिः । गोतन्तियवं पाले ॥६।२।७८॥ गोपालः । तन्तिपालः । यवपालः । णिनि ॥६।२।७९॥ पुष्पहारी । उपमानं शब्दार्थप्रकृतावेव ॥६।२।८०॥ उष्ट्रक्रोशी । ध्वाङ्क्षरावी । युक्तारोह्यादयश्च ॥६।२।८१॥ युक्तारोही । आगतयोधी । क्षीरहोता । दीर्घकाशतुषभ्राष्ट्रवटं जे ॥६।२।८२॥ कुटीजः । काशजः । तुषजः । भ्राष्ट्रजः । वटजः । अन्त्यात्पूर्वं बह्वचः ॥६।२।८३॥ उपसरजः । आमलकीजः ग्रामेऽनिवसन्तः॥६।२।८४॥ [12]मल्लग्रामः । देवग्रामः । घोषादिषु च॥६।२।८५॥ दाक्षिघोषः । दाक्षिकटः । दाक्षिह्रदः । छात्र्यादयः शालायाम् ॥६।२।८६॥ छात्रिशाला । व्याडिशाला । [13]छात्रिशालम् । प्रस्थेऽवृद्धमकर्क्यादीनाम् ॥६।२।८७॥ इन्द्रप्रस्थः । मालादीनां च ॥६।२।८८॥ मालाप्रस्थः । शोणाप्रस्थः ।

---

१ कृत्स्वरं त् परत्वादयमेव । २ उदात्तस्वरितयोर्यणित्यञ्चतेरकारः स्वरितः । इगन्ताविमौ । ३ योगविभाग उत्तरार्थः । ४ देयं यः स्वीकरोति स हारीत्युच्यते । ५ धर्म्यमित्याचारनियतं देयम् । ६ कारनाम्नि चेत्यलुक् । ७ कर्तव्ये तत्परो युक्तः । ८ पापाणक इति प्रतिपदोक्तस्यैव ग्रहणम् । षष्ठीसमासे न । ९. मद्यविशेषो मैरेयः । १० मधुविकारस्य तस्य मध्वङ्गम् । ११ भक्तमन्नम् । १२ ग्रामशब्दोऽत्र समूहवाची । १३ यदापि शालान्तः समासो नपुंसकलिङ्गो भवति तदापि 'तत्पुरुषे शालायां नपुंसके' इत्येतस्मात्पूर्वविप्रतिषेधेनायमेव स्वरः ।

अमहन्नवन्नगरेऽनुदीचाम् ॥६।२।८९॥ ब्रह्मनगरम्। अर्मे चाऽवर्णंद्व्यच्त्र्यच् ॥६।२।९०॥ गुप्तार्मम्। कुक्कुटार्मम्। न भूताधिकसञ्जीवमद्राश्मकज्जलम्[1] ॥६।२।९१॥ भूतार्मम्। अधिकार्मम्। सञ्जीवार्मम्। मद्रार्मम्। अश्मार्मम्। मद्राश्मार्मम्। कज्जलार्मम्। आद्युदात्तप्रकरणे दिवोदासादीनां छन्दस्युपसंख्यानम्॥। दिवोदासाय दाशुषे। अन्तः ॥६।२।९२॥ अधिकारोऽयम्, प्रागुत्तरपदादिग्रहणात्, सर्वं गुणकार्त्स्न्ये ॥६।२।९३॥ सर्वशब्दः पूर्वपदमन्तोदात्तम्। सर्वश्वेतः। सर्वमहान्। संज्ञायां गिरिनिकाययोः ॥६।२।९४॥ एतयोः परतः पूर्वमन्तोदात्तम्। अञ्जनागिरिः। मौण्डिनिकायः। कुमार्यां वयसि ॥६।२।९५॥ वृद्ध[2]कुमारी। उदकेऽकेवले ॥६।२।९६॥ गुडो[3]दकम्। द्विगौ क्रतौ ॥६।२।९७॥ गर्गत्रिरात्रः। सभायां नपुंसके ॥६।२।९८॥ गोपालसभम्। स्त्रीसभम्। पुरे प्राचाम् ॥६।२।९९॥ देवदत्तपुरम्। नान्दीपुरम्। अरिष्टगौडपूर्वे च ॥६।२।१००॥ अरिष्टपुरम्। गौडपुरम्। पूर्वग्रहणं किम्, इहापि यथा स्यात्। अरिष्टाश्रितपुरम्। गौडभृत्यपुरम्। न हास्तिनफलकमार्देयाः ॥६।२।१०१॥ हास्तिनपुरम्। फलकपुरम्। मार्देयपुरम्। कुसूलकूपकुम्भशालं बिले ॥६।२।१०२॥ कुसूलबिलम्। कूपबिलम्। कुम्भबिलम्। शालबिलम्। दिक्शब्दा ग्रामजनपदाख्यानचानराटेषु ॥६।२।१०३॥ पूर्वेषुकामशमी। अपरकृष्णमृत्तिका। पूर्वपञ्चालाः। पूर्वयायातम्। पूर्वचानराटम्। आचार्योपसर्जनान्तेवासिनि ॥ ६।२।१०४ ॥ पूर्वपाणिनीयाः। उत्तरपदवृद्धौ सर्वं च ॥६।२।१०५॥ सर्वशब्दो दिक्शब्दाश्चान्तोदात्ता भवन्ति। सर्वपाञ्चालकः। अपरपाञ्चालकः। बहुव्रीहौ विश्वं संज्ञायाम् ॥६।२।१०६॥ पूर्वपदभूतो विश्वशब्दोऽन्तोदात्तः स्यात्। विश्वकर्मा। विश्वदेवः। आविश्वदेवं सत्पतिम्। उदराश्वेषुषु ।६।२।१०७। वृकोदरः। हर्यश्वः। महेषुः। क्षेपे ।६।२।१०८। घटोदरः। कटुकाश्वः। चलाचलेषुः। नदी बन्धुनि। ६।२।१०९। गार्गीबन्धुः। निष्ठोपसर्गपूर्वमन्यतरस्याम्। ६।२।११०। प्रधौतपादः। उत्तरपदाऽऽदिः ।६।२।१११। उत्तरपदाधिकार आपादान्तम्। आद्यधिकारस्तु प्रकृत्या भगालमित्यवधिकः। कर्णो वर्णलक्षणात् ।६।२।११२। शुक्लकर्णः शङ्कुकर्णः। संज्ञौपम्ययोश्च ।६।२।११३। मणिकर्णः। गोकर्णः। कण्ठपृष्ठग्रीवाजङ्घञ्च। ६।२।११४। शितिकण्ठः। काण्डपृष्ठः। सुग्रीवः। नाडीजङ्घः। खरकण्ठः। गोपृष्ठः। अश्वग्रीवः। गोजङ्घः। शृङ्गमवस्थायां च। ६।२।११५। उद्गतशृङ्गः। द्व्यङ्गुलशृङ्गः। [4]ऋष्यशृङ्गः। [5]मेषशृङ्गः। नञो जरमरमित्रमृताः ।६।२।११६। न मे जरा अजरम्। अमरम्। अमित्रमर्दय। श्रवो देवेष्वमृतम्। सोर्मनसी अलोमोषसी ।६।२।११७। मन्नन्तमसन्तं चाद्युदात्तम्। सुकर्माणः सुयुजः। स नो वक्षदनिमानः। सुब्रह्मा। सुमनाः। सुवर्चाः। सुपेशसस्करति। क्रत्वादयश्च ।६।२।११८। साम्राज्याय सुक्रतुः। सुप्रतीकः। सुहव्यः। सुप्रतूर्तिमनेहसम्। [6]आद्युदात्तं द्व्यच् छन्दसि ।६।२।११९। अधा स्वश्वाः। सुरथाँ आतिथिग्वे।

---

१ मद्राश्मग्रहणं संघातविगृहीतार्थम्। २ कुमारीशब्दः पुंसा सहासंप्रयोगमात्रं प्रवृत्तिनिमित्तमुपादाय प्रयुक्तो वृद्धादिभिः समानाधिकरणः। तच्च वय इह गृह्यते न कुमारत्वमेव। ३ स्वरे कृतेऽत्रैकादेशः। 'स्वरितो वाऽनुदात्ते पदादौ' इति पक्षे स्वरितः। ४ संज्ञायाम्। ५ उपमायाम्। ६ यदाद्युदात्तं द्व्यच् तस्मोरुत्तरं बहुव्रीहावाद्युदात्तम्।

वीरवीर्यौ च । ६।२।१२० । सुवीरेण रथिना । सुवीर्यस्य गोमता । **कूलतीरतूलमूलशालाक्षसममव्ययीभावे** । ६।२।१२१ । उपकूलम् । उपतीरम् । उपतूलम् । उपमूलम् । उपशालम् । उपाक्षम् । सुषमम् । निःषमम् । **कंसमन्थशूर्पपाय्यकाण्डं द्विगौ** । ६।२।१२२। द्विकंसः । द्विमन्थः । द्विशूर्पः । द्विपाय्यम् । द्विकाण्डम् । **तत्पुरुषे शालायां नपुंसके** । ६।२।१२३ । ब्राह्मणशालम् । **कन्था च** । ६।२।१२४ । सौशमिकन्थम् । आह्वरकन्थम् । **आदिश्चिहणादीनाम्** । ६।२।१२५ । चिहणकन्थम् । मदुरकन्थम् । **चेलखेटकटुककाण्डं गर्हायाम्** । ६।२।१२६ । पुत्रचेलम् । नागरखेटम् । दधिकटुकम् । प्रजाकाण्डम् । **चीरमुपमानम्** । ६।२।१२७ । वस्त्रं चीरमिव वस्त्रचीरम् । कम्बलचीरम् । **पललसूपशाकं मिश्रे** । ६।२।१२८। घृतपललम् । घृतसूपः । घृतशाकम् । [1]**कूलसूदस्थलकर्षाः संज्ञायाम्** । ६।२।१२९। दाक्षिकूलम् । शाण्डिसूदम् । दाण्डायनस्थलम् । दाक्षिकर्षः । **अकर्मधारये राज्यम्** । ६।२।१३० । ब्राह्मणराज्यम् । चेलराज्यादिस्वरादव्ययस्वरः पूर्वविप्रतिषेधेन ॐ । कुचेलम् । कुराज्यम् । [2]**वर्ग्यादयश्च** । ६।२।१३१ । अर्जुनवर्ग्यः । वासुदेवपक्ष्यः । **पुत्रः पुम्भ्यः** ।६।२।१३२ । दाशकिपुत्रः । माहिषपुत्रः । **नाचार्यराजर्त्विक्संयुक्तज्ञात्याख्येभ्यः**[3] ।६।२।१३३ । आचार्यपुत्रः । उपाध्यायपुत्रः । शाकटायनपुत्रः । राजपुत्रः । ईश्वरपुत्रः । नन्दपुत्रः । ऋत्विक्पुत्रः । याजकपुत्रः । होतुःपुत्रः । श्यालपुत्रः । ज्ञातिपुत्रः । भ्रातुष्पुत्रः । **चूर्णादीन्यप्राणिषष्ठ्याः** ।६।२।१३४ । मुद्गचूर्णम् । **षट् च काण्डादीनि** । ६।२।१३५। दर्भकाण्डम् । दर्भचीरम् । तिलपललम् । मुद्गसूपः । मूलकशाकम् । नदीकूलम् । [4]**कुण्डं वनम्** ।६।२।१३६। दर्भकुण्डम् । **प्रकृत्या भगालम्** ॥६।२।१३७॥ कुम्भीभगालम् । कुम्भीनदालम् । कुम्भीपालम् । मध्योदात्ता एते ।प्रकृत्येत्यधिकृतमन्त इति यावत् । **शितेर्नित्याऽबह्वज्बहुव्रीहावभसत्** ।६।२।१३८। शितिपादः । शित्यंसः । **गतिकारकोपपदात्कृत्** ॥६।२।१३९॥ प्रकारकः । प्रहरणम् । शोणाधृष्णू नृवाहसा । इध्मप्रव्रश्चनः । उच्चैः कारकम् । ईषत्करः । **उभे वनस्पत्यादिषु युगपत्** ॥६।२।१४०॥ वनस्पतिं वन आ । बृहस्पतिं यः । हर्षया शचीपतिम् । तनूनपादुच्यते । नराशंसं वाजिनम् । शुनः शेपम् । **देवताद्वन्द्वे च** ॥६।२।१४१॥ आ य इन्द्रावरुणौ । इन्द्राबृहस्पती वयम् । **नोत्तरपदेऽनुदात्तादावपृथिवीरुद्रपूषमन्थिषु** ॥६।२।१४२॥ इन्द्राग्निभ्यां कं वृषणः । **अन्तः** ॥६।२।१४३॥ अधिकारोऽयम् । **थाथघञ्क्ताऽजवित्रकाणाम्** ॥६।२।१४४॥ एतदन्तानां गतिकारकोपपदात्परेषामन्त उदात्तः । प्रभृथस्यायोः । आवसथः । प्रभेदः । धर्ता । वज्री । पुरुष्टुतः । प्रक्षयः । प्रलवः । प्रलवित्रम् । गोवृषः । **सूपमानात् क्तः** ॥६।२।१४५ । ऋतस्य योनौ सुकृतस्य । शशप्लुतः । **संज्ञायामनाचितादीनाम्** ॥६।२।१४६॥ उपहूतः शाकल्यः । परिजग्धः कौण्डिन्यः । **प्रवृद्धादीनां च** ॥६।२।१४७॥ प्रवृद्धः । प्रयुक्तः । **कारकाद्दत्तश्रुतयोरेवाशिषि** ॥६।२।१४८॥ देवदत्तः । विष्णुश्रुतः । **इत्थम्भूतेन कृतमिति च** ॥६ २।१४९॥ सुप्तप्रलपितम् । प्रमत्तगीतम् । **अनो भावकर्मवचनः** ॥६।२।१५०॥ पयःपानं सुखम् । राजभोजनाः शालयः ।

---

१ ग्रामसंज्ञा एताः । २ वर्गादिर्दिगाद्यन्तर्गणः । ३ आख्याग्रहणात्पर्यायाणां तद्विशेषाणां च ग्रहणम् । ४ कुण्डशब्दोऽत्र सादृश्ये ।

मन्क्तिन्व्याख्यानशयनासनस्थानयाजकादिक्रीताः ॥६।२।१५१॥ रथवर्त्म। पाणिनिकृतिः। छन्दोव्याख्यानम्। राजशयनम्। राजासनम्। अश्वस्थानम्। ब्राह्मणयाजकः। गोक्रीतः। सप्तम्याः पुण्यम् ॥६।२।१५२॥ अध्ययनपुण्यम्। [1]ऊनार्थकलहं तृतीयायाः ॥६।२।१५३॥ माषोनम्। माषविकलम्। वाक्कलहः। मिश्रं चानुपसर्गमसन्धौ[2] ॥६।२।१५४॥ तिलमिश्राः। सर्पिर्मिश्राः। नञो गुणप्रतिषेधे सम्पाद्यर्हहितालमर्थास्तद्धिताः ॥६।२।१५५॥ अकार्णवेष्टकिकम्। अच्छैदिकः। अवत्सीयः। असान्तापिकः। ययतोश्चातदर्थे ॥६।२।१५६॥ अपाद्या। अदन्त्यम्। अच्कावशक्तौ ॥६।२।१५७॥ अपचः। अविलिखः। आक्रोशे च ॥६।२।१५८॥ अपचो जाल्मः। अविक्षिपः। संज्ञायाम् ॥६।२।१५९॥ अदेवदत्तः। कृत्योकेष्णुच्चार्वादयश्च ॥६।२।१६०॥ अकर्तव्यः। अनागामुकः। अनलङ्करिष्णुः। अनाढ्यंभविष्णुः[3]। अचारुः। असाधुः। राजाह्नोश्छन्दसि॥। अराज्ञा। अनहः। विभाषा तृन्नन्नतीक्ष्णशुचिषु ॥६।२।१६१॥ अकर्ता। अनन्नम्। अतीक्ष्णम्। अशुचि। बहुव्रीहाविदमेतत्तद्भ्यः प्रथमपूरणयोः क्रियागणने ॥६।२।१६२॥ इदं प्रथमं यस्य स इदंप्रथमः। एतद्द्वितीयः। तत्पञ्चमः। संख्यायाः स्तनः ॥६।२।१६३॥ द्विस्तना। चतुःस्तना। विभाषा छन्दसि ॥६।२।१६४ द्विस्तनां करोति। संज्ञायां मित्राजिनयोः ॥६।२।१६५॥ देवमित्रः। कृष्णाजिनम्। ऋषिप्रतिषेधो मित्रे॥। विश्वामित्र ऋषिः। व्यवायिनोऽन्तरम् ॥६।२।१६६॥ वस्त्रमन्तरं व्यवधायकं यस्य स वस्त्रान्तरः। मुखं स्वाङ्गम् ॥६।२।१६७॥ गौरमुखः। नाव्ययदिक्शब्दगोमहत्स्थूलमुष्टिपृथुवत्सेभ्यः ॥६।२।१६८॥ उच्चैर्मुखः। प्राङ्मुखः। गोमुखः। महामुखः। स्थूलमुखः। मुष्टिमुखः। पृथुमुखः। वत्समुखः। निष्ठोपमानादन्यतरस्याम् ॥६।२।१६९॥ प्रक्षालितमुखः। सिंहमुखः। जातिकालसुखादिभ्योऽनाच्छादनात् क्तोऽकृतमितप्रतिपन्नाः ॥६।२।१७०॥ सारङ्गजग्धः। मासजातः। सुखजातः। दुःखजातः। वा जाते ॥६।२।१७१॥ दन्तजातः। मासजातः। नञ्सुभ्याम् ॥६।२।१७२॥ अव्रीहिः। सुमाषः। कपि पूर्वम् ॥६।२।१७३॥ अब्रह्मबन्धुकः। सुकुमारीकः। ह्रस्वान्तेऽन्त्यात्पूर्वम्[4] ॥६।२।१७४॥ अव्रीहिकः। सुमाषकः। बहोर्नञ्वदुत्तरपदभूम्नि ॥६।२।१७५॥ बहुव्रीहिकः। बहुमित्रकः। न गुणादयोऽवयवाः ॥६।२।१७६॥ बहुगुणा रज्जुः। बह्वक्षरं पदम्। बह्वध्यायः। उपसर्गात्स्वाङ्गं ध्रुवमपर्शु ॥६।२।१७७॥ प्रपृष्ठः। प्रललाटः। ध्रुवमेकरूपम्। वनं समासे ॥६।२।१७८॥ तस्येदिमे प्रवणे। अन्तः ॥६।२।१७९॥ अन्तर्वणो देशः। अन्तश्च ॥६।२।१८०॥ पर्यन्तः। समन्तः। न निविभ्याम् ॥६।२।१८१॥ न्यन्तः। व्यन्तः। परेर-

---

१ अत्र केचिदर्थ इति स्वरूपग्रहणमिच्छन्ति तेन धान्यार्थंइत्युदाहरन्ति। ऊनशब्देन तु, अर्थनिर्देशार्थेन तदर्थानां ग्रहणमिति प्रतिपदोक्तत्वादेव सिद्धे तृतीयाग्रहणं स्पष्टार्थम्। २ पणबन्धे-नैकार्थ्यं सन्धिः। ३ इष्णुज्ग्रहणेन खिष्णुचो द्व्यनुबन्धकस्यापि ग्रहणमिकारादेर्विधानसामर्थ्यात्। ४ पूर्वमित्यनुवर्तमाने पुनः पूर्वग्रहणं प्रवृत्तिभेदेन नियमार्थम्। ह्रस्वान्तेऽन्त्यादेव पूर्वपदमुदात्तम् न कपि पूर्वमिति। अज्ञकः। कबन्तस्यैवान्तोदात्तत्वम्।

भितोभावि मण्डलम् ॥६।२।१८२॥ परिकूलम् । परिमण्डलम् । प्राद्स्वाङ्गं संज्ञायाम् ॥६।२।१८३॥ प्रगृहम् । निरुदकादीनि च ॥६।२।१८४॥ निरुदकम् । निरुपलम् । अभेर्मुखम्[1] ॥६।२।१८५॥ अभिमुखम् । अपाच्च ॥६।२।१८६॥ अपमुखम् । स्फिगपूतवीणाऽञ्जोऽध्वकुक्षिसीरनामनाम च ॥६।२।१८७॥ अपस्फिगम् । अपपूतम् । अपवीणम् । अपाञ्जः । अपाध्वा । अपकुक्षिः । अपसीरम् । अपहलम् । अपनाम । अधेरुपरिस्थम् ॥६।२।१८८॥ अध्यारूढो दन्तोऽधिदन्तः । अनोरप्रधानकनीयसी ॥६।२।१८९॥ अनुगतो ज्येष्ठमनुज्येष्ठः । अनुकनीयान् । पुरुषश्चान्वादिष्टः ॥६।२।१९०॥ अनुपुरुषः । अतेरकृत्पदे ॥६।२।१९१॥ अत्यङ्कुशो नागः । अतिपदा गायत्री । अतेर्धातुलोप इति वाच्यम्ॐ । इह मा भूत् । शोभनो गार्ग्यो ऽतिगार्ग्यः । इह च स्यात् । अतिक्रान्तः कारुमतिकारुकः । नेरनिधाने[2] ॥६।२।१९२॥ निमूलम् । न्यक्षम् । प्रतेरंश्वादयस्तत्पुरुषे ॥६।२।१९३॥ प्रत्यंशुः । प्रतिजनः । प्रतिराजा । उपाद्द्व्यजजिनमगौरादयः ॥६।२।१९४॥ उपदेवः । उपेन्द्रः । उपाजिनम् । सोरवक्षेपणे ॥६।२।१९५॥ सुप्रत्यवसितः । विभाषोत्पुच्छे ॥६।२।१९६॥ उत्क्रान्तः पुच्छादुत्पुच्छः[3] । द्वित्रिभ्यां । पाद्न्मूर्धसु बहुव्रीहौ ॥६।२।१९७॥ द्विपाच्चतुष्पाच्च रथाय । त्रिपादूर्ध्वः । द्विदन् । त्रिमूर्धानं सप्तरश्मिम् । सक्थं चाक्रान्तात् ॥६।२।१९८॥ गौरसक्थः । श्लक्ष्णसक्थः । परादिश्छन्दसि बहुलम् ॥६।२।१९९॥ अजिसक्थमालभेत । अत्र वार्तिकम्-परादिश्च परान्तश्च पूर्वान्तश्चापि दृश्यते । पूर्वादयश्च दृश्यन्ते व्यत्ययो बहुलं ततः॥ । इति परादिः । तुविजाता उरुक्षया । परान्तः नि येन मुष्टिहत्यया । यस्त्रिचक्रः । पूर्वान्तः । विश्वायुर्धेहि ॥ इति समासस्वराः ॥

॥ अथ तिङन्तस्वराः ॥

तिङो गोत्रादीनि कुत्सनाभीक्ष्ण्ययोः ॥८।१।२७॥ तिङन्तात्पदात् गोत्रादीन्यनुदात्तान्येतयोः । पचति गोत्रम् । पचति२गोत्रम् । तिङ्ङतिङः ॥८।१।२८॥ अग्निमीळे । न लुट् ॥८।१।२९॥ श्वःकर्ता । श्वःकर्तारौ । निपातैर्यद्यदिहन्तकुविन्नेच्चेच्चण्कच्चिद्यत्रयुक्तम् ॥८।१।३०॥ यदग्ने स्यामहं त्वम् । युवा यदीकृथः । कुविदङ्ग आसन् । अचित्तिभिश्चकृमाकच्चित् । पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति । नह [4]प्रत्यारम्भे ॥८।१।३१॥ नह भोक्ष्यसे । सत्यं प्रश्ने ॥८।१।३२॥ सत्यं भोक्ष्यसे । अङ्गाऽप्रातिलोम्ये ॥८।१।३३॥ अङ्ग कुरु । हि च ॥८।१।३४॥ आ हि ष्मा याति । आ हि रुदन्तम् । अनृतं हि मत्तो वदति पाप्मा चैनं न युनाति । यावद्यथाभ्याम् ॥८।१।३६॥ यथाचित्कण्वमावतम् । पूजायां नानन्तरम् ॥८।१।३७॥ यावत्पचति शोभनम् । यथा पचति शोभनम् । उपसर्गव्यपेतं च ॥८।१।३८॥ यावत् प्रपचति शोभनम् । तुपश्यपश्यताऽहैः पूजायाम् ॥८।१।३९॥ आदह स्वधामनु पुनर्गर्भत्वमेरिरे । अहो च ॥८।१।४०॥ अहो देवदत्त पचति शोभनम् । शेषे विभाषा ॥८।१।४१॥

---

१ उपसर्गात्स्वाङ्गमिति सिद्धे बहुव्रीह्यर्थमध्रुवार्थमस्वाङ्गार्थं चेदम् तेन अभिमुखा शालेति । २ प्रकाशनमित्यर्थः । ३ यदा तु पुच्छमुदस्यति, उत्पुच्छतेः—एरच्, उत्पुच्छस्तदा थाथादिस्वरेण नित्यमन्तोदात्तत्वे प्राप्ते विकल्पोऽयम् । सेयमुभयत्र विभाषा । ४ प्रतिषेधयुक्त आरम्भः प्रत्यारम्भः।

अहो कटं करिष्यति । **पुरा च परीप्सायाम्** ॥८।१।४२। अधीष्व माणवक पुरा विद्योतते विद्युत् । **नन्वित्यनुज्ञैषणायाम्** ॥८।१।४३॥ ननु गच्छामि भोः । **किं क्रियाप्रश्नेऽनुपसर्गमप्रतिसिद्धम्** ॥८।१।४४॥ किं द्विजः पचत्याहोस्विद् गच्छति । **लोपे विभाषा** ॥८।१।४५॥ देवदत्तः पचत्याहोस्वित्पठति, **एहि मन्ये प्रहासे लृट्** ॥८।१।४६॥ एहि मन्ये भक्तं भोक्ष्यसे भुक्तं तत्त्वतिथिभिः । **जात्वपूर्वम्** ८।१।४७। जातु भोक्ष्यसे । **किंवृत्तं च चिदुत्तरम्** ॥८।१।४८॥ कश्चिद्भुङ्क्ते । कतरश्चित् , कतमश्चिद्वा । **आहो उताहो चानन्तरम्** ॥८।१।४९॥ आहो उताहो वा भुङ्क्ते । **शेषे विभाषा** ॥८।१।५०॥ आहो देवदत्तः पचति । **गत्यर्थलोटा लृण्न चेत्कारकं सर्वान्यत्** ॥८।१।५१॥ आगच्छ देव ग्रामं द्रक्ष्यसि । उह्यन्तां देवदत्तेन शालयो रामेण भोक्ष्यन्ते । **लोट् च** ॥८।१।५२॥ आगच्छ देव ग्रामं पश्य । **विभाषित सोपसर्गमनुत्तमम्** ॥८।१।५३॥ आगच्छ देव ग्रामं प्रविश । **हन्त च** ॥८।१।५४॥ हन्त प्रविश । **आम एकान्तरसामत्रिन्तमनन्तिके** ॥८।१।५५॥ **नानुदात्तम्** । आम् पचसि देवदत्त ३ । **यद्धितुपरं छन्दसि** ॥८।१।५६॥ उदसृजो यदङ्गिरः । उशन्ति हि । आख्यास्यामि तु ते । **चनचिदिवगोत्रादि-तद्धिताम्रेडितेष्वगतेः** ॥८।१।५७॥ देवः पचतिचन । देवः पचतिचित् । देवः पचतीव । देवः पचति गोत्रम् । देवः पचतिकल्पम् । देवः पचति पचति । **चादिषु च** ॥८।१।५८॥ देवः पचति च खादति च । **चवायोगे प्रथमा** ॥८।१।५९॥ गाश्च चारयति वीणां वा वादयति । इतो वा सातिमीमहे । **हेति क्षियायाम्** ॥८।१।६०। स्वयं ह रथेन याति ३ । उपाध्यायं पदातिं गमयति ३ । **अहेति विनियोगे च** ॥८।१।६१॥ त्वमह ग्रामं गच्छ । स्वयमह रथेन याति ३ । उपाध्यायं पदातिं नयति । **चाहलोप एवेत्यवधारणम्** ॥८।१।६२॥ देव एव ग्रामं गच्छतु । देव एवारण्यं गच्छतु । ग्राममरण्यञ्च गच्छत्वित्यर्थः । देव एव ग्रामं गच्छतु । राम एवारण्यं गच्छतु । ग्रामं केवलमरण्यं केवलं गच्छत्वित्यर्थः । **चादिलोपे विभाषा** ॥८।१।६३॥ इन्द्र वाजेषु नोऽव । शुक्ला व्रीहयो भवन्ति । श्वेता गा आज्याय दुहन्ति । व्रीहिभिर्यजेत । यवैर्यजेत । **वैवावेति च छन्दसि** ॥८।१।६४॥ अहर्वै देवानामासीत् । अयं वाव हस्त आसीत् । **एकान्याभ्यां समर्थाभ्याम्** ॥८।१।६५॥ अजामेकां जिन्वति । प्रजामेकां रक्षति । तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्ति । **यद्वृत्तान्नित्यम्** ॥८।१।६६॥ यो भुङ्क्ते यदद्रयङ् वायुर्वाति । **पूजना-त्पूजितमनुदात्तं काष्ठादिभ्यः** ॥८।१।६७॥ काष्ठाध्यापकः । मलोपश्च वक्तव्यः॥ । दारुणाध्यापकः । अज्ञाताध्यापकः । **सगतिरपि तिङ्** ॥८।१।६८॥ यत् काष्ठां प्रपचति । गतिग्रहणे उपसर्गग्रहणमिष्यते । नेह—यत्काष्ठां शुक्लीकरोति । **कुत्सने च सुप्यगोत्रादौ** ॥८।१।६९॥ पचति पूति । प्रपचति पूति । पचति मिथ्या । क्रियाकुत्सन इति वाच्यम्॥ । तेनायं चकारानुबन्धत्वादन्तोदात्तः । वा बह्वर्थमनुदात्तमिति वाच्यम्॥ । पचन्ति पूति । **गतिर्गतौ** ॥८।१।७०॥ अभ्युद्धरति । **तिङि चोदात्तवति** ॥८।१।७१॥ यत् प्रपचति ॥—॥ ॥ इति तिङन्तस्वराः ॥

---

(१) विभक्त्यन्तं डतरडतमान्तं किमो रूपम् किंवृत्तम् । (२) निपातैर्यत् । हि च । तुपश्य इत्यादिभिरेव सिद्धे नियमार्थमिदम् । एतैरेव परभूतैर्योगे नान्यैरिति ।

॥ अथ स्वरसंचारप्रकारः ॥

अथ वैदिकवाक्येषु स्वरसंचारप्रकारः कथ्यते। 'अग्निमीले' इति प्रथमा ऋक्। तत्राग्निशब्दोऽव्युत्पत्तिपक्षे 'फिषः' इत्यन्तोदात्तः, इति माधवः। वस्तुतस्तु घृतादित्वात्। व्युत्पत्तौ तु नित्यप्रत्ययस्वरेण। अम्, सुप्त्वादनुदात्तः। अमि पूर्वः, इत्येकादेशस्तु 'एकादेश' इत्युदात्तः। ईळे। तिङ्ङतिङः, इति निपातः। संहितायाम् 'उदात्तादनुदात्तस्य' इतीकारः स्वरितः। स्वरितात्संहितायाम्, इति ळे, इत्यस्य प्रचयापरपर्याया एकश्रुतिः। पुरः शब्दोऽन्तोदात्तः। पूर्वाधरावराणाम्' इत्यसिप्रत्ययस्वरात्। हितशब्दोऽपि धाञो निष्ठायाम् 'दधातेर्हिः' इति ह्यादेशे प्रत्ययस्वरेणान्तोदात्तः। पुरोऽव्ययम्, इति संज्ञायाम्। 'कुगति' इति समासे समासान्तोदात्ते तत्पुरुषे तुल्यार्थ इत्यव्ययपूर्वपदप्रकृतिस्वरे 'गतिकारकोपपदात् कृत्' इति कृदुत्तरपदप्रकृतिस्वरे थाथादिस्वरे च पूर्वपूर्वोपमर्देन प्राप्ते 'गतिरनन्तरः' इति पूर्वपदप्रकृतिस्वरः। पुरःशब्दोकारस्य संहितायां प्रचये प्राप्ते 'उदात्तस्वरितपरस्य सन्नतरः' इत्यनुदात्ततरः। यज्ञस्य। नङः प्रत्ययस्वरः। विभक्तेः सुप्त्वादनुदात्तत्वे स्वरितत्वम्। देवम्। पचाद्यच्। फिट्स्वरेण प्रत्ययस्वरेण चित्स्वरेण वा ऽन्तोदात्तः। ऋत्विक्शब्दः कृदुत्तरपदप्रकृतिस्वरेणान्तोदात्तः। होतृशब्दस्तृन्प्रत्ययान्तो नित्स्वरेणाद्युदात्तः। रत्नशब्दो 'नविषयस्य' इत्याद्युदात्तः। रत्नानि दधातीति रत्नधाः। तमपः पित्वादनुदात्तत्वे स्वरितप्रचयावित्यादि यथाशास्त्रमुन्नेयम्॥

॥ इति स्वरसंचारः ॥

लब्धाशीः सुलभा छात्रैर्विद्वद्भिरनुमोदिता ॥
बोधदात्री स्तुता सर्वैर्लोके विजयतामियम् ॥ १ ॥

इति श्री सर्वतन्त्रस्वतन्त्र-विद्यावारिधि-महामहोपाध्यायपण्डितमथुराप्रसाददीक्षितकृतौ पाणिनीयसिद्धान्तकौमुद्यां स्वरप्रकरणं समाप्तम् ॥

॥ समाप्तश्चायं ग्रन्थः ॥

॥ शिवम् ॥

अष्टाध्यायी सूत्राणां सूची ।

पृष्ठाङ्काः सूत्रम्

शुद्धा-शुद्धिपत्रम्

१—भस्यः अधिकारोऽयम् पृ० ११ ।

२—हन्तेरत्पूर्वस्य ग्रहण्यात् । नियमान्नेह । प्रघ्नन्ति । पृष्ठ १९ ।

३—उपदेशोऽत्वतः । ७।२।६२ । तासौ नित्यानिटः परस्यथल इट् न स्यात् ।

४—गर्हायां लडपिजात्वोः । ३।३।१४२ । अपि जायां त्यजसि । जातु गणिकामाधत्से । सर्हितमेतत् । पृ० १४८, ३ पंक्ति ।

५--अकर्मकाच्च । १।३।२६ । उपातिष्ठतेरात्मनेपदम् । भोजनकाले उपतिष्ठते । पृ० १४१ ।